श्री हेमचन्द्राचार्य

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)

अनुसन्धान - ६४

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य विषयक संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

विज्ञप्तिपत्र-विशेषाङ्क - खण्ड-३

संपादक : विजयशीलचन्द्रसूरि

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि

2014

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)
'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

अनुसन्धान

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य-विषयक
सम्पादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

६४

विज्ञप्तिपत्र-विशेषाङ्क - खण्ड-३

सम्पादक :
विजयशीलचन्द्रसूरि

श्रीहेमचन्द्राचार्य

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद
२०१४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुसन्धान ६४

आद्य सम्पादक : **डॉ. हरिवल्लभ भायाणी**

सम्पादक : **विजयशीलचन्द्रसूरि**

सम्पर्क : C/o. **अतुल एच. कापडिया**
A-9, जागृति फ्लेट्स, पालडी
महावीर टावर पाछळ, अमदावाद-३८०००७
फोन : ०७९-२६५७४९८१
E-mail : s.samrat2005@gmail.com

प्रकाशक : **कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदाबाद**

प्राप्तिस्थान : (१) **आ. श्रीविजयनेमिसूरि जैन स्वाध्याय मन्दिर**
१२, भगतबाग, जैननगर, नवा शारदामन्दिर रोड,
आणंदजी कल्याणजी पेढीनी बाजुमां,
अमदावाद-३८०००७
फोन : ०७९-२६६२२४६५

(२) **सरस्वती पुस्तक भण्डार**
११२, हाथीखाना, रतनपोल,
अमदावाद-३८०००१
फोन : ०७९-२५३५६६९२

प्रति : ३००

मूल्य : ₹ 250-00

मुद्रक : **क्रिश्ना ग्राफ़िक्स, किरीट हरजीभाई पटेल**
९६६, नारणपुरा जूना गाम, अमदावाद-३८००१३
(फोन: ०७९-२७४९४३९३)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निवेदन

संशोधनना अनेक प्रकार होय छे, अने ते विविध प्रकारो विषे आ पृष्ठ पर वारंवार विमर्श थयो पण छे. जोके ए विषयने जेम वधारे घूंटीए तेम कांई ने कांई नवी वात सांपडती ज रहेवानी. आथी, निरन्तर, के सतत, नवुंनवुं संपडाव्या करे ते संशोधन - एवो निष्कर्ष काढी शकाय खरो.

भायाणी साहेब शब्दोनां मूळ शोधतां. तेमनी 'शब्दकथा' एक रसिक अने अनोखी जणस छे. प्रचलित शब्द केवी रीते नीपज्यो अने तेनां मूळ क्यां - तेनी खोज तेओ करता रहेता अने आपणने भाषाओना महासागरमां नानीनानी सहेलो करावता रहेता.

पूज्य पुण्यविजयजी पाठ-शोधनना महान् निष्णात हता. प्राचीन ग्रन्थोना पाठ क्यां खोटा छे, अल्प के अधिक छे, प्रक्षिप्त छे, आ बधुं तेमनी अनुभवी नजरनी तेमज परिकर्मित मति-प्रतिभानी पकडमां शीघ्र आवी जतुं, अने तेओ द्वारा थता/थयेला पाठ-संशोधनना परिणामे, ते ते ग्रन्थने, ग्रन्थगत अंशने परिपूर्णता तेमज सुसंगतता प्राप्त थती.

मात्र पाठ ज नहि, ग्रन्थोनी बाबतमां पण तेमनी नजर तीक्ष्ण रहेती. अनेक अनेक ग्रन्थभण्डारो तेमज अनेक सूचिपत्रो तेमनी नजरतळे पसार थयां होई, कोई ग्रन्थ के प्रकरणनुं नाम तेमनी समक्ष आवे के तत्क्षण तेओ नक्की करी आपता के आ वस्तु प्रगट छे के अप्रगट; जाणीती छे के अजाणी वगेरे. स्वाभाविक रीते ज, दीर्घकालीन अने गुरुपरम्पराप्राप्त आ अनुभवने प्रतापे, कोई कृति जाली अर्थात् नकली होय तो तेनी परख पण तेमने तरत थती.

जैन आगमो सहित विविध विषयना ग्रन्थोनी असल वाचना, कोई पण कारणसर लुप्त थई होय, त्यारे पाछळना समयमां कोईक व्यक्तिए ते नामना ग्रन्थनी नवी रचना करी होवाना अनेक दाखला छे. हवे बसो-चारसो वर्षना गाळामां आवी काल्पनिक रचना करी, तेने जूना ग्रन्थनुं नामाभिधान आपी, तेने प्राचीन असल ग्रन्थलेखे खपाववामां आवे, त्यारे तेनी असलियत शुं छे ते शोधी काढवी अने तेने जरापण साहित्यिक के शास्त्रीय महत्त्व न आपवुं - ए पण संशोधननो ज एक प्रकार छे, ए स्वयंस्पष्ट छे. श्रीपुण्यविजयजीनुं संशोधन आ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हद सुधी पहोंचेलुं हतुं एम निःशङ्क कही शकाय.

जैन आगमोमां अमुक आगमो छे, जे अत्यारे वास्तवमां लुप्त-अप्राप्य छे. थोडां वर्षो के बे-चार सैका दरम्यान, मूळ परम्पराथी फंटायेल सम्प्रदायगत कोईक विद्वज्जने, ते नामनां ज, नवां अने ते पण प्राकृत भाषामां, प्रकरणो बनावी काढ्यां अने तेनी हाथपोथीओ विविध भण्डारोमां गोठवाई पण गई.

ग्रन्थो जाली, पण नाम 'आगम'नां, एटले पारम्परिक श्रद्धा तेने जाली माने ज नहि; तेवो विचार पण पाप गणाय. आ संजोगोमां तेने जाली तरीके नक्की करवां अने तेनी पोथीओ विविध भण्डारोमां पोतानी नजरे चडवा छतां अने पोते आगमोना संप्रज्ञ ज्ञाता तथा संशोधक होवा छतां, ते अप्रगट के अलभ्य मानवा ~~क्षम~~ गमे तेवा ग्रन्थोने पोताना सम्पादनादिनो विषय न बनाववा, ते पण एक संशोधक लेखे केटला मोटा गजानी वात गणाय ! सम्मार्जन द्वारा यथार्थनो स्वीकार जेम संशोधन गणाय, तेम अयथार्थनो इन्कार पण संशोधन ज गणाय, एटली पायानी समज ज आपणने संशोधन-क्षम बनावी शके.

बाकी अयथार्थने यथार्थ समजी, हरखघेला थई, अद्यावधि कोईए न करी होय तेवी शोध अमे करी - एम माननारा अने ते प्रमाणे काम करनारा पण आपणे त्यां नथी एवुं नथी !

– शी.

श्रुतभक्ति

आ अङ्कना प्रकाशनमां श्रीमाटुंगा जैन श्वे. मू. पू. सङ्घ - वासुपूज्यस्वामी जैन देरासर, किंग्स सर्कल, माटुंगा, मुंबई अे पोताना ज्ञानखातामांथी सम्पूर्ण आर्थिक सहयोग आपेल छे. श्रीसङ्घनी श्रुतभक्तिनी हार्दिक अनुमोदना.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आ खण्डमां प्रगट थता विज्ञप्तिपत्रोनो परिचय

विज्ञप्तिपत्रो उपर काम करवानुं विचार्युं त्यारे अंदाज न हतो के अमारे पत्रोनो महासागर तरवानो आवशे. वि.पत्र विशेषाङ्कना बे खण्ड कर्या पछी एम हतुं के हवे थोडाक पत्रो हशे अने तेनो एक नानो अङ्क करी लईशुं. पण ज्यारे खरेखर त्रीजा खण्डनुं काम हाथ पर लीधुं त्यारे एकत्र थती सामग्री जोतां ज थयुं के आमांथी तो हजी बे खण्ड करवा पडशे ! आमां पण केटलाक एकविधता धरावता पत्रोने खपमां न लईए, अने नाना नाना प्रकीर्ण पत्रोने तो साव पडता मूकीए तो पण बे खण्ड थाय एटली सामग्री अमारी सामे छे. एमांथी केटलाक संस्कृत पत्रो तथा केटलाक गुजराती के मारुगुर्जर भाषाना पत्रोनुं आ त्रीजा खण्डमां सङ्कलन कर्युं छे. आ रीते एक विशिष्ट विषयनी मूल्यवान् सामग्रीनो उद्धार थाय छे ते ज महत्त्वनुं छे. अवशिष्ट पत्रो हवे पछीना खण्डमां प्रगट करवानी गणतरी छे.

(१)

आ खण्डमां सर्वप्रथम पत्र (खरेखर तो पत्रांश) ते 'त्रिदशतरङ्गिणी'नो अप्रगट अंश छे. श्रीमुनिसुन्दरसूरि महाराजे अध्यात्मकल्पद्रुम, उपदेशरत्नाकर, त्रैविद्यगोष्ठी, जिनस्तोत्ररत्नकोश जेवा अनेक ग्रन्थो रच्या छे, तो तेमणे 'त्रिदशतरङ्गिणी' नामनो, [१]एक सो आठ हाथ लांबो, असंख्य चित्रबन्ध-काव्योथी तथा तेनां चित्रोथी समृद्ध एवो पत्र-ग्रन्थ पण रच्यो छे. ते आखो पत्र के तेनां चित्रो तो आजे काळना गर्तमां विलुप्त छे, पण तेना केटलाक अंशो उपलब्ध छे. एक अंश 'जिनस्तोत्ररत्नकोश' नामे त्रुटित रूपमां ज प्राप्त छे, जे 'जैनस्तोत्रसङ्ग्रह' नामे ग्रन्थमां प्रकाशित छे. तेमणे रचेला बे जिनस्तोत्ररत्नकोश मळे छे, जेमां एक

---

१. प्रचलित मान्यता १०८ हाथनी छे. परन्तु जयचन्द्रसूरि-शिष्ये रचेल 'सोमसुन्दरसूरि-बिरुदावलिकुलक' रचनामां '**चउरासीकर** निम्मविअ लेख, जिणि रंजि कविअणगण अशेष'' आ उल्लेख जोवा मळ्यो छे, ते जोतां आ लेख ८४ हाथ प्रमाण हतो तेवुं स्पष्ट थाय छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वतन्त्र ग्रन्थरूपे सम्पूर्ण उपलब्ध छे, अने प्रकाशित पण छे; ज्यारे बीजो ते आ विज्ञप्तिपत्रनो अंश छे अने त्रुटित ज उपलब्ध छे. वि.पत्रनो अन्य एक अंश ते 'गुर्वावली'ना नामे स्वतन्त्र ग्रन्थरूपे प्राप्त अने मुद्रित छे. आमां तेमणे भगवान् महावीरथी मांडीने पोताना गुरु सुधीना आचार्योनी पाटपरम्परा पद्यात्मक रीते आलेखी छे.

आ महा-पत्रनो एक वधु नानकडो अंश मळी आव्यो छे, जे आ अङ्कमां प्रगट थई रह्यो छे. आ प्रगट करतां अने आ पत्रनी नकल लखतां मनमां एकज झंखना कहुं के प्रार्थना प्रवर्तती रही छे के शासनदेवनी कृपा थाय अने कोई रीते आ महा-पत्रनी मूल प्रति जडी जाय के पछी आ पत्रना खूटता अंशो पण जडी जाय तो केवुं सारुं !

आ पत्रनो अछडतो परिचय तेनी भूमिकामां आप्यो छे, तेमज तेमां वर्तातो अमुक अस्पष्टता अंगे खुलासो पण पादटीपरूपे आपेल छे. एथी विशेष कशुं कहेवानुं रहेतुं नथी.

काव्य-चमत्कृतिनी दृष्टिए आ अंशमां कदाच कोईने प्रश्न उद्भवे, परन्तु आ श्लोको मोटाभागे चित्र-काव्यात्मक होवानुं समजाय, तो पछी ते फरियादनो अवकाश नहि रहे.

एक अटकळ थाय के जो आ पत्रांशमां वर्णन छे ते प्रमाणेनां चित्र प्राप्त थाय, अथवा तो आमां जिनालयनां वर्णवातां विविध अङ्गोने कोई कुशल ज्ञाता बराबर समजे अने ते अनुसार ते ते चैत्यना नकशा आलेखी शके, तो पंचासर चैत्य, शत्रुञ्जय-पर्वत अने चैत्य, रैवताचलनां चैत्य, जीरापल्ली-चैत्य, शान्तिनाथ चैत्य वगेरे चैत्यो, आ पत्र-लेखकना समयमां केवां हशे तेनो एक मजानो आलेख अवश्य मळी शके.

(२)

बीजा क्रमे आपवामां आवेलो पत्र ते विजयहर्ष मुनिए लखेल काव्यमय पत्र छे. पत्रलेखक विद्यार्थी-अवस्थामां होय अने तेमणे पोताना अभ्यासना विकासार्थे आ रचना करी होय तेवी शक्यता जणाय छे. जो आ अटकळ साची होय तो, एक विद्यार्थी द्वारा आटली कठिन-गम्भीर रचना आपणने हेरत पमाडे तेवी गणाय. नवाभ्यस्तनी रचनामां अमुक क्षति रहे ज; कदाच आ मुनिना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुरुजनोए ते क्षतिओ सुधारी नहि आपी होय – सहेतुक, के जेथी आ मुनिनी क्षमताना विकासनी गच्छपतिने पूरी जाणकारी सुलभ बने; अने तो तेमनुं मार्गदर्शन पण तेने माटे प्राप्त थाय. आ दृष्टिए विचारतां आ पत्रमां छन्दोबन्ध, प्रयोगो वगेरेमां केटलीक क्षतिओ होवा छतां, तेमने दाखवेलुं पाण्डित्य पण कांई ओछुं तो नथी ज.

आमां अनेक चित्र-काव्यो छे. नीवडेल कवि ज करी शके तेवा द्विपदी, त्रिपदी, एकपदी आदिना प्रयोगो छे. पद्य १२-१३ मां यमकनी चमत्कृति नोंधपात्र छे; जोके तेवां अन्य पद्यो पण छे ज. कल्पना अथवा अलङ्कारनी दृष्टिए तपासीए तो पद्य ३५मां एक तरफ व्यतिरेक तो बीजी बाजुए विरोध – एम बे बे अलङ्कारोनुं साङ्कर्य केटलुं रोचक बन्युं छे ! आवी अनेक चमत्कृतिजनक वातो आ प्रलम्ब पत्रमां अवश्य मळे.

(३)

त्रीजो पत्र उपाध्याय विनयविजयजीनो छे. पोतानी प्रचण्ड छतां सौम्य विद्वत्ताथी जैन जगत्मां पंकायेला आ साधुजने अनेक ग्रन्थोनुं सर्जन कर्युं छे. लोकप्रकाश, हेमप्रकाश, हेमप्रक्रिया, शान्तसुधारस, नयकर्णिका जेवा अनेक ग्रन्थो तेमना नामे छे. तेमना अन्य विज्ञप्तिपत्रो पण छे अने ते अन्यान्य स्थाने प्रकाशित पण छे. पण अहीं प्रगट थतो तेमनो पत्र जरा जुदी ज भात पाडनारो पत्र छे.

सौथी पहेलां तो आ पत्र प्राकृत-संस्कृत मिश्र भाषामां रचायो छे. प्रत्येक श्लोकनो पूर्वार्ध प्राकृत, तो उत्तरार्ध संस्कृत. अक्षरमेळ अने मात्रामेळ धरावता विविध छन्दोमां बे भाषाओनो शब्दमेळ बेसाडवो ए सामान्य गजाना कवि/ विद्वान्नुं काम नथी ज. शब्दो पण जोडकणांनी माफक न गोठवाय, ए तो एना प्रतिपाद्य विषयने अनुरूप अने प्रवाहबद्ध वहेता-प्रगटता आवे, अने काव्यने प्रसाद अने माधुर्यथी छलकावता रहे. अलङ्कारो तो छोगामां !

बीजी विशेषता ते छन्दो परनुं कविनुं प्रभुत्व. शरुआत झुलणा के प्रभातियाना लयमां वर्तता छन्दनां सुमधुर गेय पद्योथी थई छे. वच्चे पुष्पिताग्रा जेवा कठिन छन्दो पण आवे. पण तेमां थयेली पद्यरचना श्रमसाध्य होवानुं नहि लागे. प्रसन्न-मधुर-प्राञ्जल पदधारा ज अनुभवाय.

त्रीजी विशेषता ते कविनो कल्पनावैभव. शब्दसामर्थ्य पाण्डित्यनी खातरी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आपे, पण आ प्रकारनो कल्पनावैभव तो कोई नीवडेला कविने ज साध्य होय तो होय. आपणे ते वैभवनी २-४ वानगी जोईशुं :

पद्य ३-४-५मां नेमिकुमार द्वारा श्रीकृष्णना पाञ्चजन्य शङ्खना वादननो प्रसंग लईने कविए करेली कल्पना जुओ : मुखकमल उपर धारण करेल शङ्ख एम सूचवे छे के तेना वडे नेमिकुमार कृष्णना यशने जाणे पी रह्या छे ! (३). अथवा, नेमिनुं मुखडुं पूर्ण चन्द्र जेवुं ऊजळुं अने हसतुं छे; चन्द्र पण समुद्रनो पुत्र अने शङ्ख पण सागरजन्मा, ए रीते ए बन्ने सगा भाई थाय. ज्यारे नेमि शङ्खने मोंमां ले छे त्यारे एवुं लागे छे के शङ्ख पोताना भाई चन्द्रने मळवा नीकळ्यो होय अने नेमि-मुखमां पोताना भाईनो भ्रम थतां ते तेने भेटी रह्यो होय ! (४). नेमि द्वारा फूंकाता शङ्खना घोषथी आखुं जगत् शब्दाकुल बन्युं हतुं. एम लागे के भवाटवीमां ऊंघी रहेला भव्य जीवोने पोताना लक्ष्यस्थान शिवपुर तरफ जवा माटे जगाडी रह्या होय ! (५).

नेमि अने कृष्ण वच्चे बलाबल-परीक्षा काजे द्वन्द्व थयुं छे. ते वखते कृष्ण बहु बहु मथ्या छतां हांफी जाय छे, अने छतां नेमिने परास्त करवानो यत्न छोडता नथी. ए दृश्यने तादृश करतां कवि कल्पना करे छे के आ तो साक्षात् मोह राजा, कमकौवत होवा छतां पोतानी शक्तिनो विचार कर्या विना, धर्मराजने हरावता माटे मथी रह्यो होय ! (६).

सातमा पद्यमां तो कविए कमाल करी छे ! कवि विचारे छे के नेमिनाथने परणवुं नहोतुं तो राजीमतीना आंगणे गया केम ? अने गया ज, तो पाछा शा माटे वळी गया - तेने परण्या विना ? वात एम छे के नेमिने बे प्रिया हती : एक राजुल, बीजी मुक्ति. बन्नेमांथी एकने पण छोडवानुं मन न हतुं. एटले ते पहेलां राजीमतीने त्यां गया, अने पोतानो स्नेह जतावीने, (पोताना मार्गे आववानुं निमन्त्रण आपीने) पाछा फर्या; आ तेमनुं पाछा फरवुं ते मुक्तिवधू तरफनी पोतानी आसक्तिनुं स्पष्ट प्रगटीकरण हतुं !

केवो अद्भुत छे कविनो कल्पनावैभव ! अने आवो वैभव तो आ पत्र-काव्यमां ठेरठेर पथरायो छे.

(४)

'आनन्दविज्ञप्ति' ए नाम ज तेना कविनी प्रतिभानो संकेत आपी जाय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छे. आ पत्र, विज्ञप्तिपत्र केवो/केवी रीते लखी शकाय तेनुं मार्गदर्शन आपवा माटे लखवामां आवेला पत्र-खरडारूप होय एम जणाय छे. आनां पद्योमां एक प्रकारनी अस्खलित प्रवाहिता द्योतित थाय छे. गम्भीर अने समासप्रचुर, छतां क्लिष्ट नहि एवी पदावलीनुं वहेण, कविनी कलममांथी, क्यांय थंभ्या विना, जाणे वह्ये ज जाय छे ! कवि द्वारा थतुं गुरुवर्णन ४८ श्लोकोमां पथरायुं छे, जे आपणने अवशपणे पोतानामां गरकाव करी मूके छे. विशेषणोनी वणझार तो बराबर, पण प्रास-मेळवणी केटली चोकसाईभरेली ! जुओ - जन्तूनां, केतूनां; बन्धूनां, साधूनां; धनदानां, फलदानां; नादानां, पादानां - एक पद्य एवुं नहि जडे के जेमां प्रास मेळवायो न होय ! सशक्त कलम ज आटली फलद्रूप होय; गमे तेवानुं गजुं नहि.

'हरि' शब्दना विविध - अनेक अर्थोनो विनियोग, उपमा द्वारा, गुरुमां करवो ते पण विलक्षण कविप्रतिभा विना न सम्भवे. ४९मा पद्यमां कदाच एवी सूचना मळे छे के लेखकने गुरुना आशीर्वादरूप प्रसादपत्र मळ्यो होवो जोईए; कदाच तेना प्रतिभावरूपे आ पत्र लखायो होय तो बनवाजोग छे. वस्तुतः अहीं बधी बाबतो अंधारामां ज रहे छे. पण पूर्ण थया बाद ३ पद्यो छे तेमां पण 'प्रसादाशीर्वादः प्राप्तः' एवा शब्दो छे, ते पण उपरोक्त कल्पनाने ज बळ आपे तेवा छे. अेक कल्पना अेवी थाय छे के पत्रलेखके आ पत्र आणसूरगच्छप्रवर्तक श्रीविजयानन्दसूरि उपर लख्यो होय अने तेथी तेने 'आनन्द-विज्ञप्ति' अेवुं नाम आप्युं होय जेमके उ. विनयविजयजीअे श्री विजयानन्दसूरि उपर लखेला पत्रनुं नाम 'आनन्द-लेख' प्रसिद्ध छे. (-विज्ञप्तिलेखसङ्ग्रह : सिंघी ग्रन्थमाळा, सं. मुनि जिनविजयजी)

(५)

पांचमो पत्र प्रसादपत्र छे. श्रीविजयप्रभसूरिए लखेल आ पत्रनी संस्कृतभाषा प्रगल्भ - पाण्डित्यपूर्ण छे. प्रथम १६ मङ्गल-पद्यो छे, तेमां केटलीक मनोरम कल्पनाओ जोवा मळे छे. पद्य ९मां कवि कहे छे के पार्श्वनाथना देहमांथी नीतरतुं तेज, तेमना चरणे नमनारा मनुष्योना मस्तक उपर प्रसरे छे. तेथी एवो भास थाय छे के (आन्तर-) शत्रुओ उपर विजय मेळववा जता ते मनुष्योनी समक्ष, शुकन रूपे, भगवान्, जवारा धरी-दर्शावी रह्या छे. तो ११मा पद्यमां पार्श्वप्रभुना शिरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शोभता फणीधर माटे कवि एक नवतर ज कल्पना करे छे : भगवानना मुखरूपी चन्द्रमामां अमृतरसनो कुण्ड भर्यो छे, तेने कोई (राहु) ग्रसी न जाय ते हेतुथी आ फणीन्द्रने विधाताए ते कुण्डना रक्षक तरीके नियुक्त कर्यो जणाय छे. केवी मनभावन कल्पना ! पत्रलेखकनी प्रतिभानो आ द्वारा आपणने मजानो परिचय सांपडे छे.

पत्रनो गद्यभाग पण शब्दाडम्बरमढ्या समासबहुल पण सरल गद्यखण्डात्मक छे. आ प्रकारना गद्यांशो आवा विविध अन्य पत्रोमां पण जोवा मळे.

पत्र गच्छपतिए भले लख्यो होय, पण जेना पर लख्यो हशे ते व्यक्ति गच्छपति करतां पर्यायवृद्ध अने एटले आदरणीय होय तेवी छाप वाचकना मन पर पडे छे. पत्र बहुमानपूर्वक लखायो छे.

(६)

पत्र ६ ए १८मा शतकनो (सं. १७६७) लखायेलो पद्यबद्ध वि. पत्र छे. १४२ श्लोकमय आ पत्रनी पहेली ध्यानाकर्षक विशेषता ते तेमां प्रयुक्त विविध भाषाओ छे. संस्कृत (१ थी ५), प्राकृत (६ थी १०), समसंस्कृत-प्राकृत (११-१२), सं.प्रा. मिश्र (१३ थी १५) - आमां पण पूर्वार्ध संस्कृतमां अने उत्तरार्ध प्राकृतमां. आ पद्धति पत्रलेखकना अगाध पाण्डित्यनुं ज परिणाम छे.

तेमनी कल्पनाओ पण माणवा जेवी छे : पार्श्वनाथना मस्तके फणावली जोईने कवि उद्गारे छे : आ तो कल्पवृक्षना शिरे चित्रावेली ! (१४). तो देशनुं वर्णन करतां त्यांना नाना-मोटा पर्वतोने अंगे कविकल्पना आम विस्तरे छे : पृथ्वीरूप स्त्रीना उन्नत स्तन जेवा पर्वतो, अने लघुपर्वतो जाणे ते नारीना नितम्ब ! (१८).

पद्य १७-१८ (३८-३९)मां थती वर्णनाने कविए गुरुपरक निर्मीने तो भारे रंगत करावी दीधी छे. राजमार्ग पर अनेक चोक, चोके चोके उत्तुङ्ग हवेलीओ, हवेलीए हवेलीए मनोहर गोख, गोखे गोखे ऊभेली सुन्दर ललनाओ, एक एक ललना द्वारा फेंकाता कटाक्षो, कटाक्षे कटाक्षे नीतरतो विलास, विलासे विलासे प्रगटतुं मधुरुं गीतगान, अने ए प्रत्येक / तमाम गीतनो विषय एक ज : गुरुराजना यशनुं गान ! केवी मस्त कल्पनाजाल ! आने एकावलि कहीशुं के मालादीपक ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पद्य ८९(९०)मां व्याकरणना प्रयोगो द्वारा 'यथासङ्ख्य' अलङ्कारने केवो सरस उपसाव्यो छे ! तो गुरुना शास्त्राभ्यासने वर्णवता कविनी कल्पना यथेच्छ केवी विहरे छे ते पण जोवा जेवुं छे : सरस्वती देवीनी प्रतिमामां एक हाथमां पोथी होय छे. देवीए शा माटे पोथी राखवी पडे ? तो के आ आचार्य समग्र शास्त्र-समुद्रना पारगामी होई माराथीये अधिक मतिवैभववाळा लागे छे. मारे तेमनाथी पाछा आगळ नीकळवुं होय तो तेमनाथीय अधिक भणवुं पडे. आम विचारीने देवीए हाथमां पोथी राखी छे जाणे ! (९६).

पद्य १०२ (१०३)मां हेमाचार्य करतां कवि गुरु रत्नसूरिने श्रेष्ठ वर्णवे छे, अने 'हेम(सोना) करतां रत्न वधु मूल्यवान् होय' एवी लोकोक्तिनो आश्रय पण ले छे. भक्ति, प्रेम अने युद्ध - त्रणमां कांई पण मान्य ज होय, ए न्याये आ वात लेवी घटे. बाकी आवी सरखामणी ज अनुचित बनी रहे. स्वगुरुनी गुणगाथा गावामां क्यांक पूर्वाचार्यनुं अवमूल्यन न थई जाय ते पण ध्यानमां लेवुं जरूरी छे.

गङ्गा आकाशमांथी नीचे केम आवी, अने ते निम्नगा केम थई गई तेनो खुलासो कवि आवी कल्पना द्वारा आपे छे : गुरुनी वाणीना तरङ्गोना वेग सामे स्वर्गगङ्गा हारी गई. तेथी शरमिंदी बनीने ते नीचे-धरती उपर पछडाई, अने ते दहाडाथी ते निम्नगा-अधोगामी बनी रही ! (१०७)

आवी तो विधविध कल्पनाना वैभवथी सभर छे आ पत्र ! आने एक पत्रकाव्य के लघुकाव्य गणवो जोईए.

(७)

आ पछीनो पत्र, एक ज कर्ता द्वारा रचवामां आवेला विविध पत्रांशोना संकलन जेवो पत्र छे. अन्तिम अंशना पद्य ४मां जोवा मळता 'विजयप्रभ' एवा नामने आधारे, आ बधां काव्यो गच्छपति विजयप्रभसूरिने उद्देशीने लखेला के लखवाना पत्रथी सम्बद्ध होय, एम मानी शकाय. १६४ पद्यप्रमाण आ लेखपद्धतिना श्लोकोमां कविनुं पाण्डित्य सोळे कळाए खील्युं छे.

पार्श्वनाथना मस्तक पर ७ फणा धरावता नागराज जोवा मळे छे. ते शा माटे ? ते शो संकेत आपे छे ? आ समजाववा माटे, कवि, तेने माटे १० करतां वधु कल्पनाओ करी बतावे छे. पद्य १ थी १६मां आ बधी कल्पनाओ जोवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मळे छे. अेकाद कल्पना जोईए :

मोक्षनगरना प्रवेशद्वारे ४ कषायना अने ३ दण्डनां एम ७ ताळां मार्यां छे, अने ते रीते ते द्वार नियन्त्रित होय छे. पार्श्वप्रभुए ते द्वारमां प्रवेश तो पामवो छे, पण ताळां केम खोलवां ? कई चावी प्रयोजवी ? त्यारे कवि कहे छे के प्रभुना मस्तक पर विराजतो ७ फणानो समूह ते ज ७ ताळांने उघाडी आपनारी ७ चावी छे (१३).

कमठ नामना असुरे पार्श्वप्रभुने करेला उपद्रवनो प्रसंग कविनी कल्पना आ रीते वर्णवे छे : ए अधम दैत्ये वरसावेली विकराळ जलधारानी वृष्टिने परिणामे प्रभुनो कोप-अग्नि तो ठरी गयो, पण तेमनो ध्यान-अग्नि तो वृद्धिगत थई गयो ! केवुं कौतुक आ ! (११).

७५ थी ८० मां 'गुरु'नुं गुणगान अथवा माहात्म्यवर्णन केटलुं भावपूर्ण थयुं छे ! अने कविनी विद्वत्प्रतिभा तो आ पद्यमां जोवा मळे छे : 'वायु' द्रव्यमां 'गन्ध'नो गुण नथी एम इतर दर्शनो माने छे. जैन दर्शन तेनामां ते गुण होवानुं स्वीकारे छे. अने बीजुं, तीर्थङ्करनो श्वासवायु हमेशां सुगन्धित होवानुं जैनो स्वीकारे छे. आ बे मुद्दा जाण्या पछी, 'साधारणजिनद्वादशगुणस्तुति'ना सातमा पद्यने जुओ :

जे जिने पोताना, घ्राणेन्द्रियथी प्रत्यक्ष अनुभवाता अने पुष्प वगेरेना औपाधिक सान्निध्य वगरना, सुरभित एवा श्वासरूप पवन वडे ज, 'वायुमां पण गन्धगुण होवा'नुं सिद्ध कर्युं छे ते (जिनने वन्दन हो!)

आवी तो अनेक कल्पनाओथी छलकाती आ लेखपद्धतिनां काव्यो तज्ज्ञो माटे गोळना गाडा जेवां ज पुरवार थशे.

(८-११)

आ पछीना ३ पत्रो प्रमाणमां घणा टूंका छे अने महदंशे गद्यात्मक छे. तेमनो परिचय तो त्यां ज संक्षिप्त भूमिकामां आपेल छे. ते पछीनो एक अपूर्ण पत्र ते गच्छपति द्वारा लखेल प्रसादपत्ररूप छे.

(१२-१७)

'केटलाक पत्र-खरडा' शीर्षक हेठळ आपवामां आवेल त्रुटित अथवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्ण जणाता ६ पत्रोनी पद्यरचना छन्द, कल्पना, प्रास आदि दृष्टिए मजानी छे. प्रथम त्रुटित खरडागत २७-३४ श्लोको जुओ ! तेमां प्रत्येक द्वितीय अने चतुर्थ चरणोमां 'करणानां-चरणानां' आवी जे प्रास-मेळवणी थई छे, ते केटली बधी मधुर छे ! 'आनन्दविज्ञप्ति'मांना प्रास-योजननुं अहीं स्मरण थाय.

त्रीजा पत्र-खरडामां गुरु विषे कवि केवी केवी कल्पनाओमां उड्डयन करे छे ! एक ज पद्य लईए : गुरुनी अनुपम विद्वत्ताथी प्रभावित थयेला बुद्धिमान् जनोए मान्युं के बृहस्पति आकाशमां भमीभमीने थाक्यो होवाथी तेणे आ गुरुवरना स्वरूपे आ धरती पर आवी रहेवानुं स्वीकार्युं जणाय छे ! (३६)

टूंकमां आ बधा ज संस्कृत पत्रो पोताना भाषाना तथा कल्पनाओना वैभवने कारणे पत्र-काव्य साहित्यमां आगवी भात पाडी जाय छे. संस्कृतज्ञोने माटे आ पत्रो भावतां भोजननी गरज सारशे तेमां शङ्का नहि.

(१८)

अने हवे विभाग शरु थाय छे भाषामय पत्रोनो. सौप्रथम पत्र हिन्दी भाषामां लखायेल पत्र छे. लक्ष्मणपुरी-लखनऊमां स्थित आचार्य उपर जयपुरथी लखायेल आ दीर्घपत्र, तेना छन्दोवैविध्यने कारणे तेमज कल्पनासौन्दर्यने कारणे ध्यान खेंचे तेवो छे. आनो योग्य परिचय तेना सम्पादके तेनी भूमिकामां आप्यो ज छे.

लखनऊनी ओळख लछमणपुर अने लखनोउ एवां नामोथी आपेल छे. लक्ष्मणपुर-लछमणपुर-लखमणपुर-लखणउर-लखणोउर-लखणोउ-लखनोउ-लखनऊ आम ते नामनी अपभ्रंशयात्रा कल्पी शकाय. त्यांना व्यापारीनुं वर्णन करतां कवि सुन्दर स्वभावोक्ति प्रयोजे छे : "व्यवहारी मोटा, नहीं धन छोटा, दुंदाला सुभ ठाय" (छन्दजाति ५).

गुरुवर्णनना भुजङ्गीछन्दो जोतां कविनी भाषा पर चारणी बोलीनी गाढ असर होवानुं स्पष्ट जणाई आवे. राजस्थानी कवि होय अने चारणी के डिंगळना स्पर्शथी अस्पृष्ट रहे ते तो केम ज बने ? 'अमृतध्वनि' नाम हेठळ जे बे दूहापूर्वकना छन्द छे, ते कविप्रतिभाने उत्तमरूपे उजागर करे तेवां छे. 'छन्द चालि' ते आपणा हरिगीतनी याद अपावे छे. तो 'निसाणी'मां एक एक पंक्तिमां 'नमंदा-पसरंदा' आवो क्रियापद-प्रयोग छे ते पण कविनी लाक्षणिकतानो द्योतक छे. ते पछीना दूहाओमां गुरु माटेनो हृदयगत भाव उर्मिल रीते प्रगट थतो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुभवाय छे. तेमांय सातमा दूहामां तो कविए कमाल करी छे : "मोटा पुरुष आपमेळे गुण/उपकार करता रहे छे; प्रियतम ! ए माटे तेओने कोई कारणनी गरज नथी होती. जोने, मेघराजा वरसी वरसीने वृक्षोने पल्लवित करे अने जलाशयोने छलकावे छे, तो ते माटे ते कोई दाण/वळतर थोडुं ज ले छे ? अथवा कोई कारणनी राह थोडी जुए छे ?"

आ दूहाओमां गुजराती भाषानो सारो प्रयोग थयो छे. अने आ दूहाओ अन्य पत्रोमां पण जोवा मळे छे. तेथी आना कोई चोक्कस कर्ता नथी जडता; आ तो लोकोक्ति अने सुभाषितो जेवी सहुनी मझियारी मिलकतसमी रचना गणाय; लोकगीतनी माफक.

आ पछी त्रिभङ्गीछन्दमां थयेल गुरुवर्णन वांचतां बारोटो द्वारा गवाता शक्तिमाताना छन्दोनुं स्मरण अवश्य थाय. अने आ वांचतां एवो पण पाको वहेम पडे के पत्र-कर्ता मूळे चारण/बारोट हशे के शुं ? ते विना आवुं प्रभुत्व ओछुं संभवे.

२८ संस्कृत पद्यो प्रमाणमां सामान्य रचना लागे. तेमां रामना प्रिय बन्धु लक्ष्मणना नामे आ नगर 'लक्ष्मणपुर' वस्यानी कल्पना जरा रोचक छे. पण ते पछी ६७ + १३ श्लोको तेमज गद्यखण्डो, आ पत्र संस्कृत ज होय तेवुं मानवा प्रेरे छे. एकंदरे पत्रसाहित्यनुं एक मजानुं घरेणुं गणी शकाय तेवो आ पत्र छे.

(१९)

उपरनो पत्र खरतरगच्छ-सम्बद्ध हतो. हवेनो पत्र पार्श्वचन्द्रगच्छसम्बद्ध छे. सं. १८४२मां राजनगर (अमदावाद)थी लखायेल आ पत्र, स्तम्भतीर्थ-खम्भातमां बिराजता गच्छपति विवेकचन्द्रसूरिजीने राजनगर पधारवानी विनतिनो पत्र छे. आमां केटलोक भाग संस्कृत छे, अमुक ढाळो पण छे. आचार्यजी ओसवाल ज्ञातिना शाह मूलचंद अने माता लाछलदेवीना पुत्र होवानो एकथी वधुवार उल्लेख मळे छे, साधुगणनां नामो तथा राजनगरना श्रावक-श्राविकानां नामो क्यारेक इतिहासना संशोधनमां काम लागी शके.

एक प्रयोग ध्यानार्ह छे : "पासचंद्रसूरीजीना गादीना खांवन छो" आ खांवन एटले उर्दू 'खाविंद'. पति, मालिक, स्वामी एवा अर्थमां ते वपरातो होय छे. पार्श्वनाथ-पंचकल्याणक-पूजामां "खावन खेल खेलाय के" एम प्रयोग मळे छे. रविभाण सम्प्रदायना एक भजनमां पण "खावनधणी" एवो प्रयोग थयो छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२०)

हवेनो पत्र तेनी केटलीक विशेषताओने कारणे महत्त्वपूर्ण छे. एक तो ते सचित्र छे. जो के तेनां चित्रो सम्पादकोने मळ्यां नथी, पण ते चित्रो कलानी दृष्टिए उत्तम होवां जोईए एम अनुमान थाय. बीजुं, आ पत्र ऑस्ट्रेलियाथी प्राप्त करवामां आव्यो छे. दक्षिण ऑस्ट्रेलियानी आर्ट गेलेरीमां हाल सचवायेल आ पत्र मेळवतां सम्पादकोने खासो श्रम लेवानो थयो छे. पत्र लांबो छे, गुजराती छे, पद्यात्मक छे.

संस्कृत पद्यो अशुद्धप्राय. सीरोहीनुं वर्णन कल्पनामढ्युं अने विस्तृत. आबूना वर्णनमां, तेने शत्रुंजयनी टूंक तरीके ओळखावेल छे, तेमां आबू (अचलगढ) पर सोनावर्णा चौमुख जिननुं देरासर होवानो उल्लेख ऐतिहासिक छे. ते सिवायनां विमलवसही, लूणवसही जेवां चैत्यो विषे कशो ज उल्लेख नथी ते पण नोंधपात्र वात गणाय.

गुरुवर्णनमां १ थी १०८ सुधीना गुणोनुं वर्णन पद्यमय रीते थयुं छे. आम तो आ वर्णन घणाबधा गुजराती पत्रोमां सामान्य होय छे, पण ते गद्यमां होय, अहीं ते पद्यरूपे छे. विजयलक्ष्मीसूरिनो परिचय अहीं सांपडे छे जे महत्त्वनो गणाय. पोरवाडवंश, पिता सा. हेमचंद, माता आणंदबाई, गाम पालडी (मारवाड), गुरु विजयउदयसूरि. ते पछीना दूहा सुभाषित जेवा अने सर्व पत्रोमां मळे तेवा सामान्य छे. अगाउना हिन्दी पत्रमां जोयेला दूहा अहीं पण जोवा मळे. 'गूढा' एटले के समस्याना दूहा ते आ पत्रनो विशेष छे.

सूरतनुं वर्णन मननीय छे. गूर्जर-गुजरात देशमां पालनपुर, शांतलपुर, पाटण, राधनपुर, अमदावाद, त्रंबावती, जंबूसर, वडोदरुं, डभोई, भरुच जेवां अनेक उत्तम नगर होवा छतां ते बधांमां मुगटसमुं तो सूरतबंदिर ज - एम कवि सूरतनो महिमा गाय छे. पूर्वमां अश्वनीकुमारनुं स्थानक, दक्षिणमां भीडभंजन महादेव, पश्चिमे हनुमंत वीर, उत्तरमां कांतेसर - आ बधां जैनेतरोनां देवस्थानो अहीं होवानुं कहीने कांतेसरमां श्रावणिया सोमवारे तमासगीरी-मेळा थता होवानुं पण नोंधे छे. किल्लो अने तेनी हेठळ तापी - तेनी पण कवि नोंध ले छे. तापीमां स्वदेशनां ने परदेशनां वहाणोनी अवरजवर पण कविना ध्यानबहार नथी. तो लंठ, हरामी, कंठीछोड - सोनाना दोरा खेंचीने तोडनारा, लुच्चा, अवळचंडा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अने उच्चका लोको पण त्यां लहेर करतां होवानुं कवि नोंधे छे.

आ शहेरना श्रावकोनुं वर्णन जरा समजवा जेवुं थयुं छे. श्रावको श्रद्धा अने विवेकवाळा, गुणानुरागी, शक्ति प्रमाणेना व्रतधारी, सूत्र-अर्थना जाण, जीवादि तत्त्वना ज्ञाता, गुरु-उपासक, शास्त्रकथित विधिवत् पोसह-पडिक्कमणामां परायण, ज्ञानपांचम आदिनां उजमणां करनार, तमाम चोरासी गच्छना साधुने चोंप तथा भक्तिथी सुपात्रदान देनार, सिद्धाचल ने आबूना संघ काढनार, नित्य देवना जुहार करनार - आवा हता. देरासरोनुं वर्णन नगरनी चैत्यपरिपाटी जेवुं छे : सूरजमण्डन पार्श्वनाथ, धर्मनाथ, सम्भवनाथ, महावीर, अभिनन्दन, चिन्तामणि पार्श्वनाथ, नाना अजितनाथ ते प्रेमजी-श्रावकनुं गृहचैत्य, मोटा अजितनाथ, देशाईपोळे चन्द्रप्रभु, आदीश्वर, उंबरवाडानुं (पार्श्व) चैत्य, शान्तिनाथ, नवापुरामां सुमतिनाथ, छापरिया ओलि(-शेरी)मां चैत्य, सईदपुरामां शान्तिनाथ इत्यादि नामोनां जिनचैत्यो कविए गणाव्यां छे. आमांना बधां लगभग आजे पण विद्यमान छे.

गच्छपतिना आदेशथी सं. १८५१मां (१८५०-५१) पं. मानविजय आदिनुं चोमासुं सूरतमां थयुं, ते प्रसंगे सूरतना संघे आ विज्ञप्तिपत्र पाठव्यो छे. मुनिओनां तेमज श्रावकोनां नामो ऐतिहासिक सामग्रीरूप छे. गद्यात्मक वि. पत्रनी भाषा-लिपि बोडिया प्रकारनी छे. गुरु मरुधरमां सिरोहींनगरे छे, तेमने गुजरात पधारवानी विनंतिपूर्वक पत्र समाप्त थयो छे.

(२१)

विजैवा - वीजोवाथी राधनपुर - गच्छपति जिनेन्द्रसूरिने लखायेल पत्रमां पण महदंशे पूर्वना पत्र जेवुं ज देश-नगर तथा गुरुनुं वर्णन थयुं छे. कोई महत्त्वनो तफावत नथी. गुरु राजस्थानमां पधारे, वरकाणातीर्थने जुहारवा पधारे एवी विज्ञप्ति छे.

(२२)

ते पछीनो पत्र पण जिनेन्द्रसूरिने उद्देशीने ज लखायो छे. घणो लांबो छतां अधूरो आ पत्र पण सचित्र छे. आनां चित्रो प्रकट थवां जोईए. पत्र घाणेराव (राजस्थान)थी लखायो छे - चाणस्मा नगरे. चांणसपुर-चांणसमापुर एवा नामे ते अहीं वर्णवायुं छे. गच्छपतिनो परिचय - ओस(-वाळ)वंश, सा. हरचंद अने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुमानदेना पुत्र ते जिनेन्द्रसूरि, एवो मळे छे. तेमना गुरु विजयधर्मसूरि छे. गुरुनुं गुणवर्णन घणा विस्तारथी थयुं छे.

मरुधर देशनुं वर्णन कवि गणेशजीने स्मरीने करे छे : "गवरीसुत प्रणमुं गहिर". आ कां तो लोकव्यवहारथी करता होय, के पछी कोई अन्य कविए रचेल वर्णन कविए अहीं उतार्युं होय, के पछी कवि बारोट के तेवी अन्य ज्ञातिना होय : आम त्रण विकल्पो जागे छे. जे होय ते, कर्तानी बिनसाम्प्रदायिकता तो प्रगट थई ज छे आवी रचनामां.

मारवाड–मारु–गोडवाड–घाणोरां आ ४ नामोथी वर्णन प्रारम्भायुं छे. घाणोरा–घाणेराव लघुमरुदेश–नानी मारवाडनुं नगर छे. त्यां राठोडनुं राज्य छे. नाम छे दुरजनसिंघना पुत्र अजीतसिंघ. राजवीनुं गुणवर्णन घणुं छे. राजना कारभारीओ मुख्यत्वे जैन छे, तेमनां गोत्र – मूहता, लोढा, हींगड, सामावत इत्यादि छे. आ वर्णनमां नगरना अनेक देवी–देवोनां थानकोनां नामो, प्रताप–सरोवर व. तळाव–नामो, जग्नेश्वर वाव, नागणेंची डूंगरी–थानक, चौहाण–वाव, सादडी दरवाजो, वगेरेनां नाम–वर्णन द्वारा नगर–परिचय खूब रोचक अने ऐतिहासिक विगतोथी समृद्ध बन्यो छे. गजलो पण एक करतां वधु आवे छे, तेमां प्रत्येक पदने छेडे 'क'नो प्रयोग नोंधपात्र छे : 'ज्याका दरस ही देख्याक, परचा पूरही पेख्याक' वगेरे. कदाच आवा प्रयोगने कारणे ज आ रचना गजल बनी रहेती हशे. आगळ जतां नगरना विविध वास/महोल्लानुं तथा विविध ज्ञातिओनुं वर्णन पण विगतप्रचुर जणाय छे. ३८मी कडीमां आदीश्वर–मन्दिरनो उल्लेख छे. तो ४२मां 'युगलकिशोर'ना मोटा मन्दिरनो पण उल्लेख छे. कन्दोईनी दुकान तथा तेमां मळतां मिष्टान्ननुं वर्णन केवुं रोचक थयुं छे ! (४३–४४). बजार–माणेक चोकना उल्लेख साथे त्यां मळतां विविध पदार्थो, वस्त्र, शाकपांदडां, करियाणां–तेजाना विषे रसप्रद वर्णन अहीं थयुं छे. धर्मनाथ, गोडी पार्श्व अने जीराउलि पार्श्वनां चैत्यो, शिवजीनुं देवळ, इन्द्र, क्षेत्रपाल, भैरूदेव, शीतला माता, दावलपीर – आवां विविध देवोनां मन्दिरादि स्थानो विषे कविए नाम लईलईने वर्णन आप्युं छे. वास्तवमां आ बधा मुद्दाओने आवरीने एक सरस अभ्यासपूर्ण शोधपत्र तैयार करी शकाय. विज्ञप्ति–निवेदनरूप गद्य पत्रांश छे ते जूनी–बोडिया लिपिमां – भाषामां होई अर्थ अनुमाने ज बेसाडवानो रहे छे. आखो पत्र रसपूर्वक अभ्यास करवा जेवो छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२३)

हवे आव्यो जोधपुरना संघे पण्डित रूपविजयजीने लखेल पत्र. पत्रना आरम्भे गुरु माटे लखवामां आवेलां विशेषणो (१ थी २७, अने ते पछीनां) गुरुनी तात्त्विक-आन्तरिक भूमिकाना परिचायक छे, तो लखनार आत्माओनी पण तत्त्वरुचिनां द्योतक छे. ते विना 'अंतर उपयोगी, अंतरंग उपयोगरूप साध एक साधन अनेक ईण रिते सुध मार्गना परूपक, आत्मतत्त्वना रसीया' आवां तात्त्विक विशेषणो न लखाय. वळी, गद्य भाग पछीना पांच दूहा वांचो ! गुरु केवो 'सबद' (उपदेश) आपे तेनुं जे कबीर साहेबने ज शोभे तेवी भाषा-परिभाषामां बयान करवामां आव्युं छे, ते लेखकनी अने गुरुनी उच्च आध्यात्मिक भूमिका विषे संकेत आपी जाय छे. 'सबद जुहायर तोल' - शब्दनुं जवेरात तोल अने ले !

पं. रूपविजयजी आत्मार्थी साधक पुरुष हता. तेमनाथी अनेक लोको समाधान प्राप्त करता. आ पत्रमां पण प्रश्नो लख्या होवानी वात छे ज. आ पत्रनां चित्रो बहु सोहामणां छे. ते प्रगट थवां जोईए. आ अङ्कमां तेना बे चित्रांशो मुखपृष्ठे पर आप्या छे.

(२४)

हवेनो पत्र खरतरगच्छीय संघ (बीकानेर) तरफथी तेमना गच्छपतिने सं. १८९८ मां लखायेलो वि. पत्र छे. गुरु बङ्गालना मकसूदाबादमां छे. पत्र थोडीक शिथिल कही शकाय तेवी संस्कृत भाषामां छे. वच्चे गुरुनां विशेषणो प्राकृतमां पण लख्यां छे. 'पुनश्च श्रावकवर्गः श्रीपूज्यजितां घनाघनवद् वाटं पश्यति' - आ वाक्यमां 'मेघनी जेम वाट जुए' एम कहेवा माटे सीधो 'वाटं' शब्द ज जोतरी दीधो छे, ए भ्रष्ट संस्कृतनी निशानी छे. आवा प्रयोगो थकी ज संस्कृत भाषानी 'जैन संस्कृत' नामे शाखा ऊभी थई छे.

(२५)

पछीनो, आ खण्डमांनो छेल्लो पत्र मुनि सुखलालजी एटले के सौख्यविजयजी उपर एक गृहस्थे लखेल पत्र छे. मालवीमिश्रित हिन्दी भाषामां आ पत्र लखायो छे. पत्रमां १ थी २७ सुधीना अङ्क हता ते भाग, पुनरावर्तनो टाळवाना हेतुथी गाळी नाख्यो छे. पत्रलेखक संसारना भीरु होय अने गुरु प्रत्ये तीव्र अहोभाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेमने होय, ते दूहा वांचतां ज समजाय छे. दूहामां ठलवातुं आर्जवनीतरतुं दर्द-गुरुविरहनुं दर्द अथवा गुरुप्राप्ति माटेना तलसाटरूप दर्द हृदयस्पर्शी छे.

*

विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्कना आ त्रीजा खण्डमां २५ पत्रोनो समावेश थयो छे, तेमां १७ संस्कृत अने ८ गुजराती पत्रो छे. आमां सं. ना नाना नाना के खरडारूप पत्रोने पण अलग अङ्क आप्यो छे, ते स्पष्टता थवी जोईए.

आ अङ्कमां सौथी वधु पत्रो मुनि सुयश-सुजसचन्द्रविजयजी - ए बन्धुयुगल द्वारा सम्पादित छे, ते जोई शकाशे. ए बन्ने भाईओए घणी खंतथी अनेक भण्डारोनो - तेना कार्यवाहकोनो सम्पर्क कर्यो, पत्रोनी भाळ मेळवी, तेनी नकलो मेळवी, अने यथामति प्रतिलिपि करवापूर्वक सम्पादन पण कर्युं छे. आवी खंत तथा आवा सम्पादनकार्य बदल ते बन्ने मुनिवरो अभिनन्दनना अधिकारी छे.

अनुसन्धान अंदाजे ३-४ महिने एक वार प्रकाशित थतुं सामयिक छे. परन्तु आ वखते ते क्रम तूट्यो छे, अने अनपेक्षित विलम्ब थयो छे. अमे अन्य कार्योमां वधु पडता व्यस्त रह्या अने आ काम जरा वधु चीवट मागी लेनारुं होई आ विलम्ब कर्यो छे. सुज्ञजनो तेने क्षम्य गणे.

आ अङ्कनी सम्पादन-प्रूफवाचनादिनी मोटा भागनी जवाबदारी मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजयजीए संभाळी छे. मारा माटे आ वखते आमां वधु भाग लेवानुं मुश्केल हतुं.

उपरोक्त बन्ने मुनि-बन्धुओए तैयार करेल पत्र-वाचनाओ महदंशे तेमणे लख्या मुजब ज राखी छे. प्रत्येक पत्र तेनी मूळ प्रति साथे मेळवीने पुनः वाचनानुं गठन करवुं शक्य न बने ते तो समजी शकाय तेवुं छे. छतां ज्यां शङ्कास्पद स्थान जणायां त्यां शक्य शुद्धि/स्पष्टता करवामां आवी ज छे.

हजी एक खण्ड थाय तेटला पत्रो पड्या छे. तेनुं सम्पादन-प्रकाशन आगळ उपर थाय तेवी भावना छे ज.

– शी.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आवरणचित्र–परिचय

एक सचित्र विज्ञप्तिपत्रना चित्रविभागमांथी लीधेलां आ चित्राङ्को राजस्थानी (जोधपुरी) शैलीनां सुन्दर नमूनारूप छे.

आवरण १ पर मूकेल चित्रांशमां मङ्गलकुम्भ अने बे चामरधारिणीनां, अने तेनी नीचेनां छत्रनी बन्ने तरफ नृत्यरत बे नृत्याङ्गनाओनां नयनमनोहर चित्रो दर्शकोने कोई जुदा ज भावविश्वमां लई जाय छे. घेरा नेत्रोत्तेजक रंगो, नर्तनना लयमां लयलीन नृत्याङ्गनाओ, तेमनी विलक्षण अङ्गभङ्गी अने नृत्यमुद्रा, कुम्भनी, बे आंखोने लीधे, व्यक्त थती सजीवता, छत्र अने चामरनी रमणीय संयोजना, आ बधुं एक बाजु आंखने सन्तृप्ति अर्पे छे, तो बीजी बाजु चित्रकारनी कलाकुशलता चित्तने एक अनेरी प्रसन्नताथी छलकावी मूके छे.

आवरण ४ पर मूकेलुं चित्र एक विशाल फलकने आवरी ले छे. सहुथी उपर जोधपुरनो दुर्ग, अभेद्य किल्लो देखाय छे. किल्लानी फरते जल–भरेली खाईमां चिताराए कमल पण उगाड्यां छे. तेनी नीचे जोधपुरना इष्टदेव कांकरोलीनरेश श्रीठाकोरजी (श्रीकृष्ण)नुं मन्दिर दृश्यमान छे. बंसरी वगाडता श्रीकृष्णनो विग्रह, रात्रिना अन्धकारघेरा अने बीजचन्द्रनी पातळी छायाथी प्रकाशित आकाशना परिप्रेक्ष्यमां केवो सोहाय छे !

तेनी नीचे बे बाजु बे मन्दिरो आलेखायां छे : एक ऋषभदेवजीनुं मन्दिर–डाबी तरफ, अने जमणी बाजु जलन्धरनाथजीनुं (गोरखनाथनुं) मन्दिर. पहेलामां पीतवर्णनी जिनप्रतिमा अने बीजामां पादुका स्थापेल नजरे पडे छे. तेनी नीचे बजारनो तथा मार्गनो देखाव छे, जेमां व्यापारी, महेताजी, कन्दोई, होकाबाज बेठेला जोई शकाय छे, अने रस्ते जता लोको, साधु, तथा खरीदी करता नागरिको पण दृष्टिगोचर थाय छे.

आ चित्रो आ ज अङ्कमां २३ मा क्रमे मुद्रित वि. पत्रनां छे. आ पत्र डेलानो उपाश्रय, अमदावादमां सङ्गृहीत छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

पत्र क्र. पृष्ठांक

(१) 'त्रिदशतरङ्गिणी' महा-पत्रनो एक अप्रगट अंश १
कर्ता : भ. श्रीमुनिसुन्दरसूरि
सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

(२) पत्तननगरे श्रीहीरविजयसूरिं प्रति महेवानगरतः
विजयहर्षमुनिना लिखितो विज्ञप्तिलेखः
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय ४४

(३) देवकपत्तनात् पत्तननगरे श्रीविजयदेवसूरिं प्रति
उपाध्यायश्रीविनयविजयगणिलिखितो लेखः
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय ६४

(४) महिशानकनगराद् अज्ञातकविलिखिता आनन्दविज्ञप्तिः
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय ७२

(५) श्रीविजयप्रभसूरिणा देवकपत्तनात् प्रेषितं प्रसादपत्रम्
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय ७८

(६) वंशपालनपुरे श्रीविजयरत्नसूरिं प्रति
उदयपुरतो वृद्धिविजयलिखितो विज्ञप्तिलेखः
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय ८२

(७) श्रीधर्मविजयविरचितं विज्ञप्तिपत्रम्
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय ९६

(८-९-१०) त्रण पत्रो **शी.** १११

(११) उन्नतपुरात् श्रीविजयप्रभसूरिलिखितं पत्रम्
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय १२५

(१२-१७) केटलाक पत्र-खरडा
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय १२७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१८) लक्ष्मणपुर्यां विराजमानं श्रीजिनचन्द्रसूरिं प्रति
जयपुरनगरतः कमलसुन्दरगणिप्रेषितं विज्ञप्तिज्ञप्तिपात्रं पत्रम्
सं. म. विनयसागर १४१

(१९) पार्श्वचन्द्रगच्छीय आ. श्रीविवेकचन्द्रसूरिजी पर
राजनगरथी लखाएल विज्ञप्तिपत्र सं. साध्वी समयप्रज्ञाश्री १६७

(२०) सिरोही-विजयलक्ष्मीसूरिजीने सुरतथी श्रीसङ्घनो पत्र (सचित्र)
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय १७४

(२१) राधनपुर-विजयजिनेन्द्रसूरिजीने
विजैवापुरथी पं. चतुरसागरगणिनो पत्र
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय १९४

(२२) चाणस्मा-श्रीविजयजिनेन्द्रसूरिजीने उद्देशीने
घांणेरावनो विज्ञप्तिपत्र (सचित्र)
सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय २१०

(२३) जोधपुर श्रीसङ्घनो, अमदावाद-पं. रूपविजयजीने
विनन्तिपत्र (सचित्र) सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय २४५

(२४) मकसूदाबाद (बंगाल) स्थित आचार्यश्रीजिनसौभाग्यसूरिजीने
श्रीबीकानेर जैन (बृहत्खरतरगणीय) संघनी
चातुर्मासार्थे विज्ञप्ति सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय २५०

(२५) रतलामथी श्रावक मगनीराम वरमेचाए लखेल नागपुरमां
विराजमान श्रीसुखलालजी (सौख्यविजयजी) महाराज उपर
विनयपत्रिका (विज्ञप्ति)
सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय २५८

विहङ्गावलोकन : अङ्क ६०-६१-६२नुं उपा. भुवनचन्द्र २६४

विहङ्गावलोकन : अङ्क ६३नुं उपा. भुवनचन्द्र २६९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१)

'त्रिदशतरङ्गिणी' महा-पत्रनो एक अप्रगट अंश

कर्ता : भ. श्रीमुनिसुन्दरसूरि

– सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

विज्ञप्तिपत्रो विषे ऐतिहासिक वातो जाणीए – वांचीए, त्यारे पत्रसाहित्यना विषयमां जैन मुनिओए केटलुं बधुं खेडाण कर्युं छे तेनी भाळ मळे छे, अने त्यारे आश्चर्य अने अहोभावथी आपणुं मस्तक झूकी जाय छे.

आ पत्रोमां **विज्ञप्तिलेख** (आ. लोकहितसूरि), **विज्ञप्तिमहालेख** (जिनोदय-सूरि), **विज्ञप्तित्रिवेणि** (वा. जयसागर) तथा **त्रिदशतरङ्गिणी** (मुनिसुन्दरसूरि) जेवा महा-पत्रो विशिष्ट, अद्भुत अने अजोड गणाय तेवा छे.

आ स्थळे '**त्रिदशतरङ्गिणी**' विषे थोडीक वात करवी छे. तेना कर्ता तपगच्छपति **श्रीमुनिसुंन्दरसूरि** छे. तेमनो सत्ताकाल वि.सं. १४३६-१५०३ छे. तेओनी प्रचण्ड प्रतिभा, चारित्र तथा विद्वत्ताने कारणे तेओ 'कालीसरस्वती', 'वादिगोकुलषण्ढ' जेवां बिरुद पाम्या हता. तेओ सहस्रावधानी हता. पोताना तप-संयमना प्रभावथी तेओ मारी-मरकीना तथा तीडना उपद्रवोने शमावी शकता हता, तो देव-देवीओ पण तेमना गुणोथी आकर्षातां हतां. तेमणे रचेला ग्रन्थोमां 'अध्यात्मकल्पद्रुम', 'उपदेशरत्नाकर', 'जिनस्तोत्रकोश' वगेरे मुख्य छे.

'त्रिदशतरङ्गिणी' पण तेओनी ज एक अपूर्व रचना छे. आ रचना एक '**पत्रलेख**'रूप रचना छे. तेमणे पोताना परमगुरु **श्रीदेवसुन्दरसूरिजी** पर एक प्रलम्ब विज्ञप्तिपत्र लखेलो, जे पत्र १०८ हाथ लांबो हतो. आ पत्रलेख विषे आपणा मूर्धन्य साक्षर संशोधक श्रीमोहनलाल दलीचंद देशाई आ प्रमाणे लखे छे : "सं. १४६६मां तेमणे एक विज्ञप्तिग्रन्थ पोताना गुरु देवसुन्दरसूरिनी सेवामां मोकल्यो हतो. तेनुं नाम त्रिदशतरङ्गिणी छे. तेनुं विज्ञप्तिपत्रोना साहित्य अने इतिहासमां सौथी वधारे महत्त्व छे. तेना जेटलो मोटो अने प्रौढ पत्र कोईए पण लख्यो नथी.[1] ते १०८ हाथ लांबो हतो अने तेमां एकथी एक विचित्र अने

१. आ विधान १५मा शतकथी लईने २१मा शतक सुधी लागु पडे तेवुं छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुपम सेंकडो चित्र अने हजारो काव्य लखवामां आव्यां हतां. तेमां ३ स्रोत अने ६१ तरङ्ग हतां. ते हाल सम्पूर्ण मळतो नथी. मात्र त्रीजा स्रोतनो 'गुर्वावली' नामनो एक विभाग अने प्रासादादि चित्रबन्ध केटलांक स्तोत्रो अहीं तहीं छूटां मळे छे. गुर्वावलीमां ५०० पद्य छे ने तेमां श्रमण भगवान श्रीमहावीरथी लईने लेखक सुधीना तपागच्छना आचार्योनो संक्षिप्त परन्तु विश्वस्त इतिहास छे.'' (जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास, पारा ६७५)

श्रीहीरालाल र. कापडिया. आ विज्ञप्तिपत्रनो विस्तृत परिचय आपेलो छे, जे आ परिचय-लेख साथे जोडवामां आव्यो छे.

उपर जणाव्युं छे तेम, आ पत्रना ३ स्रोत (वहेण) छे. नदी, महाहद, तेना तरङ्गो वगेरे रूप कल्पनात्मक पदार्थो द्वारा निर्मित आ पत्र आखेआखो उपलब्ध नथी थतो. तेना छूटक-त्रुटक केटलाक अंशो उपलब्ध थाय छे, जेमां प्रथम स्रोतगत केटलांक स्तोत्रो मळे छे (स्तोत्रसंचय-भाग २), अने तृतीय स्रोतगत 'गुर्वावली' प्राप्त थाय छे, जे स्वतन्त्र ग्रन्थरूपे प्रकाशित थयेल छे (यशोविजय जैन ग्रन्थमाला-वाराणसी, वी.नि.सं. २४३७). ऍ सिवायना अंशो तेमज काव्योनां बन्धचित्रो क्यांय उपलब्ध थतां नथी.

ताजेतरमां परमविद्वान् मुनिराज **श्रीधुरन्धरविजयजी**ए पाटणना श्रीहेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञानमन्दिरना ग्रन्थसङ्ग्रहमांथी आ पत्रनो एक अंश शोधी काढ्यो छे. तेनुं नाम ''चैत्यषट्कबन्धचित्ररूप श्रीजिनस्तवावलि महाहद'' एवुं छे. १७ पत्रोनी ते प्रति डा. ११६, नं. ३३०७ लेखे नोंधाई छे. आ प्रति, मूळ प्रत परथी (के तेनी पुरातन प्रतिलिपि परथी) नवी, वीसमा शतकमां लखायेली छे. लखावट जोतां ते प्रवर्तक कान्तिविजयजीए लखावी होय एम अनुमान थाय छे. आ अंश २६२ श्लोकप्रमाण छे.

आ अंश **जिनस्तवावलि महाहद** स्वरूप होई, स्वाभाविक रीते ज, तेमां जिन-स्तव छे. परन्तु पत्तन-पाटणनगर वगेरेना वर्णनरूप आ अंश होवाथी सर्वप्रथम पत्तन-मण्डन श्रीपंचासर पार्श्वनाथना चैत्यनो आलेख (चित्र के नकशो) आलेखतुं चित्र-स्तोत्र कर्ताए रच्युं छे. आ श्लोकरचना के श्लोकलेखन एवी रीतथी थयुं हशे के जे ते श्लोक पूरां थतां ज जे ते आकृति ऊपसती आवे. अथवा एवुं पण होय के जे ते आकृति – स्थापत्यकीय-मन्दिरना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अङ्गना प्रतीकरूपे ते ते श्लोक रच्यो हशे.

कवि प्रारम्भे ज प्रतिज्ञावाक्यमां बे वात स्वीकारे छे : "चैत्यषट्क-बन्धचित्र" तथा "सालेख". अर्थात् आ विभागमां कर्ताए छ चैत्योनां बन्धकाव्यात्मक चित्रो अथवा चित्रकाव्योनुं निर्माण करवानुं छे, अने ते 'सालेख' कहेतां चित्राकृति साथे लखवानुं छे. वळी, पंचासर-पार्श्वना चैत्यना चित्रमां तेना निर्माता वनराज (चावडा)नी तथा तेना गुरु आ. शीलगुणसूरिनी प्रतिमाओनुं पण आलेखन तेमणे वर्णव्युं छे. आ उपरथी स्पष्ट थाय के ते समयमां पण ते बेउ प्रतिमाओ ते चैत्यमां मौजूद हती.

प्रत्येक पद्यनी पछी, ते पद्य, स्थापत्यना कया अङ्गनुं आलेखन के प्रतिनिधित्व करे छे, ते अङ्गनां नाम पण आप्यां छे : आ पद्य तळियुं के फरसरूप छे, आ पद्यो निसरणीना बे बाजुना बे दण्ड छे; २-२ पद्यो वडे त्रण पगथियां रचायां छे. आम नें आम पांच तरङ्गोरूप पांच स्तोत्रोनां ४० पद्यो द्वारा ते समग्र जिनालयना स्थापत्यनुं चित्रात्मक आलेखन कविए करी आप्युं छे. अने त्यां चैत्यषट्कमहाहृदअन्तर्गत पंचासरचैत्य-अन्तहृद पूर्ण थाय छे.

ए पछी ऋषभप्रभु अने शत्रुञ्जयगिरिना चित्रालेखन-वर्णनात्मक द्वितीय अन्तहृद शरु थाय छे. ४ स्तोत्र अने ४१ पद्योमां पथरायेला आ हृदना पण ५ तरङ्गो छे.* आमां शत्रुञ्जयनो पर्वत, उपत्यका, पद्या, अधित्यका, त्रिलक्षक्तोरण,

---

* वास्तवमां आ अन्तहृदमां तरङ्गोनी गणतरीमां थोडीक मुश्केली जणाय छे. केम के अन्तहृदनी शरूआतमां कवि प्रतिज्ञा करे छे के "तत्र पूर्वं तद्गिरितोरणचित्रतरङ्गौ तद्युगादिस्तवस्वरूपावत्र ज्ञेयौ ।" (तेमां पहेलां युगादिप्रभुनी स्तुतिस्वरूप शत्रुञ्जयगिरि अने तोरणनां चित्रबन्धकाव्यना बे तरङ्गो छे.) पण शत्रुञ्जयगिरिचित्रबन्धस्तोत्रनी समाप्तिमां कविअे तेने स्तोत्रस्वरूप ज गणाव्युं छे, स्वतन्त्र तरङ्गस्वरूप नहीं. अने ज्यारे तोरणबन्धकाव्य समाप्त थाय छे त्यारे पुष्पिकामां अे बे चित्रकाव्यो मळीने अेक महातरङ्ग थाय छे अेवी सूचना अपाई छे. माटे गिरिबन्धकाव्य अने तोरणबन्धकाव्य - अे बेने अेक तरङ्गनी अन्तर्गत गणवा के बे स्वतन्त्र तरङ्गो गणवा अे मूंझवण थाय छे.

त्यारबाद गर्भागारादिने लगतां चित्रबन्धकाव्योनो एक महातरङ्ग छे. अने त्यार पछी देवकुलिकाओ अने शिखरना अङ्गोने सम्बन्धित चित्रबन्धकाव्यो छे. आ काव्योनी समाप्ति साथे ज अन्तहृद समाप्त थाय छे. समाप्तिनी पुष्पिकामां आ काव्यो अङ्गे आ प्रमाणे विधान छे : "इति युगादिजिनस्तुतिमये तृतीयचतुर्थौ युगपत्तरङ्गौ । पूर्वतरङ्गद्वयस्य प्रौढत्वादेते त्रयो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्तम्भो, देवकुलिका आदि सर्व अङ्गोनां चित्रो-चित्रबन्धो वर्णवायां छे. ऋषभदेवना चैत्यनुं पण साङ्गोपाङ्ग आलेखन छे. स्थापत्यशास्त्रनी परिभाषानी आ शब्दावली पण तज्ज्ञो माटे अभ्यासनुं तेम जाणकारीनुं रूडुं भातुं पूरुं पाडे छे.

त्रीजो 'शान्तिनाथ-चैत्य'-अन्तहृद छे. तेमां प्रथम तरङ्ग पीठ अने स्तम्भ धरावता गर्भागारनो छे. कुल ३ तरङ्गात्मक ३ स्तोत्र अने २४ पद्यो छे, जेमां शान्तिनाथ-चैत्यनी चित्ररचना वर्णवाई छे.

चोथा अन्तहृदमां 'रैवताचलचैत्य'नो अधिकार छे. तेमां श्रीनेमिनाथ-स्तव छे. आमां ८ तरङ्ग छे. आमां गिरिनी उपत्यकाथी मांडीने चैत्यनां विविध तमाम अङ्गोनां चित्र छे, जेमां 'उंबर' (उंबरो), 'वत्तरङ्ग' (ओतरंग) जेवी चीजोनो तथा तेना माटेना शब्दोनो पण समावेश थाय छे. कुल ३२ पद्यो छे. पांच स्तोत्रो छे. अन्ते लखेल पुष्पिकाथी समजाय छे के २ पद्योने न गणीए, तो अेक ज आखुं स्तोत्र गणाय तेम छे. चैत्यना वर्णनथी तेनी विशालतानो पण ख्याल मळे छे.

पछी 'जीरापल्लीमण्डनपार्श्वचैत्यबन्धचित्र' एवो अन्तहृद आवे छे. ४ मोटां स्तोत्र, ८ तरङ्ग अने ४२ पद्योमां आ अन्तहृद पथरायो छे. चैत्यनुं, तेनां अनेक अङ्गोनुं जे वर्णन छे ते जोतां जीरापल्लीमांनुं तत्कालीन चैत्य केटलुं मोटुं - विशाल हशे तेनो अंदाज मळे छे.

छेल्ले 'महावीरजिनचैत्यचित्र' नामे अन्तहृद आवे छे. आमां त्रण स्तोत्र, ४ तरङ्ग, २७ पद्यो छे. छेल्ले १ पद्य उपसंहारात्मक छे, तेमां कवि पञ्चजिन-प्रासादबन्धनां स्तोत्रोनी समाप्ति सूचवे छे. ते पछी २ पद्यो छे जे महाहृदनी

लघवः... महाहृदे च नवमदशमौ मूलतश्च तरङ्गौ ।" आ विधानने लीधे केटलाक प्रश्नो जन्मे छे : १. जो अत्रे बे ज तरङ्गो पूरा थता होय तो "आ त्रण लघु छे" अेवुं कथन केम? २. पूर्वना पंचासरपार्श्वस्तुतिरूप अन्तहृदमां पांच तरङ्गो छे. तो अत्रे चार तरङ्गो होय तो महाहृदमां मूलथी आठमा-नवमा तरङ्ग कहेवा जोईअे. तेने बदले नवमा-दशमा केम कह्या? व.

माटे अत्रे १-२. पहेला महातरङ्गनी अन्तर्गत गिरिबन्ध अने तोरणबन्ध एम बे लघुतरङ्ग, ३. बीजो महातरङ्ग अने ४-५. त्रीजा-चोथा लघुतरङ्ग अेम कुल ५ तरङ्ग गणीने महाहृदना तरङ्गोनी सङ्ख्या मेळवी छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समाप्ति सूचवे छे. प्रान्ते पुष्पिका छे.

प्रत्येक ह्रदना प्रान्ते तेमज छेवटे जे पुष्पिका लखाई छे तेमांथी फलित थता मुद्दा : त्रिदशतरङ्गिणीनो आ अंश छ अन्तह्रदयुक्त एक महाह्रदरूप छे; आ पत्रनुं पूरुं नाम **पर्युषणामहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिणी** एवुं छे; गुर्जर-गुजरातनुं नाम **गूर्जरावती** होवानो उल्लेख ऐतिहासिक तेमज भाषाकीय दृष्टिए महत्त्वपूर्ण छे; गूर्जरावती परथी गुर्जरावत-गुजरात एम थई शके; आ स्रोतमां गुर्जरदेश, तेना राजा, तेमज पत्तननगर आदिनुं वर्णन करवामां आव्युं छे; ते प्रवाहमां आ अंशमां छ जिनचैत्योनां स्तवात्मक बन्धचित्रो आलेखायां छे; 'स्वस्वदेव' नो मतलब जे ते चैत्यगत मूलनायक मुख्य जिनदेव एवो जणाय छे; पत्तननुं वर्णन करवानुं होवाथी अहीं, पहेलां आदिनाथनी स्तुति न करीने पाटणस्थित पंचासरा पार्श्वनाथनी स्तुति करी छे.

आ समग्र वर्णनमां चैत्योनी बांधणी अंगे जे क्रमे जे जे अङ्गो दर्शाव्यां छे. तेने एकत्रित करीने कोई शिल्पी द्वारा चैत्योनां चित्र के नकशा करावी शकाय के केम? अथवा ते वर्णन अनुसार ते ते स्थापत्यकीय आकृति-आधारित काव्य-चित्र बनावी शकाय के केम? ते तो ते विषयना विशेषज्ञोनो ज विषय बने छे. आशा छे के कोई मर्मज्ञ आ बाबत पर पोतानुं ध्यान केन्द्रित करशे, अने कांईक सर्जनात्मक आपशे.

आटलो अंश मळ्यो ते पण आपणुं सद्भाग्य ज गणाय. मो.द.देशाईए, जो के, एमना अगाऊ टांकेला अवतरणमां नोंध्युं ज छे के "प्रासादादिचित्रबन्ध केटलांक स्तोत्रो अहींतहीं छूटां मळे छे". परन्तु आ अंश पण बीजा क्रमाङ्कवाळा स्रोतनां मङ्गलाचरण जेटलो ज गणवो जोईए. ते पछीना नगरादि-वर्णननो दीर्घ होवानी शक्यतावाळो हिस्सो तो हजी अप्राप्य ज रहे छे. आपणा अनेक भण्डारो पैकी क्यांक ते हिस्सो दटाईने पड्यो होय तो ते बनवाजोग छे.

आ अंशमां केटलांक स्थान सन्दिग्ध के अशुद्ध पण छे, जे लेखनदोषना कारणे जणाय छे. छतां महदंशे ते शुद्ध छे ते जोई शकाय तेम छे.

आ पत्रांशनी प्राप्ति तथा प्रकाशन ए विज्ञप्तिपत्र-विशेषाङ्कनां घरेणांरूप छे. आवुं अमूल्य घरेणुं सम्पादन माटे उपलब्ध कराववा बदल मुनिराज श्रीधुरन्धरविजयजीनो आभार मानीए तेटलो ओछो छे. तेमने विनवीए के आ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महापत्रनो अवशिष्ट अंश पण आ ज रीते ते शोधी काढे, अने आ अत्रे प्रकाशित थता हिस्सामांना श्लोकोनां चित्रो पण तेओ आपणने रची आपे. अस्तु.

पूर्ति = ले. हीरालाल र. कापडिया

'त्रिदशतरंगिणी (स्तवपंचविंशतिका, 'गुर्वावली इत्यादि) (उ. वि. सं. १४६६) : आना कर्ता 'सहस्रावधानी' मुनिसुन्दरसूरि छे. अेमणे पोताना दीक्षागुरु अने गच्छनायक देवसुन्दरसूरिनी 'पर्युषण' पर्व निमित्ते क्षमा याचवा माटे आ विज्ञप्तिरूपे लेख लख्यो छे. उपलब्ध विज्ञप्तिपत्रोमां आ सौथी मोटुं छे. अे १०८ हाथ लांबु होवानुं अने अनेक चित्रकाव्योथी विभूषित होवानुं कथन आ मुनिसुन्दरसूरिना शिष्य हर्षभूषणगणिअे श्राद्धविधिविनिश्चयमां कर्युं छे.

''त्रिदशतरंगिणी''नो अर्थ 'सुरनदी' याने 'गंगा' थाय छे. 'गंगा' नदी हिमालय पर आवेला मान (? पद्म) सरोवरमांथी नीकळी 'बंगाळ' उपसागरने मळे छे. अेवी रीते (गुर्वावलीनी पुष्पिकामां सूचवाया मुजब) 'त्रिदशतरंगिणी'रूप 'गंगा' माटे मुनिसुन्दरसूरिनुं हृदय अेमना गुरुनो पडेलो प्रभाव ते 'पद्म' ह्रद छे अने अे ह्रदमांथी 'त्रिदशतरंगिणी' नीकळी कर्ताना गुरु देवसुन्दरसूरिना महिमारूप सागर तरफ जाय छे.

मोटी नदी होय तो अेना भिन्न भिन्न फांटा पडी अे विविध दिशामां वहे - अेना जातजातना प्रवाह जणाय. त्रिदशतरंगिणी माटे पण भिन्न भिन्न स्रोतनी कल्पना मुनिसुन्दरसूरिअे करी छे.

---

१. आ कृति संपूर्णपणे कोई स्थळे मळ्ती होय अेम जणातुं नथी. जैनानंदपुस्तकालयनी क्रमांक २३७नी हाथपोथीमां ''स्तव-पंचविंशतिका'' सुधीनो ज भाग छे. अहींना 'आणसुर' गच्छना भंडारनी अेक हाथपोथी (क्रमांक ५७५)मां संपूर्ण ''वर्तमान-चतुर्विंशतिश्रीजिनस्तव-चतुर्विंशतिका'' नामनुं ह्रद छे. (फक्त पहेलुं पत्र नथी अने अेथी प्रथमनां नव नव पद्योवाळा त्रण तरंग अने चोथानां साडाचार पद्यो (कुल्ले ३१॥ पद्यो खूटे छे.) प्रथमस्रोतना १२ तरंग ''जैनस्तोत्रसंचय'' वि.२मां छपाया छे.

२. आ. ''य. जै. ग्रं.'' मां वि.सं. १९६१मां प्रकाशित थयेली छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्रिदशतरंगिणी संपूर्ण हजी सुधी मळी नथी. अेनां ओछामां ओछां त्रण स्रोत छे. तेमांना प्रथम स्रोतनुं नाम 'जिनादिस्तोत्ररत्नकोश' किंवा 'नमस्कारमंगल' छे. बीजा स्रोतनुं नाम के अेने अंगेनुं लखाण जाणवामां नथी. त्रीजा स्रोतनुं नाम 'गुरुपर्ववर्णन' छे. प्रत्येक स्रोतने महाह्रद छे. तेमां प्रथम स्रोतने 'वर्तमान-चतुर्विंशतिश्रीजिनस्तवचतुर्विंशतिका' नामनुं महाहद छे. बीजो स्रोत मळतो नथी. अेना महाह्रदना नामनी पण खबर नथी. त्रीजा स्रोतने 'गुर्वावली' नामनो महाह्रद छे. प्रत्येक महाह्रदने ह्रद अने ह्रदने तरंगो छे.

[1]गुर्वावलीना अंतमां '६१ तरंगो' अेवो उल्लेख छे. अे एक रीते विचारतां अेना ज तरंगोनी संख्या सूचवे छे पण साथे साथे अेम पण भासे छे के अे गुर्वावली सुधीना विभागना तरंगोनी संख्या हशे.

'त्रिदशतरंगिणी'रूप आ विज्ञप्ति-लेख १०८ हाथ जेटलो लांबो होवानो उल्लेख जिनवर्धनगणिअे पोते वि.सं. १४८२मां रचेली **पट्टावली**मां कर्यो छे. अेमां १०८ चिठ्ठीओ (चोंटाडायेली) होवानी वात वि.सं. १४८०मां हर्षभूषणगणिअे रचेला **अंचलमतदलन-प्रकरण**मां जोवाय छे. विशेषमां आ प्रकरणमां आ विज्ञप्तिलेखनो परिचय आपतां कह्युं छे के अेमां अनेक प्रासाद, पद्म, चक्र, षट्कारक, क्रियागुप्तक, तर्क-प्रयोग, अनेक चित्राक्षर, द्व्यक्षर, पंचवर्ग-परिहार अने अनेक स्तव छे.[2] धर्मसागरगणिअे [3]गुरुपरिवाडी (तपागच्छपट्टावली)नी गा. १६नी स्वोपज्ञ टीका (पृ. ६६)मां आ बाबतो उपरांत अर्धभ्रम, सर्वतोभद्र, मुरज, सिंहासन, भेरी, समवसरण, सरोवर, आठ महाप्रातिहार्यो इत्यादि नवा त्रणसो बंध अेटली विशेष हकीकत आपी छे.[4]

प्रथम स्रोतना प्रारंभमां नीचे मुजबना छ तरंग छे :-

(१) [5]मंगल-शब्द-श्लोक-सर्वज्ञाष्टक (श्लो. [6]१०)

---

१. आमां अेक स्थळे 'स्त्री जिननी पूजा करी शके' अे वात छे.

२. मूळ उल्लेख माटे जुओ D C G C M (Vol. XVIII, pt. I, p. 130)

३. जुओ **पट्टावली-समुच्चय** (भा. १, पृ. ६६)

४. जुओ I L D (हप्तो २, पृ. ११६-११७)

५. आनी पहेलां त्रिदशतरंगिणीना मंगलाचरणरूपे अेक पद्य छे.

६. आ श्लोकोनी संख्या छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२) युगादिदेवस्तवनाष्टक (श्लो. १०)

(३) शान्तिजिनयमकस्तवाष्टक (श्लो. ११)

(४) पंचमवर्गपरिहार-श्रीनेमिजिनस्तवनाष्टक (श्लो. १२)

(५) पार्श्वजिनस्तवनाष्टक (श्लो. ११)

(६) वर्धमानस्वामिस्तव (श्लो. १७)

आ पैकी प्रथम तरंग जोतां अेम भासे छे के अहींथी **त्रिदशतरंगिणी**नो प्रारम्भ थाय छे.

पहेला बे तरंगोमां आठ आठ पद्यो पछीनां बे पद्योने 'चूला' अने 'प्रतिचूला' तरीके ओळखावेलां छे ज्यारे त्रीजामां नवमा पछी अने चोथामां दसमा पछी आम छे. पांचमा तरंगमां आठमा पद्य पछीनां चूला, प्रतिचूला अने समर्थना-पंक्ति कहेलां छे.

वर्धमानस्वामिस्तव नामना छठ्ठा तरंगमां मंगलाचरणरूपे पहेलुं पद्य छे. त्यार पछी, 'र' अे अक्षरवाळुं 'अेकाक्षरी' पद्य छे. त्रीजा अने [१]चोथा पद्यमां 'स' अने 'र' अे बे ज अक्षरोनो उपयोग करायो छे. आम आ 'द्व्यक्षरी' पद्यो छे. अेवी रीते पांचमा पद्यमां 'व' अने 'र', छठ्ठामां 'र' अने 'य', सातमामां 'म' अने 'र' तेम ज आठमा अने [२]नवमामां 'य' अने 'म', १०मा, ११मा अने १२मामां 'स' अने 'र', तेरमामां 'व' अने 'र'नो उपयोग करायो छे. आ 'द्व्यक्षरी' पद्यो छे. चौदमुं पद्य उपसंहाररूपे छे. अने पछीनां त्रण पद्योने चूला, प्रतिचूला अने समर्थना-पंक्ति अे नामथी ओळखाव्यां छे. आ छठ्ठा तरंगना श्लो. २ थी १४ उपर स्वोपज्ञ वृत्ति छे. अेने आधारे श्लो. २ थी १३ ने अंगे पदच्छेद, अन्वय अने स्पष्टीकरण आगमोद्धारके तैयार कर्यां छे.

आ छठ्ठा तरंग पछी 'चतुर्विंशतिजिनस्तवाशीर्वाद' नामनो ह्रद शरू थाय छे. अेमां प्रथम मंगलाचरणरूपे अेक श्लोक आपी नीचे मुजबना त्रण तरंगो रजू कराया छे :-

(१) आद्य-जिनाष्टक (श्लो. ८+१ चूला). (२) मध्यम-जिनाष्टक (श्लो.

---

१. आ चोथुं पद्य त्रीजा पद्यना पाठान्तररूपे अपायुं छे.

२. आ नवमुं पद्य आठमाना पाठान्तररूप छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८). (३) चरम-जिनाष्टक (श्लो. ८).

आना पछी उपसंहाररूपे बे पद्यो छे.

उपर्युक्त त्रण तरंग पैकी पहेला ऋषभदेवथी मांडीने चन्द्रप्रभस्वामी सुधीना आठ तीर्थंकरोनी स्तुति छे. अेवी रीते बीजामां अेमना पछीना आठनी अर्थात् सुविधिनाथथी शान्तिनाथ सुधीना आठ मध्यम तीर्थंकरोनी स्तुति छे अने त्रीजामां छेल्ला आठनी अेटले के कुन्थुनाथथी ते महावीरस्वामी सुधीना तीर्थंकरोनी स्तुति छे.

आ त्रण तरंगोनो क्रमांक नवेसरथी न आपतां चालु अपायो छे अेटले के अने ७मा, ८मा अने ९मा तरंग गणेला छे. आ नव तरंग पूर्ण थतां हृद पूरो थाय छे अेवो उल्लेख छे. आ हृद पछी नीचे मुजबना त्रण तरंगो छे :-

(१) क्रियादिगुप्तकरूप विश्वकालनीयव्यापिजिनस्तवाष्टक (श्लो. [१]८). (२) 'जीरापल्ली'पार्श्वस्तवनाष्टक (श्लो. ९). (३) शारदास्तवाष्टक (श्लो. ९).

आ त्रणेना क्रमांक चालु अपाया छे अेटले आ हिसाबे आ दसमाथी [२]बारमा तरंग छे. अेमां पहेलामां क्रियादि गुप्तरूपे छे. बीजानो 'द्वितीय पुटभेद' रूपे निर्देश छे. आ पैकी दसमा तरंग उपर आगमोद्धारके पदच्छेद करवा पूर्वक क्रियापद वगेरे जे अहीं गुप्त छे तेनो स्पष्ट निर्देश कर्यो छे.

आना पछी २५ स्तोत्रोवाळी स्तवपंचविंशतिका छे. १६मा स्तोत्र तरीके 'भुजंग-दण्डक'मां रचायेली चार पद्यनी वीर-दण्डक-स्तुति छे.

गुर्वावली- आ संस्कृतमां रचायेलां ४९६ पद्योनी कृति छे. अे वि.सं. १४६६मां रचायेली छे. अेमां महावीरस्वामीथी मांडीने देवसुन्दरसूरि अने अेमना पट्टधर सोमसुन्दरसूरि (श्लो. ३४५, ३४८-३६३ अने ३९१-४०६) तेमज तेमना शिष्यो सुधीनो क्रमबद्ध वृत्तान्त छे. आम आमां कर्ताना समयनी अनेक विश्वसनीय बाबतो रजू करायेली छे. नवाईनी वात तो अे छे के कर्ताअे पोतानां

---

१. आनी पहेलां मंगलाचरणरूपे बे पद्यो छे.

२. ''कला काचित्''थी शरू थतुं अने 'नमस्कार-मंगल' नामना प्रथम स्रोतना बारमा तरंग तरीके निर्देशातुं नव पद्यनुं शारदास्तवाष्टक भ. स्तो. पा. का. सं. (भा. २)नी मारी प्रस्तावना (पृ. ३३-३४)मां में उद्धृत कर्युं छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जन्म, दीक्षा अने वाचकपद क्यां अने क्यारे थयां ओ जणाव्युं नथी.

गुर्वावलीना २६३मा पद्यमां कह्युं छे के भीमपल्लीनो (भीलडीयाजीनो) नाश थनार हतो ते जाणी [१]ओओ प्रथम कार्त्तिकमां चातुर्मासिक प्रतिक्रमण करी अन्यत्र विहार करी गया. आम अहीं अधिक मास तरीके कार्त्तिकनो [२]उल्लेख छे.

प्रस्तुत आचार्य 'तपा'गच्छना छे अने आजे केटलाये समयथी आ गच्छना अनुयायीओ अधिक मासमां सांवत्सरिक प्रतिक्रमण जेवी विशिष्ट धार्मिक क्रिया करता नथी तो सोमप्रभसूरिओ केम चातुर्मासिक प्रतिक्रमण कर्युं इत्यादि प्रश्नो में मारा निम्नलिखित [३]लेखमां रजू कर्यां छे :-

" 'अधिक' याने प्रथम कार्त्तिक मासमां चातुर्मासिक प्रतिक्रमण."

(जैन संस्कृत साहित्यनो इतिहास
खण्ड २, प्र. ३३मांथी साभार उद्धृत)

—x—

आ काव्योमां रजू थयेला शिल्पना केटलाक अङ्गोनो परिचय

तलपट्ट - चैत्यभूमि
भारपट्ट - भारवट (?)
सोपान - पगथियां
निःश्रेणि - नीसरणी
घटा(घण्टा) - ?
देवकुलिका - देरी
खण्डदेवकुलिका - ?
गोमयमण्डली - ?

---

१. धर्मघोषसूरिना शिष्य सोमप्रभसूरि.

२. आवो बीजो उल्लेख वि.सं. १६५४ने अंगे जोवाय छे. ओनी सविस्तार नोंध में 'अधिक मास' तरीके कार्त्तिकथी फागण तेम ज 'क्षय मास' तरीके कार्त्तिकथी पोष नामना मारा लेखमां लीधी छे. आ लेख "गु. मित्र तथा गु. दर्पण" (साप्ताहिक) ता. ४-८-'५८ना अंकमां छपावायो छे.

३. आ लेख 'जैन" (पर्युषणांक, पु. ५७, अं. ३६-३७)मां प्रसिद्ध थयो छे.

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

त्रिलक्षकतोरण - ?
चतुष्किका - चोकी
गर्भागार - गभारो
अन्धारिका - ?
आमलसारक - आमलसारो (शिखरना स्कन्धे चडावातो भाग, जेना पर कलशनी स्थापना थाय छे.)
द्वारशाखा - बारसाख
उम्बर - उंबरो
उत्तरङ्ग - ओतरंग (बारसाखनी उपरनो भाग)
पद्मशिला - घुम्मटनी मध्यमां लटकतुं झुम्मर
शुकनास - शिखरमध्ये गोखला जेवुं करी उपर सिंह मूकाय छे ते
पीठ - जगतीनी उपरनो भाग, जेना पर मंडोवर स्थपाय छे ते.
जालिका - जाळी

* * *

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'त्रिदशतरङ्गिणी'-अन्तर्गता

चैत्यषट्कबन्धचित्ररूप-जिनस्तवावलिः ॥

अथ चैत्यषट्कबन्धचित्ररूप-श्रीजिनस्तवावलिनामा [म]हाह्रदः स्वस्वदेव-स्तुतिरूपः सालेखो लिख्यते । तत्र पूर्वं श्रीपत्तनमण्डन-पंचासरश्रीपार्श्वचैत्यालेखः तत्कारयितुः श्रीवनराजस्य तत्प्रतिबोधकस्य श्रीशीलगुणसूरेश्च प्रतिमया युत आलिख्यते । तच्चैत्यचित्रबन्धने श्रीपार्श्वस्तवश्च लिख्यते ॥ यथा —

जयश्रियं सर्वपुरेष्ववाप्य पुण्यर्द्धिभिः **पत्तन**मादधाति ।
चैत्यं जयस्तम्भमिवाऽत्र यस्य स्तवीमि **पंचासरपार्श्व**मेनम् ॥१॥

स्तुतिं त्वदीयां जगताऽप्यशक्यां कथं विधाताऽस्मि जडावतंसः ।
श्रीपार्श्वनाथेति न चिन्तयामि विचारबन्ध्यौ(वन्ध्यो) ह्यतिभक्तिरागः ॥२॥
तलपट्ट[भारपट्ट?]बन्धौ ॥

अमेयमाहात्म्यमयस्वरूप! पराभिभूतान्तरशत्रुचक्र! ।
भवाम्बुराशौ निपतन्तमेनं नतं [वि]भो! मामव पार्श्वदेव! ॥३॥
निश्रेण्याकारसोपानपङ्क्तौ उभयतो दण्डकौ ॥

मेधाविनस्ते स्युरमर्त्यपूज्या ज्यायःशुभश्रीभरसङ्गभाजः ।
जना विभो! येऽनुदिनं भवन्तं तमोपहं नंनमतीद्धभावाः ॥४॥

मारारिवारोत्थपराभवेन न दग्ध[भा]वेषु रतिं भजेत ।
तव स्वरूपस्य विभावनेन नरो दधानो धियमत्र साराम् ॥५॥
द्वाभ्यां प्रथमं सोपानम् ॥

स्वभावतस्त्वं जगतां हिताय यमिन्! प्रवृत्तिं दधसे सदापि ।
पितेव वात्सल्यरमानिधानं रम्योऽसि तद् बुद्धिमतां नितान्तम् ॥६॥

परा[:] समृद्धीस्तनुतेऽप्यधीतं तवाऽभिधानं सकलार्त्तिनाशम् ।
शमीश! कुर्वद् भविकव्रजानां नाथाऽस्ति मन्त्रस्तदतः परो न ॥७॥
द्वितीयसोपानम् ॥

तनोति यस्यांऽशुपतिर्न नाशं शतं मणीनां न न दीपकानाम् ।
नापीन्दुरन्तस्मिरं(स्तिमिरं?) क्षणेन नयेत् तदन्तं तव वाक् प्रकामम् ॥८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शमाय रागादिगदोच्चयानां नाथ! त्वदुक्तानि महोषधन्ति ।
तिरोहितज्ञानदृशोऽपि तानि निन्दन्ति ही! मोहपटेन पापाः ॥९॥
तृतीयसोपानम् ॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि-हृदयहिमालयावतीर्ण-श्रीगुरुमहिमपद्महृद-प्रभवायां युगप्रधानावतार-श्रीमत्तपाबृहद्गच्छमण्डनगुरुश्रीदेवसुन्दरसूरिपदपद्म-सौभाग्यार्णवानुगामिन्यां **श्रीमहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां** जयश्र्यङ्कायां द्वितीये गूर्जरावती-तन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरादिश्रोतसि चैत्यषट्कचित्रमहाहृदे श्रीपंचासरपार्श्व-चैत्यबन्धचित्रान्तहृदे स्वदेवस्तुतिरूपे तलपट्ट-भारपट्ट-सोपानत्रिकरूपपीठबन्धनामा प्रथमस्तरङ्गः ॥

विनयं नयनप्रीतिप्रदये त्वयि बिभ्रति ।
कुर्वते ससुरास्तेभ्यः सर्वेऽनघनरा नतिम् ॥१०॥ स्तम्भः ॥
आमं वामतमं पार्श्व भवरूपं हरन्नवक (?) ।
त्वमेव द्वौ पथौ मुक्तिप्राप्त्यै विश्वविभो! विशः ॥११॥ स्तम्भः ॥
सारं पुरवरं विश्वे मान्ये **पत्तन**मेव तत् ।
यत्र त्वं पूज्यसे प्रातर्भव्यैरतरतारकः ॥१२॥ स्तम्भः ॥
श्रितस्य तव तन्त्रोक्तं मार्गं सत्पुण्यवैभवम् ।
लोभवह्निर्नयत्येष न विशः कृशतां शमिन्! ॥१३॥ स्तम्भः ॥
नतं वीतक्षितं यस्य त्वां शिरः परमेश्वरम् ।
लभतेऽसौ न संयोगं प्राप्तशुद्धशुभः शुचा ॥१४॥ स्तम्भः ॥
मुधा मेधा बुधाभ्यर्च्य! तेषां मेधाविनां विभो! ।
त्वयि ये मत्सरं यान्ति परे धर्मेऽन्धताधराः ॥१५॥ स्तम्भः ॥
न स ह्यभिनतिं विज्ञो विश्वेऽप्यन्यस्य कस्यचित् ।
वितनोति गुणानात(?)ज्ञोचितां यः स्तुतिं सृजेत् ॥१६॥ थटा(घण्टा?)बन्धः ॥
स्तोत्राद् भवन्ति भवतो भविनः क्षणेन
तातक्रमाम्बुजविनम्रविचक्षणेन ।
वन्द्या मुदा दिविषदामपि नायकेन
गर्जन्महादितिजभीभरदारकेन ॥१७॥ उभयतो मण्डपौ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परात्मश्रीदपञ्चास्य-स्वर्द्विपा(पा)लिपराभवे ।
श्रीपार्श्व! कृपया पाहि मां नाथ! परमन्थनात् ॥१८॥
श्रीपार्श्वनामगर्भं कमलं शिखरमूलमध्ये ॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० स्तम्भषट्क थण्टा(घण्टा?)मण्डप-कमलबन्धनामा द्वितीयस्तरङ्गः ॥

मयि प्रसन्नो भव विश्वबन्धो! त्वदेकसेव्ये महिमैकसिन्धो! ।
विधेहि **पंचासरपार्श्वनाथ**! संसारदुःखाम्बुनिधेः प्रमाथम् ॥१९॥
त्वयि प्रसन्ने जगतामधीश! जन्मादिदुःखान्युपयान्ति नाशम् ।
तैरर्दितस्तत्तव पादपीठं भजन् विदध्यां स्तवनादिपाठम् ॥२०॥
लघुदेवकुलिकाचतुष्कम् ॥

विश्वेश्वरं पार्श्वजिनावतंसं समीहितानन्दकरं नतानाम् ।
श्रीपत्तनस्थं खलु वन्दमाना नायान्ति सांसारिकदुःखतापम् ॥२१॥
देवस्य दक्षिणतो बृहती देवकुलिका ॥

अपूर्वमेतत्तव पादपङ्कजं जगत्पते! निस्समशीतिमोदयम् ।
स्मृतेऽपि यस्मिन् भवभीतितापजं जहाति कष्टं भविकः प्रमोदभाक् ॥२२॥
मध्या देवकुलिका बृहती ॥

राजाधिराजो **वनराज**नामा मान्यो न केषां स जगत्प्रधानम् ।
अतास्थपद्योल्ल(द्योऽत्र) भवन्तमीशं शमाय संसारभियां बुधानाम् ॥२३॥
वामतो बृहद्देवकुलिका ॥

त्वं देव! **पंचासरपार्श्वनाथ**! करोषि येषां हृदये निवासम् ।
तेषां सरोगा दुरितोपसर्गा भजन्ति सद्योऽपि जिन! प्रवासम् ॥२४॥
शिखरमध्ये मु(ख?)ण्डदेवकुलिकाकारः ॥

तपोभिरुग्रैर्नहि मुक्तिसम्पदं दमैर्न चित्रैर्न मरुत्प्रसाधनैः ।
जडा लभन्ते विभुना त्वया विना, नानाप्रयुक्तैरपि कायदण्डनैः ॥२५॥
शिखरे उपरितने शीर्षभागे मध्यपङ्क्ती ॥

तपोजपाद्यौपयिकैरनेकशः शमादियुक्तैरपि याऽन्यदर्शनैः ।
न साध्यते मुक्तिरसावपि ध्रुवं वशीभवेन्नाथ! तवांह्रिसेवनैः ॥२६॥
शिखरे उपरितने बहिः पङ्क्ती ॥
एवं त्रिभिः शिखरे सामलसारकोपरितनभागबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिन! तानवकर्ता त्वमघस्तोमस्य सर्वतः ।
तरसारतत्त्वाप्तिं (?) वितरे हितदायक! ॥२७॥ कलशः ॥
यो वक्ति **पंचासरपार्श्वनाथ**! स्तुतिं त्वदीयामिति भावसार(रा)म् ।
अनन्तसातं मतमातनोथि(ति?) महोदयस्याऽस्य जिन(:) प्रसन्नः ॥२८॥
वदामि तन्नाथ! तदर्थिताय वशादहं ते स्तुतिमप्यविद्वान् ।
तन्मे तदारोग्यसुतत्त्वबोधी दत्त्वाऽपि सातं शिवसीम देयाः ॥२९॥
द्वाभ्यां ध्वजबन्धः ॥

श्रीपंचासरपार्श्वनाथमिति यः सर्वेन्द्रपद्मावती-
वैरोट्या**मुनिसुन्दर**स्तुतिपदं संस्तौति चित्रैर्मुदा ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥३०॥

इति श्रीपंचासरश्रीपार्श्वजिनस्य तच्चैत्यचित्रबन्धेन स्तवनं श्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ॥ इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० **विज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां** जयश्र्यङ्कायां द्वितीये गूर्जरावती-तन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरवर्णनादिश्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे श्रीपंचासरपार्श्वनाथस्तु० तच्चैत्यचित्रान्तर्हृदे युगपत्तृतीय-चतुर्थौ तरङ्गौ ॥

सम्पूर्णश्चाऽयं श्रीपत्तनमण्डनश्रीपंचासरपार्श्वचैत्यबन्धचित्रान्तर्हृदः ॥

श्रीपंचासरपार्श्वेशं द्वैधद्वेषिजयश्रिये ।
स्तुवे गोमयमण्डल्यान्विततोरणचित्रतः ॥३१॥
सारामम्दनदमत्सरसारहीन-पापेति यस्तवगुणालिसुधां मनस्वी ।
देवान्तरेषु स रतिं लभते न काचे लब्ध्वा मणीमिव महेन्द्रनमस्यपाद!
॥३२॥ ता(तो)रणस्तम्भः ॥

निष्कामसन्ततसमग्रसुरासुरार्च्य! श्रीपार्श्व! विश्वजनवत्सल! दुःखिपातः! ।
रागादिरौद्रतमभावरिपुव्रजेभ्यो मां तात! पाहि कृतसर्वहितप्रतानः(न)! ॥३३॥
स्तम्भः ॥

दरकरदम्भशमक्षम! दमसंयममय! समदभवमथन! ।
नवशिवनयनत! हितमत! शिव! मां मां वशितं(नं?) नयविभव! ॥३४॥
अर्द्धाभ्यामुभयतस्तोरणशाखाद्वयोपरिबन्धौ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स शिवं वशिराजो मे देयाद् भुवनभासनः ।
पार्श्वः श्रेयोलतासारो रोगादिहरसंस्तवः ॥३५॥
वदन्ति मदनाद्यैस्ते जितानामपि संस्तवम् ।
न जानन्ति गताऽज्ञान-नरा ये सद्गुणांस्तव ॥३६॥ द्वाभ्यां तोरणम् ॥
शस्तप्रासभवातङ्क! जिन! राजितकान्तिभिः ।
भियां [सं]सर्गभित्! पार्श्व! वितर स्तुत! मे शुभम् ॥३७॥ कलशः ॥
भवन्ति विश्वेऽतिशयाः प्रसिद्धा-स्तवाऽप्रमाणा विहितप्रमादे ।
देवाधिदेवत्वगुणप्रतीत्यै श्रीपार्श्व! देवान्तरनिस्समान! ॥३८॥
नतोऽस्मि पंचासरपार्श्व! नेतस्तव क्रमौ तेन भवार्त्तिभीतः ।
तन्मां कृतार्थीकुरु शक्रवन्द्य! मुक्तिप्रदानेन जिनाऽस्तलोभ! ॥३९॥
द्वाभ्यां गोमयमण्डलीबन्धः ॥
एवं स्तुतो भक्तिभरेण नाथ! मयाऽपि पंचासरपार्श्वदेव! ।
देया ममाऽऽरोग्य-सुबोधिलाभौ प्रसादमाधाय जगच्छरण्य! ॥४०॥
स्तुतिमिति तनुते जिनेन्द्र! यस्ते मघवमहामुनिसुन्दरस्तुतांह्रे! ।
स भवति गुणसम्पदा समस्ते फलमिति तद् वितराऽचिरान्ममाऽपि ॥४१॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि ह० श्री... महाविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावती-तन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरवर्णनादिश्रोतसि श्रीचैत्य-षट्कमहाहृदे श्रीपंचासरचैत्यान्तर्हदे सम्पूर्णीभूतेऽग्रतो गोमयमण्डलीयुततोरण-बन्धनामा तरङ्गः पञ्चमः ॥ मूलतश्च सतोरणोऽपि सम्पूर्णश्चायं पंचासरपार्श्व-चैत्यान्तर्हृदः ॥

अथ श्रीशत्रुञ्जयमहातीर्थालङ्कारश्रीयुगादिदेवप्रासादबन्धचित्रनामा गिरिबन्ध-स्वस्तिकतोरणबन्धपूर्वकः श्रीपुण्डरीकशिखरशेखरश्रीऋषभप्रभुस्तवमयो महाहृदः (अन्तर्हृदः?) प्रस्तूयते । तत्र पूर्वं तद्गिरितोरणचित्रतरङ्गौ तद्युगादिस्तवस्वरूपावत्र ज्ञेयौ । तदनु तच्चैत्यचित्रस्तवश्च ॥ तथाहि –

जयश्रीणां प्रदातारं स्थितं शत्रुञ्जयाचले ।
स्तुवे श्रीमद्युगादीशं तद्गिरीन्द्रादिचित्रतः ॥१॥ उपत्यकाबन्धः ॥१॥ ४२
श्रीतीर्थनायक! यशोभृतविष्टपाऽष्टकर्मद्विपद्विपरियो(पो)! जगदकेतात! ।
रत्यै त्वदागमगतार्थविदां न दानिन्! देवान्तरं वितर तन्निजदर्शनं मे ॥२॥ ४३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अर्द्धाभ्यां पूर्वत उपत्यकात आरभ्याऽधित्यकालग्नशिरस्कदण्डकाका-रगिरिशिखरपद्याद्वयबन्धः ॥

चित्तं न मे जिन! जिती(ता?)रितते मते ते ।
सद्धस(?स्त?) लीनमिन! तिष्ठति भीतिभेदिन्! ।
तत्तत्तथा कु[मत?]बोधमहामदारे-
र्न स्याद् भयं मम यथाऽखिलधाम(?) ॥३॥ ४४

तथैव पश्चिमातः शिखरपद्याद्वयबन्धः ॥

जगत्पतिं योऽतिमुदा भवेभ-हरिं भवन्तं भगवन्! स्तवीति ।
महोदयस्याऽयमनन्तसातं करस्थितं सुस्थितधीः करोति ॥४॥ ४५

तथैव मध्यशिखरद्वयबन्धः ॥

भावारिव्रजभीतप्तिं हर त्वं मे निजागमात् ।
तिरस्करोति मत्तान् स मोहादिद्विती हि - -- (?) ॥५॥ ४६

अधित्यकाबन्धः ॥

सुरनरमुनि..... श्रीशत्रुञ्जयगिरिबन्धचित्रम् ॥

दधाति दर्पं त्रिजगज्जयश्रियं य एव संप्राप्य युगादिनायक! ।
दत्से त्वमेवामुमपि..... यदर्थितं श्रीविमलाद्रिमण्डन! ॥६॥ ४७
दमीश! तेनाऽस्मि तवैव संस्तवं वदंस्त्रिलोकीप्रभुतां विदन् ध्रुवाम् ।
ददस्व तन्मे शिवमीहितं फलं लभेत सेव्यस्य बलाद्धि सेवकः ॥७॥ ४८

युग्मम् ॥ - द्वाभ्यां महास्वस्तिकः ॥

जयाऽस्तजन्माधिजराऽजराजताऽचलाऽमलैः स्फारयशोभिरुज्ज्वलाम् ।
सृजंस्त्रिलोकीं सकलारिनिर्जयात् शमिप्रशस्यास्पदमक्षयश्रियः ॥८॥ ४९

त्रिलक्षकतोरणे प्रथमस्तम्भः ॥

क्षमस्तमःस्तोमकमक्षमंदता-प्रदं निहन्तुं सकलं[कल]ङ्कमुग् ।
अनन्तसंविद्धिभवोभयं भवाद् ममाऽज! दत्वेश! दयादमोदयम् ॥९॥ ५०

प्रथमतस्त्रिलक्षकतोरणार्द्धम् ॥

विशिष्टविद्यासु विशां विभो! विना त्वदागमं कः सृजतीह नैपुणम् ।
भवेच्च तत्त्वे तत एव वेत्तृ तदाशु त(तं) मे *वितराचलद्धलम्* ॥१०॥ ५१

त्रिलक्षणकतोरणे परतस्तोरणस्तम्भः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चरद्वरं मारभरं चरान्तरे हरन् प्रदेयाः शिवमेव देव! मे ।
त्वमेव दत्सेऽर्थितमन्तकान्तकृ-ज्जगत्त्रयोन्मीलदमन्दमोद! यत् ॥११॥ ५२
त्रिलक्षकतोरणेऽपरतस्तोरणार्द्धम् ॥

एवं सम्पूर्णं त्रिलक्षकतोरणबन्धचित्रं सस्वस्तिकम् ॥

सुरनरमुनिसुन्दरस्तवौघा दधति जिनाद्यकुशाग्रतां यदन्तः ।
तव तमपि गुणाब्धिचित्रे(त्र)मीश! चित्रैर्मम नुवतो वितरेष्ट सौख्यमाशु ॥१२॥ ५३

इति श्रीशत्रुञ्जयगिरिस्वस्तिकत्रिलक्षकतोरणबन्धचित्रैः श्रीशत्रुञ्जय-श्रीयुगादिजिनस्तवनं श्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ॥ इति युगपतद्विनेयलव(?) श्रीमुनिसुन्दरसूरिहृत्तरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीयगूर्जरावती-तन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगर-वर्णनश्रोतसि चैत्यषट्कचित्रमहाहूदे श्रीशत्रुञ्जयगिरिचैत्यबन्धचित्रान्तर्हृदे द्वितीये तद्गिरिवरालङ्कार-श्रीयुगादिस्तवरूपे गिरिस्वस्तिक-त्रिलक्षकतोरणबन्धनामा महातरङ्गः प्रथमः ॥ मूलतश्च [६-७] ॥

अथ चैत्यचित्रम् –

जयश्रियाऽन्तर्द्विषतां महोदयप्रदस्तवं श्रीऋषभप्रभुं स्तुमः ।
गरीयसि श्रीविमलाचले स्थितं तच्चैत्यचित्रैर्भवभीतिशान्तये ॥१॥ ५४
गर्भागारे देवस्य दक्षिणतः पङ्क्तिद्वयेन प्रथमा भित्तिः ॥

समग्रविद्यापुरुषार्थसाधनो-पदेशदानाज्जगतोऽप्यनादिनः ।
य या(आ)दिकर्ता समभूज्जिनागमं युगादिदेवं तमुपास्महे मतम् ॥२॥ ५५
तादृश्येव वामतो द्वितीयभित्तिः ॥

यं रीणदोषं प्रवदन्ति सूरय-स्तत्त्वप्रबोधाऽस्ततमोमयाः ---(?) ।
जगद्धितार्थं च सदोद्यतः प्रभुः कर्माणि धर्मांश्च जनान् शशास यः ॥३॥ ५६
पङ्क्तिद्वयेन तलबन्धः ॥

मयेति निर्द्धूतभवोऽर्थ्यसे प्रभुः सभक्तियोगादधता शिरोनतम् ।
स्तुतक्रमेन्द्रैर्मम मानसालये विधेहि नित्यं जिन! वासमादिम! ॥४॥ ५७
अर्थतो युग्मम् ॥

मयाऽर्च्यतां विश्वपतिर्जिनेन्द्रः स यः पुराणः पुरुषो युगादौ ।
चचार कारुण्यनिधिर्व्यवस्थां स्फुटां समग्रां जगतां हितार्थी ॥५॥ ५८
सतलमण्डपस्तम्भबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनन्तविज्ञानरमानिवास! सदोदितानन्दविलाससार! ।
रतीशजेतर्भगवन्! भयानां नामापि निर्मोशय नाभिजात! ॥६॥ ५९

पीठे उपरितनदण्डकाकारबन्धः ॥

यस्तातकल्पो जगतां हितैककर्ता स्मृतोऽप्यातनुते सुखानि ।
नित्योदितज्ञाननिधिर्जिनेशः शमः स देयाद् भवदुःखभीतेः ॥७॥ ६०

अधस्तनबन्धः ॥

अपारसंसारदरक्षयाय रतीशहन्ता भविनां य एव ।
अशेषजीवाभयहेतुरेकः स एव सेव्यो भगवान् शिवाय ॥८॥ ६१

प्रथमचतुष्किका[का]रबन्धः ॥

समीहिताभावभृतो विशोकचर्या श्रियस्ते मनुजा भजन्ति ।
सदापि येषाममलाननानि रसात् स्तवं ते समकुर्युरेकम् ॥९॥ ६२

द्वितीयचतुष्किकाकारबन्धः ॥

रङ्गच्छिवश्रीतिलकोपमानि तिरस्कृताघानि भवन्ति नूनम् ।
रसान्तरज्यानि कृता मुदेश! नानाज्ञवृन्दानि भवन्नतानि ॥१०॥ ६३

तृतीयचतुष्किकाकारबन्धः ॥

नाथ! प्रमाथं नतनिर्जरेश! नयस्फुरद्भावरिपून् ममारं(र?) ।
नार्हन्त्यु[पे]क्षां वधका यदेते तत्त्वश्रियां देव! कृताघनाश! ॥११॥ ६४

चतुर्थचतुष्किकाकारबन्धः ॥

तव भवदरहतिनिरते तेजोजितदिनकरस्य चरणयुगे ।
नितरां विनतिकरोम्यह-मसमर! शिवसदन! भवविभव! ॥१२॥ ६५

[सो]पानसप्तकबन्धः ॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० महापर्व० द्वितीये गूर्जरावतीदेश० श्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाह्रदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीशत्रुञ्जयालङ्कार-श्रीयुगादिचैत्यचित्रान्तर्हृदे श्रीयुगादिस्तुतिमये गर्भागारस्तम्भपीठसोपानबन्धनामा महातरङ्ग महाह्रदेऽयं मूलतश्च तरङ्गः [८] ॥

तत्त्वज्ञानयुत! क्षीणकर्माऽसङ्गाऽतनुप्रभ! ।
प्रभोऽनादितमोध्वंसाज्जगदेतन्नतं तव ॥१३॥ ६६

शिखरे युगादिदेवनामाङ्कितकमलबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिन! पापारिविध्वंससज्जोद्धततमोहर! ।
विधेहि हितकृत्! काममहशाममोह! मे ॥१४॥ ६७
शिखरे गर्भाङ्गा(गा)रिकाबन्धः ॥
जितमोहमहासेन! नमद्दानवमानव! ।
भगवन्! भवभीतानां नाथ तानव सा तव (?) ॥१५॥ ६८
शिखरे देवाद्दक्षिणतः प्रथमबहिर्देवकुलिकाबन्धः ॥
भवभ्रान्तिभयध्वान्त-तमोरिस्वमहाव्रत! ।
निर्वृति(तिं) तपसा प्राप परां कामामहानितः ॥१६॥ ६९
तादृश्येव वामतो देवकुलिका ॥
बुधसंमतसर्वार्थ! तत्त्वदेशनकोविद! ।
तवाऽऽगमलगच्चित्तो धत्ते प्राणी न को मुदम् ॥१७॥ मण्डपबन्धः ॥७०
तवाऽर्हन्! गोभरैस्तात! तरसा याति संक्षयम् ।
रवेरिव जगत्स्वामिन्! मिथ्यात्वतमसश्चयः ॥१८॥ ७१
शिखरे मध्यदेवकुलिका ॥
जिन! त्रिभुवनाधार! रमानन्दनवारक! ।
करुणाकर! मां नेतं(तः?) पाहि त्वं परमार्थ[तः] ॥१९॥ ७२
शरणं भवभीतानां नाऽपरोऽस्ति त्वया विना ।
नाथं त्वामेव तत् सः (?सन्तः?) श्रयन्त्यभव! तत्त्वतः ॥२०॥ ७३
द्वाभ्यां शिखरे उभयतो द्वितीये खण्डदेवकुलिके ॥
त्वामेव जगतामीशं शरणं भीतभाविनाम् ।
नाथ! ज्ञाः प्रतिपद्यन्ते तेजसामेकमन्दिरम् ॥२१॥ ७४
त्वद्दर्शनरसप्रीतं तत्त्वज्ञानवतां मनः ।
न रतिं लभतेऽन्यत्र त्रस्तमायामदस्मर! ॥२२॥ ७५
द्वाभ्यां शिखरे सर्वोपरितनभागे तथैव मध्यपङ्क्ती ॥
सर्वाभीष्टश्रियां मूलं ललनासङ्गवर्जितः ।
तपनीयरुचिः श्रेयो योगीन्द्रो ददतां परम् ॥२३॥ ७६
स्मरामि जगतां तात! तव पादयुगाम्बुजम् ।
जयं येन लभे भावबलाद् विद्वेषिणां पुरः ॥२४॥ ७७
तथैव बहिःपङ्क्ती ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं चतुर्थ्यां सामलसारकशिखरोपरितनभागबन्धः ॥

भगवन्! गरिमाम्भोधे! विधेय(हि?) विधिसङ्गमम् ।
मतं ततशमं देहि यतः स्यां गतदुस्तमाः ॥२५॥ कलशः ॥ ७८
यस्याऽऽज्ञया नैव विना शिवश्री-र्लभ्याऽप्यलभ्यैव तया बुधैः स्यात् ।
स कान्तसातं विततं तनोतु, युगादिदेवो भविभद्रकर्ता ॥२६॥ ७९
आनन्दसम्पदं पुंसां दत्ते दृष्टोऽपि यो जिनः ।
स विश्वानतपादो नः करोतु शमशं वशम् ॥२७॥ ध्वजबन्धः ॥ ८०
एवं स्तुतः प्रथमतीर्थपतिस्त्रिलोकी-नेत्रोत्सवः सकलमङ्गलकेलिसद्म ।
विश्वार्चनीयविमलाचलमौलि[मौलि]र्देयान्ममाप्यमलकेवलबोधिलक्ष्मीम् ॥२८॥
श्री शत्रुञ्जयमौलिमण्डनमिति श्रीमद्युगादिप्रभुं
शक्रालीमुनिसुन्दरस्तुतिपदं यः स्तौति चित्रैर्मुदा ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥२९॥ ८२

इति श्रीशत्रुञ्जययुगादिदेवस्तवनं तच्चैत्यबन्धेन ॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० श्रीदेवसुन्दरसूरिपदपद्मसौभाग्यार्णवानुगामिन्यां श्रीमहा० द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेश-तन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरवर्णनादि-श्रोतसि चैत्यषट्कचित्रमहाहृदे स्वस्वदेव० श्रीशत्रुञ्जयालङ्कारश्रीयुगादिजिनचैत्य-चित्रान्तर्हृदे श्रीयुगादिजिनस्तुतिमये तृतीयचतुर्थे(र्थौ) या(ला?)घवमागप(?) (युगप?)त्तरङ्गौ। पूर्वतरङ्गद्वयस्य प्रौढत्वादेते त्रयो लघवः। एवमन्यत्रापि ज्ञेयम्। महाहृदे च नवमदशमौ मूलतश्च तरङ्गः(ङ्गौ) ॥ सम्पूर्णश्चाऽयं श्रीशत्रुञ्जयालङ्कार-श्रीयुगादिजिनस्तवरूपस्तच्चैत्यचित्रान्तर्हृदो द्वितीयः । मूलतश्च [९-१०] ॥

अथ श्रीशान्तिनाथचैत्यनामान्तर्हृदः श्रीशान्तिजिनस्तुतिमयः प्रस्तूयते ॥ तथाहि -

जयश्रीजिनानन्तसद्भूतरङ्गद्गुणश्रीनिधे! मुक्तिलक्ष्मीद्धरङ्ग! ।
गतक्रोधलोभादिसंरम्भशान्ते! जगद्वन्द्यपादारविन्दाऽप्रमाद! ॥११॥ ८३

गर्भागारे देवाद्दक्षिणतो द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां प्रथमा भित्तिः ॥

सतां तेऽभितो नाममन्त्रः प्रदत्ते स्मृतेर्गोचरं प्रापितः शर्मसारम् ।
ततस्त्वं जिन! ध्येयवर्गेष्वशेषेष्वसि ख्यातिमानादिमो विश्वनेतः! ॥२२॥

तादृश्येव द्वितीया भित्तिः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जगन्नायकैकान्तिकात्यन्तिकं ते हितं शास्ति सिद्धान्तवाक् तेन सन्तः ।
यतन्ते तदुक्तार्थतत्त्वानि बुद्ध्वा यथावत् स्वनुष्ठानकृत्यैर्नितान्तम् ॥३॥ ८५
तलबन्धः ॥

रमाकृष्टिकृन्नामधेयं नतास्त्वां व्रजन्त्याशु संसारदुःखावसाने ।
गदस्तोमजातीकारतुल्ये-ष्वनल्पेषु सद्भोगसौख्येष्वतः (?) ॥४॥ ८६
उपरितनपद्मशिलारूपभारपट्टबन्धः ॥

तनुश्रीजितोद्दीप्तकल्याणकान्ते! तपस्तेजसा प्रास्तभा! नाथ! भानो! ।
कृतिप्रीतिकृद्भाग्यलभ्यप्रणाम! प्रभो! पाहि मां विश्वतातः सुतन्त्र! ॥५॥ ८७
सतलमण्ड[प]स्तम्भबन्धः ॥

श्रियं त्वं महानन्दसौख्य(ख्यानि) दत्से जिनाधीश! भव्याङ्गिनां भक्तिभाजाम् ।
निबुध्येति तत्त्वं भवं(वन्तं) भजन्ते न के नाथ! विघ्नावलीघातनिघ्नम् ॥६॥
पीठे उपरितनदण्डकाकारबन्धः ॥ ८८

रसायां स्वजन्म प्रबुद्धाः स्तुवन्ति प्रभो! त्वां नमन्तोऽधिकं स्वर्गलोकात् ।
महानन्दसौख्ये समीः हो(समीहा?)वतां यत्, परो नास्त्युपायोऽर्थिताप्त्यै प्रधानम् ॥७॥
पीठेऽधस्तनदण्डकः ॥

परानन्दमयः शान्तिः कर्माम्भोदसमीरणः ।
परमात्मा जयत्यर्हन् प्रशान्तारिजभीभरः ॥८॥ ९०
शुभभावनतामर्त्य! संत्यक्तधनबान्धव! ।
वधवर्जितसिद्धान्त! मम भिन्द्धि तमो जिन! ॥९॥ ९१
द्वाभ्यां जालिकाकार एकादशस्पर्द्धकबन्धः ॥

वृजिनाम्मा(म्भो?)चकाऽधीश! सिद्धानन्तचतुष्टय! ।
श्रितः कस्त्वां विपद्धारं घ्नन्तं शंमय! नो जनः ॥१०॥ ९२
पीठे जालि[का]काशे स्वस्पर्द्धक ऊर्ध्वदक्षिणेतरदण्डकद्वयबन्धः ॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० विज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां० श्रीशान्ति-जिनस्तवरूपचैत्यचित्रान्तर्हृदे सपीठस्तम्भगर्भागारबन्धनामा महातरङ्गः प्रथमः । महाह्रदे च एकादशः ११ मूलतश्च ॥

सर्वज्ञ! श्रीन! संप्राप्तभीतिशान्ति समन्ततः । (?)
नमन्ति त्वां सदा के केऽनानाज्ञाः सद्धनाथ! न(?) ॥११॥ ९३
शिखरस्य मूले श्रीशान्तिनाथेति नामगर्भं कमलम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जगन्मोददं दर्शनं नो जिनेदं द(?)मी(मा)प्यते ते महापुण्यहीनैः ।
सदा तेन न प्रार्थयेऽन्यत्ततोऽहं हताज्ञानपापांर्च्य! नैपुण्यपीनैः(?) ॥१२॥ ९४
शिखरगर्भेऽन्धारिकाबन्धः ॥

जना ये स्मरन्ति प्रभो! भावसारं जगत्तात! ते नाममन्त्रं क्षितारम् ।
महानन्दशर्मश्रियां ते विलासं लभन्ते विधायाऽऽशु कर्मप्रवासम् ॥१३॥ ९५
शिखरमूले देवाद्दक्षिणतोऽर्द्धाभ्यां देवकुलिकाद्वयबन्धः ॥
श्रये त्वां जगन्नायकाऽमन्दमोदं समग्रेहितश्रीलताकन्दक[न्दम्?] ।
भवन्तं श्रिता यद्भवापायभीता भवन्त्येव कैवल्यलक्ष्मीपरीताः ॥१४॥ ९६
तथैव वामतो देवकुलिके ॥

प्राणदाने तदा पारापते त्वयेतिषे(?) यथा ।
मयि पाल्ये कृपापात्रे यतस्वाऽद्य ऋषे! तथा ॥१५॥ मण्डपः ॥ ९७
अनन्तदर्शनज्ञाननताखण्डलमण्डल! ।
जगद्ध्येयपदाम्भोज! जय मञ्जुलमङ्गल! ॥१६॥ ९८
तापोत्तीर्णसुवर्णाभ! भग्नभावारिविक्रम! ।
जय कर्ममयस्फीततमोभाररविक्रम! ॥१७॥ ९९
तत्त्वविद्यामहाम्नायं यस्मिंस्ते वचनं विना ।
मोहधूर्तस्य कुर्वीततमां को वञ्चनं हि न ॥१८॥ १००

द्वितीयस्थ(स्त)रे देवाद्दक्षिणत आरभ्य त्रिभिर्मध्यमदेवकुलिकात्रयं क्रमात् ॥

त्वया यो विजिग्ये भवभ्रान्तिभीतिं तिरस्कुर्वता लीलयाऽपीश! मोहः ।
परेऽस्याऽपि देवा गताः प्रेष्यभावं
बभा(प्रभो)ऽतस्त्वमेवाऽर्च्य! एवं ममोहः ॥१९॥ १०१
शिखरे सर्वोपरितनभागे मध्यपङ्क्ती ॥

त्वमेवाऽऽश्रितानां प्रभुर्मुक्त! नूनं नताऽमर्त्य! कर्तुं भवभ्रान्त्यपोहम् ।
निबुध्येति वाञ्छन् महानन्दसातं तवैवांऽह्रियुग्मं शरण्य! श्रयेऽहम् ॥२०॥ २
तथैव बहिःपङ्क्ती ॥

एवं द्वाभ्यां सामलसारकशिखरोपरितनभागबन्धः ॥
अमानमानसं स्तोत्रे तव वीततमोभर! ।
रतिं मम परध्ये (?) लभतां वै भवारसम् ॥२१॥ कलशः ॥ ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनन्तैर्भवैर्भ्राम्यतो गोचरत्वं त्वमागाद् दृशोर्मेऽद्य भाग्येन तात! ।
ततो रक्ष मां दीनमेनं सुनम्रं नतानन्दन! ध्यानलीनं घनं ते ॥२२। ध्वजः ॥ ४
एवमानुतगुणो मयका श्रीदेवसुन्दरगुरूदितभक्त्या ।
ज्ञानदर्शनसुसंयमशुद्धिं त्वं विधेहि मम शान्तिजिनेन्द्र! ॥२३॥ ५
श्रीशान्तिं जिनराजमित्यमलधीर्यः स्तौति भूपावली-
शक्रालीमुनिसुन्दरस्तुतिपदं चित्रैर्विचित्रक्रमैः ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥२४॥ ६५ ६

इति श्रीशान्तिनाथजिनस्तवनं तच्चैत्यबन्धेन भट्टारकश्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ॥

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० श्रीमहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेशतन्नरेश्वरश्रीपत्तनादिनगरवर्णनश्रोतसि चैत्यषट्कचित्रमहाह्रदे स्वस्वदेव० श्रीशान्तिजिनचैत्यचित्रान्तर्ह्रदे श्रीशान्तिजिनस्तुतिमये द्वितीयतृतीयौ युगपत्तरङ्गौ ॥ महाह्रदे च द्वादशत्रयोदशौ मूलतश्च ॥ सम्पूर्णश्चाऽयं श्रीशान्तिस्तवमयः श्रीशान्तिचैत्यचित्रान्तर्ह्रदः ॥

अथ श्रीरैवतचैत्यबन्धचित्रनामाऽन्तर्ह्रदः श्रीरैवतालङ्कारश्रीनेमिस्तवमयः प्रस्तूयते । तथाहि –

श्रीनेमिं प्राप्तमोहारिजयश्रीकं जिनं स्तुवे ।
नेतारं जगतां स्फीतमोदाद् रैवतदैवतम् ॥१॥ ७

रैवतगिरीन्द्रबन्धचित्रे पूर्वार्द्धेनोपत्यकाबन्धः । उत्तरार्द्धेन च प्रथमपङ्क्तौ पूर्वस्यां प्रथमशिखरबन्धः ॥

मोक्षाप्तिः सुलभा तेषां श्रीनेमे! शुद्धधीजुषाम् ।
श्रीनन्दनजितं त्वां ये स्तुवन्त्यर्कं तमश्चये ॥२॥ ८

अर्द्धाभ्यां तत्रैव मध्यतृतीयशिखरयोर्बन्धः ॥

वत्मि(च्मि?) तानुत्तमान् देव! तेषां कुर्वे च संस्तवम् ।
जुषन्ते ये जगत्तातं त्वां ददानं समीहितम् ॥३॥ ९

रैवतगिरिबन्धचित्रे द्वितीयपङ्क्तावर्द्धाभ्यां शिखरद्वयबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समस्तजगदानन्द-कन्दवारिदसोदर! ।
गलत्तापं श्रुतं राहि पाहि मां सदयादर! ॥४॥ १०

रैवतगिरिबन्धचित्रे सर्वोपरितनशिखरस्याऽधित्यकायाश्च बन्धः ॥

एवं चतुर्भिः श्रीरैवतगिरिबन्धचित्रम् ॥ अथ रैवताद्रौ नेमिचैत्यबन्धः -

जयश्रीश! समासेव्य! नेमे! रैवतमण्डन! ।
कन्दर्पाऽनल्पदर्पाग्नि-नवाम्भोधरसोदर! ॥५॥ ११

देवाद्दक्षिणतः प्रथमभित्तौ प्रथमा पङ्क्तिः ॥

यशसा स्फुरता विश्वे प्रोर्णोनोर्युक्तमीश्वरम् ।
मुधा कामवधख्यातिं वहन्तं सत्यकामभित् ॥६॥ १२

तत्रैव द्वितीया पङ्क्तिः ॥

यतिन्! जय जगत्तात! मोहक्लेशभरोज्झित! ।
भवभीतभवित्रातर्! नमद्विदुरमुक्तिद! ॥७॥ १३
शर्मिस्त्वां यं स्मरस्यान्तकारिणं ..... श्रितम् ।
जगदेतद्धीतं ..... (?) तं स्तुवे दुष्कृतच्छिदम् ॥८॥ १४
हर लोकत्रयीबन्धो! शिवावास! विभो! मम ।
गतातङ्क! महःसिन्धो! दुरन्ताः सकलापदः ॥९॥ १५

त्रिभिर्भित्त्यन्तरालपूरककदल्याकारबन्धः ॥

भगवन्! भवभीमारे! रक्ष मां शरणागतम् ।
यत् त्वं कृतप्रतिज्ञोऽसि रक्षितुं शरणागतान् ॥१०॥ १६
भवन्तं भावतो विज्ञा विनस्य(?म्य?) जगतां हितम् ।
नहि के के शिवं प्राप्ता भङ्क्त्वा कर्ममहावनम् ॥११॥ १७

द्वारशाखाद्वयम् ॥

पारगाऽरिहर! स्फारकान्तसात! गतक्षत! ।
शान्त! दान्त! हतस्फीतकामरामतमः.... (?) ॥१२॥ १८

उंबरबन्धः ॥

गता मम हिताऽमर्त्यै माभार्णववर्णनम्(?) ।
मताप्त्यममतेप्त्यमर्त्यैरशक्यं भावभाजनम् ॥१३॥ १९

उत्तरङ्गबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इति विनेयलवश्रीमुनिसुन्दरसूरि० श्रीरैवतकाऽचलालङ्कारश्रीनेमिस्तवमयः श्रीरैवतगिरिश्रीनेमिचैत्यचित्रान्तर्हृदे गर्भागारमूलभित्तिद्वारबन्धनामा प्रथमो महातरङ्गः। चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे च मूलतश्च [१४] ॥

जगतां यो जयं चक्रे लीलयाऽपि महाभटः ।
सोऽपि कामरिपुः स्वामि-स्त्वया भग्नः स्फुरत्प्रभः ॥१४॥ २०
यत्नात् स्तोत्राणि शक्रोऽपि करोत्यविरतं तव ।
एवमेव यतः श्रेयो नीराग! महिमार्णव! ॥१५॥ २१

द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां गर्भागारस्य तलबन्धः ॥ एवमेकादशभिः गर्भागारबन्धः सम्पूर्णः ॥

भदन्तमिद्धातिशयाभिरामं महोदयानन्तसुखं विरागम् ।
गताखिलाज्ञानतमःप्रचारं रवाऽस्तमेघं जिनमानमामि ॥१६॥ २२
वचःसुधा यस्य भवार्त्तितापं पराभवं प्रापयतेऽङ्गभाजः ।
जगत्त्रयीवन्द्यपदारविन्दं दमीश्वरं तं जिनमाश्रयामि ॥१७॥ २३

द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां मण्डपतलबन्धः ॥

महामुने! वीतसमग्रदोषं निरञ्जनं त्वां शिवपुर्यधीशम् ।
योगीश्वरं ध्येयपदं विनम्य बुधाः कृतार्था न परं नमन्ति ॥१८॥ २४
विश्वोत्तर! ब्रह्म - - निधेहि, निरञ्जन! ज्ञानमयाऽनपाय! ।
सम्यग् ममाऽधीशनिजस्वरूपो-पलम्भमज्ञानतमो निहत्य ॥१९॥ २५

समण्डपप्रासादस्य पीठे द्वाभ्यामधस्तनमहापङ्क्तिरूपतलबन्धः ॥

महोदयाध्वानमनादिमोह-ध्वान्तप्रचारेऽपि हि दीपिकेव ।
तवैव वाणी प्रकटीकरोति भव्याङ्गिनं तत्त्वरुचीर्वितत्य ॥२०॥ २६
शमाय वाणी भवतो भवार्त्तिदवानलानां भवति प्रकामम् ।
भव्याङ्गिनां मोदरसप्रवर्षं कादम्बिनीवादधती समन्तात् ॥२१॥ २७

द्वाभ्यां समण्डपप्रासादपीठे उपरितनमहापङ्क्तिरूपतलबन्धः ॥

ममत्वमुक्ताक्षयशर्मधाम! नामामृतप्रास्तभवार्तिदाव! ।
योगस्य कोटिं परमां प्रयात! तिरस्कृताऽनन्यज! नन्द नित्यम् ॥२२॥ २८
विनम्रदेवासुरमानवेश! यशोजितश्वेतरुचेऽस्तकाम! ।
समग्रवेदिन्! जय मुक्तलोभ! त्यक्ताघ! नेमे! शिवशर्मदाता(तः?)! ॥२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समण्डपप्रासादपीठे प्रतिपादमेकैकभवनेन द्वाभ्यां मध्यगतोद्ध्वर्वदण्डकाकारस्तम्भाष्टकबन्धः ॥

महाज्ञानतपोध्यान! जगज्जनकृतावन! ।
नेमे! विनतनाकीन! जीया घनरुचे! जिन! ॥२४॥

समण्डपप्रासादपीठे मध्ये प्रकारान्तरेणाऽष्टदलं दलादिकमलं प्रथमम् ॥

भवभीतजगत्त्रातः! शमामृतरसाप्लुत! ।
रतिकान्तप्रभाघात! क्रियोद्यत! जगद्धित! ॥२५॥ ३१

तत्रैव तादृगेव कमलं द्वितीयम् ॥

मोहध्वान्तसमूहान्तरवे! प्रीतसुरार्चित! ।
भयोज्झितपदौ तात! नमामि तव सन्ततम् ॥२६॥ ३२

तत्रैव तादृगेव कमलं तृतीयम् ॥

विश्वाधार! गुणागार! निर्विकार! सुखाकर! ।
त्वं संसारभियां पारं देहि धीर! ममाऽचिरम् ॥२७॥ ३३

तत्रैव तादृगेव कमलं चतुर्थम् ॥ एवं कमलचतुष्कबन्धः ॥

एवं रैवतकाद्रिमण्डनमणिं श्रीनेमिविश्वप्रभुं
शक्रालीमुनिसुन्दरस्तुतिपदं यः स्तौति चित्रैर्मुदा ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥२८॥ ३४

इति श्रीरैवतकाचलमण्डन-श्रीनेमिनाथस्तवनं श्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ।

इति युगप्रधानावतारतपाबृहद्गच्छाधिराजपरमपूज्यश्रीदेवसुन्दरसूरिगुरुगुणमहिमार्णवानुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमवदवतीर्णश्रीगुरुप्रभावपद्महृदप्रभवायां श्रीपर्युषणामहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेशतन्नरेश्वरश्रीपत्तननगरादिवर्णनश्रोतसि चैत्यषट्कचित्रबन्धमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीरैवतकाचलालङ्कार-श्रीनेमिस्तवमयश्रीनेमिचैत्यचित्रान्तर्हृदे समण्डपप्रासादतलबन्धसहितपीठबन्धनामानो युगपद् द्वितीयतृतीयचतुर्था[स्त]रङ्गौ-(ङ्गाः) । चैत्यषट्(ट्क)बन्धचित्रमहाहृदे च [मूलतश्च १५-१६-१७] ॥

जगज्जैत्रस्य मोहारे-र्यमाश्रित्य जयश्रियम् ।
प्राप नेमिप्रभुस्तत्र रैवते तं [जिनं] स्तुवे ॥१॥ ३५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ददस्व प्रशमं स्वामिन्! भवतापस्य मे रयात् ।
तवाऽऽर्त्तस्वाश्रितोपेक्षा न सङ्गतिव(म)ती ध्रुवम् ॥२॥ ३६
रमायां न ह्यभिप्राय: प्रायस्तेषां भवेन्नृणाम् ।
त्वदर्चनाफलाभिज्ञाः स्युर्ये तात! शिवार्थिन: ॥३॥ ३७

गर्भागारे उपरि पद्मशिलाबन्धः ॥

नष्टकर्मामय! प्रास्ताऽवनम्राङ्गिभवभ्रम! ।
महाज्ञानाद्युपायेन जय प्राप्त! शिवं जिन! ॥४॥ ३८

अर्द्धाभ्यां मण्डपत्रये द्वितीयद्वारशाखात आरभ्य स्तम्भषट्कोपरितन-भारपट्टद्वयबन्धः ॥

श्रीनेमे! नेमुरत्यन्तं तव ये भक्तितः पदौ ।
दौ:स्थ्यमेषां क्षयं यातं तत्त्वज्ञानवतां वशिन्! ॥५॥ ३९

मण्डपे प्रथमस्तम्भः ॥

धामधाम! गुणग्राममय! संसारपारग! ।
गतसर्वविकारेश! शमयाऽघमकाम! मे ॥६॥ तत्रैव द्वितीयः स्तम्भः ॥ ४०
देवा: सेवाकृतो नैव बहुधाऽपि परैः स्तुतां(ताः?) ।
तारयन्ति भवाम्भो[धि] धिग् मूर्खास्तान् श्रितान् श्रिये ॥७॥ ४१

तृतीय: स्तम्भस्तत्रैव ॥

स्स(स्म)रकारस्करे दाव-कर्णनागोचरप्रभ! ।
भगवन्! भवभीपारं रयाद्देहि ममाऽमम! ॥८॥ ४२

तत्रैव स्तम्भश्चतुर्थः ॥

तव भावभृतो जीवा वारवारं नतिं श्रिताः ।
तारयन्ति परं स्वं च चरणादरणे रताः ॥९॥ ४३

पञ्चमः स्तम्भस्तत्रैव ॥

कारंकारं गुणानां ते तेजोऽर्णव! नरः स्तुतिम् ।
तिरस्कृतभवो नूनं न को भवति भीतिमुक् ॥१०॥ ४४

तत्रैव स्तम्भः षष्ठः ॥

इति युगप्रधानावतारतपाबृहद्गच्छाधिराजपरमपूज्यश्रीदेवसुन्दरसूरिगुरु-गुणमहिमार्णवाऽनुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमवदव० त्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेश० श्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्व०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रूपे श्रीरैवतकाचलालङ्कार-श्रीनेमिस्तवमयतच्चैत्यचित्रान्तर्हृदे मण्डपभारपट्टद्वय-स्तम्भषट्कबन्धनामा पञ्चमस्तरङ्गः । चैत्यचि० महाहृदे च मूलतश्च[१८] ॥

संनम्रश्रीश! सन्देहनाशने त्वं समर्थवाक् ।
संयमीद्धसहा जीया नश्वराऽसम्मदारत! ॥(?) ॥११॥ ४५

शिखरमूलमध्ये श्रीनेमीश्वरेति नामगर्भं कमलम् ॥

सुरेशसेव्य! व्यपनीतमोह! हर्यक्ष! दुर्वाररतीशनागे ।
जयाश्रित! प्रप्रहतामिताघ! घनाम्भसार्वेततपोवनागे (?) ॥१२॥ ४६

शिखरे गर्भमध्ये शकु(शुक)नाशनासकाऽन्धारिकाबन्धः ॥

दृष्टे त्वदास्ये घनकायकान्ते! कान्ते भवेद्यः प्रमदो जनानाम् ।
नानार्त्तिकीर्ण[र्णेषु?] भवेषु तेन ते न च(भ्र)मन्त्यम्बुद! मोहदावे ॥१३॥ ४७

शिखरस्य मूले देवाद्दक्षिणतः पङ्क्तित्रयेण प्रथमदेवकुलिकाबन्धः ॥

तावन्मोहविषं नेमे! मेधां हन्ति मनस्विनः ।
वचनामृतमापीतं तव यावदनेन न ॥१४॥ ४८

तत्रैव पङ्क्तिद्वयेन द्वितीयदेवकुलिकाबन्धः ॥

रणेऽपि चरणेऽमाय! यत्त्वया वैरिणो जिताः ।
द्विधा क्षमाभृतस्तात! ततस्त्वां सर्वतो नताः ॥१५॥ ४९

तत्रैव देवदेवाद्वामतः पङ्क्तिद्वयेन तृतीयदेवकुलिकाबन्धः ॥

भवत्पदध्याननतिप्रभावात् पापं विनश्यत्यखिलं जनानाम् ।
विद्धं करौघैर्दिननायकस्य ततं यथा सन्तमसं क्षणेन ॥१६॥ ५०

तत्रैव वामतः पङ्क्तित्रयेण चतुर्थदेवकुलिकाबन्धः ॥

एवं सम्पूर्णः प्रथमः स्थ(स्त)रः ॥

यो लक्षसंख्यं किल संख्यदक्षः क्षणेन वैलक्ष्ययुतं चकार ।
नरेन्द्रवृन्दं समदं ददातु तुष्टिं स सर्वेष्टकृतेरकामः ॥१७॥ ५१

शिखरे मध्यमदेवकुलिकात्रयरूपे द्वितीयस्थ(स्त)रे प्रथमा देवकुलिका ॥

कल्पद्रुमो नेप्सितशर्मदाता ताताऽमराणां मणिरप्यनिष्टः ।
तव प्रभावाम्बुनिधेः पुरोऽत्र त्रपास्पदं कामघटोऽपि नित्यम् ॥१८॥ ५२

तत्रैव द्वितीया देवकुलिका ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धौषधानीव भवद्वचांसि सितांशुकीर्ते! भविमण्डलस्य ।
हरन्ति संसारभयामयौघं घनाञ्जनश्यामतनोऽखिलज्ञ! ॥१९॥ ५३

तत्रैव तृतीयदेवकुलिकाकारबन्धः ॥

कैवल्यानन्दरूपाय यशोजितसितद्युते! ।
तेजसामेकनाथाय यमिंस्तुभ्यं नमोनमः ॥२०॥ ५४
विवशीकृतविश्वास्तारागोपीचटूक्तयः ।
-- तिनो भावतस्तेन नयन्ति स्म मनोभ्रमम् ॥२१॥ ५५

शिखरोपरितनभागे द्वाभ्यां दक्षिणत ऊर्द्ध्वं पङ्क्तिद्वयम् ॥

भवतृष्णामहातापपरिहाणेः सदोदितम् ।
तवानन्दमयं शैत्यं त्यक्तौपम्यमिदं स्तुमः ॥२२॥ ५६
तव स्तुतिरतस्याऽऽशु शुद्धिः सुमलिनात्मनः ।
नष्टाऽदृष्टमलत्वेन नतेन्द्र! भवतान्मम ॥२३॥ ५७

तत्रैव वामतः पङ्क्तिद्वयम् ॥

एवं चतुर्भ्यां सामलसारकशिखरोपरितनभागबन्धः ॥

स्मरज्वरतिरस्कार! प्रभो! क्षिप्रं महोदयम् ।
यमिन्! मम शयप्रासं कुरुष्व करुणाकर! ॥२४॥ ५८
नतेन्द्र! कुरु रङ्गं मे यशोमय! तवाऽऽगमे ।
ज्ञात्वेदं विदधे मन्दं येन भावद्विषां मदम् ॥२५॥ ५९

अर्द्धाभ्यां बृहन्मण्डपादुभयतो लघुमण्डपद्वयबन्धः ॥

अथ बृहन्मण्डपः –

प्राप्तानन्तशिवश्रीक! करुणाक्षीरसागर! ।
रतीशद्विपसिंहाभ! भद्रं देहि महोदय! ॥२६॥ ६०
महद्भिर्यैर्विभो! पीतं तवाऽऽगमरसायनम् ।
न तान् विबाधते भीमो मोहाह्वो हि महामयः ॥२७॥ ६१

महामण्डपे द्वाभ्यां मध्यपङ्क्ति ॥

यतमानास्त्वदर्चायां यान्ति नैवाऽधमां गतिम् ।
तिरस्कृतभवाः किन्तु तुष्यन्ति शिवसम्पदा ॥२८॥ ६२
ज्ञाता(त)निःशेषविज्ञेय! यशोभृतजगत्त्रय! ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यत्याचारस्य --- देह्या शुद्धिं वशिप! मे सदा ॥२९॥ ६३

महामण्डपे बहि:पङ्क्ती ॥ एवं चतुर्भ्यां सकलशमहामण्डपः ॥

यत्नः शिवश्रीसुखसङ्गमाय यस्य स्तुतौ स्यात् त्वमयं विधेहि ।

हितं ममाऽनन्तमतन्द्रतत्त्व! तन्त्रेभवीतक्षतसात नेतः! ॥३०॥ ध्वजः ॥ ६४

एवं स्तुतो रैवतमौलिमौले! मयाऽपि मुग्धोचितसंस्तवेन ।

विधेहि नेमे! मम बोधिशुद्धिं ततो भवेद् येन वशा शिवश्रीः ॥३१॥६५

द्वाभ्यां सदण्डध्वजबन्धः ॥

एवं रैवतकाद्रिमण्डनमणिं श्रीनेमिविश्वप्रभुं

शक्रालीमुनिसुन्दरस्तुतिपदं यः स्तौति चित्रैर्मुदा ।

आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो

मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥३२॥ ६६

इति श्रीरैवतकालङ्कार-श्रीनेमिनाथस्तवनं श्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ॥

इति युगप्रधानावतार-तपाबृहद्गच्छाधिराज-परमपूज्य-श्रीदेवसुन्दरसूरिगुरु-गुणमहिमार्णवानुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमवदवतीर्णश्रीगुरुप्रभाव-पद्महृदप्रभवायां श्रीपर्युषणामहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेशतन्नरेश्वरश्रीपत्तननगरादिवर्णनस्रोतसि चैत्यषङ्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीरैवतकाचलालङ्कारश्रीनेमिचैत्यचित्रान्तर्हृदे श्रीरैवतकाचलाल-ङ्कारश्रीनेमिस्तोत्रखण्डरूपे शिखरमण्डपकलशध्वजबन्धनामानः षष्टसप्तमाऽष्टमाः युगपदेव तरङ्गाः । चैत्यमहाहृदे च मूलतश्च [१९, २०, २१] ॥ सम्पूर्णश्चाऽयं श्रीरैवतकाचलालङ्कारश्रीनेमिस्तवरूपश्रीरैवताद्रि-श्रीरैवतकाचलालङ्कार-श्रीनेमिमहा-चैत्यबन्धचित्रान्तर्हृदः । अन्तराले प्रथमस्तोत्रस्याऽन्ते "एवं रैवतकाद्रिमण्डन-मणि"मिति काव्यस्य, द्वितीयस्तोत्रस्य चादौ "जगज्जैत्रस्ये"ति श्लोकस्य चाऽपाठे एकमेव महत् स्तोत्रं भवति ॥

अथ श्रीजीरापल्लीमण्डनश्रीपार्श्वचैत्यबन्धचित्रनामान्तर्हृदः । तत्र श्रीपार्श्व-स्तुतिरूपः(प)स्तोत्रद्वयेन प्रस्तूयते । तत्र पूर्वं जालिकाबन्धरूपपीठबन्धस्तोत्रम् —

श्रीमत्पार्श्वविभो! वच्मि जीरापल्लिविभूषण! ।

स्तुतीस्ते चैत्यचित्रेण द्वैधद्वेषि जयश्रिये ॥१॥ ६७

प्रस्तावनाश्लोकः, चित्रादधिकः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जय श्रीपार्श्व! दुर्वारि(र)विघ्नोच्चयहतिक्षम! ।
भगवन्! भवनिस्तारकर! भावयुजा(जो?) जिन! ॥२॥ ६८
परमज्ञानविज्ञातसर्वभाव! महाशय! ।
जगदानन्दसन्दोहनिदान! जननादिक! ॥३॥ युग्मम् ॥ ६९

पीठे जालिकाबन्धे देवाद्दक्षिणत आद्योद्धर्वदण्डके मध्यभागकोणादारभ्य ऊद्धर्वाधोगत्या द्वितीयप्रान्तोर्ध्वदण्डकमध्यप्रविष्टप्रान्तपीतवर्णप्रथमपङ्क्तिबन्धः ॥

जगत्तात! परज्ञानदूरीकृततमोभर! ।
जिनेश! तव संसार-भीतोऽहं शरणं श्रये ॥४॥ ७०
पादि(हि?) मं(मां?) तद्दयासत्रधामाऽरीण! हितालय! ।
त्वमेव जगतां येन पालनेऽलमसि प्रभुः ॥५॥ ७१

तत्रैव तथैव तत एवाऽऽरभ्याऽध[ऊ]द्धर्वगत्या नीलवर्णद्वितीयपङ्क्तिबन्धः ॥

विकाररहिताकार! नलिनीदललोचन! ।
निशाकान्तमदप्रान्तकरकान्तगुणानन! ॥६॥ ७२
नीलोत्पलविनीलाङ्ग! जगत्त्राणलसन्मनाः! ।
असंख्यसत्त्वसन्देहहरणक्षमभाषित! ॥७॥ ७३

तत्रैव तथैवाऽऽद्योर्ध्वदण्डके उपरितनभागकोणादारभ्य प्रथमा मूलतश्च तृतीया नीलवर्णा ऊर्ध्वाधोगामिनी पङ्क्तिः ॥

विश्वापापाऽतिदुष्टारिलीलाकृतजयादर! ।
प्राप्त त्रैलोक्यनिष्णात-पूज्यभावगुणोदय! ॥८॥ ७४
सर्वज्ञानरमापात्र! परमः पारगामिनाम् ।
त्वमेव नय मां क्षीणकषायं स्वपदं विभुः(भो!) ॥९॥ ७५
चतुर्भिः कलापकम् ॥

तत्रैव तथैव तत एव कोणादारभ्याधऊद्धर्वगामिनी रक्तवर्णा द्वितीया मूलतश्च चतुर्थी पङ्क्तिः ॥

कर्मसन्तप्तसंसारि-सुधाह्रदसमाऽमम! ।
फणिस्फारफटाटोपमण्डितेश! शिवालय! ॥१०॥ ७६
स्वर्णाचलशिरःस्नात! नम्रीभूतसुरव्रज! ।
जिनराज! जगत्त्राण! त्वं मां रक्ष(क्षाऽ)क्षितारक! ॥११॥ युग्मम् ॥ ७७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्रैव तथैव आद्योद्धर्वदण्डकेऽधस्तनकोणादारभ्योद्धर्वाऽधोगामिनी रक्तवर्णा प्रथमा मूलतश्च पञ्चमी पङ्क्तिः ॥

करोति तव यो ध्यानं सर्वसातस्य साधनम् ।
गताशुभ! न दुष्प्राप-स्तस्य वासो महोदये ॥१२॥ ७८

विहिता[नं]तभीभङ्ग! सत्प्रभावक्रमाम्बुज! ।
त्वदेकशरणं दीनं मां कुरुष्व सुखाश्रितम् ॥१३॥ ७९

तत्रैव तथैव तत एव कोणादारभ्य द्वितीया मूलतश्च षष्ठी नीलवर्णा पङ्क्तिः ॥ एवमूर्ध्वाधोगामिपपङ्क्तिषट्केन द्वादशश्लोकग्रथितेन मिथःसंवलितेनाऽन्तरा स्पर्द्धकानि कुर्वता जालिकाबन्धः सम्पूर्णः ॥

शमामृतरसाचान्तं त्वन्मुखं लोचना[स]मम् ।
वीक्ष्य विज्ञायते तात! मुक्तिर्वशमिता किल ॥१४॥ ८०

पीठे जालिकायामधस्तनी सरलप्रलम्बा पङ्क्तिः ॥

भवनीरधिपाराय नीलतारस्फुरद्वसो ।
वीरपोतनिभं पापाऽपृहं त्वां संश्रयाम्यलम् ॥१५॥ ८१

पीठे जालिकायामुपरितनी सरलप्रलम्बा पङ्क्तिः ॥

भद्राणि वितर व्याज-हीनां धर्मकलां दिशन् ।
गतशोक! सदाप्रीत! भक्त्या ऋभुनतक्रम! ॥१६॥ ८२

पीठे जालिकायामुभयतो अर्धाभ्यामाद्यन्तयोरूद्धर्वदण्डकाकारपङ्क्तिद्वयम् ॥ इति पञ्चदशभिः सम्पूर्णो जालिकाबन्धाकारः पीठबन्धः ॥

एवं **जीरापल्लिका**मौलिमौले! पार्श्व! श्रीमन्! संस्तुतो भक्तियोगात् ।
देयाः स्वामिन्! वारिराशे! महिम्नां सर्वप्रेयः! श्रेयसां मे विलासम् ॥१७॥८३

श्रीजीराउलिपार्श्वनाथमिति यः सर्वेन्द्रपद्मावती-
वैरोट्यामुनिसुन्दरस्तुतिपदं संस्तौति चित्रैर्मुदा ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोद द्यो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥१८॥ ८४

इति श्रीजीरापल्लिकामौलिमण्डनश्रीपार्श्वनाथस्तवनम् । तच्चैत्यबन्धेन श्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ॥ इति युगप्रधानावतार तपाबृहद्गच्छाधिराजपरमपूज्यश्रीदेवसुन्दरसूरिगुरुगुणमहिमाऽर्णवाऽनुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमव०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपर्युषणामहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेश० श्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीजीरापल्लीमण्डनश्रीपार्श्व-चैत्यचित्रान्तर्हृदे तत्पार्श्वस्तुतिरूपे पीठबन्धनामकौ प्रथमद्वितीयौ युगपदेव तरङ्गौ ॥ चैत्यष० महाहृदे च मूलतश्च (२२-२३) ॥ सम्पूर्णं च ताभ्यां प्रथमद्वितीयाभ्यां तरङ्गाभ्यां प्रथमं स्तोत्रम् ॥

जयश्रियो मुक्तिपदस्य दातः! पद्मावतीध्येयपदारविन्द! ।
श्रीजीरिकापल्ल्यवतंस! पार्श्व! नागेन्द्रसंसेव्य! महाप्रभाव! ॥१॥ ८५
यतः समग्रामरमर्त्यवन्द्यात् स्तुताद् वशीस्याच्छिवशर्मलक्ष्मीः ।
स्तवीमि तं त्वां जगदीश! पार्श्व! समीहितं येन रयाल्लभेयम् ॥२॥ ८६

गर्भागारे देवाद्दक्षिणतो भित्तौ तन्निष्पादकपङ्क्तिद्वयेन शाखाद्वयम् ॥

यतमानस्तव स्तोत्रे क्षिपते कर्मसंकरम् ।
चिनुतेऽपरदेवानां स्तवे त्वनघ! तं नरः ॥३॥ ८७
तज्ज्ञास्तेन चिदां पात्रे त्वय्येव कलयन्त्यरम् ।
स्तुत्याक्षेपमनन्तानां गुणानां नन्दने परम् ॥४॥ ८८
ज्ञमण्डलभवभ्रान्तिभिदोऽर्हन् हेतवः शुभे ।
नीलोत्पलजितो भान्ति तव देहे लसत्प्रभाः ॥५॥ ८९

[त]त्रैव स(म)ध्ये त्रिभिरन्तरालपूरकवल्ल्याकारबन्धः । एवं सम्पूर्णः प्रथमभित्तिबन्धः ॥

भावारिवर्गस्य विजृम्भितं तत् खलायितं विश्वपते! कलेर्वा ।
देवान्तरोपास्तिमदात् परे य-च्छिवार्थिनस्त्वामपि नाऽऽद्रियन्ते ॥६॥ ९०
भदन्तमीशं जगतां हितैककर्तारमानन्त्यधरं गुणानाम् ।
भवन्तमार्याः स्तवयन्ति पार्श्व! भवभ्रमक्लेशविनाशहेतोः ॥७॥ ९१

गर्भागारे देवाद् वामतो भित्तौ तन्निष्पादकपङ्क्तिद्वयेन शाखाद्वयबन्धः ॥ भित्तिद्वयेऽपि मध्यमध्यशाखाद्वयेनोभयतो द्वारशाखाद्वयबन्धोऽपि च ॥

वाणी तव विभो! भेदं नयत्येव भवापदम् ।
दरदावनवाम्भोद-त्रिलोकाऽवनकोविद! ॥८॥ ९२
महोदयरमाभोगो न दूरे तस्य भाविनः ।
यस्ते देव! पदाम्भोजं ध्यायतीभाऽघभूरुहे ॥९॥ ९३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्येन्द्रियरसत्यागो दुर्लभोऽतत्त्ववेदिन: ।
शृणोत्यवनतज्ञाऽज! त्वदीयां भारतीं न य: ॥१०॥ ९४
त्रिभिस्तत्रैव मध्येऽन्तरालपूरकवल्ल्याकारबन्ध: ॥ एवं द्वितीयभित्ति: ॥
जगत्पतिर्य: सदय: फणीन्द्र-मजीगमत् श्रीपरमेष्टिमन्त्रात् ।
दैवीं श्रियं सोऽस्तु शिवाय पार्श्व: स्फुरत्प्रभाव: फलिनीलताभ: ॥११॥ ९५
य: सर्वदेवेषु सुतत्त्वरूपो नित्योदितज्ञानविलासशाली ।
स्तुतो भवत्येव शिवाय सोऽर्हन् कुर्याद् भवापायभरापनोदम् ॥१२॥ ९६
द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां प्रासादे गर्भागारस्य तलबन्ध: ॥
समग्रविघ्नव्रजघातदक्ष: क्षमो जगत्त्राणविधौ धुतार! ।
अनङ्गनज्ञानधर! स्मरश्रीरसारतो रक्ष नतानरं न: ॥१३॥ उंबरबन्ध: ॥ ९७
दमो दया सत्यमलोभता च तप: परं ब्रह्म कषायमोक्ष: ।
इत्यादयो यत्र गुणा विविक्ता वर्ण्या नितान्तं जगतां हिताय ॥१४॥ ९८
भवेत् पुमर्थेषु तथोत्तमस्य धर्मस्य यस्मात् प्रकटो ह्युपाय: ।
त्वदागमोऽयं बहुभि: सुपुण्यैर्जिनाऽऽप्यते सर्वहितोपदेष्टा ॥१५॥ ९९
तथैव महामण्डपस्य तलबन्ध: ॥
वशीबभूवाऽद्भुतयत्त(वृत्त?)धारी यमव्रजे य: परमार्थदर्शी ।
महामना: संश्रितयोगिकोटि: कैवल्यतेज:प्रचयस्य हेतो:(तु:?) ॥१६॥२००
भावद्विषत्सामजभेदसिंह: फणीन्द्रसंसेवितपादपद्म: ।
स चिन्तनातीतसुखप्रदाता पार्श्व: श्रियं रातु रतोऽघदाहे ॥१७॥ युग्मम् ॥ २०१
द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां गर्भागारे उपरी(रि) भारपट्टाकारपद्मशिलाबन्ध: ॥ उत्तरङ्गाकारबन्धोऽपि च ॥

इति युगप्रधानावतार-तपाबृहद्गच्छाधिराज-परमपूज्यश्रीदेवसुन्दरसूरि-गुरुगुणमहिमार्णवानुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहि० श्रीपर्युषणा-महापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेश-तन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरादिवर्णनश्रोतसि० चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीजीरापल्लीमण्डनश्रीपार्श्वचैत्यचित्रान्तर्हृदे तदीयश्रीपार्श्वस्तुतिरूपे द्वितीयस्तोत्रे गर्भागारभित्तिद्वयसमण्डपप्रासादतलबन्धगर्भागारद्वारशाखोम्बरपद्मशिलोत्तरङ्गबन्ध-नामकौ तृतीयचतुर्थौ युगपत्तरङ्गौ ॥ चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे च मूलतश्च [२४-२५] ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवन्त्यवश्यं तव नामशून्याः सर्वेऽपि मन्त्रा विफला नराणाम् ।
संस्थाप्यमाना अपि बिन्दवः किमादिस्थिताङ्कैर्विकलाः फलाय ॥१८॥ २०२
गर्भागारादारभ्य मण्डपे प्रथमः ॥

स्मरन्ति रम्यं तव नाममन्त्रं ये सुप्रभाते दृढभक्तिभाजः ।
सर्वेहितार्थान् खलु ते लभन्ते रयादिदं मेऽप्यनुभूतिभूमिः ॥१९॥ ३
मण्डपे द्वितीयः स्तम्भः ॥

स्फुरत्तरस्फारफणालिशाखा बिभ्रन्मणीपल्लवपेशलाग्राः ।
त्वं नाथ! युक्तं कलिकल्पवृक्षः सतां करोषीहितसारसातम् ॥२०॥ ४
तृतीयः स्तम्भः ॥

सुरा हराद्या अपि पादपद्मं ध्यायन्ति ते नाथ! शिवाप्तिकामाः ।
संसारदुःखौघविमोचनाय यदस्त्युपायः पर एष एव ॥२१॥ चतुर्थः स्तम्भः॥ ५
विना जिनाधीश! तवाऽऽगमेन न प्राणिनः कर्ममलो व्यु(व्य)पैति ।
शुद्धिः कुतो वा कतकस्य चूर्णं विना रजोभिर्मलिने वने [स्यात्?] ॥२२॥ ६
मण्डपे पञ्चमः स्तम्भः ॥

एवं मण्डपद्वयस्य स्तम्भपञ्चकबन्धः ॥

तोषं देहि गतद्वन्द्व! हे श्रीपार्श्वविभो! मम ।
अमेयमहिमागार! भक्त्या नम्रनरामर! ॥२३॥ ७
मण्डपद्वये गर्भागारद्वा(रादा)रभ्य पङ्क्तिद्वयररूपभारपट्टखण्डत्रयबन्धः ॥
तव सेवाफलाभिज्ञाः न रमन्ते सुरान्तरे ।
चिन्तारत्नगुणज्ञा हि काचेऽनादरधारकाः ॥२४॥ ८
मेधाविप्रवरा ये त्वां श्रयन्ति शरणं विभो! ।
रागाद्याः शत्रवो नैषां भवन्ति दरकारकाः ॥२५॥ ९
स(म)हामण्डपेऽधस्तनमध्यपङ्क्तौ साधोमुखकमले ॥
गरीयो महिमागारं त्वं नवः कल्पपादपः ।
यः स्मृतोऽपि सदाऽभीष्टततीर्वितनुषेऽङ्गिनः ॥२६॥ १०
महामूढा रता देवान्तरे जानन्ति किं --- ।
असन्मुक्तिः परो मुक्तिं दत्ते स्तुतपदोऽपि न ॥२७॥ ११
महामण्डपे उपरितने बहिःपङ्क्तौ सकलशे ॥ एवं चतुर्भ्यां साधोमुख-
कमल[कल]शमहामण्डपबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महानन्दपदप्राप्ति-र्दुर्लभा तस्य नाऽङ्गिनः ।
गाढभक्त्या प्रभुं स्तौति यस्त्वां सन्त्यज्य रागिणः ॥२८॥ लघुमण्डपबन्धः ॥ १२
भग्नारिश्रीः शुभश्रेणीदातः! पापभरापहृत् ।
श्रीपार्श्व! क्षोभमुक्तस्त्वं सना मे भज नाथताम् ॥२९॥ १३

शिखरमूले तन्मध्ये च पार्श्वनाथेति नामगर्भं कमलम् ॥

शिवार्थिनो नंनमति प्रकामं मनस्विनः संशमिताऽघराशेः ।
न के भवन्तं तरसा ददानं न तेषु मोक्षं क्षमयाऽभिरामम् ॥३०॥ १४

शिखरे मूलशकुनाशेतिशास्त्रप्रसिद्धगर्भागारिकाबन्धः ॥

जगन्मित्र! नवः कोऽपि त्वत्प्रभावप्रभाचयः ।
स्तुतोऽपि हरते विघ्नध्वान्तजालं सुजात! यः ॥३१॥ १५

अर्द्धाभ्यां शिखरमूले देवाद्वामतो दक्षिणतश्च प्रथमे बहिःखण्डदेवकुलिके ॥

इति युगप्रधानावतार-तपाबृहद्गच्छाधिराज-परमपूज्यश्रीदेवसुन्दरसूरि-गुरुगुणमहिमार्णवानुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमवदवतीर्णः श्रीपर्युषणा-महापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेशतन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरादिवर्णनश्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीजीरापल्लीमण्डनश्रीपार्श्वचैत्यचित्रान्तर्हृदे तत्श्रीपार्श्वस्तवरूपे द्वितीयस्तोत्रे स्तम्भपञ्चक-तदुपरितनभारपट्टमहामण्डपसाधोमुखकमलमध्यपङ्क्तिसकलशबहिः पङ्क्तिलघुमण्डपशिखरमूल-तन्मध्यकमलगर्भागारिका-उभयपार्श्वस्थबहिःप्रथम-खण्डदेवकुलिकाद्वयबन्धनामकौ युगपत् पञ्चमषष्ठौ तरङ्गौ ॥ चैत्यषट्कबन्धः महाहृदे च मूलतश्च [२६-२७] ॥

त्वदीयगुणसन्दोहे रमते यस्य भारती ।
भारती दुर्लभे(भा) नैव तस्य सच्छर्मसङ्गिनः ॥३२॥ १६

शिखरे देवाद्दक्षिणतो द्वितीया बहिःशीर्षा खण्डदेवकुलिका ॥

अतुल्यगुणसन्दोह! हताज्ञानतमोभर! ।
रत! संसारविध्वंसे सेवे तव नतः पदौ ॥३३॥ १७

तादृश्येव देवाद् वामतो द्वितीया खण्डदेवकुलिका ॥

जगज्जिनेन्दो! शरणं समाश्रितं तवैव संसाररिपोर्बिभेति न ।
न दन्तिनो हन्ति भयं हि वेतसं समाश्रितः कोऽपि समुल्लसत्क्रुधः ॥३४॥ १८

शिखरे देवाद्दक्षिण[त]स्तादृश्येव तृतीया देवकुलिका ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनन्तसद्दर्शनचारुलोचनं नतो भवन्तं भवभीतिमोचनम् ।
न(त्वां?) नौति नूनं परमर्च्यतां भजन् जगत्त्रयस्याऽपि महत्तमः श्रिया ॥३५॥ १९

शिखरे देवाद् वामतस्तादृश्येव तृतीया देवकुलिका ॥

त्वन्नाममन्त्रो हरते प्रजानां नानामहाविघ्नचयं स्मृतोऽपि ।
वशीकरोता(ती)हितमङ्गलानि निरञ्जनध्येयबुधस्तुतोऽर्हन् ॥३६॥ २०

शिखरे शकुनासोपरि अर्धाभ्यां पङ्क्तिद्वयेन सर्वमध्या देवकुलिका ॥

अनन्तमाहात्म्यमयस्वरूपं पराभिभूतान्तरवैरिचक्रम् ।
क्रमाब्जसेवापरनागराजं जगत्पतिं पार्श्वजिनं महेश! ॥३७॥ २१

अकालकालाब्दपयःप्रवाहहतोऽपि ते ध्यानशिखी दिदीपे ।
पेठुर्बुधास्तेन भवद्यशांसि सितांशुशुभ्राणि सुधाम[धाम!] ॥३८॥ २२

शिखरमध्ये द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां मध्यमा महादेवकुलिका ॥

नीलोत्पलविनीलाङ्ग! गतकर्ममहाभय! ।
यशसामेकपात्रं त्वं त्वरितं वाञ्छितं कुरु ॥३९॥ २३

शिखरे तद्गर्भमध्यमहादेवकुलिका ॥

हतमोहमहायोध! धरणाऽभ्यर्चितक्रम! ।
ममाऽऽनन्दपदं देहि हितसर्वस्वसङ्गतम् ॥४०॥ २४

तत्रैव कुलिकातो वामतः खण्डदेवकुलिका ॥

नमत्फणिफणस्फाररत्नोद्भासिक्रमाम्बुज! ।
जय पार्श्व! जगत्तात! तनुभाजितनीरज! ॥४१॥ २५

शिखरे सर्वोपरितनभागे मध्यपङ्क्तौ ॥

सितमपि वचनं ते नाथ! संसारतापं परिभवति परेषां नैव बह्वप्यराग! ।
गरममृतलवोऽपि प्रापयत्याशु नाशं शतमपि न घटा यद्वारिणः प्राणभाजः ॥४२॥
तव चरणसपर्या देव! सर्वाघवृन्दं दव(ल)यति भवभाजां सर्वतः साध्वसं च ।
चतुरनुतगुणौघ! श्रेयसां चाऽपि पुञ्जं जनयति परितोऽवि स्तोतृदेवाधिराज! ॥४३॥२७

द्वाभ्यां शकुनासादारब्धमूलामलसारकप्रविष्टप्रान्तमध्यगतबहिर्गताद्धार्द्धपङ्क्ति-स्थिताभ्यां सामलसारकः सम्पूर्णः शिखरबन्धः ॥

धरणोरगनाथस्ते भक्तानां भगवन्! वरम् ।
रभसा सादरं दत्ते विहितेष्टहितः सना ॥४४॥ कलशः ॥ २८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यस्यानर्था(घा?)ज्ञा विमदीकरोति वेतालभूपालफणीभसिंहान् ।
अकालकालज्वलदालयादिभियश्च जेघ्नेति कृतिस्तुतिज्ञा ॥४५॥ २९
अघवल्ल्यां स वह्न्याभो वरज्ञानधनो जिनः ।
भवतानवकारी नः कुर्याद् भयजयं --- ॥४६॥ ध्वजः ॥ ३०
एवं मया स्तुत! जगत्पतिपार्श्वजीरापल्लीवतंस! वितराऽऽशु मम प्रसद्य ।
आरोग्यबोधिविभवौ वरभक्तपद्मावत्यौरगेश्वरशिरोमुकुटायितांह्रे! ॥४७॥ ३१
श्रीजीराउलिपार्श्वनाथमिति यः सर्वेन्द्रपद्मावती-
वैरोट्या **मुनिसुन्दर**स्तुतिपदं संस्तौति चित्रैर्मुदा ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥४८॥ ३२

श्रीजीरिकापल्लिमण्डनश्रीपार्श्वनाथस्तवनं तच्चैत्यबन्धेन श्रीमुनिसुन्दर-सूरिकृतम् ॥

इति युगप्रधानावतार तपाबृहद्गच्छपरमपूज्यश्रीदेवसुन्दरसूरिगुरुगुणमहिमा-ऽर्णवाऽनुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमवदवतीर्णश्रीगुरुप्रभावपद्महृद-प्रभवायां श्रीपर्युषणामहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरा-वतीदेशतन्नरेश्वरश्रीपत्तननगरादिश्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेव-स्तुतिरूपे श्रीजीरापल्लीमण्डनश्रीपार्श्वजिनचैत्यचित्रान्तर्हृदे तत्श्रीपार्श्वस्तवरूपे द्वितीयस्तोत्रे सालेखे शिखरकलशध्वजबन्धनामानौ युगपत् सप्तमाऽष्टमौ तरङ्गौ ॥ चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे च मूलतश्च [२८-२९] ॥ सम्पूर्णश्चाऽयं तदीयस्तोत्रद्वयेन श्रीजीरापल्लीमण्डनश्रीपार्श्वचैत्यचित्रान्तर्हृदः ॥

अथ श्रीमहावीरजिनचैत्यचित्रान्तर्हृदस्तदीयस्तुतिरूपः प्रस्तूयते —

जयश्रियं प्राप्य महाभटानां रागादिकानां जितविष्टपानाम् ।
बभूव यः सार्थकनामधेयः प्रभुं महावीरमिमं स्तवीमि ॥१॥ ३३
श्रीवीरप्रासादे तलबन्धः ॥

न शक्यते या सदृशाद्दतैस्ते स्तुतिः सुरेन्द्रैरपि कर्तुमीश! ।
तां संविधित्सन्नहमल्पबुद्धिः स्फुटं ब्रवीमि प्रभुशक्तिमौग्ध्यम् ॥२॥ ३४
गर्भागाराच्छादकपद्मशिलाकारभारपट्टबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रमानिधे! वीर! भवाब्धिपारं ददासि सुध्येयपदारविन्द! ।
त्वमेव संसाधितसिद्धियोगा(ग)! रसाऽर्दितः पारगताऽविकार! ॥३॥ ३५
रतीशदुर्वारविकारभारं(र)संहारहेतुर्वचनं त्वदीयम् ।
तत्त्वावबोधं भविनां तनोति रङ्गद्गुणाधार! विनिर्जिताऽर! ॥४॥ ३६

द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां पीठे प्रथमं सोपानम् ॥

रवाऽपास्तस्फुरद्वार्द! तनुभाजितकाञ्चन! ।
लीलाचलितदेवाद्रे! जय रम्य! सुखाकर! ॥५॥ ३७
रमते यस्य धीरस्य त्वद्गुणस्तवने मतिः ।
पदं स लभते नूनं श्रीवीर! भुवनोत्तरम् ॥६॥ ३८

तथैव द्वाभ्यां पङ्क्तिद्वयस्थिताभ्यां द्वितीयं सोपानम् ॥

रयाद् भवभियां पारं रतस्त्वत्पूजने नरः ।
रङ्कोऽपि सुरपूज्योऽरं रङ्गवांल्लभतेऽक्षरम् ॥७॥ ३९

तत्रैवाऽनेन पङ्क्तिस्थितार्द्धद्वयेन तृतीयसोपानम् ॥

स्तुतिं यतिततिस्तुत्य! भगवन्! विदधत्तव ।
लभते भविदोऽभीष्टमकाम! शमधाम! शम् ॥८॥ ४०

गर्भागारे देवाद्दक्षिणतः प्रथमस्तम्भः ॥

वरहारहरक्षीरगौराः कीर्त्तिभरास्तव ।
धवलीकुर्वते विश्वं ज्ञस्तोमस्य महामताः ॥९॥ द्वितीयस्तम्भः ॥ ४१
ये नटा नव्यनव्यस्वावतारैर्मोहका नृणाम् ।
श्रितास्तेऽपि त्वदज्ञैर्ही देवाऽरतिरसे रतैः ॥१०॥ तृतीयस्तम्भः ॥ ४२
रविं भुवि भविस्फूर्ज-न्मोहध्वान्तक्षये विभो! ।
त्वामाश्रित्य जयत्येव न को भव्यो भवं भटम् ॥११॥ चतुर्थस्तम्भः ॥ ४३
स महा(समहा?)मम मङ्गल्यलक्ष्मीलीलागृहं भवेत् ।
यस्ते नाथ! पदद्वन्द्वं स्तौति भग्नभयं भवी ॥१२॥ पञ्चमस्तम्भः ॥ ४४
स्मरवीरतिरस्कारक्षम! नाथैकशोऽप्यहो! ।
नयतस्तेन तं स्वस्य सच्चक्रं शक्रतां क्रमौ ॥१३॥ षष्टः स्तम्भः ॥ ४५

एवं स्तम्भषट्कबन्धः ॥ एवं त्रयोदशभिः सम्पूर्णः सपीठससोपान-गर्भा[गा]रबन्धः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इति युगप्रधानावतार० नुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदय० त्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावती० स्रोतसि चैत्यट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीवीरस्तवरूपतच्चैत्यचित्रान्तर्हृदे सपीठगर्भागारबन्धनामानौ युगपत् प्रथमद्वितीयौ तरङ्गौ ॥ चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे मूलतश्च [३०-३१] ॥

शमिनां ते श्रयेद्वाणी मुक्तिसौधाधिरोहणे ।
तात! निश्रेणिदण्ड! त्वं सुपदन्यासकारणे ॥१४॥ देवाद्दक्षिणतो मण्डपः ॥४६
वीरनाथ! गुणान् स्तौति या ते वाग्(क्) सैव मे मता ।
मौलयश्चापि धन्यास्ते ये त्वदंह्रियुगे नता ॥१५॥ देवाद्वामतो मण्डपः ॥ ४७
जयति श्रीभुजः कुर्वन् स्वानमज्जा जनान्(स्वमानमज्जनान्?) विभुः ।
सुमहा तेजसां धाम श्रीवीरो जन्तुतारकः ॥१६॥ ४८

शिखरमूले श्रीमहावीरनाथनामगर्भं पञ्चम(द?)लं[कमलम्] ॥

श्रीवर्धमानं नतनाकिराजं जन्मादिहीनं नमतैत्यवन्द्यम् (?) ।
भव्याङ्गिनोऽशंशमि येन मोहहरेण तापः परितो भवस्य ॥१७॥ ४९

शिखरे शकुनासेतिप्रसिद्धगर्भागारिकाबन्धः ॥

अनन्तदर्शनज्ञानपद्मानन! मनस्विनः ।
त्वामेव भुवने देवं प्राहुर्भवदवस्रवम् ॥१८॥ ५०

अर्द्धाभ्यां शिखरमूले उभयतः प्रथमे बहिः खण्डदेवकुलिके ॥

न रोषलेशं दधसे कदापि महामनास्त्वं शमधाम [वीर!(?)] ।
तथाप्यवज्ञादिकृतो विधत्से विभो! महादण्डमकाम! कामम् ॥१९॥ ५१

शिखरमूलेऽर्द्धाभ्यां उभयतो मध्यमे खण्डदेवकुलिके ॥

चकार यः कर्मवनानि भस्मसात् स्वयोगतेजःप्रचयैर्महामनाः ।
कैवल्यलक्ष्मीकलितश्च निर्वृतिं भेजे स जीयाच्चरमोऽरिहाऽघहृत् ॥२०॥५२

शिखरे शकुनासोपरि सर्वगर्भमध्यदेवकुलिका ॥

इति युगप्रधानावतार-तपाबृहद्गच्छाधिराज-परमपूज्यश्रीदेवसुन्दर-सूरिगुरुगुणमहिमार्णवाऽनुगामिन्यां तद्विनेयश्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमव० त्रिदशत-रङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेशतन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरादिवर्णनस्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रे महाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीवीरजिनस्तवरूपतच्चैत्रा(त्या)-न्तर्हृदे मण्डल(प)द्वयकमलगर्भागारिकाप्रथमस्थ(स्त)र-खण्डदेवकुलिकाचतुष्क-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्वमध्यदेवकुलिकाबन्धनामा तृतीयस्तरङ्गः । चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाह्रदे अन्तर्ह्रदे मूलतश्च तरङ्गः [३२] ॥

अतीतलोकत्रितयोपमान! भदन्त! नाथाऽमृतसातदातः! ।
त्वदंह्रिलीनं मम चित्तमस्तु संसारदुःखोत्करपारगाऽरम् ॥२१॥ ५३
अर्द्धाभ्यां शिखरे द्वितीयस्थ(स्त)रे उभयतो बहिः खण्डदेवकुलिके ॥
यै रोषतोषप्रमुखैश्चरि[त्रै]-र्जडा हरादीन् मुदितान् स्तुवन्ति ।
त्वदागमाज्जा(ज्ज्ञा)तसमग्रतत्त्वास्तैरेव तान् नाथ! परित्यजन्ति ॥२२॥ ५४
शिखरोपरितनभागे सामलसारकेऽर्द्धाभ्यां बहिःपङ्क्ती ॥
निरञ्जनं विश्वहितैकहेतुं त्वामीश्वरं ये शरणं श्रयन्ति ।
नूनं परानन्दपदप्रतिष्ठां ते सर्ववेदिन्नचिराद् भजन्ति ॥२३॥ ५५
अर्द्धाभ्यां तत्रैव मध्यपङ्क्ती ॥ एवं द्वाभ्यां शिखरशीर्षबन्धः ॥
भविनां विश्ववन्द्यस्त्वं ददसे दम्भवर्जितः ।
तरसा सारतत्त्वानि लम्भयन्नभवः शिवम् ॥२४॥ कलशः ॥ ५६
मुनीन्द्र! भक्तत्रिदशेन्द्रवृन्दश्रेयोलताकन्दनवाम्बुवाह! ।
गताखिलाज्ञान! मनस्विरम्य! नमोनमोऽनर्दनतान! ते नः ॥२५॥ ५७
विश्वबान्धव! तव स्त[व]मे[तत्] वीरनाथ! विरचय्य सुभक्त्या ।
मार्गयामि भगवन्! शिवहेतुं बोधिमेव शिवसन्ततिदातः! ॥२६॥ ५८
द्वाभ्यां ध्वजबन्धः ॥

एवं यो मतिमान् स्तुते जिनवरं श्रीवर्द्धमानाभिधं
शक्रालीमुनिसुन्दरस्तुतिपदं तच्चैत्यचित्रैर्मुदा ।
आसंसारमभीप्सिताखिलसुखैः स्फूर्जत्प्रमोदाद्वयो
मोहद्वेषिजयश्रिया स लभते श्रेयोऽचिराच्छाश्वतम् ॥२७॥ ५९
इति श्रीवीरजिनस्तवनं तच्चैत्यबन्धेन भट्टारकश्रीमुनिसुन्दरसूरिकृतम् ॥
इति स्तवोपसंहारकाव्यम् ॥

इति स्वचैत्याऽभिधचित्रबन्धैः स्तोत्रैः स्तुताः पञ्चजिना मयाऽपि ।
दत्त्वा द्रुतं पञ्चमचिद्विलासं गतिं ददन्तां मम पञ्चमीं ताम् ॥१०॥
इति पञ्चजिनसर्वस्तोत्ररूपमहाह्रदोपसंहारकाव्यम् ॥ इति पञ्चजिनप्रासादबन्ध-स्तोत्राणि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इत्यादिचित्रैर्बुधचित्रहेतुभि-श्चित्रात्मकैः स्तोत्रगणैः समन्ततः ।
प्रतिप्रभातं जिनराजसद्मसु स्तुवन्ति यस्मिन् कवयो जिनाकृतीः ॥१॥ ६१
एवं सदा विज्ञविधीयमानस्तोत्रारवैरुन्नतचैत्यपङ्क्तौ ।
यस्मिन् प्रगे भव्यजनश्रवस्सु भवन्ति पीयूषरसाभिषेकाः ॥२॥ ६२

इति चैत्यषट्कचित्रबद्धपञ्चजिनबहुस्तोत्ररूपमहाहृदस्य नगरवर्णनसम्बन्ध-करणकाव्यद्वयम् ॥ इति युगप्रधानावतार-तपाबृहद्गच्छाधिराजपरमपूज्यश्रीदेवसुन्दर-सूरिगुरुगुणमहिमार्णवानुगामिन्यां तद्विनेय-श्रीमुनिसुन्दरसूरिहृदयहिमवदवतीर्णश्रीगुरु-प्रभावपद्महृदप्रभवायां श्रीपर्युषणामहापर्वविज्ञप्तित्रिदशतरङ्गिण्यां जयश्र्यङ्कायां द्वितीये श्रीगूर्जरावतीदेशतन्नरेश्वर-श्रीपत्तननगरादिवर्णनश्रोतसि चैत्यषट्कबन्धचित्रमहाहृदे स्वस्वदेवस्तुतिरूपे श्रीवीरचैत्यचित्रान्तर्हृदे श्रीवीरजिनस्तवरूपे शिखरकलश-ध्वजबन्धस्तुत्याद्युपसंहारनामा चतुर्थस्तरङ्गः ॥ चैत्यषट्कबन्धमहाहृदे च अन्तर्हृदे मूलतश्च [३३] ॥ सम्पूर्णश्चाऽयं श्रीवीरजिनस्तुतिरूपस्तच्चैत्यचित्रान्तर्हृदः ॥ तत्सम्पूर्तौ च सम्पूर्णोऽयं चैत्यषट्कबन्धचित्रनामा महाहृदः स्वस्वजिनस्तोत्ररूपः ॥

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२)

पत्तननगरे श्रीहीरविजयसूरिं प्रति महेवानगरतः विजयहर्षमुनिना लिखितो विज्ञप्तिलेखः

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

जगद्गुरु श्रीहीरविजयसूरि महाराज ए जैन इतिहासना प्रसिद्ध अने पवित्र धर्मपुरुष छे. शाह अकबर तेमना धर्मचरणथी अतिप्रभावित हतो, अने तेने कारणे तेणें पोताना राज्यमां अहिंसापालननी घोषणाओ वगेरे अनेक सत्कार्यो करेलां ते बधुं पण ऐतिहासिक तथ्य छे. सं. १६३०मां तेमनुं चातुर्मास 'पत्तन'[१] (पाटण) शहेरमां हशे त्यारे, तेमनी शिष्यपरम्परामां वर्तता मुनि विजयहर्षे 'महेवा' (महोवा-महोबकपुर)थी आ पत्र लखेल छे.

पत्र सम्पूर्णतः पद्यात्मक छे. २२२ पद्योमां व्याप्त आ पत्रमां लेखके प्रयोजेल छन्दोवैविध्य-विचित्र छन्दोना प्रयोग सुज्ञ भावकने अचंबो पमाडी जाय तेम छे. विविध चित्रबन्धो, द्व्यक्षर काव्य, त्रिपदी-द्विपदी-एकपद प्रकारनुं काव्यगुम्फन तेमनी विद्वत्ताना प्रकर्षनो संकेत आपी जाय छे.

प्रथमना ४६ श्लोको मङ्गलाचरणरूप जिनवन्दनाना छे. ऋषभदेव-विमलनाथ-कुन्थुनाथ आदि विविध जिनोनी, १ थी २४ जिनोनी, छेल्ले वर्धमानजिननी कर्ताए स्तुति करी छे. ४७ थी ६१मां नगरवर्णन छे. ५६मा पद्यमां 'हेमराज' नाम आवे छे, ते त्यांनो शासक हशे के मन्त्री? स्पष्ट थतुं नथी. ६२-१८२ सूरिवर्णन छे. १८३मां महेवानो उल्लेख मळे छे. त्यां हरपाल राजा, तेनी धन्यवती नामे राणी, तेमनो मेघराज नामनो पुत्र - आ ३नो उल्लेख १८४-८५मां थयो छे. १९१मां पत्रलेखकनो नामनिर्देश छे.

पत्रलेखक महानिशीथसूत्र नामे आगमना योगोद्वहन कर्या पछी कल्पाध्ययनना जोग वही रह्या होवानो उल्लेख धार्मिक दृष्टिए महत्त्वनो गणाय तेवो छे (१९३).

१. ४८मा श्लोकमांना 'पत्तन' शब्दने आधारे आ कल्पना करी छे. तेने बदले बीजुं कोई गाम होय तो नकारी न शकाय. इतिहास जोवो पडे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ते सिवाय क्षमापना, पर्युषणनां कृत्यो, अध्ययन आदिनो कशो ज निर्देश आमां नथी मळतो.

२०० थी वाचक कल्याणविजयादि साधुवर्योनां नामो २१५ सुधी वांचवा मळे छे, जेओ गच्छपतिनी साथे हशे. २१५मां साध्वीओनो नामोल्लेख पण थयो छे. २१६ थी २१८मां महेवास्थित मुनिगणनां नामो छे. पत्रना प्रान्ते पुष्पिका वांचतां सं. १६३०मां पत्र तथा आ प्रति पण लखायेल होवानुं जाणी शकाय छे. १८ मोटी साईजना जे पत्रोमां पथरायेलो पत्र मूलतः एक ओळिया (Scroll) रूपे हशे.

पत्रमां अशुद्धिओ तथा छन्दोभङ्गनुं प्रमाण प्रचुर मात्रामां जोवा मळे छे.

*

॥ ८० ॥

स्वस्तिश्रीजिनपाणिपद्मयुगलं भेजे प्रवालप्रभं,
मन्येऽहं कृपणैः खलैश्च निबिडं सन्तापिताङ्ग्योत्तमा(?) ।
नित्याऽहर्मणिना दिने निजलसत्पादैः सहस्रैः पुनः,
ज्ञात्वा सज्जनतां जिनेन्द्ररुचिरं श्री**नाभिभूपाङ्गजे** ॥१॥

वीणां वादयते जिनेन्द्रपुरतो ब्राह्मीः(ह्मी) प्रतापाकुलाः(ला),
गीतं गायति नित्यमर्चिरुचिरा विज्ञानसम्पूरिताः ।
किं चित्रं पठति प्रभो! मुनिपते! शास्त्रं निजेच्छां पुनः,
प्राप्तुं केवल[बोध]मर्घ्यममलं मार्त्तण्डकान्तिप्रभम् ॥२॥

कान्तारङ्गाकुलो यो मनुजसुरगणे वीतरागेषु मुख्यः,
प्रख्यातो विश्वपूज्यः परमसुखमयो मानहीनो मुनीशः ।
भास्वन्मार्तण्डकान्तिर्नयनसुखकरो विश्वचित्रं बभूवा-
ऽसौ पातु ब्रह्मयुक्तः कुमतिहरिगणे नागशत्रुर्जिनेन्द्रः ॥३॥

चापल्यं निजबान्धवस्य सवितुः क्षारं कलङ्कं पुनः,
शीघ्रं नाशयितुं प्रभो! तव रमा भक्त्या श्रिता भानुभाः ।
नित्यं कोकनदप्रभं पदयुगं दम्भोलिभाराकुलं,
स्पर्द्धां त्यक्तुमलं विरोधमनिशं विद्वज्जनन्या सह ॥४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माया-मान-यम-प्रमाद-मदन-क्रोधालिलोभारयः,
सर्वे ते तव भूघनाद् गुणयुतात् सुध्यानलीलाद् गताः ।
सर्पिण्यां(ण्या) हृदये च रावणमहीनाथे निगोदेष्वपि,
सारांशे खलु कुम्भकर्ण-वसुधानाथे हरे चोरगे ॥५॥

मन्ये मनुष्या(?) यशसि प्रभो! ते, नित्यं शशाङ्कं शितशर्कराभम् ।
मृगेन्द्रसूनोर्गज[चक्र]वालं, यथा समुद्रान्नलिनाकरं सत् ॥६॥

पञ्चाननस्य मृगनागगणस्य चैव, प्रद्योतनस्य हरितारकमण्डलानाम् ।
साम्यं न यातमभिभूघन[रत्न?]कान्तेः मर्त्यामरप्रणतमौलि[मणि]प्रभाणाम् ॥७॥

यूयं भजध्व(?) कमलासुतनाशकं द्राग्, हर्यक्षशौर्यकलितं कुमतिद्विपेन्द्रे ।
जन्तुव्रजस्य निजनन्दनपालकं सत्, सूर्यप्रभं दलितदुर्गतिदुःखमूलम् ॥८॥

युद्धे नदीश-वन-दुर्गभये त्वरण्ये, ये यान्ति भाग्यरहिताः सुखमाप्नुवन्ति ।
दीनत्व-दौस्थ(स्थ्य)-घनजर्जरदेहयुक्तास्त्वन्नामतो हरिभयाद्धरिचक्रवालम् ॥९॥

इति श्रीऋषभदेववर्णनाष्टकम् ॥

अपारिजातो भुवि पारिजातः, महोदयं देहि महोदयोदय! ।
शशाङ्करूपो जिननायकोऽ**जितः**, महोदयं देहिमहोदयोदयः ॥१०॥

श्रीसम्भवं भयहरं जनरत्नहारं, नीहारमुक्तममलं सुमतं हि वन्दे ।
देवं हिताय यमहं गतकाममोहे, भक्त्या सदैव भवसागरपोतवाहम् ॥११॥

ईडेऽ**भिनन्दन**जिनं नरदेवरूपं, सूरं प्रभावविशदं कमला धरन्तम् ।
सारङ्गनेत्रविमलं भवनं रमायाः, सूरं प्रभावविशदं कमलाधरं तम् ॥१२॥

पुष्करपुष्करपुष्करचित्त! **सन्मति**सन्मतिसन्मतिसार!
दुष्करदुष्करदुष्करचाव! दुर्गतिदुर्गतिदुर्गतिमुक्त! ॥१३॥

पद्मप्रभो रक्षतु नो हरिप्रिया, यं प्राप्य तुष्टा इव तातपादम् ।
सत्केवलज्ञानविराजमानं, मयूरचक्रं(क्रे) जलदं मनोज्ञम् ॥१४॥

कुर्वन्ति नृत्यं रवि-सोम-तारकाः(का), यं प्राप्य नाथं गगने भ्रमच्छलात् ।
त्वत्सौम्यतामेत्य यथाहमङ्ग, नीलोत्पलं कैरवबान्धवं च ॥१५॥

चन्द्रप्रभश्चन्दनचन्द्रगन्ध(न्धो), निजस्य कान्त्या जितपुण्डरीकः ।
ददातु मोक्षं यशसश्च पिण्डो(ण्डः), कृतो विधात्रा दधितुल्यमांसः ॥१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीपुष्पदन्तो जितपुष्पदन्तौ(न्तो), सुपुष्पदन्तव्रज एव देयात् ।
महोदयं पुष्पगणांशुचक्रं, पुष्पौघगन्धो वरपुष्पकायः ॥१७॥
श्रीशीतलः शीतलवाक् विभाति, शीतद्युतेस्तुल्यमुखः शिरोमणिः(?) ।
शिवालयाश्शीलधरो भवौघ-तापे लसच्छीतलवायुतुल्यः ॥१८॥
श्रीश्रेयांसः श्रेयसा राजमानः श्रेयःकामी कीर्त्तिगङ्गाहिमाद्रिः ।
श्रेयःपिण्डो(ण्डः) श्रेयसो दायकोऽसौ, जीयाद् यावद् भानु-चन्द्रौ ह्यनन्ते ॥१९॥
श्रीवासुपूज्यो जनदेवपूज्यः, पूज्येषु पूज्योऽमरपूज्यबुद्धिः ।
बालार्कदेहो गतबालबुद्धिः बालेन्दुभालो बलदेववक्त्रः ॥२०॥
जयतु **विमलनाथो** निर्मलं लोकचक्रं घनघनमलवारं कुर्वनङ्गं सुवर्णः ।
हरिहरिहरिसेव्यः सौ(शौ)र्यपञ्चाननाभो, गज-वृषभ-सुहंसप्राग्रगत्याऽभिरामः ॥२१॥
मोक्षार्थं मानवानां भवतु वरगुणक्षीरपूर्णाम्बुवाहः;
स्वीकाय(?) स्वर्णशैलो नयनसुखकरः श्लोकसद्वक्त्रसोमः ।
भास्वद्भालिप्रतापग्रहपतियुगलो गौरमासारगानः(नो)
विज्ञानज्ञानभाग्यौषधिततिविततो लब्धिसन्नन्दनार्घ्यः ॥२२॥
मार्त्तण्ड-सोम-तपनीय-रसोद्भवालि-रत्नाऽग्नि-चारु-चपलाद्युतिसाररूपम् ।
किं वर्णितेन बहुना क्षितिमोहनीयं, विभ्राजते सकलदैवतचक्रवज्रिणः ॥२३॥
क्व पद्मबन्धुः क्व च तातपादो नित्यं त्रिलोकीविजयी न रोषवान् ।
स्तोकेन धाम्ना कुवरोषयुक्तः (?) मर्त्योत्तमस्त्वत्पदपद्मसेवकः ॥२४॥
कर्पूरगन्धस्तव शोभते ते, प्रीणाति लोकभ्रमरस्य मण्डलम् ।
दौस्थस्य चित्ते द्रविणं यथाऽर्घ्यं, मुनिव्रजानां तव दर्शनं द्राग् ॥२५॥
श्रीनन्दनो येन हतः स्वलीलया, चित्रं न जातं भुवने तथाऽपि ।
रम्भावनं सामजबालकेन, उन्मीलितं प्राणविना(?) यथा च ॥२६॥
अस्त्वस्तु साम्यं तव भूघनस्य, प्रद्योतनस्य प्रियपीतकान्तेः ।
परं प्रतापाद् घनकम्पितोऽसौ, नष्ट्वा गतः सन्नभसि ग्रहेशः ॥२७॥
समानासमानारिमानारिमाना, जिताजाजिताजातिमायातिमाया ।
सुभाषाः सुभालिः त्रिकामा विकामा विचित्रावमादा मनोज्ञा मनोज्ञा ॥२८॥
॥ इति श्रीविमलनाथवर्णनाष्टकम् ॥श्री॥
अनन्तविज्ञानधरस्त्वनन्त-दिनेश्वराभो गतपापपङ्कः ।
अनन्तसंसारहरो हराभः, अनन्तसर्पभ्रकुटिद्वयाच्च(?) ॥२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीधर्मनाथो मकरध्वजाभ(:), पुनीहि लोहोत्तमदेहसार! ।
सुधर्मचक्रैर्भुवनत्रयं च, जयन् मनोज्ञांऽह्रियुगो मनोज्ञः ॥३०॥
श्रीशान्तिनाथो जनशान्तिमूर्तिः, सत्सार्वभौमो निजसद्ध्वजाभ्याम् ।
यः साधयामास हिमाचलान्तं चतुःसमुद्रं जयताज्जिनेन्द्रः ॥३१॥
यो भूपो भुवनत्रयस्य भगवांश्चन्द्रश्रिया भासुरः(रो)
मोहाजानकुचौ रहो जिनपतिर्गुप्त्या युतश्शक्तिमान् ।
शत्रौ मित्रसमः प्रमादरहितो राजायते सर्वदा,
औदार्यप्रभुता-विवेक-विनय-प्रज्ञा-प्रतिष्ठाकुलः ॥३२॥
मूर्त्तिर्यदीया कमलाकराभा, हस्तद्वयाम्भोजधराक्षयांशुः ।
शान्ता यशस्वी भवचक्रवालं लुनीहि शीघ्रं मम मोहनिद्राम् ॥३३॥
चित्रीयते मानवचक्रवालं, ज्ञात्वा स्वरूपं तव वज्रतुल्यम् ।
संसारसिन्धौ वरयानपात्रं, अनन्तकामो गतकामलेशः ॥३४॥
अपूर्वमेघो जिनवाक्यरूपः(पो), न प्लावयत्येव गुणैश्च वर्षति ।
तापेन मुक्तोऽखिललोकतुष्टिदः, शब्दायमानो न तु निष्फलोऽसौ ॥३५॥

॥ इति श्रीशान्तिनाथवर्णनपञ्चकम् ॥

यस्य प्रभावाद् रिपुचक्रवालं, **कुन्थु**प्रभं जातमहो! जिनस्य ।
सुरेन्द्र-कुन्थौ समलोचने वः (नो यः?) मां पातु मर्त्यामरसार्वभौमः ॥३६॥
अराभिधानो जिननायकोऽसौ, जितार(रि?)चक्रः कनकाभिरामः ।
अम्भोजनेत्रे गुणचन्द्रपेटकः, मार्त्तण्डकान्तिस्त्वरितं च रक्षतु ॥३७॥
श्रीमल्लिनाथं नलिनं नमामि, सदोदयं हंसविराजितं तम् ।
वराङ्गुलीव्यूहसुपत्रसुन्दरं, लक्ष्मीनिवासं जनदृष्टितृप्तिदम् ॥३८॥
श्रीसुव्रतं सुव्रतशोभिताङ्गं, स्तोष्ये घनाभं जनचित्तचक्रे ।
अरिष्टरत्नव्रजसाररश्मि-मरी(रि)ष्टमर्तिव्रजनाशकं तम् ॥३९॥
नमिजिनो नलिनाङ्कमनोहरो, भवसमुद्रजले वडवानलः ।
सुघृतसिञ्चितवह्निसमद्युति-र्जयतु वाञ्छितदानसुरद्रुमः ॥४०॥
शङ्खो येन तु पूरितो निजभुजायासव्रजैः सद्धनुः,
शब्दाद्वैतमहो कृतं च विशदं चक्रं घनं भ्रामितम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृष्णस्याऽद्भुतविक्रमं मृगसमं लीलागणैः सत्वरं,
कामो येन हतः शिवाध्वनि वरे **नेमिप्रभो**र्नेमिभाः ॥४१॥
यत्पादवारिस्सु सुधायते हि, मुदा लसत्कृष्णचमूं त्वजीवयत् ।
यस्य प्रभावाद् भुजगो द्विजिह्वपतिर्बभूवाऽवतु **पार्श्वनाथः** ॥४२॥
अशोकवृक्षो जिनवाक्यरूपः शान्तारसैः सिञ्चितसारमूल[:] ।
संसारतापैर्घनपीडितानां, शान्तिप्रदो राजति पापपङ्कः ॥४३॥
श्रियैश्च(यै च) मूर्त्तिः बहुराजयाध्यां, सुखप्रदा सद्बहुराजयो स्तात् ।
आयुष्यमस्तु(?) जिनशासनाय, मानैर्युता यस्य लसत्प्रभावात् ॥४४॥
विद्याचतुर्दशमणिव्रजराजमानः(नो), वाक्यार्णवो जिनपते! तव चित्रसिन्धुः ।
अर्थाद्रिनीतिनिकरोर्मिरसैर्मनोज्ञ-मृज्ज्याहिमोहभयशोकगणा(न्) जिनेन्द्रः ॥४५॥
कम्पायमानस्तपनीयशैलो निजौजसा दुस्तपराशिकर्त्ता ।
परीसहे नागगणे मृगेन्द्रः, **श्रीवर्द्धमानो** जयताज्जिनेन्द्रः ॥४६॥
एवं प्रणम्य जिनमण्डलसूर्यतुल्यान्, विघ्नौघपद्महरिभान् गतमोहरोगान् ।
दुर्ध्यानपङ्करहितान् करितुल्यदेहान्, छत्रत्रयेण विशदान् गुणरत्नवारान् ॥४७॥
श्री**गुर्जरे** देशगणावतंसे, तत्राऽस्ति सारं नगरेषु शेखरम् ।
श्रीतातपादैर्गणि-वाचकाभ्यां, पवित्रितं स्वर्गसमान**पत्तनम्** ॥४८॥
विभ्राजते यत्र विशालवप्रो, अनीतिसिन्धूज्ज्वलनैरभेद्यो(द्यः) ।
यया श्रिया निर्जित एव गोचयः(यो), निष्कासितोऽगाद् दिवि मर्त्त्यलोकात् ॥४९॥
चयाग्रचक्रं निजकान्तिराजिभिः वराङ्गुलीभिः सुरकुट्टिमं च ।
सन्तर्जयन् राजति विद्रुमाभं, विचित्रचित्रप्रविराजमानम् ॥५०॥
प्रासादचक्रं वरुणप्रभाधरं, दीव्यत्यहो जन्तुगणस्य सिद्धः ।
प्रासैश्च सोपानगणो विधात्रा, कृतः किलाहं भुवने मनोज्ञम् ॥५१॥
यत्रालयः सद्रविमित्ररूपः, पुण्यप्रभो दुन्दुभिचक्ररूपः ।
विमानतुल्यो मुनितातपादैः, पवित्रितो देवगणैनि(र्नि)षेवितः ॥५२॥
यो गोविन्दपराक्रमो निजभुजोत्पन्नश्रिया दायकः(को)
नीत्या रामसमो रिपुं निजलसत्कुन्ताग्रचक्रैर्जयन् (?) ।
दण्डं मर्त्त्यगणे मुमोच सततं मर्त्त्या(र्त्त्य)व्रजं वर्द्धयन्,
सोमः सागरसत्तरङ्गनिकरं नित्यं यथा नन्दतात् ॥५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सौधालिहट्टालिविमानचक्रैः पुरन्दराभः प्रविराजति ध्रुवम् ।
यया श्रिया निर्जित एव भूभुजः(जो), भेजुः पदं कोकनदप्रभं वरम् ॥५४॥
वासुदेव(वो) वासुदेव-तेजसा प्राणभासुरः ।
प्रजापतिः प्रजापालः(लो) दीव्यत्येव क्षमापतिः ॥५५॥
यत्र प्रधानो भुवि हेमराजः हेमद्युतिः श्रीगुरुदेवभक्तः ।
गाम्भीर्यचक्रे ह्य युतो(?)विवेकवान्, विचक्षणो बुद्धिधरो विभाति च ॥५६॥
महोत्सवाकीर्णपुरं पुरोत्तमं, विभाति सद्धर्मरसोद्भवाकुलम् ।
दानेन चिन्तामणितुल्यमेवं, सदाऽक्षयं क्षीरसमुद्रनीरवत् ॥५७॥
प्रदीपराजिः प्रवरप्रभाधरा, भूच्छायचक्रं निजकान्तिसूच्या ।
भिन्दन् मणिव्यूहरुचिं मनोहरं शुच्याङ्गुलीभिः(भि)ग्र(ग्रं)हने वसत्वरम्(?) ॥५८॥
विवेक-गाम्भीर्य-विचारमौक्तिकै-यु(र्यु)क्तेन हारेण विभूषिता जनाः ।
वसन्ति मुक्ताफलरत्नराजिभिः पौलस्त्यतुल्या जनराजिपूज्याः ॥५९॥
रम्भासमाना ललना मनोज्ञाः, पतिव्रतापालनतत्परा याः ।
कुरङ्गनेत्रा हि कुरङ्गमुक्ता(क्ता) विभ्राजते(?) शीलधरा विचक्षणाः ॥६०॥
यत्र प्रसन्ना ऋतवः समीराः(रा) भूपादयो मन्त्रिवरा जनावली ।
विहङ्गमा मङ्गलशब्दकारका मेघादयो याचकपूरिताशाः ॥६१॥

॥ इति श्रीनगरवर्णनम् ॥ काव्य १४ ॥

श्रीदायकं कमलमध्यसुकोमलाङ्गं, कल्याणदं सकलमानववन्द्यपादम् ।
सूरीश्वरे मुकुटसन्निभमेव साधुं, विश्वैकमेरुसदृशं जनपुण्डरीकम् ॥६२॥
पीडाम्बुधौ सेतुसमं मुनीन्द्रं, विज्ञानसन्दोहधरं स्तुवेऽहम् ।
कन्दर्परूपैर्विशदं प्रकृष्टं, कल्याणकान्तिं भुवने ललामम् ॥६३॥
सर्वज्ञो ध्यानलीनो मुनिगणमुकुटज्ञानमुक्ताफलौघो,
जीयाद् दन्तालिरत्नैर्गुणगणकुसुमैः(मै)भ्रा(र्भ्रा)जमानो मुनीन्द्रः ।
भ्रूनेत्रद्वन्द्वनीलोत्पलविनयरमादीप्यमानो गरिष्ट-
स्तत्कान्त्या सूर-सोमा-ऽमरपतिनिकरप्रग्रहं तर्जयंश्च ॥६४॥
तवाऽभिधानममलं सुरमर्त्यवाराः, स्वप्नेऽपि सातजयदं हृदये प्रकामे ।
मुञ्चन्ति नो रुचिररत्नमवाप्य लोका रोलम्बजालमयि गन्धधरं मृणालम् ॥६५॥
कूपारबिन्दुनिकरस्य सरिद्वरायाः, पांशोर्गणं गणयितुं गगनस्य मानम् ।
कर्तुं क्षमो न गुरुतुल्यजनो गुणालेः, क्षीरोदधिं तरी(रि)तुमेव लसद्भुजाभ्याम् ॥६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिशुः प्रभो! तव निजाखिलकम(र्म)चक्रे, किं सन्मुखो न भवति प्रभुतावरेण्य!।
सिंहीसुतः सकलवारणनायके हि, क्षीरोदधेः समेगुणौघसुरत्नराशेः ॥६७॥
काव्यं करोमि जनसंस्कृतजल्पनं च, शास्त्रस्य सत्पठनमेव निजेशमानम् ।
प्राप्नोमि शं सकलमानवपूज्यतां ते, तत्सारचूतकलिकाप्रकरैकहेतुः ॥६८॥
विमलकमलभूघनं निर्मदं शान्तिदं वित्तदं विश्वपं देवदेवार्चितम् ।
सकलवदनमञ्जुलं स्वर्णभं भद्रदं सिद्धिदं स्वर्गदं शङ्करं भास्करम् ।
रुचिरमुकुटसन्निभं सूरिचूडामणिं सर्वशङ्काहरं सोमभं सूरिपं
ममरममु(नु)जसेवितं(?) सर्वशोभाधरं नागगत्या व[रं] साधुमर्त्येश्वरम् ॥६९॥
स्वकीयपादद्वयकान्तिचक्रैर्यस्तोषयामास मनुष्यचक्रान् ।
यः शोषयामास भवौघपङ्कं, स कामरूपो मम पातु मोहात् ॥७०॥
यत्पादवह्निः प्रविराजति ध्रुवं, यत्कामदाज्ञानभवौघधान्यम् ।
जनव्रजानां वरहर्षमोदकं, कुर्वन् कलाशङ्करप्रभाकर ॥७१॥
सूर्येन किं? भविकपद्मविबोधकोऽयं, किं सद्रथेन? शिवमार्गरथाभिरामः ।
अश्वेन किं? यदि च शत्रुगणस्य जेता(?), किं चक्रिणा? यदि जनस्य
सुखस्य दाता ॥७२॥

वरं नमामि प्रवरं प्रमादं, दमप्रदं मानवनागशंदम् ।
दयं वरं नन्दनगन्धसारं, हरं जनौघे गतमोहदुर्मदम् ॥७३॥
दमायं मप्रभं वल्गत्, प्ररङ्गं सारदाप्रदम् ।
वनेभं ज्ञानकूपारं माप्रभं सुमहोदयम् ॥७४॥
ज्ञानदानं मिताहारं, मयनस्य सुखप्रदम् ।
वमाधवं सुरेन्द्रेभगतिसारं मुनिं सना ॥७५॥
नरेन्द्रदेवेन्द्रसुसन्धनंजयं, रङ्गत्समाङ्गं रहितं कुकीर्त्या ।
हर्यक्षसारं द्विजराजवक्त्रं, नाशंबलं ज्ञानविराजमानम् ॥७६॥
रविप्रतापसहितं, देवपद्मालविराजितम्(?) ।
अजन्यनाशकं साधुं, छत्रत्रयविराजितम् ॥७७॥ छत्रम् ॥१॥
चामरप्राजितः सार-रविर्जनगणे गुरुः ।
रङ्गाकुल-क्षमामेरुः, रयान् मां मङ्गलं कुरु ॥७८॥
चामरकान्ते! मुनीशान-नखरायुधसन्निभ! ।
नरालौ कामसत्कुम्भ नक्षत्रे सोमसन्निभ! ॥७९॥ छत्रचामरकाव्य ॥ ७ पश्चात्(?) ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुसुधाधामविमलं, ज्ञाननीरधरं परम् ।
रक्षकं भवकूपारात्, रामाभं राममण्डितम् ॥८०॥
सुकुम्भं भविके मर्त्ये, मुनिनाथं स्तुवे ह्यहम् ।
हरिभं श्रमणस्तोम-मन्दिरे देववन्दितम् ॥८१॥
कलहंसगतिं शङ्ख-रवं वासवरङ्गभृत् ।
ततनीलोत्पलभ्राजि, विविधज्ञानभासुरम् ॥८२॥
जनमङ्गलदं सर्व-साधौ नालीकमुज्ज्वलम् ।
रमाज्ञाकलितं नीति-सुन्दरं शिवदं वरम् ॥८३॥ पूर्णकुम्भकाव्यम् ॥४॥
विमलसातपवारणवारण!, जनगणे भुवनत्रयभास्कर! ।
रवविराजितदुर्गतिनाशक! विमलचित्त! जगत्त्रयवत्सल! ॥८४॥
रहित! पापभरैर्गुणरोहण! तव मुखं मम चाक्षरमर्त्तिहम् ।
गतमदं दमसागरसामभं, मनुजशेखर! रातु महोदयम् ॥८५॥
विज्ञानगेहं हतमोहदुःखं, खसोमतुल्यं जगदेकमङ्गलम् ।
मन्दारगन्धैः सहितं लसन् मुन् मुमुक्षुसन्दोहनतं ललत्सम् ॥८६॥
लक्ष्मीनिवासं वरसोमबान्धवं, वरेण्यसन्धं भवसिन्धुवाडवम् ।
सारङ्गनेत्रद्वयमंशुकान्त-ततं कलाश्रेणिगणैर्वरायम् ॥८७॥
ततं जनालेः सुरराशिमोहनं, नवीनरूपप्रकरेण मित्रम् ।
पञ्चत्वहं सौम्यगुणालिगेहं, हर्षप्रदं मानवचक्रतुङ्गम् ॥८८॥
वामं गुणाल्याः सुरराशिमोहनं, घनसारसारो.... । (?)
रोमालिसारं कमलासुपङ्कजं, रयात् सुखं रातु विचारपीन ॥
नयालयं पापगणै मुक्तम् (?) ॥८९॥
नवीनचामीकरसत्प्रियङ्गुं, गुप्त्या युतं ज्ञानधरं सदा शुचिम् ।
वामं क्षमामण्डलसद्विचारैः, त्रैलोकपूज्यं घनसारजालम् ॥९०॥
रम्यं शरीरं जनकामकुम्भं भव्यारविन्दे तपनं गतामम्
नम्रेन्द्रमौलिं गुणनीरकूपं परं प्रियाज्ञारुचिरं जने रविम् ॥९१॥
छत्रकाव्यम् ॥ ८ ॥२॥

चामरोज्ज्वलसत्तुण्डं, लब्धिव्यूहविराजितम् ।
ललाटसोमसत्कान्तं, ललद्वाक्यवरामृतम् ॥९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भव्यालिकुमुदव्यूह-हर्षदं दमसागरम् ।
हंसभं परमं सारं, हरिभांभं पुनात्वरम् ॥९३॥ छत्रचामरकाव्य ॥१०॥
राकाशशीव वदनं घनसारसारं, रत्नाकरध्वनिगणं सकलं कलं शत् ।
रम्भातिनिर्मलशरीर! निशान्तकान्ते!, ते शं विभाति गतमोहविषादपाशम् ॥९४॥
राद्धान्तपेशलसुधाकलितं प्रभो! ते ॥ पदं १ ।
रसाभानारदातिज्ञ, कंसालि ध्वनिकोमल ।
नरेन्द्रसमसंसारा-ध्वधर्मव्रजनीरद ॥९५॥
वराध्वनि नदप्राग्र, देवेशव्रजसेवित ।
गदमुक्त क्षमापीन, रीरीकान्तिप्रमाधन ॥९६॥
वरभाग्यधर ध्वान्त-रवे मिथ्यात्वनाशक ।
सद्वन्दितपदाम्भोज, जननिर्दोषसाधुप ॥९७॥
सुनायकं शीतलवाक्यसारं, नमामि सारद्युतिभासमानम् ।
भवालसं दुर्गतिनाशकं तं, सुरैर्नतं निर्ममतं मुनीन्द्रम् ॥९८॥
गतशोककालरात्रि, जगदानन्ददायकम् ।
तेनेन रहित प्राग्रं, छत्रतुल्यं जगद्गुरो! ॥९९॥
कारुण्यं नयनसुखं सुरेन्द्रलीलाम् ॥ एकपदं छत्रं ॥३॥
अर्कार्करूपसन्दोहं, हरिपूज्यं तमोहरम् ।
हंसमज्ञान ए वारं हविष्यं मानवे वरम्(?) ॥१००॥
वन्दे सारं यतीशानं, नरसिंहं नयाकरम् ।
नलिनाङ्गं चलत्सारं, नवनीतसुकोमलम् ॥१०१॥ छत्र-चामरकाव्य ॥८॥ श्लो.॥
विचक्षणं विबुधदैवतशंदमर्कं, कल्पप्रभं मसदृशं भुवि पद्मबन्धुम् ।
कर्णप्रभं वममलं शितवक्त्रवल्गत्, गन्धाकुलं चन्दनतुल्यमेवं ॥१०२॥
कमनल्पदयाप्रज्ञं, प्रशमं शुभमार्यभम् ॥(?)
तपप्रभावं वरसोमवक्त्रं, देवेन्द्रमन्दारसमं सदैवतम् ।
मनुष्यमं कोमलबुद्धिदृग्धं भृङ्गारगन्धं बलराजमानम् ॥१०३॥
गताशं बुद्धिसन्दोहं, सेवितं शितभास्करैः ।
सूरीशं भुवि हेमाद्रिं, जनानामुचितप्रदम् ॥१०४॥
छत्रप्रभं सत्कविनम्रपादं, रमेश्वरं सद्वदनं महामृगम् ।
अनाथपक्षं परमश्रियाऽऽढ्यं, शशाङ्कवक्त्रं भवसिन्धुसेतुम् ॥१०५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शमालिसोमं चपलप्रभाभृत्, हतप्रमादं वडवानलाभम् ।
क्रोधालिसिन्धौ शिववप्रचित्तं, नमामि वाचंयमसारगङ्गम् ॥१०६॥
सन्तोष-सौभाग्यजले च सद्विधुं ॥१०६॥
मायामुक्तं परब्रह्म मन्मथद्रुमसामजम् ।
मतिमौक्तिकधरं माजं, महिषभ्रकुटिद्वयम् ॥१०७॥
जयदं जनवृक्षे च, चन्द्रवक्त्रमनोहरम् ।
चन्दनाङ्कं कलापूरं, चण्डमुक्तं स्तुवे ह्यरम् ॥१०८॥ छत्र ४ ॥ चामरकाव्य ७
सूर्यप्रभो मानवपद्मवारे, विशालरत्नाकर एव सारः ।
रविप्रभावो भयनाशकश्च, विचारवल्लात्करुणप्रकृष्टः ॥१०९॥
रयात् पुना नुः करमंमलश्च, सुमेरुधीरत्वधरस्त्वमोह ।
.... दारिद्र्यपङ्के जलदप्रभश्च ॥११०॥
सूरीश्वरो मङ्गलराशिसत्त्व त्वक् भासमानो मनुजव्रजेष्ट ।
जम्भारिकीर्त्योदकसिन्धुसार रवव्रजो दुर्गतिराशिनाशकृत् ॥१११॥
प्रतापरक्ताङ्घ्रधरो वरोधी, धीरेषु धीरो गुणराशिवप्रः ।
भोगीन्द्रमुख्यः सुगतिर्नमीरुः, रुग्भासमानो जनचक्रनन्दनः ॥११२॥
मानेन हीनो, नयदो हि कामे, मेघो जने केकिगणेऽशुचारुः ।
नरेन्द्रसेव्यः सुखदः प्रियांशुः, सुसेतुतुल्यो भवसागरेकः (?) ॥११३॥
बलालिगाम्भीर्यपयोधरश्च, चञ्चत्कलासाहसपूरितो(ता)ङ्ग(ङ्गः) ।
पयोदशब्दो विनतो महाबलः, लक्ष्मीनिवासो भुवनैकबान्धवः ॥११४॥
मतिप्रधानो गतकर्मचण्डः, ललाटचन्द्रो मुनिराशिशङ्करः ।
वाचंयमोडुव्रजचारुसोम, मन्दारतुल्यो विशदो लसद्रुचा ॥११५॥
रेखानदीशो गुणवाक्यपूरः, रङ्गाकुलो मञ्जुलशुक्रवत्कविः ।
विशालनेत्रे गतपापपङ्कः, करिप्रभो! मर्त्यगणे गुरुश्च ॥११६॥ छत्रम् ॥
धीवरोऽयं सदाऽदीपि, पितुः सत्कुलवासव ।
पितामहसमारावः, पिनाकस्य समो ध्रुवम् ॥११७॥
मनुजव्रजसत्कुम्भ, भव्यकैरवसोमभः ।
भद्रशालवनेभाभ भवमुक्त क्षमाशुभः ॥११८॥ छत्रचामरकाव्य ॥१०॥
राकाशशीव सुमुखं घनबुद्धिचारुः, रुद्राधिपं सकलतापमहोर्विभेत्तुम् ।
रुग्भंसितं मदनसेनगणं ससंघं, धवं सुवाण्या विधिना कृतं सत् ॥११९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रुचाभं द्राग् द्विपे सिंहं, धिग्बुधं विततं जयम् ।
भूपं नमामि सोमश्रीः सर्वसङ्घविचक्षणम् ॥१२०॥
दयायासुकं खर्जू-तुल्यं च वनसन्निभम् ।
सकलं मुक्तिदं वीरं, सारसेतुसमं प्रभुम् ॥१२१॥
ततांशुरचितं वाक्यं, जनानन्दसुखप्रदम् ।
मुनिपं वरताभास्वत्, जननागं गतिप्रदम् ॥१२२॥
छत्रप्रभं समं शीत-सन्निभं भयनाशकम् ।
नतं सुरगणैः कामं, भवहोः सकलप्रभम् ॥१२३॥
माया-मान-मदे सङ्घे, रम्भाचक्रे महामृगम् ।
कविकान्तं क्षमाधीरं, विज्ञानविततं सदा ॥१२४॥
नीलोत्पलाभं जनकामकुम्भं, रामप्रभं सकलवाञ्छितदं सुसन्धम् ।
धर्मप्रदं सकलविश्वरमां विभेत्तुम् ॥ त्रिपदी ॥
निर्मदं दमसङ्घातं तन्दुलव्यूहभद्रदम् ।
ताङ्गं सद्विसच्छन्दं, तरुभं प्रणमाम्यहम् ॥१२५॥
श्लोककर्पूरपूताङ्गं, गरुडप्राणभासुरम् ।
गजसद्गतिरुग्भारं, गरिष्ठं सूरिशेखरम् ॥ १२६॥ छत्रचामरकाव्यश्लोक
राकाशशेः सममुखं घनसं(सा)रपूजां, यादःपतेः ध्वनिगणं सुकलं कलापम् ।
य(या)यावरं शुभकरं गुणतारकामं, मन्दारमेव जनदैवतचक्रवाले ॥१२७॥
या पूजादरमेव -- शमदं रम्यं स्तुतेर्नन्दनं
वांशु व्रातवरं घनाभमिभभं क्षेमङ्करं वः खलु ।
मर्त्यश्रीनिकरं कलाशुभगमुत्तं(त्तुं)गप्रभाभासुरं
ऐश्वर्यं शिवदं न मत्सरमहो श्लोकालिगुप्त्या युतम् ॥१२८॥
मर्त्यामर्त्यसुसङ्घसेवितपदं प्रज्ञानरेन्द्रप्रभो!
ज्ञानैश्चाऽधिकसेतुतुल्यविशदाज्ञासारताभासुर! ।
सन्तोषव्रजभालसद्धयहरं भृङ्गारगन्धैर्वरं ।
हीनाचारमृगे मृगेश्वरककान्तिव्यूहकामप्रदम् ॥१२९॥
मोहे शोके कामे माने, नागे चक्रे सिंह क्षान्त ।
लाराशिसंयुतप्राज्ञ वन्दितामर निर्मम ॥ विध(?) १३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विबुधबुद्धिधरप्रभुताधिपम् ॥१३१॥ छत्रम् ॥७॥
साम्राज्यकलितस्फार-रत्नाकरसमध्वने ।
रयाद् देहि क्षमाखाने, रङ्गत्कीर्तिधरावने ॥१३२॥
ऐरावतबलव्रात-तपसा विशद प्रभो! ।
ततामरतते! शम्भो! तमोहर सं देहि भो ॥१३३॥ छत्रचामरकाव्य श्लोक ६॥
ततं सिंहासनं भाते, ते साधो! भूरिसातद! ।
आक्रमत् देवभूपाललर्छि(च्छि)हासनं रुचा ॥१३४॥
नतेशदेवमर्त्यालि!, जय मातङ्गसद्गते! ।
ततमेघध्वने! पीन!, मम देहि सदा जयम् ॥१३५॥ सिंहासनश्लोक ॥
भेजे वरा स्थापनिका मनोहरा, मन्येहमेवं परमा दिने दिने ।
सुरालिसेव्या भुवनस्य सन्मुने ॥ ॥ त्रिपदी, ठवणी ॥
ततं मुखं राजति दर्पणाभं, भद्रप्रदं मानवमण्डलानाम् ।
नानासुशोभासहितं सदा शुभं ॥ ॥ त्रिपदी, दर्पण ॥
श्रीवत्सं सततं सूर-रङ्गत्सारभुजान्तरम् ।
रयाद् भेजे परब्रह्म, मन्दारततकोमलम् ॥१३६॥
रहितं त्वधैश्च चञ्चत् श्रीः(च्छ्रीः),
पीनं ज्ञानधनं मानं ध्वानदानजिनं पुनः ॥ ॥श्रीवत्सं त्रिपदी ॥
भेजे मत्सद्वयं सारं, रङ्गत्पादं दयाकरम् ।
चक्रमन्दाररुचिरं, रविसारं रमाधरम् ॥१३७॥
नदः ज्ञानगणस्याऽथ घर्मणे भद्रदो रयात् ।
क्षीरचारुरुचारङ्गत् ॥ त्रिपदी ॥
शीघ्रं रक्षतु सूरीशः, रामहस्ततकीर्त्तिभाक् ।
कूपारः कमलायाश्च, चन्द्रसाररमासुभाक् ॥१३८॥
पूतचित्तधरप्राग्रग्रन्थधीः कमलालयः ।
यशसा सहितः पूतः, तमोहररुचेश्चयः ॥१३९॥ मत्स्ययामलम् ॥२॥
शुभं कुम्भनिभं शोभ-भद्रदं पर्वतप्रभम् ।
भद्रासनं सदा भेजे, जेतुं विश्वत्रयं पुनः ॥१४०॥
वरतीरपरस्फार-रश्मिपूरितभूघनम् ।
शुभं पदयुगं कामं, मञ्जुलं भुवि मण्डनम् ॥१४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंदंददमदंमदहं नादं ॥ पदम् ॥ यामलं श्लो. २ ॥
श्रीवर्द्धमानं नवीनाङ्गं गत्या ज्ञानजयाकरम् ।
विगताघं जने दानं, नलिनाङ्गं गदां द्युते ॥१४२॥
वलाज्जयकरं तुङ्गं गदेऽगदमहेऽधिपम् ।
भक्त्या स्तोष्ये मुनीशानं, नगरं ततसद्युतेः ॥१४३॥
सद्रपञ्चाननं विश्वे, श्वेतकीर्तिधरं परम् ।
इभशौर्यधरो दान-नयकल्लोलविश्वपः ॥१४४॥ शरावसम्पुट श्लो. २ ॥
अरुणज्ञाननयव्रात, अर्त्तिपङ्के ललद्रविः ।
अनन्तैश्वर्यजम्बारिः अघहं हंससन्निभः ॥१४५॥ स्वस्तिक ॥
तत्कुम्भं भय(व?)सिन्धुतारकं वक्त्रं राजति हारि विद्यया ।
तन्द्राहं हरितालताकरं, गोविन्दो मुनिराजिमण्डले ॥१४६॥
लेखासिन्धुघनं नतामरं, रङ्गत्कुन्दनिभं भयहं जया ।
जरालिमुक्तो जयतान्महाशयः यतिततिमतिस्तुतिश्रुति ॥१४७॥ (?)
सुकृत्यौघधर प्राग्र-सुधारोगविनाशकः ।
जलदं पापजंबाले जने गोविन्दसन्निभः ॥१४८॥ कलशका० ३॥
अमरपूजितमानववन्दित-प्रभुतया जयराजिजितामर ।
शुभभरप्रददंभगणायुत-विविधबुद्धिधरप्रवरप्रद ॥१४९॥
दमततप्रवराम्बुजसाधुषु । (?)
अस्मिदे फलदे द्रुममङ्गल त्वगददेहहरे विविधौजसा ।
विशददम्भवहं हरिभं धरा-ऽधिपपयोधर रत्नवरालय ॥१५०॥
यतिजयप्रद विष्टपभूषण, दलितदुर्मतिचक्र धनंजय ॥ द्विपदी ॥
अकुलितक्षमया ततमेरुभ, गरुडलब्धिललत्दृढसाहस ।
शरणनन्दनतुल्यमनोहर, रवधनाभविचारहरप्रभ ॥१५१॥
भयहरप्रियकीर्तिसुविस्तृत अरुणसन्निभ! भव्यकुशेशये ।
विविधसत्शमदद्विपपङ्क्तिभ-भयहरभू(भ्रू)कुटिद्वयजन्तुपः ।
सकलदेववरप्रवरानन, सुजयदं वदनं मम रक्षतु ॥१५२॥ नन्द्यावर्तकाव्य ॥४॥
श्रीधरं सन्मुखं शोभते सुन्दरं निर्मलं पुण्डरीकप्रभं भासुरम् ।
शङ्करं भव्यसातप्रदं शेखरं, सूरिचूडामणिं मानवे षेचरम् (शेखरम्?) ॥१५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवकामप्रदं सुन्दरं भास्करं, विश्वपं कामदं चारुशोभाकरम् ।
देवदेवार्चितं लोकदीपं वरं, चक्रभं शत्रुनाशे सदा शङ्करम् ॥१५४॥
सत्यधर्मप्रदं सर्वलोकेश्वरं, ज्ञानपद्माकरं सारपद्माधरम् ।
भालसोमाङ्कितं चारुरूपं वरं सामजं पापवृक्षे जने भास्करम् ॥१५५॥
मानवारं सुकान्तं स्तुवे सूरिरं, चण्डदं विश्वपं साहसं सत्वरम् ।
कालहं तेजसा भासुरं सत्करं, हर्षसिन्धौ शशाङ्कं कलासङ्करम् ॥१५६॥
श्रीगुरुं निर्मलं शम्भुभं सूरिपं, देवपं वित्तदं देवभं चन्द्रजित् ।
सज्जिनाज्ञाधरं भाकुलं साधुपं, मायतिं चञ्चलाकायभं हर्षदम् ॥१५७॥
सत्वदं पुत्रदं भद्रदं लाभदं, मप्रभं कामितैर्वासवं सत्करम् ।
मन्दिरं माततेर्मानदं पापहं, रङ्गभृत् विक्रमौ तेश्वरं धौततम् ॥१५८॥
शोभाकरं ततं मानैः, सुरुचासु सुलोचनम् ।
सेतोः समं सारचारुं, क्षेमैः ततं सारशुभाशशाङ्कभम् ॥१५९॥
सुधा भाग्यं सेतुं षेशं(?) भासु भारं परं सदा ।
के सद्मालिं परं भाभं सूर्यं शंदं समं सदा ॥१६०॥ षोडशारचक्र काव्य ८॥
श्रीदायकः कल्पतरुर्जिनेश्वरः, हीरालिकान्तिप्रकरेण भासुरः ।
रविप्रभावो भुवनैकशेखरः, विद्याधिक कामित[ला]लसङ्करः(?) ॥१६१॥
जयप्रदो देवगुरुर्गतारिरः, यतीश्वरो दर्पहरो विभाभरः ।
सूरिप्रधानो मम दातु सांसरत्-, रिपुव्रजश्चारुहरिभवेऽनलः ॥१६२॥
श्रीसेव्ये हीरभं रम्यं, भक्तिकान्तं जयालयम् ।
सर्वसूरिरीरीप्रभं ॥ ॥ त्रिपदीकम् ॥१६३॥
श्रीदायकः कामहरो शुभाकर-कल्याणदेहै रुचिरो मनोहरः ।
धाम्ना व्रजैः संयुत एव नायकः ॥ ॥ त्रिपदी ॥
तपोधनः कम्बुरवो वनप्रभः, तया युतो गुप्तिधरो हरिप्रभः ।
मनुष्यसिंहः कमलाभिरामः ॥ ॥ त्रिपदी ॥
नेता भाग्याकुलो सेतुः, शमदः तारभाधरः ।
साजनवेदधरप्रभोः (?) ॥ ॥ त्रिपदी ॥ अष्टारचक्रम् ॥
श्रीनायकः कलासारः, हीनाय रहितः परः ।
रमामालातपः स्फार-विनतः शिवशङ्करः ॥१६४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जनगन्धहरिर्वीर जयराशिर्गताजरः ।
सूरिचूडामणिः सूरः रिपुमुक्तः क्षमाधरः ॥१६५॥
श्रीदाता तपसा सारः, विबुधाधिपभासुरः ।
जन्तुपो भवमुक्तोऽरं यमहः परमेश्वर ॥१६६॥
सेवकानन्ददातारः, नलिनाङ्गो दयाकरः ।
सूत्राम्बुधिः सदाक्रूररिष्टभ्रकुटियामलः ॥१६७॥
आतङ्करहिताऽक्षार-नय गाम्भीर्यसागरः ।
दक्षलोचन तातारः विमलो विबुधेश्वरः ॥१६८॥
मतिभृत् कमलाधारः, लब्धिमण्डलभासुरः ।
सूत्रपुष्पौघभृङ्गारः, रिपुहन्ता सदाऽमरः ॥१६९॥
श्रीतातः परमाचारः, विश्वत्रितयवत्सलः ।
जन्तो रात्वक्षरं वीर यतीशः कमलाधरः ॥१७०॥
दानज्ञानव्रजोदारः नरद्विपसमोऽमरः ।
सूर्यप्रतापरुचिरः रिपुपूज्यः पयोधरः ॥१७१॥ द्वात्रिंशत्पत्रकमलश्लो. ८ ॥
पीतकान्तनतः तार-हितसातयुतः तत ।
शान्तश्चूतगर्तपातः पूतश्वेततनुः तपः ॥१७२॥ षोडशपत्रकमलश्लो० ॥
यायादममदयायाः यातु रोकः करोतु याम् ।
दोरोतोययतो रोद मकयमम यकम ॥१७३॥ सर्वतोभ्रम(भद्र?) ॥
प्रवहणं प्रणमामि ततं शिवेऽध्वनि वरेऽविधिसंशयनाशके ।
ततगुणाश्वयुतं सुगतं वरं ॥ त्रिपदी ॥
वररथाङ्कसुगुप्तिरथाङ्गयुतं गुरुं (?) रुचिरकीर्त्तिपताकमहोनतम् ।
रमाधवं वरमाधं, सततं सततं ततः ॥१७४॥ रथकाव्य १ ॥
नमामि तं नरे मित्रं, दयाकल्पं दयाकरम् ।
वन्दितं शिवसातं च भयहं न भयं हरिम् ॥१७५॥
सद्वारयशसा रङ्गत् कलौ कल्पं कराकरम् ।
विश्ववन्द्यं विभवं च कम्बुशब्दकरं सदा ॥१७६॥
नायकं कर्ममुक्तं च, चन्द्रकान्तिमनोहरम् ।
मर्त्यसाधुमतं सार-घनाभं मेघहं भभम् ॥१७७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धिदं सासितं दक्ष-प्रभं कम्बुप्रभंकरम् ।
हतमोहं हरं मोक्षं सुगुरुं सुसुधारुचिम् ॥१७८॥
निष्कलङ्कं निधिं लक्ष्म्याः मुनिपं सुमुदा परं पदम् ॥
पञ्चाननं नरे वारे, विविधाम्बुजसन्निभ ।
भवहंताररश्मि च, चञ्चत्सद्गुणनन्दनम् ॥१७९॥
भम्भाचारुरवं विश्वे सज्जनं नररक्षकम् ।
नवनीतचलद्देह-हरं मानवमण्डले ॥१८०॥ ॥ हारश्लोक – ६ ॥
भम्भालिहं हंससमं महाबलं चञ्चद्रवैर्भासितचारुवक्त्रम् ।
भद्रप्रदं भाव्रजचञ्चदक्षं कल्पप्रभार्कं कमलाभिरामम् ॥१८१॥
श्रीनायकः कर्महरो मुनीश्वरः, श्रीलालवद् यः परमोदयश्च ।
विशाललक्ष्म्याः(क्ष्म्या) प्रविराजमानः, तुर्यध्वनिर्निर्ममतः तमोहरः ।
रम्भाधरो रोममतिप्रकाण्डः ॥ ॥ त्रिपदी ॥
देयादसौ सौर्यकलं ततप्रभं आनन्ददो दोषहरे जय प्रदः ॥ भंभातुर्य वक्रतुर्य युगलम् ॥
यस्य प्रतापो दिननायकोऽसौ, शरीरमेरुं रुचिरं भ्रमंश्च ।
भव्यालिपद्मं निजकान्तिचक्रैः, सदा मनोजं च विकाशकं जयम् ॥१८२॥ सूर्य ॥
भेजे शशाङ्को मुनिनाथपद्मं, चिह्नच्छलान्मानवचक्रकुम्भे ॥ शशाङ्कचित्रम् ॥ पदद्वयम् ॥
श्रीमन्**महेवाख्य**पुरान् मनोहरान्(त्), श्रिया युतात्(द्) दानयुतात् सुखाकुलात् ।
प्रासादकेतुप्रविराजमानात्(द्), विमानसौधौघसुहट्टभासान्(त्) ॥१८३॥
राजाऽभवत् श्री**हरपाल**नाम्ना, ख्यातो गुणैरानकदुन्दुभिर्यथा ।
राज्ञी पुनर्देवकराद्धुतेव, नाम्ना श्रिया **धन्यवती** सुतस्तयोः ॥१८४॥
राजा महाराजकुलीनशेकरः, श्री**मेघराजा**भिधराजशेखरः ।
भूपालमालानतपादपङ्कजः, सदा जयत्यङ्गरमास्तपङ्कजः ॥१८५॥
यः पालयत्यात्मजवत्प्रजा निजाः(जा) अधःकृताशेषनृपः स्वनीतिभिः ।
धृतावतारः पुनरेव माधवो हर्तुं प्रजानामिव पीडितं कलेः ॥१८६॥
यन्ना(न्न्या?)यमालोक्य हरिः प्रसन्न-श्चकार दुर्गं शतहास्तिकं पुरे ।
कलावहो यन्महिमाऽतिशेते, यायात् कथं तस्य तुलां जनार्दनः ॥१८७॥
गृहाङ्गणे स्वर्गतरुर्विलोकितुं, ह्यवातरद् दानमरिष्टकैतवात् ।
शैलच्छलाद् दिक्पतयो गजैरिव तदीयदानोपमितिः कुय(त?)स्तरा ॥१८८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकम्प्रभूपः परितस्तदङ्गजो जयी कलावान् सुमतो जिताहवः ।
राजन्ति तस्य व्यवहारिणः श्रिया धर्मार्थकामैरतियुक्तवृत्तयः ॥१८९॥
दुःखित्व-दौर्भाग्य-दरिद्रतादि-भावा विधातुः सृजतो हि विस्मृताः ।
न सन्ति यत्र प्रगुणा गुणावली गुणाय दोषः क्षतितामितीरितः ॥१९०॥
शिष्याणु**विजयहर्षो**, विज्ञपयत्येष मुदितसत्त्वेनाम्(ताः) ।
संयोज्य हस्तयुगलं, स्पृष्ट्वा भूमिं निजोत्तमाङ्गेन ॥१९१॥
सविनयं सप्रणयं, सानन्दं चैव सोत्कण्ठम् ।
यथा कार्यं चाऽत्र सर्वं, पठनं शशधरस्य मे ॥१९२॥
निर्विघ्नविहितयोगः, गुरूपदेशान्**महानिशीथस्य** ।
प्रारब्ध(ब्धः) **कल्पाध्ययन-योगः** पुनः परमभावेन ॥१९३॥
इत्यादि सकलं कार्यं, निर्विघ्नं निर्वहत्यलम् ।
हेतुस्तत्रैव सूरीश! तवाऽऽख्यास्मरणं पुनः ॥१९४॥
नागमन्त्रसमं जन्तोः, सिद्धिदं बुद्धिदं वरम् ।
मिथ्यात्वरोगसन्दोहे, सुधातुल्यं जयप्रदम् ॥१९५॥
त्रिसन्ध्यं वन्दना मे चाऽवधार्या सूरिपुङ्गवैः ।
प्रसाद्या हितशिक्षाश्च, शिशोर्मोदाय सर्वदा ॥१९६॥
श्रीतातपादे दिननायके सति, उदेति चाचार्यतमीपतिः सदा ।
विच्छायतामुक्तरजःप्रतापः कलङ्कमुक्तो जनपद्मबोधकः ॥१९७॥
सम्पूर्णवक्त्रं कमलाभिरामं, कमला(कला?)भिरामं हसितं महोदयम् ।
श्रीमत्त**पागच्छ**मरुत्पथे वरं, चङ्क्रम्यमाण ति(स्ति)लको हि दिव्यति ॥१९८॥
आचार्यदन्तावलरक्षयास्त्रौ(?)पुनातु वन्ताबलहंससङ्गतिः ।
मिथ्यात्विलोकं निजसुप्रभावैः मानेन हीनं भुवने च कुर्वन् ॥१९९॥
वाचकेषु शिरोरत्नं **कल्याणविजया**ह्वयम् ।
कल्याणरुचिरं नौमि, सुभाग्यं वसुदेववत् ॥२००॥
अङ्गिरस्वन् महाबुध्या(द्ध्या), शोभते साधुपङ्कजः ।
सुरशैलमहाधीरः(र) आज्ञापालनतत्परः ॥२०१॥
विबुधा **विजयहंसा**ख्या-त(स्त)पोधनविचक्षणाः ।
द्वासप्ततिकलासारा(राः) पण्डितप्रवरा(राः) सदा ॥२०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विद्याहर्षगणिश्रेष्ठाः गणयो गुणशालिनः ।
रुडर्षि गणिनामानो(नः) साधूनां चित्तपोषकाः ॥२०३॥
शील(ले) गाङ्गेयसदृशाः **कर्मर्षि**गणिपुङ्गवाः ।
परोपकारैकमनाः तपसाधनसन्निभाः ॥२०४॥
कीर्त्तिहर्षगणिश्रेष्ठाः कीर्त्ति-हर्षविराजिताः ।
लक्ष्मीविजयगणयः(यो) वैयावृत्त्यविचक्षणाः ॥२०५॥
कृष्णविजयनामानो [गणयो] गुणभासुराः ।
पद्मविजयगणयो(यः) प्रमाणपठनोद्यमाः ॥२०६॥
चम्पर्षिगणयश्चाऽपि, चम्पकोमलभूघनाः ।
लखमसिनामानो गणयश्चाऽपि, श्रीतातपदसेवकाः ॥२०७॥
क्षुल्लकः **सूरविजयः**(यो) वृद्धः क्षुल्लकमण्डले ।
गणि**र्जयविजया**ख्यश्च विज्ञानगणशोभनः (?) ॥२०८॥
क्षुल्लकः **शुभविजयः** पठनोद्यमकारकः ।
श्रीतातपादस्य सेवकः क्षुल्लकाग्रणीः ॥२०९॥
मुनि**र्धनविजया**ख्यश्च श्रीतातपदसेवकः ।
श्रीवाचकपदे पद्मे भ्रमरो क्षुल्लकाग्रणीः ॥२१०॥
मुमुक्षु**लाभविजयः** विनयादिगुणमञ्जुलः ।
कर्मदासऋषिश्चाऽपि वैयावृत्यविचक्षणः ॥२११॥
लुमाद्यदुर्वाद(दि)मृगान् विनाश्य, खाद्यादिमातङ्गमदं निहत्य ।
जिनेन्द्रसिद्धान्तवनं सुगाहयन्, सिंहायते तातनगाश्रितो यः ॥२१२॥
उद्योतविजयाह्वानाः, श्रीतातपदसेवकाः ।
मुनि**र्मतिविजया**ख्योऽसौ, लुमाद्यमदनाशकः ॥२१३॥
मुनि**र्भाग्यविजय**श्च, जिनेन्द्रमतदीपकः ।
मुनि**न(र्न)यविजया**ख्योऽसौ(योऽसौ)सिद्धान्तगणभासुरः ॥२१४॥
मुनिश्च **पुण्यविजयः**(य) आज्ञापालनतत्परः ॥
मेघश्री-कोडाई-कथू-लक्खाकादिसाधूनां ।
चम्पश्री-कनकश्रीसाध्वीनामनुनतिर्ज्ञाप्या ॥२१५॥
अत्रत्य**भीमविमलाः**(ला) गणयो गुणशालिनः ।
जयवन्तर्षिगणयः(यो) योगोद्वाहनतत्पराः ॥२१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋ[षि]**माण्डण**नामानो वैयावृत्त्यादिकारकाः ।
मुनि**र्नयविजया**ख्योऽसौ, आख्यातस्य पाठकः ॥२१७॥
मुनि**र्दक्षविजयः** (य)-त(स्त)पोधनमनोहरः ।
गणयो(यः)**सूरचन्द्रा**ख्याः(ख्या) योगोद्वाहनतत्पराः ॥२१८॥
अत्रत्य(त्यः) सकलसङ्घ-साधु श्रीमल्लोको विशेषेण (?) ।
श्रीतातचरणकमलं, वन्दन्ते गणिवाचकं च भूरिभावेन ॥२१९॥
वन्दना त्वनुवन्दना च ज्ञेया ज्ञाप्या च सर्वदा ।
जिनदत्तसाधु**योधा-मेहा**जलसज्जनाः सततम् ॥२२०॥
बालेन लिखितं यच्च, यन्नूनमथवाऽधिकम् ।
क्षन्तव्यं तत्क्षमावद्भिः, भूयात् सर्वं पुनः(न)र्मुदे ॥२२१॥
मासे श्रीकार्त्तिके कृष्ण-चतुर्थ्यां बुधवासरे ।
शिशुना **विजयहर्षे**न(ण) लेखोऽलेखीति मङ्गलम् ॥२२२॥ इति **भद्रम्** ॥

संम्वत् **१६३०** वर्षे कार्त्तिकमासे कृष्णपक्षे ४ तिथौ बुधवार(सरे)
लेखः सम्पूर्ण(र्णी)कृतः ।

—*—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(३)

देवकपत्तनात् पत्तननगरे श्रीविजयदेवसूरिं प्रति उपाध्यायश्रीविनयविजयगणिलिखितो लेखः

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

उपाध्याय **श्रीविनयविजयजी** – जिनशासननी एक विलक्षण प्रतिभा । आगमनुं क्षेत्र होय के साहित्यनुं (काव्यनुं), सर्वत्र एमनुं प्रदान अनन्य छे. **कल्पसूत्र-सुबोधिकावृत्ति, लोकप्रकाश, शान्तसुधारस, इन्दुदूतकाव्य** जेवा संस्कृत ग्रन्थो तेमज **श्रीपालरास** जेवी गुर्जररचनाओ आजे पण जगतमां एमनुं कीर्तिगान करी रही छे.

देवकपत्तन (देवपुर-पाटण)थी **पत्तन** (सिद्धपुर-पाटण) विराजमान **श्रीविजय-देवसूरीश्वरजी** म.ने लखेल प्रस्तुत लेख पण तेमनी ज रचना छे. भाषानुं प्रभुत्व कोने कहेवाय? अेनो प्रत्यक्ष बोध प्रस्तुत कृति करावी आपे छे. पोताना मनना भावोने गाथाना पूर्वार्द्धमां प्राकृतभाषामां, तथा उत्तरार्द्धमां संस्कृतमां, ते पण प्रांजल शैलीए, निबद्ध करवा ते खरेखर कष्टसाध्य कार्य छे.

प्रारम्भना १३ (१ थी १३) पद्योमां कामविजेता **श्रीनेमिजिन**ने नमस्कार कर्या छे. ते समये **देवकपत्तन(देवपुर-पाटण)**मां **नेमिनाथ**प्रभुनुं चैत्य हशे एथी कविए ते प्रभुने नमस्कार कर्या छे. श्लोक ७७मां आज वात कविए पुष्ट करी छे. त्यारबाद श्लोक १४ थी २६मां **पाटण**नगरनुं वर्णन छे. अहीं श्लोक १५मां ब्रह्माना विष्णुनी नाभिपीठ पर करेल निवासनुं कारण दर्शाव्युं छे. श्लोक २०मां प्रयुक्त 'शतबिन्दु' शब्दनो अर्थ विष्णु होय एम लागे छे. आगळ श्लोक २७ थी ३३मां **देवकपत्तन (देवपुर-पाटण)**नुं वर्णन छे. **श्रीपार्श्वनाथप्रभुना** चैत्यनी नोंध अहीं अगत्यनी छे. पछीना श्लोक ३४-३५-३६मां पोतानुं नाम जणावी विज्ञप्तिरचनानी वात जणावी छे.

हवे आगळनां २ पद्योमां सूर्योदयनुं टूंकमां वर्णन करी श्लोक ३९ थी ४८मां चार्तुमास अने पर्युषणानी आराधना जणावी छे. तेमां **अन्त्यषडङ्गी (ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र-उपासकदशाङ्गसूत्र-अन्तकृद्दशाङ्गसूत्र-अनुत्तरौप-पातिकदशाङ्गसूत्र-प्रश्नव्याकरणसूत्र-विपाकसूत्रना)** स्वाध्यायनी अने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रकृताङ्गसूत्र व्याख्याननी वात ध्यानाकर्षक छे.

श्लोक ४९ थी ५९नां दस पद्योमां कर्त्ताए पोतानो गुरुभगवन्त प्रत्येनो पूज्यभाव व्यक्त कर्यो छे. तेमां पण श्लोक ५०मां 'रत्नो तो राजाना घेर ज शोभे' जणावी गुरुभगवन्तना गुणो माटे श्रेष्ठ उपमा मूकी छे. श्लोक ६०-६१-६२मां प्रतिपत्रनी अपेक्षा जणावी श्लोक ६४-६५-६६-६७-६८मां गुरुभगवन्तनी सेवामां रहेला पोतानाथी नाना सर्वे साधुओनां नामपूर्वक अनुवन्दना जणावी छे. साथे पोतानी साथे चार्तुमास रहेला साधुवृन्द-साध्वीवृन्दनी वन्दना पण श्लोक ७०-७१मां जणावी छे. पछीना ७२-७३-७४-७५ना श्लोकोमां **वेलाउल (वेरावळ), वणथलि (वंथली), धुराजीपुर (धोराजी)** नगरमां चातुर्मास बिराजमान सर्व साधुभगवन्तनां नाम जणावी एमना वती वन्दना निवेदित करी छे.

श्लोक ७८मां शुभकार्यमां पोताने याद करवानी प्रार्थना सुन्दर शब्दोमां प्रगट करी छे. प्रान्ते श्लोक ७९-८० पूज्यश्रीनी कृपादृष्टिनी अने पत्रगत अविनय बदल क्षमानी याचना करी पत्र पूर्ण कर्यो छे.

प्रस्तुत विज्ञप्तिलेखनी नकल अमने वडोदरा - हंसविजयजी जैन ज्ञान-मन्दिरमांथी प्राप्त थई छे. एक मजानी कृति सम्पादन माटे आपवा बदल ते मंण्डळना व्यवस्थापकोनो खूब-खूब आभार ।

॥ श्रीदेवकपत्तनात् । उ. श्रीविनयविजयग.लेख ३५ । श्रीपत्तननगरे ॥ पूज्याराध्येय श्रीवर्द्धमानजिनपट्टपरम्परापुरन्ध्रीतिलकश्रीजिनशासनभृङ्गार ॥ श्रीपत्तननगरे ॥ [आ]राध्यतम श्रीतपागच्छाधिराज-भट्टारकश्री २१ श्रीविजय-देवसूरीश्वरचरणकमलान् ॥ ॐ अर्हं नमः ॥ ऐँ नमः ।

सत्थि सिरिकमलिणीगहणदिणणायगं,
नेमिजिणणायगं सिद्धिसुहदायगं ।
यमतिभक्तिस्फुरत्पुलकदन्तुरतनु-
र्नाकिनिकरो नमत्यमलमतिवैभवः ॥१॥

जेण सुहसीलवम्मेण वम्महभडो, जति(झत्ति) मुसुमूरिओ जइवि अइउब्भडो ।
चित्रमिह किमतनोः परिभवे दोष्मता, बलपरीक्षा विलुप्ताऽच्युतास्यत्विषा ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जेण लीलाइ मुहकमलमउलीकओ, छज्जही पंचजणो(ण्णो) मणुण्णज्जुइ ।
द्विड्ध्रुगुद्दण्डदोर्दण्डवीर्योज्झितः, पीयमानो यशःपिण्ड इव वैष्णवः ॥३॥
सुदुसोहीअडिंडीरपिंडुज्जलो, पंचजणो(ण्णो)मुहे जस्स संलग्ग(ग्गि)उ(ओ) ।
सुप्रसन्नोज्ज्वलं वीक्ष्य यस्याऽऽननं, बान्धवेन्दुभ्रमेणोपगूहन्निव ॥८॥
पंचजणं(ण्णं) गहेऊण कोउ(ऊ)हला, जो अकासीअ सद्दाउलं तिहुअणं ।
भव्यसार्थं भवाटव्युपस्थायिनं, सुप्तमिव शिवपुरं गन्तुमुद्बोधयन् ॥५॥
केसवो जेण कीलाइ जुज्जंतओ, लक्खिओ जी(झी)णथामोयमुज्जंतओ ।
मोह इह मूर्त्तिमान् धर्ममुद्यत्तनुं, तुच्छवीर्योऽपि धैर्याज्जिगीषन्निव ॥६॥
जेण मुत्तीइ रत्तेण राईमई, भवणदारंमि काऊण गमणूसवं ।
दक्षिणत्वं स्वतोऽङ्गीकृतं तदुभयोः, प्रीतिमातन्वता गमनपरिवृत्तितः ॥७॥
रायभरिए वि राइ(ई)मईमाणसे, जो न मणयं पि रत्तो चिरं संठिओ ।
युक्तमकषायपाशस्य तद् यदुपते-स्तादृशं वस्त्रमपि भु(भू)विनयं इज्यते ॥८॥
जस्स मुहपुण(ण्ण)ससिचंदिमासंगओ, ज(झ)त्ति राईमईपिम्मरससायरो ।
अलभतोद्वेलता(तां) युक्तमे(मि)दमद्भुत(तं), भेजुरस्या मुखाक्ष्यम्बुजानि श्रियम् ॥९॥
लोअणा दोवि राईमईपेसिआ, मयणदूअव्व रइतत्तसंदेसिआ ।
यस्य हृदये न वासप्रवेशे स्फुरद्-गुप्तिगुप्ते बलाराल्य(त् प)रावर्तताम् ॥१०॥
दंसणे जस्स रइरत्तराईमई-देहदेसंमि पुलयंकुरा ओसिआ ।
येन हृदयप्रविष्ठे(ष्टे)न बृंहीयसा निरवकाशाः प्रणुन्ना इवेयुर्बहिः ॥११॥
मोहसुत्ताण सत्ताण पडिबोहओ, तहवि राईमईनयणमणमोहओ ।
अद्भुतं यश्च घनकज्जलश्यामल-स्तदपि शरदिन्दुशतगौरलेश्यः प्रभुः ॥१२॥
विणयपणयसीसाऽसेसदेविंद[विंद]-प्पयडमउडहीरंकु(कू)ररस्सीमणुन्नं ।
त्रिभुवनगुरुमिष्टं तं प्रदत्तार्हतेष्टं, सकलगुणगरिष्ठं **नेमिनाथं** प्रणम्य ॥१३॥

॥ इति श्रीजिनवर्णनम् ॥

अथ नगरवर्णनम् –

विणिम्मियं जं विहिणा सवाणियं, सरं व निच्चं पउमाभिरामं ।
सराजहंसं समवाप्तजीवनै-रनेकलोकैर्विहितप्रशंसम् ॥१४॥
विणिम्मिउं जं णयरं खु मण्णिमो, ठाही विही केसवनाहिपीढे ।
निरीक्षितुं तज्जठरेऽमरावतीं विलोक्य शिल्पं हि करोति शिल्पी ॥१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणेगवण्णं सुपयत्थसत्थं, संपत्तपत्तं ससिलोगवग्गं ।
यद् राजते दक्षनिरीक्षणीयं, प्रशस्तियुक् पुस्तकवत् प्रशस्तम् ॥१६॥
जत्थत्थि वप्पो विलसंतदप्पो, दुप्पिच्छरूवो विसमप्पयारो ।
महानिधानं नगरे समन्ता-दावेष्ट्य तिष्ठन्निव सर्पराजः ॥१७॥
सया अगाहा विमलप्पवाहा, गंगुव्व जंसि फलिहा विहाइ ।
मन्ये हिमाद्रिं समवेत्य दुर्गं, प्रीत्या पितुस्तं ध्रुवमाल(लि)लिङ्ग ॥१८॥
रेहंति जत्थ भवणा य महावणा य, अंतो दुवे बहि हुइज्ज पवालसाला ।
सन्मानवानि सुमनोरुचिराणि किन्तु वर्णाधिकान्यविटपानि किलान्तराणि ॥१९॥
लच्छीहरं ससिरिवच्छमलद्धपारं, कंदप्पकेलिकलिअं ललिअंगणं च ।
एकैकमिभ्यसदनं शतबिन्दुवक्षः-शोभां बिभर्त्ति किल यत्र पुरावतंसे ॥२०॥
चित्तावे(व)चित्तसुहसद्दसमुब्भवेहिं, लोगोवयारनिउणत्थपसत्थमज्जा ।
प्रासाददीप्तिपरिभूततमा विभाति, या प्रक्रियेव वरवीरबलोरुवृत्तिः ॥२१॥
जं रेहए जिणहरेहिं(हि) मणोहरेहिं, उत्तुंगचंगसिहरेहिं(हि) पहासुरेहिं ।
मन्ये विजित्य धनदामृतभुक्पुराणि, सन्त्याजितैर्मणिमयैर्मुकुटैरिवोच्चैः ॥२२॥
जीसे निरिक्खिअ रमं परमं खु मण्णे, मंदक्खमक्खणविलक्खमुही विसन्ना ।
यत्रोन्नतेभ्यसदनध्वजतर्जिता च, लङ्का सुवर्णनिचिताऽपि पपात वार्द्धौ ॥२३॥
संकप्पकप्पतरुणो पउरा जुआणा, दीसंति जत्थ जुसिआ बहुमग्गणेहिं ।
नार्योऽप्यनुभ्रमदनङ्गपदाजिदण्ड-खण्डीकृताङ्गिमनसः शतशो लसन्ति ॥२४॥
सिरिमंते तत्थ पुरे, पभूअमणि-कणग-रयणपडिहत्थे ।
श्रीपूज्यचरणपङ्कज-परागतिलकितमहीमहिले ॥२५॥
उत्तुंगभवणवलही-सुलहीकयरयणि(णि)कंततणुफरिसे ।
श्रीमत्पत्तननगरे, गुर्जरनीवृत्तिलकतुल्ये ॥२६॥
जत्थ जिणेसरमंदिर-सुंदरसियकल[स]कंतिपंतीहिं ।
उदितोऽपि निशि सितांशु-र्निर्णेतुं शक्यते नैव ॥२७॥
सड्ढा(ड्ढा) जत्थ सभज्जा, अणवज्जा धम्मकज्जउज्जुत्ता ।
दक्षा न्यक्षगुणाढ्या वीक्ष्यन्ते यक्षपतिविभवाः ॥२८॥
जत्थ जिणेसरधम्मो रम्मो सम्मत्तनाणचरणेहिं ।
विलसति सचिवपुरोहित-परिबर्हो नृपतिरिव निपुणः ॥२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिरि**पासणाह**पमुहा जिणेसरा जत्थ निच्चसुपसन्ना ।
पिप्रति सकलाभीष्टं, भव्यानां भक्तिभव्यानाम् ॥३०॥
जत्थ लवणोअलहरी-पिच्छणगमह(हो)सवाइं पिच्छंति ।
जम्बूद्वीपजगत्यामिव देवा दुर्गशिरसि जनाः ॥३१॥
जत्थुल्लसिरतरंगो जलही गज्जंतवेलपडुपडहो ।
सुप्रातिवेश्मिकाप्ति-प्रमदादुत्सवमिवाऽऽतनुते ॥३२॥
वीरजिणं(णिं)दपरंपर-रत्तासयसद्ध(ड्ढ)सड्ढि(ड्ढी)संघट्टा ।
श्रीमद्देवकपत्तन-नगरान् नगराजवसुविभवात् ॥३३॥
हरिसरसवसुल्लसिर-प्पभूअरोमंचकंचुआइन्नो ।
घटितकरद्वयसम्पुट-सण्टङ्कितपटुललाटतटः ॥३४॥
उल्लासवासवासिअ-चित्तो अइदित्तपणयपब्भारो ।
समुदितविनयोत्कण्ठः, सविशेषोन्मिषितभक्तिभरः ॥३५॥
छव्वणनयणपउम-प्पसिआवत्तेहिं वंदिऊण सिसू ।
विनयविजयाभिधानो विज्ञपयत्युचितविज्ञप्तिम् ॥३६॥
किच्चं जमिह परूढे दिवायरे तिमिरजलहिकुंभसुए ।
पद्मवने च विबुधे सस्पर्द्धमिवाऽङ्गिनेत्रगणैः ॥३७॥
मइलं मइलणसीलं निम्मेरं सुद्धमग्गआवरणं ।
हन्तुमिव तमस्तरणौ रुषाणे दिक्षु विततकरे ॥३८॥
इब्भाइन्नसभाए बहुलपभाए सया सुहम्माए ।
स्वाध्यायेऽ**न्त्यषडङ्गीं** विवृणोम्यङ्गं **द्वितीय**मर्थाच्च ॥३९॥ गीतिः ॥
पढण-पढावण-सोहण-विरयण-लिहणाइएसु गंथाणं ।
पूजाप्रभावनादिषु कार्येऽथाऽऽर्येषु च भवत्सु ॥४०॥
कालकमेणं पत्ते भद्दवए मासि भव्वमद्दमए ।
श्रीपर्युषणपर्वा-ऽनेकसुपर्वार्चितमुपेतम् ॥४१॥
तच्च - मासखवणाइदुक्कर-तवचरणं धम्मकज्जसंभरणं ।
सप्तदशभेदपूजा-विरचनमप्यर्हदर्चानाम् ॥४२॥
बारसदिणाणि जीवा-भयदाणुग्घोसणं सपुरगामे ।
याचकयाचितवितरण-मपराधक्षमणकं च मिथः ॥४३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कप्पिअकप्पतरूवम-**सिरिकप्पसुअस्स** वित्तिवक्खाणं ।
नवभिः क्षणैर्विशिष्ट-प्रभावनैः क्षणशतोपचितैः ॥४४॥
नच्चंतनडं गायंतगुणिजणं विविहसज्जियाउज्जं ।
स्थाने स्थाने जिन-गुरु-गुणगाथकदीयमानधनम् ॥४५॥
एवं परिवाडीए, जिणहरगमणं पभाविअसतित्थं ।
सांवत्सरिकावश्यक-करणं भवभूरिभयहरणम् ॥४६॥
खंड-पुड-सिरिफलाईहिं, पभावणं भावभावणारम्मं ।
अतिमधुरभोज्यभक्त्या, साधर्मिकभोषणं(भोजनं?) भक्त्या ॥४७॥
इच्चाइधम्मकज्जु-ज्जोइयजिणसासणं विगयविग्घं ।
इह वेलाकूलेऽपि च, विहितं पूज्यप्रसादेन ॥४८॥
जो इंदो सहइ मुणीण सुद्धपणो(ण्णो), संपणो(ण्णो) विअसिअपुण्णसेवहीहिं ।
सानन्दं नमदमितक्षितीशमाला-कोटीरच्युतकुसुमावतंसितांह्रिः ॥४९॥
जस्संगे सहइ सया गुणाण वग्गो, नीसेसो निरुवमठाणलद्धसोहो ।
युक्तं तन् मणिनिकरः क्षितीश्वराणां, गेहस्थः श्रियमतुलां यतो लभेत ॥५०॥
कल्लाणुन्नतिकलिओ सुभद्दसाली, सव्वुच्चो वरथिरसाहनंदणो व ।
यः स्वामी भुवि विदितः क्षमाधराणां, भूलोके जयति सुवर्णशैलबन्धुः ॥५१॥
कंदप्पो पयडभुअप्पयावदप्पो निम्मूलं हाणिअहराइगव्ववप्पो ।
येनोग्रश्रुतकरवालकृत(त्त)कण्ठः क्ष्मादी(पी)ठोल्लुठेत(ठत्)तनुः क्षणेन जज्ञे ॥५२॥
कोहग्गि(ग्गी)जणअवयारबद्धकच्छो, दुप्पिच्छो महिअसुरासुरिंदविंदो ।
यस्याऽशु प्रशममहाब्दवृष्टिपातै-रिङ्गालापश(स)ददशामवाप्य नष्टः ॥५३॥
दुग्गज्झो सुकयविपक्खमाणहत्थी, उम्मत्तो सुकयतरूणि संहरंतो ।
यस्योद्यत्तममृदुताचपेटया द्राग्, निर्भिन्नः शुभमतिमौक्तिकान्यसूत ॥५४॥
कवडगरलवल्लरी परूढा, भुवणजणचेअणं [सं]हरंती ।
विकटकटुफला बलाद् विमूला, व्यरचि केन महार्जवायुधेन?(?) ॥५५॥
असुहमइतरंगिणाण कत्तो, तुरियकसायमहो अहा पुरत्तो ।
इय कलशसुतनयेन नुन्न-श्चुलुकदशां प्रतिपद्य हन्त! जीर्णः ॥५६॥
असमपसमनीरसारणीहिं, सुकयतरू तह जेण सुट्ठु सित्तो ।
विविधसुखफलैः पफाल यस्य, प्रसृतयशःकुसुमैर्दिशोऽप्यऽनर्घ्याः ॥५७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिणयरउदयम्मि भत्तिजुत्ता, पयजुयलं सुगुरुस्स जे नमंति ।
प्रणयरसवशंवदा सहेलं, हरिहरिणीदृगिमं वरं वृणीते ॥५८॥
जमिह सुरवरा फुसंति भूमिं गुणदि --- कयावि तं खु मणे(ण्णे?) ।
यदुरुचरणरेणुपुटमेध्या-मतिसम्भावितगौरवं विदन्तः ॥५९॥
तेसिं सिरिपुज्जाणं, संपत्तासेससाहुरज्जाणं ।
विलसत्प्रसादपत्रं, समभिलषत्येष शिशुलेशः ॥६०॥
तम्हा पउरपसायं, सम्मं धरिऊण सेवगस्सुवरिं ।
स्वाङ्ग-परिच्छदकुशल-प्रवृत्तिपीयूषजलदेन ॥६१॥
लेहेण पेसिएणं कायव्वा सीसचित्तसंतुट्ठी ।
न हि सारङ्गं सुखयितु-मलमन्यो जलधरात् कोऽपि ॥६२॥ [युग्मम्]?
[श्लोक ६३ मूळ प्रतमां नथी.]
उववेणवं पणामो, को(का)यव्वो चित्तगोअरे मज्झ ।
बालस्याऽपि गरिष्ठै-र्नमदमितनरेन्द्रततिभिरपि ॥६४॥
किञ्च – अइसयबुद्धिसमिद्धा, सुपसिद्धा **रिद्धिविजय**वरविबुहा ।
पण्डित**विनीतविजयाः**, सचिवोत्तंसा महासुधियः ॥६५॥
सिरि**संतिविजय**विबुहा, बुद्धी(द्धि)पहाणाय महापहाणाय ।
श्री**अमरविजय**विबुधा विबुधाः श्री**रामविजया**ख्याः ॥६६॥
कप्पूरविजयविबुहा पसरिअकप्पूरसुरहिजसपसरा ।
सुमतिततिग्रामण्यो, विबुधाः **श्रीमतिविजय**सञ्ज्ञाः ॥६७॥
नयविजयाभिहविबुहा गुरुसेवामुणिअसयलणयविणया ।
सुगृहीतनामधेया(याः) परेऽपि ये मुनिवरास्तत्र ॥६८॥
तेसिं सिरिगुरुसेवा-रेवासलिलाइकुंजरवराणं ।
अनुवन्दना मदीया, प्रसादनीया प्रसादार्हैः ॥६९॥
एत्थ गणि**कणयविजया** स**नेमिविजया य रयणविजया य** ।
मुनि**रुदयविजय**सञ्ज्ञ-स्तथा मुनी **रूपविजयाख्यः** ॥७०॥
एएसिं साहूणं तिण्हं तह साहुणीण पइदियहं ।
प्रणतिरवधारणीया कृतप्रसादैः परमगुरुभिः ॥७१॥
जयविजयणामधेज्जा, **वेलाउल**बंदिरे ठिआ विबुहा ।
अमरविजयेन मुनिना, युक्ता मुनि**वृद्धिविजयेन** ॥७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वणथलिकयचउमासा, गणिणो जे **कंतिविजय**णामेण ।
ऋषिभारमल्लसहिता-स्तथा **धुराजीपुरे** ये च ॥७३॥
जिणविजयक्खा गणिणो, **कुंअरविजयेण पिम्मविजयेण** ।
युक्ता इति ये यत्र स्थिता व्रतस्थाश्चतुर्मासीम् ॥७४॥
ते तत्थ सुहमणुट्ठिअ-पज्जोसवणाई(इ)विविहसुअजोआ ।
प्रणमन्ति विनयविनताः, श्रीगुरुचरणान् भुवनशरणान् ॥७५॥
अवि इत्थ सड्ढसड्ढी-संघो सयलो वि नमइ गुरुचरणे ।
श्री**वीर**पट्टवीथी-कल्पद्रुमसमगुरुप्रह्वः ॥७६॥
अइ(ह?)मित्थ पददिणं चिय सिरिगुरुसमहिट्ठिएण हियएण ।
प्रणमामि जिनाधीशां-**श्चन्द्रप्रभ-नेमि-वीरा**दीन् ॥७७॥
तुम्हाणं मारिसया सीसा बहुआ वि पज्जुवासंति ।
अयमपि शिशुस्तथाऽपि स्मर्तव्योऽर्हत्प्रणामादौ ॥७८॥
जइ वि सिसू सिसुचिट्ठो, अणासवो तह वि होइ अणुगिज्झो ।
सततं स्वीयगुरूणा-मकृत्रिमस्नेहशुचिमनसाम् ॥७९॥
तम्हा मह बालत्तं, कहं पी(पि) अवहीरिऊण सुगुरूहिं ।
अवधार्या भूरिकृपा नृपावलीप्रणतपदकमलैः ॥८०॥
लिहिअं किंचि असुद्धं जं(ज)मिह मए मउअमइपयासेण ।
क्षन्तव्यं तद्गुरुभिः सुरभियशोवासितदिगन्तैः ॥८१॥
आसोअबहुलपक्खे धण्णाए **धणतेरसी**इ दिणे ।
विनयेन निजगुरूणां लिखिता विज्ञप्तिरिति भद्रम् ॥८२॥ श्रीः ॥ छः ॥

—*—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(४)

महिशानकनगराद् अज्ञातकविलिखिता आनन्दविज्ञप्तिः

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

५७ श्लोकप्रमाण प्रस्तुत कृति **महिशानक(महेसाणा)**नगरथी लखायेल पत्र छे. पत्र-लेखनस्थलसिवाय ते कया गुरुभगवन्तने? क्यारे? कया नगरे? कोणे? लख्यो छे ते माहिती कृतिमां प्राप्त थती नथी. **आनन्दविज्ञप्ति** नामाभिधान पाछळनुं कोई कारण पण स्पष्ट जाणवा मळतुं नथी. कदाच कृतिकारनुं नाम कृतिना नाम साथे जोडायेलुं होय! कृतिगत समानविभक्तिवाळा धाराबद्ध ९९ विशेषणोनो अने ३२ श्लिष्ट विशेषणोनो प्रयोग सहृदय वाचकने आनन्द आपी पोताना (कृतिना) 'आनन्दविज्ञप्ति' अभिधानने सार्थक तो करे ज छे.

सम्पूर्ण कृतिनुं अवलोकन कर्या बाद कृतिसार आपवो होय तो मात्र एटलुं ज जणावी शकाय के – 'कर्त्ताना चित्तमां वर्ततो पोताना गुरुभगवन्त प्रत्येनो अनन्य भक्तिभाव काव्यस्वरूपे अहीं प्रगट थयो छे.'

कृतिमां गुरुभगवन्त माटे कर्त्ताए प्रयोजेला – 'जिनमतचैत्योरुकेतु, त्रिजगज्जनजित्वरतरमन्मथमथनैकपाद, धर्मगृहावष्टम्भस्तम्भ, सन्मार्गप्रकटनप्रदीप, सुविहित-मुनिशिरोवतंस, सन्मानससन्मानसवासविलासैकराजहंस' जेवा विशेषण – प्रयोगो खूब हृदयङ्गम छे.

ते ज रीते हरि शब्दना शिव, ब्रह्मा, विष्णु, यम, सूर्य, चन्द्र, इन्द्र, प्रकाश, पवन, मनुष्य, मोर वगेरे अर्थ करी करेली तुलनाओ पण मजानी छे.

प्रान्ते पूर्वपत्र लख्यानी जाण करी, सहवर्ती साधुओना कुशल समाचार जणावी, स्वस्वास्थ्यसमाचार-हितशिक्षा-स्वस्वोचित कार्य जणावनार प्रतिपत्रनी आकाङ्क्षा प्रगट करी पूज्यश्रीनी निश्रामां रहेल साधु-साध्वीजीओने वन्दनादि निवेदन करी पत्र पूर्ण कर्यो छे.

पत्र पूर्ण थया पछी शेष रहेल जग्यामां आशीर्वादसम्बन्धी ३ श्लोको छे. कृतिमां केटलाक स्थळे टिप्पणो करी छे जे अहीं कृतिना अन्ते मूकी छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पत्रगत पद्यो स्रग्धरा, शार्दूल०, शिखरिणी समेत विविध छन्दोमां रचायां छे.

वडोदरा-श्रीकान्तिविजयजी शास्त्रसङ्ग्रहमांथी अमने प्रस्तुत कृतिनी नकल प्राप्त थई छे. ते बदल ज्ञानभण्डारना व्यवस्थापकोनो अमे हार्दिक आभार मानीए छीए.

* * *

॥ ८० ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ऐँ नमः ॥

पार्श्वं पार्श्वप्रणुतं, प्रणिपत्य निरत्यैकविज्ञानम्(?) ।
शिष्यः पद्यरचनया, रचयत्या**नन्दविज्ञप्तिम्** ॥१॥
श्रीप्रभुपादपदाम्भो-जन्मरजोभिः पवित्रिते तत्र ।
श्री**महिशानक**नगरान्-नगराजमनोहरविहारात् ॥२॥
श्रीमत्प्रभुपादानां, हितानुशासनसुधानुवादानाम् ।
निरुपमविशारदानां, बुद्धिलतावृद्धिकन्दानाम्[१] ॥३॥
धर्मद्रुमजलदानां, वादविनिर्जितकुवादिवृन्दानाम् ।
त्यक्ततरार्ष्टमदानां, सुनिरवसादप्रसादानाम् ॥४॥
जगतीजीवातूनां, मोचितमिथ्यात्वभव्यजन्तूनाम् ।
भववारिधिसेतूनां, जिनमतचैत्योरुकेतूनाम् ॥५॥
उपशमरससिन्धूनां[३], निष्कारणविश्वविश्वबन्धूनाम् ।
संविज्जलसिन्धूनां[४], मुख्यानामखिलसाधूनाम् ॥६॥
सर्वज्ञसर्ववाङ्मय-सारपरिज्ञानकोशधनदानाम् ।
भवतापतापितानां, विश्रामच्छायफलदानाम् ॥७॥
जयवादि-प्रतिवादि-स्वा(श्वा)पदमदनाशसिंहनादानाम् ।
भुवनाप्यायकवचनै-र्विधुरीकृतवंशनादानाम् ॥८॥
नवकल्पविहारेणाऽखिलभूतलपावनैकपादानाम् ।
त्रिजगज्जनजित्वरतर-मन्मथमथनैकपादानाम् ॥९॥
लोकत्रयप्रकाशन-कलयाऽल्पीकृतसहस्रपादानाम् ।
समयाम्बुधिवृद्धिकृते, पार्वणपीयूषपादानाम् ॥१०॥

---

१. 'मेघः' इत्यर्थः । २. 'बोधिः' इति वा । ३. 'नदी' इत्यर्थः । ४. 'समुद्रः' इत्यर्थः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिष्यजनमनःकामित-दानां हेलाहतप्रमादानाम् ।
सकलक्षितितलसुरभी-कारितरश्लोककुन्दानाम् ॥११॥
पुण्योपदेशपेशल-वचनकलानिर्मितप्रमोदानाम् ।
विद्यानदीनदानां, श्रीमच्छ्रीपूज्यपादानाम् ॥१२॥
मोहभटोत्कटकैटभ-निर्द्धाटनविकटसोमसिन्धूनाम् ।
भविकभविविमलकमला-कमलावलिकमलबन्धूनाम् ॥१३॥
बहिरबहिररिसमापन-केतूनां सर्वशर्महेतूनाम् ।
संसारविषयविषये-न्धनदाहे धूमकेतूनाम् ॥१४॥
उपशमरसाम्भसां वर-कुम्भानां जन्मतो विदम्भानाम् ।
सुमनोमनोमनोरम-कामार्पणकामकुम्भानाम् ॥१५॥
त्यक्ततरारम्भानां, हृदयस्वऽविकारकारिरम्भानाम् ।
धर्मगृहावष्टम्भ-स्तम्भानां विगतदम्भानाम् ॥१६॥
विबुधाधिपत्यपदवी-प्रौढप्रासादहेमकुम्भानाम् ।
विनयादिगुणानुचरी-कृततरवरशातकुम्भानाम् ॥१७॥
सारस्वतरत्नाकर-पारप्रापणसुकर्णधाराणाम् ।
श्रीचन्द्रगणप्रासाद-सूत्रणासूत्रधाराणाम् ॥१८॥
भव्यमनोऽवनिमेधा-वीरुधधाराधरैकधाराणाम् ।
सर्वगुणाधाराणां, मायालतिकासिधाराणाम् ॥१९॥
घनसारतरयशोघन-सारैः सुरभीकृतत्रिलोकानाम् ।
सुवचनरचनारञ्जन-विषयीकृतसर्वलोकानाम् ॥२०॥
निजचरणच्छायाश्रित-जनतृष्णाहरणलसदशोकानाम् ।
निरुपमतमसंमसमय(?)-लोकानां विगतशोकानाम् ॥२१॥
निजनिर्जरतरगोभर-प्रमोदितानेकलोककोकानाम् ।
आलोकादपि लोका-तिशायिसुखदाय्यलीकानाम् ॥२२॥
अद्भुततरत्रिभुवन-सेचनकोदाररूपधेयानाम् ।
आश्चर्यकारिविश्वा-तिशायितरभागधेयानाम् ॥२३॥
मन्त्रवदशेषजनता-चित्ते हितदायिनामधेयानाम् ।
जगदभ्यवापिमहिमा-गरिमादिगुणैरमेयानाम् ॥२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भक्तिपुरस्सरमधुर-स्वरनरनारीगुणौघगेयानाम् ।
धर्मधुरां धौरेय-व्युत्पन्नोत्तमविनेयानाम् ॥२५॥
भवजलधिद्वीपानां, सन्मार्गप्रकटनप्रदीपानाम् ।
प्रणताखिलभूपानां, पुण्याङ्कुरलसदनूपानाम् ॥२६॥
ज्ञानोदककूपानां, विस्मयकृन्निस्समानरूपाना(णा)म् ।
गुणनिष्प्रतिरूपानां(णां) तनुरुचिजितजातरूपाना(णा)म् ॥२७॥
निरुपमस(श)मभावानां, जगतीजनतोत्तमस्वभावानाम् ।
विदिताखिलभावानां, विश्वव्यापिप्रभावानाम् ॥२८॥
कविसुविहितशंसानां, सुविहितमुनिवरशिरोवतंसानाम् ।
हरिवन् निर्घाटिततर-दुर्द्धरसंसारकंसानाम् ॥२९॥
सन्मानससन्मानस-वासविलासैकराजहंसानाम् ।
विशदयशस्तेज:श्री-निर्जिततरराजहंसानाम् ॥३०॥
पदनम्रनरेन्द्राणां, गाम्भीर्याद्यनणुगुणसमुद्राणाम् ।
निजवचनोपन्यासैः, प्रदत्तपरवादिमुद्राणाम् ॥३१॥
भविकैरवचन्द्राणां, मोहमहीधरभिदासुरेन्द्राणाम् ।
पुण्यविधेयविधानो-पदेशविधौ वितन्द्राणाम् ॥३२॥
अप्रतिरूपप्रतिभा-प्राग्भारोपहसितैकजीवानाम् ।
मैत्रीभावप्रापित-सूक्ष्मेतरसर्वजीवानाम् ॥३३॥
सारस्वतसारस्वत-रहस्यनीरावगाहमेरूणाम् ।
ज्ञानादिगुणखगानां, विलसनविलसन्नमेरूणाम्[५] ॥३४॥
अभ्यन्तरवैरिभर-स्थामतिरस्कारसुप्रचण्डानाम् ।
सुप्रणिधानानाश्रित-मनोवचस्कायदण्डानाम् ॥३५॥
ब्रह्माण्डमण्डपश्री-मण्डनसर्पद्यशोवितानानाम् ।
त्रिभुवनजनताचिन्ता-तिथार्ग(तीतार्थ?)दानैकतानानाम् ॥३६॥
आयुष्मतां शुभवतां, भवतां प्रतिभावताम् ।
श्रीमतां विदिताङ्गादि-जिनागमसरस्वताम् ॥३७॥
लेखः शेषः किमेष प्रविलसदसमाकारसद्वर्णशाली?,
ज्योतिर्माली किमूद्यत्सहृदयहृदयाम्भोरुहोल्लासनेशः? ।

(५) 'वृक्ष' इत्यर्थः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किं वाऽसौ शर्वरीशस्त्रिभुवननयनानन्ददानैकतानः?,
सज्ञानः श्रीप्रधानः किमयमसदृशः शारदासारकोशः? ॥१॥ [३८]
अपूर्वकागदोपेतः, स्फुरदङ्कश्रियाऽऽश्रितः ।
अस्तोकश्लोकलक्ष्मीकः, साक्षात्पुण्यसुदर्शनः ॥२॥ [॥३९॥]
कुमोदकः प्रसादाशी-र्वादः श्रीनादसुन्दरः ।
चित्रमत्र परं लोके, कदाचिन्न जनार्दनः ॥३॥ युग्मम् ॥ [॥४०॥]
हरिरिव विबुधानन्दी, हरिरिव सम्प्रकटपुण्यदानश्रीः ।
हरिरिव सत्कवितायुग्, हरिरिव जगतां विनोदकरः ॥४॥ [॥४१॥]
हरिरिव संवरविभवः, हरिरिव विषयापहाक्षरमणिधरः ।
हरिरिव रजौघहरणो, हरिरिव विनयादिगुणधारी ॥५॥ [॥४२॥]
हरिरिव तमोविनाशी, हरिरिव जातिस्मृतो[६] विबोधमयः ।
हरिरिव सुपदन्यासो, हरिरिव सुमनोम्बुजोल्लासी ॥६॥ [॥४३॥]
हरिरिव गिरीशनन्दी, हरिरिव दुर्वादिकोकशोककरः ।
हरिरिव चित्रे सुषमी, हरिरिव परदर्पसर्पनाशकरः ॥७॥ [॥४४॥]
हरिरिव सुरसार्थयुतो, हरिरिव विलसन्महश्चि(श्रि)या परमः ।
हरिरिव कुमोदकोऽयं, हरिरिव निःप्रति[म]रूपाभः ॥८॥ [॥४५॥]
हरिरिव विमलतररुचि-र्हरिरिव वरशीलभावनाकलितः ।
हरिरिव शितितरवर्णो हरिरिव वृषभासनः सततम् ॥९॥ [॥४६॥]
हरिरिव परिणाहधरो हरिरिव सन्मानसाब्धिवासः- ।
हरिरिव विदुषामिष्टो हरिरिव जाड्यापहारपरः ॥१०॥ [॥४७॥]
[७]हरिरिव नयनोल्लासी, [८]हरिरिव दुर्बोधसंहरणशीलः ।
[९]हरिरिव बहुलोहमयः, हरिरिव गुप्तार्थसार्थोऽयम् ॥११॥ [॥४८॥]
[१०]प्राप प्रसादपूर्वाशी-र्वादो हृद्यपद्यगद्यौघः ।
परिवारेण समं मां, प्रपञ्चयन् प्राञ्चदानन्तम् ॥१२॥ [॥४९॥]

अष्टचत्वारिंशद्भिः कुलकम् ॥

निर्मापितमहजातं, श्रीपर्वाऽत्राऽप्यपूर्वमिहजातम् ।
तदवसरे प्रहितं, तत्स्वरूपमस्माभिरत्रत्यम् ॥१३॥ [॥५०॥]

---

६. 'परभवे जातिं स्मरिष्यति इति क्विपि, तस्य' इति । ७. 'अञ्जनम्' ८. 'धर्मः' इत्यर्थः । ९. 'खड्गः' इत्यर्थः । १०. 'श्रीपर्वपूर्वा' इति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'तद् विज्ञ प्रागपि शिष्येण प्राभृतीचक्रे' इति वोत्तरार्द्धम् ।
वरिवर्त्ति समाधानं, समं च सङ्घेन मेऽत्र सर्वत्र ।
देव-गुरुनाममन्त्र-स्फुटसंस्मरणानुभागेन ॥१४॥ [॥५१॥]
पूर्वारम्भितभाणन-गुणनादिपराः शुभंयवः श्रमणाः ।
सर्वा अपि च श्रमणा, धर्मसमाराधनप्रवणाः ॥१५॥ [॥५२॥]
'श्रीमत्प्रभुपादानां प्रसादतः सुप्रसादानाम्' इति वा ।
श्रीमद्भिस्तत्रत्यं, स्ववपुः-परिवारसम्भवं श्रेयः ।
मदुचितकार्यादियुतं, ज्ञाप्यं मेऽत्र प्रमोदाय ॥१६॥ [॥५३॥]
श्रीवन्द्यैस्तत्रत्यं - - - - - - - - - - - - ।
शिक्षोचितहितशिक्षा-युतं प्रसद्यं प्रसाद्य मे ॥१७॥ [॥५४॥]
गुणगणमणिसिन्धूनां, सन्मानसपद्मपद्मबन्धूनाम् ।
निष्कारणजगतीजन-बन्धूनां सर्वसाधूनाम् ॥१८॥ [॥५५॥]
शीलादिगुणैरखिलैः, साध्वीनां तत्र सकलसाध्वीनाम् ।
ज्ञाप्याऽनुवन्दना मे, सानन्दप्रणयबहुमानम् ॥१९॥ [॥५६॥]
अत्रत्या अपि यत्या-दयः समस्ताः सभक्तिसाध्व्यश्च ।
श्राद्धा श्राद्ध्यश्च सदा वन्दन्ते श्रीमतो भद्रम् ॥२०॥ श्री ॥ [॥५७॥]

* * *

गोष्ठ्यामुद्वेष्ट्यमानः सजलजलदवत् संवरश्रेणिमाविः-
कुर्वाणः पुण्यबद्धोन्नतिरतिनयनानन्ददानप्रवीणः ।
आशीर्वादः प्रसादात् प्रमदभरकरेन्दीवरश्यामवर्ण-
श्चित्रं पङ्कापहारी प्रकटितसकलक्षोणिनानातपश्रीः ॥१॥
प्रसादाशीर्वादो द्विरदवदयं प्राप्त इह मे,
प्रमोदाद्वे(द्वै)तायाऽजनि जनसमाजेन महता ।
स्फुटं नानादानप्रकटनपटुः श्रीगुरुकर-
प्रतिष्ठासम्प्राप्तः प्रवरबहुलोहैः परजयी ॥२॥
शिष्योपरि प्रभूणां, हितवात्सल्यामृतप्रवाह इव ।
मूर्तिमदानन्द इवा-ऽऽन्तरप्रसादानुवाद इव ॥३॥ [युग्मम्]

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(५)
श्रीविजयप्रभसूरिणा देवकपत्तनात् प्रेषितं प्रसादपत्रम्

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

गच्छनायकने के पोतानाथी वडील (पर्यायवृद्ध) गुरुभगवन्तने लखेल पत्रना प्रत्युत्तर स्वरूपे ए पूज्यो द्वारा जे प्रतिपत्र लखवामां आवे ते प्रसादपत्र. विज्ञप्तिपत्रोनी माफक आवा पत्रो पण रसाळ शैलीमां लखायेला होय छे. ऐतिहासिक विगतो पण क्यारेक तेमां वणायेल होय छे.

प्रस्तुत पत्र **विजयप्रभसूरि**जीए **देवकपत्तन**थी कोना उपर कया नगरे लख्यो छे तेनी नोंध कृतिमां क्यांय नथी. परन्तु अनुसन्धान-६०, विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्क, खण्ड-१मां छपायेल विबुध **नयविजयजीए जावालथी देवकपत्तन विजयप्रभसूरिजीने** लखेल विज्ञप्तिपत्रनी संवत् अने ते समये **विजयप्रभसूरिजी**नी निश्रामां रहेल साधुवृन्दनां नामो प्रस्तुत पत्रमां समान छे. तेथी प्रस्तुत पत्र जावाल नगरे विबुध **नयविजयजीने** लखायो हशे तेम जणाय छे. अथवा, ए ज पुस्तकमां छपायेल पण्डित हीरविमलजीए **साहित्यपुर**थी लखेल विज्ञप्तिपत्रना प्रत्युत्तर रूपे प्रस्तुत पत्र लखायो होय तेवी शक्यता पण नकारी न शकाय.

प्रस्तुत पत्रनो महत्तम अंश (खण्ड) जिननमस्कारमां ज रोकायेलो छे. कर्त्ताए १६ पद्योथी **श्रीपार्श्वनाथ** भगवाननी स्तुति करी पुनः गद्यखण्डमां **श्रीदादापार्श्वनाथ** भगवानने वन्दना करी छे.

जिननमस्कार पछी प्रातः व्याख्यानसभा-चातुर्मासिक आराधना-पर्युषणपर्व आराधनानुं वर्णन कर्युं छे. आ खण्डमां 'श्रीपञ्चमाङ्ग-द्विगुणितपञ्चमाङ्गसूत्रवृत्त्यनुक्रमप्रथमद्वितीयमण्डलीमण्डन' शब्द सूत्रमाण्डलीमां पञ्चमाङ्ग **श्रीभगवती सूत्र** अने अर्थमाण्डलीमां दशमाङ्ग **श्रीप्रश्नव्याकरणसूत्रवृत्ति**ना स्वाध्याय अर्थे प्रयोजायो छे. ते ज रीते **'पापिष्ठप्राण्याचीर्णनिकृष्टकर्मवारणपटुपटहोद्घोषण'** जेवा मजाना शब्दप्रयोगो अभयदान-जिनपूजा(महापूजा)-चैत्यपरिपाटी अर्थे प्रयोजाया छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रान्ते तेमना पूर्वपत्र मळ्यानी नोंध करी, सहवर्ति साधुओना नामोल्लेखपूर्वक वन्दनादि निवेदन करी, सकल संघने धर्मलाभ जणावी, जिनेश्वर भगवन्तने वन्दना करवापूर्वक पत्र पूर्ण कर्यो छे.

प्रस्तुत ग्रन्थनी नकल अमने वडोदरा - हंसविजय जैन ज्ञानमन्दिर तरफथी प्राप्त थइ छे. ते बदल अमे संस्थाना व्यवस्थापकोनो आभार मानीए छीअे ।

॥ सं. १७१६ ॥

॥ ८०॥

स्वस्ति श्रियाऽसेवि यदङ्घ्रिपद्मं, सदा प्रफुल्लं प्रणमत्त्रिलोकम् ।
लोकप्रियं **पार्श्व**जिनो जनानां, स पार्श्वपार्श्वो भवताद्धिताय ॥१॥
स्वस्तिश्रियो यस्य पदे पदेऽपि, प्रभोः प्रभावाद् भविनां भवन्ति ।
सद्भाग्ययोगादिव सम्पदस्त-मस्मेय**वामेयजिनं** श्रयामः ॥२॥
स्वस्तिश्रियो यमिह विश्रुतवर्णवादाः, कल्पद्रुमं प्रवरकल्पलता[मि]वोच्चम् ।
सच्चन्द्रिका इव निशाधिपतिं श्रयन्ते, भूयात् समीहितकृते स जिनो जनानाम् ॥३॥
यत्पादपद्मं द्युतिदीप्यमानं निश्छद्मसौन्दर्यगुणैकसद्म ।
साक्षादसेवीत् कमला सदोषं, चन्द्रादिकस्थानमपास्य मङ्क्षु ॥४॥
यदीयपादं विगतप्रमादं, प्रसादपात्रं नतभव्यमात्रम् ।
अभीष्टमन्त्रं शिवसिद्धियन्त्रं, जना भजध्वं जनितप्रमोदम् ॥५॥
वचोऽमृतं यस्य निपीया भव्याः, प्रमोदभव्याःस्त्यक्तपराभिलाषाः ।
सन्तोऽमृतानन्दपदं श्रयन्ते, स्थानं तदेकस्मरणप्रवीणाः ॥६॥
यदीयपादद्वयसन्नखाली चकास्ति दीपावलिकेव दीप्रा ।
तमोपहायाऽङ्गभृतां समन्तात्, स आश्वसेनिर्जयताज्जिनेशः ॥७॥
यत्पादपद्मं नखदीप्तिदीप्तं, नमज्जनानामिव वह्निसाक्षम् ।
व्यनक्ति सिद्धिप्रमदाविवाहं, पायादपायाद् भविनः स **पार्श्वः** ॥८॥
यद्देहभासः परितः स्फुरन्त्यो, विभान्ति नम्राङ्गभृतां शिरस्सु ।
यवप्ररोहा विजयार्थिनां किं, पुष्णातु **पार्श्वः** प्रियमङ्गभाजाम् ॥९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यच्छीर्षसप्तस्फटदम्भतः किं, जैनं वचः सप्तनयीनिगूढम् ।
मन्ये नमल्लोकभयान्तकर्तृ, भूयिष्ठभूत्यै भवतात् स **पार्श्वः** ॥१०॥
मुखेन्दुपीयूषरसैककुण्ड-रक्षाकृते किं सुचिरं फणीन्द्रः ।
यदीयशीर्षे विधिना न्यधायि, **पार्श्वः** प्रभावं प्रथयत्यसङ्ख्यम् ॥११॥
सत्तत्त्वकोटीश्वरताभिमाना-दूद्र्ध्वीकृताः केतुपटाः स्फुरन्तः ।
यस्य स्फटाटोपमिषेण जाने, **पार्श्वः** प्रभुः सिद्धिसमृद्धये स्तात् ॥१२॥
नीलद्युतो यस्य शिरःस्फटाग्र-मणीश्रियो नीरदवार्दलान्तः ।
उद्गच्छदुष्णांशुरुचं दधन्त्यो, मुदं विदध्यादिह **पार्श्वनाथः** ॥१३॥
दूर्वाक्षतांश्चेदनिशं दधीत, दन्तत्विषाराजियदङ्गदीप्तेः ।
साम्यं तदाप्नोतु वृषोपदेशे, **पार्श्व**स्सदा मङ्गलमातनोतु ॥१४॥
यदीयशीर्षे स्फटरत्नभासः, समुच्छिखा विद्रुमकन्दलन्ति ।
सच्चित्रवल्ल्याः किमु पल्लवन्ति, जीव्याच्चिरं **पार्श्वजिनो** जगत्याम् ॥१५॥
चराचरं विश्वमशेषमेवा-ऽमितं प्रमाति प्रतिबिम्ब(म्बि) यस्य ।
चित्रं चिदादर्शतले वलक्षे, सार्वश्चिदानन्दपदं प्रदद्यात् ॥१६॥

तं श्रीमन्तममन्दसम्मदकन्दप्रणमदमरनरवरस्फुरत्तरप्रकटमुकुटकुटनैकरमणीयमणीनिस्सरन्मरीचिशुचिपयोनिचयप्रक्षालितक्रमकमलयमलं सकलकलाधरकरालोकलोकनोत्पन्नहर्षोत्कर्षसमुच्छलदतुच्छस्वच्छक्षीरनीरनिधिलोलकल्लोलप्रचण्डोद्दण्डडिण्डीरपिण्डपाण्डुरास्तोकश्लोककर्पूरपूरसुरभितविश्वविश्ववेश्मान्तरालं फलितफलिनीदलश्यामलकमलकोमलभगवत्कायकमनीयकान्तिकलापामृतकुण्डप्रतिमप्रतिबिम्बोपधिप्रतिदिनतीर्थस्नानकरणोद्भूतप्रभूतनैपुण्यपुण्यप्रचयातिशयसदासम्फुल्लितोत्तुङ्गरङ्गत्कङ्केल्लिसालं जाग्रत्प्रतापतापतापिताशेषसीमालभूपालाश्वसेनाश्वसेनरासनसेनोभयपक्षशुद्धवंशसरसमानससरोवरालङ्कारसारमरालबालं **श्रीदादाभिधपार्श्व**-परमेश्वरनन्दगोपालं प्रणामगोवर्द्धनगिरिशिखरलीलाविलासिनं निर्माय **श्रीदेवक-पत्तनात्** **श्रीविजयप्रभसूरिभिः** सबहुमानमालाप्यते –

यथेहकार्यं प्रातः गगनैकमन्दिराभ्यन्तरावस्थानतरुणतेजस्विजनासहनीयविविधविरुद्धाचरणप्रवणनिशाधिराजसमग्राधिकारनैकखण्डीकरणविकुर्वितकोपाटोपारक्तसहस्रंकरनिकरे क्षपितनिपीतकरिकपोलमूलमदमत्तमधुकरनिकरसमतमोभरे सम्प्राप्तोदयगिरिशिखरसिंहासनाधिपत्येन्दिरे श्रीदिनकरमण्डले सति जीवाजीवादितत्त्व-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विचारचतुरधर्मकर्मालङ्कर्मीणकृतलक्षणलक्षणलक्षितलक्ष्मणपरिषद्यपरिषदि **श्रीपञ्चमाङ्गसूत्र**द्विगुणित**पञ्चमाङ्गसूत्रवृत्त्य**नुक्रमप्रथमद्वितीयमण्डलीमण्डनस्वपरसमयाभ्यसनसोद्योगयोगोपधानोद्वाहन-माङ्गल्यमालारोपणा-ऽऽगमदेशितदेशविरतिदुर्ग्रहाभिग्रहाजिह्म-ब्रह्मव्रतसालापालापकोच्चारणा-दीनाऽसमर्थोद्धृत्यादि सचातुरीतुरीयारकस्पर्द्धि सश्रेयः श्रेयःकार्यं समजंजनीत् समजंजनीति च । पर्यायोपस्थेष्टश्रेष्ठसर्वपर्वशीर्षोष्णीषोपमश्रीसांवत्सरिकपर्वणि प्रायः प्रा(पा)पिष्ठप्राण्याचीर्णनिकृष्टकर्मवारणपटुपटहोद्घोषण-गुणिगन्धर्वजनोद्गीतसङ्गीतगीतसमाकर्णनोत्कर्णसकर्णसमाकीर्णश्रीजिनभवनसप्रभेदसर्वसार्वार्हणाकरण-मासार्द्धमासक्षपणाद्यनेकदुस्तपतपःप्रारम्भणाऽहरहरऽहमहमिकानैपुण्यपुण्यवन्निर्मितामितनवनवक्षणनवक्षणानल्पसङ्कल्पकल्पद्रुकल्प**श्रीकल्पाध्ययना**नुयोगोपक्रमण-नानापक्वपक्वान्नान्नादि[ना] साधर्मिकसम्पोषण-मार्गणगणमार्गितार्थवितरणसन्तोषण-जयजयारवसुवासिनीधवलध्वनिविविधतूर्यनिर्घोषशब्दाद्वैतबधिरितब्रह्माण्डमण्डलाखण्डमहाडम्बरसहकृतसकलजिनभवनविचरणाद्यखर्वपर्वधर्मकर्म सशर्म प्रावरीवृतीत् श्रीमन्महनीयपादनामस्मरणकरणासाधारणाकारणाद् ।

अपरं शुभवतां भवतां भवतान्तिभिदा(दां?) सुधीवराणां धीवराणां सपरिच्छदसौववपुःपाटवादिसूचकं कविकुलवर्णनीयानवद्यहृद्यपद्यगुम्फितं पार्वणं पत्रं प्रासं, प्रातिभप्रमाविषयीकृतं च तदन्तर्गर्भितप्रमेयपटलम् । किं चाऽस्माकं उ. **श्रीविनीतविजयग., पं. रविवर्द्धनग., पं. धनविजयग., पं. जसविजयग., तत्त्वविजयादे**रनुनति र्नतिर्वा समवसेया । तत्र प्राग्(क्) प्रान्त्यावाससमीपस्थायिनां वाच्या सकलसङ्घस्य धर्माशीश्चाऽस्मन्नामग्राहम् । श्रीजिनेन्द्रचन्द्राः प्रणाममहेशानमूर्द्धानमधिरोप्याः । विजयदशम्यामिति श्रेयः ॥ सं. १७१५(६) ॥

—*—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(६)
वंशपालनपुरे श्रीविजयरत्नसूरिं प्रति उदयपुरतो वृद्धिविजयलिखितो विज्ञप्तिलेखः

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

१४२ श्लोकोमां विस्तरेल प्रस्तुत पत्र श्री**विजयरत्नसूरिजी** उपर **वृद्धिविजयजी**ए लखेल काव्यमय विज्ञप्तिरूप छे.

अन्य विज्ञप्तिपत्रोनी जेम प्रस्तुत विज्ञप्तिपत्र पण विज्ञप्तिपत्रनी लेखन-परिपाटीने सम्पूर्णपणे अनुसरे छे. जिननमस्कार (श्लोक १ थी १७), **वागड**-देशवर्णन (श्लोक १८ थी २४), **वांसवाडा**नगरवर्णन (श्लोक २५ थी ४४), **उदयपुर**नगरवर्णन (श्लोक ४५ थी ६०), सूर्योदय-प्रभातवर्णन (श्लोक ६७ थी ७३), व्याख्यानसभा-श्रावक-श्राविकावर्णन (श्लोक ७४ थी ७७), गुरुवर्णन (श्लोक ८९ थी ११२). कृतिनो टूंक परिचय आटलो कही शकाय. कविए शब्दालङ्कार अने अर्थालङ्कारनो आश्रय लइ उपरनां वर्णनोने खूब रोचक-भाववाही बनाव्यां छे. कल्पना-वैभवनी दृष्टिए पण कृतिना केटलांक पद्यो बहु मजानां छे. जगत्प्रसिद्ध - 'हेमथी रत्न वधु (मूल्यवान) छे' ए लोकोक्तिनो प्रयोग करी कर्त्ताए पोताना गुरुने हेमचन्द्राचार्यजीथी पण अधिक दर्शाव्या छे. वस्तुतः गुरु प्रत्येना आदरभावनी द्योतक प्रस्तुत कल्पना पण आपणे माटे तो कल्पनातीत ज छे. असामान्य गुरुसमर्पणभाव होय त्यां आवी कल्पना जन्मे.

ऐतिहासिक दृष्टिए जोवा जईए तो (१) **वागडदेश-वंशपालनपुर (वांसवाडा)**मां राजमान्य व्यक्ति कोठारी **कपूरचन्द्र**नुं नाम, (२) **उदयपुर**मां श्रावक **सुजाणसिंह**, श्राविका **साहिमती**, तेमना भाट-सेवक **दीप-अचल**नां नामो, (३) **उदयपुर**मां चातुर्मास दरम्यान श्री**भगवतीसूत्र**-सटीकवाचननी नोंध, (४) **उदयपुर**मां श्री**शीतल**जिन-श्री**सुपार्श्व**जिन-श्री**पार्श्वजिन**(चैत्य?)नी नोंध, (५) **वागडदेश** माटे प्रयोजेल '**वटपद्र**' अपर नाम, (६) सहवर्त्ती साधुओनां नाम-आटली विगतो विशेष जाणवा मळे छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृतिकारे कृतिमां प्रयोजेल छन्दोनुं वैविध्य ध्यानार्ह छे.

प्रस्तुत पत्रनी नकल अमने सुरत-श्री नेमि-विज्ञान-कस्तूरसूरि ज्ञानमंदिरमांथी प्राप्त थयेल छे. नकल मेळवी आपवा बदल संस्थाना कार्यवाहकोनो खूब-खूब आभार ।

॥ ८०॥

स्वस्तिश्रीव्रततितिस्थिरस्थितिकृतिस्कन्धप्रबन्धोद्धुरः;
सच्छायः सरसामृतोत्तमफलप्राप्त्यै जयत्यद्भुतः ।
तापव्यापनिवारणैकपटुतासत्यापितस्वाभिधो,
यः **श्रीशीतल**तीर्थनायकवरः कल्पद्रुकल्पोऽवनौ ॥१॥
स्वस्तिश्रीमधुराधरामृतरसास्वादैकलीनश्चिरं,
सद्रत्नत्रयसंयुतां शुभधियं सञ्चार्य दूतीं पटुम् ।
भुङ्क्ते सौख्यमनारतं स्थिररतिर्यः स्थायिभावोद्भवं,
प्राप्तानन्दपदः, सदा सहृदयस्तोतव्यसंस्थास्थितिः ॥२॥
स्वस्तिश्रीर्यदुदारपादकमलं प्राप्य प्रमोमुद्यते,
राजद्राजमरालबालपटलीक्रीडागृहं सस्पृहम् ।
प्रीतिप्रह्वसुपर्वसर्वमधुपैः पेपीयमानं पुन-
श्चित्रं यत् कुट(क)टुकण्टकैर्विरहितं युक्तं जडापाततः ॥३॥
स्वस्तिश्रीर्यदुपासनप्रणयिनामङ्कं श्रयत्यञ्जसा,
नृत्यं वारविलासिनीव तनुते देवी सरस्वत्यपि ।
सत्कीर्तिर्जगतां त्रयेऽपि पथगेवोच्चैः पुनीतेतरां,
विद्विड्हृत्तटपाटनैकपटुधीः स स्तादभीष्टश्रिये ॥४॥
स्वस्तिश्रीस्तनतुङ्गशैलशिखरे हारस्फुरन्निर्झरे,
रोमालीधनशाद्वलाञ्चितलसन्नाभीह्रदोद्भासिते ।
प्रोन्मादिप्रतिवादिसिन्धुरघटाव्यापाटनप्रक्रमै-
र्यः श्रीमान् भुवनत्रये विजयते शार्दूलविक्रीडितैः ॥५॥

इति संस्कृतभाषा ॥

१. 'अन्वर्थीकृतः' इत्यर्थः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सत्थिसिरीरइभवणं, भुवणत्तयभासणुग्गभाणुनिहं ।
निव्वाविअभवदाहं, **सीअलनाहं** पणिवयामो ॥६॥
तिहुअणलोअणकुमुआ-करसारयपुण्णिमाकुमुअबन्धू ।
देसिअसिवसुहलाहो, सीअलनाहो जए जयइ ॥७॥
सीअकरसीअलेहिं, करुणकडक्खेहिं पिक्खिओ जेण ।
हवइ सया सुकयत्थो, स पसत्थो सीअलो जयउ ॥८॥
अतणुतणुकंतितज्जिअ-मयणमओ संथुओ सुरगणेहिं ।
भुवणोवयारनिउणो दिढरहतणओ जए जयउ ॥९॥
परउवयारपरेसुं, रेहं पत्तो समत्तसुहचित्तो ।
मित्तो भविपउमाणं, जिणराओ रायए लोए ॥१०॥ इति प्राकृतभाषा ॥
मोहमहीरुहबंधुर-सिंधुरकरणिं सुसिद्धिकरचरणं ।
करुणामयमहिममहा-गेहं संदेहतिमिरहरं ॥११॥
गुणमणिनिवहकरंडं, भवपारावारतारणतरंडं ।
तरुणतरतरणिभासं, वंदे देवं दयावासं ॥१२॥ युग्मम् ॥

॥ इति समसंस्कृतभाषया श्री **सुपार्श्व**(शीतल?)प्रणामः ॥

स्वस्तिश्रियां निरवधिर्निधिरेव साक्षाद्,
विश्वत्रये प्रतिनिधिः प्रतिभासते यः ।
कल्लाणकंतिभरतज्जणरूववं वि,
कल्लाणकोडिजणओ जणओवयारी ॥१३॥
पार्श्वप्रभुर्भूरिविभूतिसूति-र्भूयात् प्रसन्नः सुकृतैरखिन्नः ।
फणावली रेहइ जस्स सीसे, किं चित्तवल्ली सुरसाहिरूढा? ॥१४॥
रूपस्वरूपमिदमप्रतिरूपमेव, मन्यामहेऽङ्घ्रिमहनीयतमस्य यस्य ।
मोहप्परोहदलनिद्दलणं वि तं जं, मोहं जणेइ भुवणत्तयलोअणाणं ॥१५॥

॥ इत्यर्द्धसंस्कृत-प्राकृतभाषासाटकेन श्री**पार्श्व**जिनप्रणामः ॥

इति नुतिमुपनीय श्रीजिनेन्द्रानतन्द्रा-**नुदयपुर**वरस्थान् स्थैर्यधैर्यातिसुस्थान् ।
अभिमतफलसिद्धयै कामकुम्भप्रभावां-स्त्रिभुवनमहनीयान् भक्त्यभिव्यक्तियुक्त्या
॥१६॥ ॥ इति श्रीजिनवर्णनम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ श्रीपरमगुरुराजचरणकमलपवित्रीकृतदेश-नगरवर्णनम् ॥

देशः स एवाऽस्तु शुभप्रदेशः, श्रेयःश्रियो(यः) सुस्थिरसन्निवेशः ।
यस्मिन् गणोत्तंसगुरुप्रवेश-प्रभावतो नास्त्यशुभस्य लेशः ॥१७॥
भूसुभ्रुवः केचन यत्र तुङ्ग-स्तनेन्दिरामाकलयन्ति शैलाः ।
नितम्बबिम्बश्रियमाश्रयन्ते, केपि स्फुरन्निर्जरमेखलाङ्काः ॥१८॥
यत्राऽस्खलन्तः सरिताप्रवाहा, गतावगाहाः परितः स्फुरन्ति ।
गिरां प्रवाहा इव **रत्नसूरे**-र्हारानुकाराः क्षितिनाय(यि)कायाः ॥१९॥
नृजन्मपावित्र्यकृतौ समर्था-न्यनेकतीर्थानि जयन्ति यत्र ।
यान्यैहिकामुष्मिकसाध्यसिद्ध्यो-र्योगात् प्रयान्ति प्रियमेलकत्वम् ॥२०॥
अनेकरम्भाः सुतिलोत्तमाश्च, निश्छद्मपद्माप्सरसोऽतिशस्याः ।
सश्रीफलाश्चारुहलिप्रियाश्च, वृषोपगच्छद्घननीलकण्ठाः ॥२१॥
स्फूर्जद्धरिस्फालकृतार्जुनीय-पक्षाः शिवाभिर्भयाभिरुग्राः ।
यस्मिन् वनान्ता मदनातिमुक्त-बाणाः प्रदेशा इव देवपुर्याः ॥२२॥ युगलम् ॥
लूनाऽलकासीदलकातिगूढा, राजगृहं राजगृहं न चाऽपि ।
न वा विशालाऽपि गुणैर्विशाला, पुरी सुराणामपि भासुरा न ॥२३॥
चम्पानुकम्पाकुलचित्तवृत्ति-र्लङ्का तु शङ्कातुरतां गतैव ।
येषां पुरस्तान्नगराणि यत्रा-ऽनेकानि तादृंशि दृशां सुखाय ॥२३(२४)॥

तेषु च—

जगत्त्रयीनायकराजधानी-सर्वस्वसारैरिव निर्मिता या ।
दिदृक्षुचक्षुःकृतभूरिलोभा, यत्राऽतुला सा **वटपद्र**शोभा ॥२४(२५)॥
वित्तैः कुबेरा अपि ये सुबेरा, दानप्रवाहार्द्रकरा इवेभाः ।
श्राद्धा विशुद्धाशयधर्मसक्ता, गुणानुरक्ता गुरुपट्टभक्ताः ॥२५(२६)॥
श्यामाश्च गौर्यश्च तथाऽतिरक्ता, मुग्धाच्छवत्सैरनुगम्यमानाः ।
यत्राऽऽस्तिकाः पीनपयोधराग्र-शृङ्ग्यो[1] मुनीनां किल कामगव्यः ॥२६(२७)॥

तत्र च देशे –

सौवर्द्धिसंस्पर्द्धितनाकलोकं, लोकम्पृणोदारवचस्विलोकम् ।
सर्वोत्तमं वंशपुरं ह्यशोकं, दृष्टं प्रहृष्टं प्रकरोति नो कम्? ॥२७(२८)॥

१. 'शृङ्गा' पाठां. ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मयि स्थिता वासववासपूस्तु, क्षोण्यां तथा राउलराजधानी ।
श्रेष्ठाऽनयोः केति यदीक्षितुं किं, सत्तारकाक्षीणि वियद् दधार ॥२८(२९)॥
चौरः परं यत्र च पौरनारी-सौरभ्यहारी पवनैस्तथा च ।
यूनोर्मनोभूरणभूरतेषु, द्विजाभिघाताः करजक्षतानि ॥२९(३०)॥
सर्वापहारः क्विपि शब्दशास्त्रे, निर्स्त्रिशता चोद्भटयोधशस्त्रे ।
पयोधरत्वेऽपि कठोरता स्त्री-वक्षोजयोस्तद्भुवि वक्रिमा च ॥३०(३१)॥
मेघोदये वै मलिनाम्बरत्वं, गुणच्युतिः कार्मुकमुक्तबाणे ।
बाणप्रयोगः स्मरतश्च यूनां, नाऽन्यत्र कुत्राऽपि तु यत्र लोके ॥३१(३२)॥
॥ त्रिभिरेकोऽर्थसम्बन्धः ॥

लोलेक्षणानां निशितैः कटाक्षै-ररुन्तुदैर्यत्र जनैरतर्कि ।
न पुष्पबाणः खलु पञ्चबाणो, जगज्जिघांसुः शतकोटिबाणः ॥३२(३३)॥

रूपश्रीसागरीभूता, दृष्ट्वा यत्रत्यनागरी ।
रागरीतिक्रमः कोऽपि, हा! गरीयान् भवेन्नृणाम् ॥३३(३४)॥

मन्दाकिनीसत्सिकताततताच्छ-कर्पूरपूरेषु चतुष्पथेषु ।
यत्रेन्द्रनीलैर्व्यवहारिपुत्रा, दीव्यन्ति दिव्यैरिव काचगोलैः ॥३४(३५)॥

कस्तूरिका-चन्दन-चन्द्र-कश्मी-रजापणैर्यत्र दिशो दशाऽपि ।
उच्चैरवास्यन्त सदावदातैः, **श्रीरत्नसूरे**रिव सद्यशोभिः ॥३५(३६)॥

भवन्ति यस्मिन् गृहमागतेभ्यो, महेभ्ययोषा हि वनीपकेभ्यः ।
मन्दादरा धान्यकणान् प्रदातुं, सुव्यक्तमुक्ताप्रसृतिप्रदात्र्यः ॥३६(३७)॥

स्फुरद्राजमार्गे चतुष्कानि यस्मि-श्चतुष्के चतुष्केऽतितुङ्गा निकायाः ।
निकाये निकाये मनोज्ञा गवाक्षा, गवाक्षे गवाक्षेऽतिवीक्ष्या मृगाक्ष्यः ॥३७(३८)॥

मृगाक्ष्यां मृगाक्ष्यां वलक्षाः कटाक्षाः, कटाक्षे कटाक्षे च लक्षं विलासाः ।
विलासे विलासे कलं तत्सुगीतं, सुगीते सुगीते यशः श्रीगुरूणाम् ॥३८(३९)॥

कर्पूरचन्द्रः क्षितिचन्द्रमान्यः, **कोष्ठारिको** निर्मलकोष्टबुद्धिः ।
यत्राऽर्थिसार्थेप्सितदानवर्षै-रमन्दमानन्दभरं तनोति ॥३९(४०)॥

---

२. 'समि(मी)र' इति टि. ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बुद्धिप्रपञ्चैरभयस्मयघ्न-श्चाणक्यचातुर्यमदापहारी ।
साम्राज्यलक्ष्मीकरिणीस्थिरत्व-सम्पादनालानसमानशौर्यः ॥४०(४१)॥ युग्मम् ॥
आजन्ममूलात् फलदं प्रियं स्वं, बाढं परिष्वज्य रसाभिषिक्ताः ।
अप्याप्ततारुण्यभराः कृशाङ्ग्यो, रङ्गद्दुकूलोद्गतपल्लविन्यः ॥४१(४२)॥
पवित्रपत्रालिविचित्रगात्र्यः, पुष्पप्रकाशार्पितसत्फलाशाः ।
श्राद्धयः सुराणां लतिका इवाऽति-कामप्रदा यत्र मनो हरन्ति ॥४२(४३)॥
युग्मम् ॥

तत्र श्रीमति **वंशपालनपुरे** गर्जन्नृपेभोद्धुरे,
चञ्चच्चैत्यविचित्रकेतुललितैः स्वर्गर्द्धिसन्तर्जकै(:) ।
शत्रुक्षत्रकलत्रनेत्रसलिलप्रक्षालितांह्रिद्वय-
श्रीमद्राउलसेवनीयचरणश्रीपूज्यसम्भाविते ॥४५(४४)॥

॥ इति श्रीवागडदेश-वांसवालानगरवर्णनम् ॥

सम्भूय भूयोऽपि हि राजपार्श्वात्, सप्तर्षिभिर्नैकमृगोऽप्यमोचि ।
साधोस्तुलां याति ततो न यस्याः, श्रद्धालुनिर्मोचित[1]नैकजन्तोः ॥४४(४५)॥
सौरभ्यगर्भाच्छसहस्रपत्रा-ऽऽतपत्रशोभां परितो दधानाः ।
वलक्षपक्षाण्डजधूतपक्षैः, संवीज्यमाना व्यजनैरिवेशाः ॥४५(४६)॥
पातालमूलामृतकुम्भमध्या-पतच्छिरौघैरिव पूर्णकण्ठाः ।
तडागभागा रचयन्त्यकुण्ठा-मुत्कण्ठतां यत्र विचित्रलक्ष्म्या[:] ॥४६(४७)॥युग्मम्॥
स्नात्वाऽथ यत्तीरमभिव्रजन्त्यः, प्रदीप्तचामीकरचारुकान्त्यः ।
विभान्ति रामा नयनाभिरामा, रम्भाः पयोधेरिव निस्सरन्त्यः ॥४७(४८)॥
अभ्रंलिहैः शुभ्रतरैरदभ्रैः, शिरोविराजत्कलधौतकुम्भैः ।
महीशगेहैः क्रियते विभाते, यत्रोदितार्कस्फुटकोटिशङ्का ॥४८(४९)॥
मौग्ध्येन सन्दिग्धमुपेयुषोः स्वं, वीक्ष्याऽनुबिम्बं मुकुरालयेषु ।
यूनोर्भवेद् यत्र यथार्थबुद्धि-र्हस्तग्रहान्नूपुरसिञ्जिताच्च ॥४९(५०)॥
छिन्ना किमेषा मम मौक्तिकस्रग्, व्यापारयन्तीति करं भ्रमेण ।
नक्षत्रबिम्बे स्फटिकाङ्गणेषु, यत्रोपहासाय न कस्य मुग्धाः ॥५०(५१)॥

---

१. ०'चितजन्तुराशेः' पाठां. ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवेद् यदीया सुषमा द्युगर्व-सर्वस्वसर्वङ्कषकान्तिकान्ता ।
केनोपमेया न यदारकूटं, सुवर्णकूटस्य तुलां लभेत ॥५१(५२)॥
सभ्या महेभ्याश्च वसन्ति यत्र, महौजसो मानधनाश्च केचित् ।
यशोऽर्थमर्थिष्वथ कल्पवृक्ष-सदृक्षपक्षप्रतिबद्धकक्षाः ॥५२(५३)॥
कदाग्रहग्रस्ततयाऽतिमूढा व्यूढाभिमानाश्च महत्तमत्वात् ।
केचित् पुनर्भूमिपतेः प्रसादा-दाप्तप्रतिष्ठा अपि शिष्टभावाः ॥५३(५४)॥ युगलम् ॥
विचित्रशास्त्रार्थविचारसार-पयोधिपारीकृतधीतरण्डाः ।
स्फुरन्ति यत्राऽर्हतधर्मधुर्याः, सम्यक्त्वरत्नस्थितिसत्करण्डाः ॥५४(५५)॥
संवेगरङ्गोल्लसदन्तरङ्गो-त्कर्षप्रकर्षैरिव कीलिताङ्ग्यः ।
काश्चित् तु सर्वर्षिजने समस्या-मात्रादपि प्रोज्झितसन्नमस्याः ॥५५(५६)॥
अन्यास्तु सन्न्यायपथानुषक्ताः, परम्परासर्षिजनानुरक्ताः ।
सदा सदाचारविधिप्रसक्ताः, श्राद्ध्यः समग्रा गुरुपट्टभक्ताः ॥५६(५७)॥
॥ त्रिभिरेकोऽर्थसम्बन्धः ॥

तत्र च –

श्रद्धालुमुख्यस्तु **सुजाणसिंहः**, श्राद्धीष्वथो **साहिमती** प्रतीता ।
आप्तौ तयोरत्यधिकारिभृत्यौ, **दीपा-ऽचलाख्यौ बलिभोक्तृभाटौ** ॥५७(५८)॥
यस्मिन्नयं सङ्घतरुश्चतुर्भि-र्मूलैर्मुनीनां प्रति पूर्वकूलैः ।
मानोच्चचूलैः फलवद्दलैश्च, चलैर्दुकूलैरिव वैजयन्तः ॥५८(५९)॥
मुक्तामय-गुणशालि-प्रवरस्त्रीपुंसरत्नरुचिरुचिरात् ।
भारतभूश्रीहृदया-भरणात् तस्मादुदयपुरतः ॥५९(६०)॥
विनयावनम्रकायः, प्रणयसहायश्च भक्तिनिरपायः ।
प्रायः प्रोज्झितमायः, प्राप्तश्रीजित्पदच्छायः ॥६०(६१)॥
सकलविधेयजनौघ-किञ्चित्करकिङ्करप्रकरमुख्यः ।
अप्यात्मीयतया श्री-गुरुभिरनुग्रहदृशा स्पृष्टः ॥६१(६२)॥
उल्लसितपुलकशोभा-सम्भावितवपुःप्रपुष्टिसंसृष्टिः ।
हृष्टमना घृष्टाद्भुत-गुरुगोत्रपवित्रवाग्वक्त्रः ॥६२(६३)॥
भालस्थलभूषायित-संयोजितपाणिविलसदरविन्दः ।
श्रीजिद्ध्यानविधाना-वधानमेदुरतरानन्दः ॥६४(६४)॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तरणिप्रमितावर्त्त-प्रवर्त्तितानिन्द्यवन्दनन्यासैः ।
विनयनयगर्भसूत्रित-विधिक्रियाप्रक्रियाभ्यासैः ॥६४(६५)॥
भूयो भूयोऽभिनमन्मौलिः, शीलितगुरुस्तुतिः सततम् ।
वृद्धिविजयो विनेयो, विज्ञप्तिं विरचयत्येवम् ॥६५(६६)॥
प्रयोजनं चाऽत्र यथा प्रथावत्-प्रभाप्रसारादरुणेन तावत् ।
पर्युल्लसत्त्विड्घृसुणाङ्गरागो, प्रकल्पिते वासवदिग्विभागे ॥६६(६७)॥
शूच्यन्तभेद्यप्रसृतान्धकार-प्रकारविस्तारनिकारकारी ।
किमेष निश्शेषविशेषदर्शी, जगत्प्रदीपः प्रकटीबभूव? ॥६७(६८)॥
करप्रसङ्गात् किमु पद्मिनीनां, निद्रापनोदी कमिता विनोदी? ।
किं वा तमःकोलकुलैककालः, प्रोत्तालफालोद्यतसिंहबालः? ॥६८(६९)॥
रथाङ्गरामानयनामृतद्युत्-सहस्रधारः किमु हेमकुम्भः? ।
तमीतमीनायककामकेली-हरं तृतीयं नु हरस्य चक्षुः ॥६९(७०)॥
किं वोदयाद्रेः कनकातपत्रं, शचीशदिक्कुण्डलमण्डनं वा ।
अह्नोऽथवा विश्वविभूषणस्य, [१]रात्नं समुत्तेजनशाणचक्रम् ॥७०(७१)॥
राजीवराजीवरकोशमध्य-प्रबद्धलुब्धालिविमोचकौजाः ।
विश्वोपकारी करुणैकसिन्धुः, किमुद्गतो बालसरोजबन्धुः? ॥७१(७२)॥
इत्थं वितर्कावतरं कवीनां, प्राप्नोति यत्राऽतितरां विवस्वान् ।
तत्र प्रभाते सुकृतानुयाते, श्रीजित्प्रसादाद् बहुसातजाते ॥७२(७३)॥
विमुक्ततन्द्रैर्व्यवहारिचन्द्रैः, शास्त्रश्रुतिप्रेमरसातिसान्द्रैः ।
भोगोपभोगीकृतशालिभद्रै-रमुद्रमद्रैर्हृदयेषु भद्रैः ॥७३(७४)॥
लक्ष्मीकुलागारतया समुद्रैः, कराङ्गुलिभ्राजिहिरण्यमुद्रैः ।
महेभ्यसभ्यप्रवरप्रभायां, शुश्रूषुलोकोत्करसत्सभायाम् ॥७४(७५)॥
सञ्चारिणीभिः स्मरदैवतस्य, साक्षाद्दिवाऽऽरात्रिकदीपिकाभिः ।
कुम्भस्तनीभिर्हर्यणुकोदरीभिः, श्रिया रति-प्रीतिसहोदरीभिः ॥७५(७६)॥
लोलेक्षणाभिर्ललिताङ्गनत्या, सत्यापितस्वस्तिकमण्डनायाम् ।
पिकानुकारिस्वरशालिनीभिः, प्रणीतगीतप्रवरक्रियायाम् ॥७६(७७)॥

---

१. मणीमयोत्तेजन० पाठां. ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वाध्यायतः **पञ्चममङ्ग**मञ्चत्-प्रपञ्चटीकोपगतं क्षणेऽपि ।
तदेव सूत्रं परिवाच्यमानं[1]-ममानमानन्दपदप्रदायि ॥७७(७८)॥
विशुद्धसिद्धान्तवितर्कयुक्ति-प्रत्युक्तिकृत्कर्कशतर्कविद्या ।
हृद्याऽनवद्याऽद्भुतगद्यपद्या, पद्याऽच्छसाहित्यसुधैकनद्याः ॥७८(७९)॥
अधीतिबोधाचरणप्रचारै-रुपाधिभेदैः परिभाव्यमाना ।
नानार्थसम्पत्तिसमर्थनेन, विभाव्यते कामगवी प्रवीणैः ॥७९(८०)॥
छन्दांस्यलङ्कारविचारसार-शब्दानुशक्तिप्रमुखागमाश्च ।
विद्यार्थिसार्थेषु निवेद्यमाना, मानातिगज्ञानकृतो भवन्ति ॥८०(८१)॥
योगप्रयोगादिकसाधुसाध्य-क्रियाविशेषाः खलु तेऽप्यशेषाः ।
विधीयमाना भगवत्प्रसादाद्, भूता भवन्त्येव च निर्विवादाः ॥८१(८२)॥
सञ्जायमानेष्वथ धर्मकर्म-स्वेवं समग्रेषु समाजगाम ।
सांवत्सरं पर्व सुपर्वरत्न-कल्पं मनःकल्पितदानदक्षम् ॥८२(८३)॥
तत्राऽर्हदर्चार्चनधर्मचर्चा-प्रभावनाभिः श्रुतभावनाभिः ।
प्रभावितं सत्क्षणलक्षणीय-क्षणैरवाच्युत्तम**कल्पसूत्रम्** ॥८३(८४)॥
अष्टाहिकालक्षितपक्ष-मासो-पवासमुख्यैः प्रचुरैस्तपोभिः ।
प्रदीपितं **लम्भनिका**धिकाभि-र्विभूषितं **मोदकपारणा**भिः ॥८४(८५)॥
गर्ज्जद्घनध्यान-गजेन्द्रशोभा-ऽक्षोभाऽश्वभास्वत्प्रकरैः पुरोगैः ।
विचित्रवादित्रविशेषनादै-र्मृगेक्षणागीतनिबद्धवादैः ॥८५(८६)॥
परिस्फुरद्भूरिपताकिकाभि-र्विभ्राजिते भूमिनभोविभागे ।
चैत्यप्रपाटीरचनाऽतिचारु-चर्या चकास्ति स्म सुविस्मयाय ॥८६(८७)॥
इत्यादिकातुच्छमहोत्सवाच्छं, प्रवर्त्तत प्रास्तसमस्तविघ्नम् ।
प्रवर्त्तते चाऽनुदिनं सशर्म, सद्धर्मकर्माऽथ गुरुप्रसत्तेः ॥८७(८८)॥
अथ श्रीगुरुराजवर्णनम्-

सूरिर्दूरीकृताराति-र्भूरिपूरितकामिनः ।
ऊरीकृतोपदेशो यो हारहूरीभवद्गिरा (?) ॥८८(८९)॥
काव्यं यशो द्विषद्गर्वं, सर्वसूरिशिरोमणिः ।
चरीकर्त्ति बरीभर्त्ति, सञ्जरीहर्त्ति यः क्रमात् ॥८९(९०)॥

---

१. ०नं, सन्देहसन्दोह विषापनोदि - पाठां० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विश्वोपकारप्रवणस्य यस्य, सूरेर्विनिर्माणविधौ च्युता ये ।
क्लृप्ता विधात्रा परमाणुभिस्तैः, कल्पद्रु-चिन्तामणि-कामकुम्भाः ॥९०(९१)॥
विद्वेषिणां मूर्द्धनि वज्रतेजाः, शिरोमणिः सर्वगणाधिपानाम् ।
मुक्तामयाङ्गश्च बभस्ति योऽत्र, **श्रीरत्नसूरिः** किल रत्नमूर्त्तिः ॥९१(९२)॥
प्रपूरयन्निष्टमनिष्टहन्ता, सन्तापहृत् पुण्यफलोपपन्नः ।
सुस्कन्धबन्धः सुकृतैकमूलो, यत्पञ्चशाखः खलु कल्पशाखी ॥९२(९३)॥
वर्णस्तनोश्चम्पककम्पकारी, स्वरश्च येषाममृतानुहारी ।
हितोपदेशश्च जनोपकारी, भाग्योदयस्तीर्थकरानुसारी ॥९३(९४)॥
लावण्यलीलालहरीविहारि-सौभाग्यमुच्चैर्वचनातिचारि ।
रूपं च पञ्चेषुमदापहारि, परं मनस्तु प्रमदाविकारि ॥९४(९५)॥
पुष्पायुधं मामजयद् यदेष, भूयोऽपि योद्धुं तदनेन कामः ।
रोषादिवाऽऽसीद् विषमायुधोऽसौ, तथाऽप्यनङ्गो न जयी सदङ्गात् ॥९५(९६)॥
समस्तशास्त्रार्णवपारदृश्वा, मत्तोऽपि मत्तो मतिमानितीव ।
विभाव्य भूयोऽभ्यसनाय देवी, न पुस्तकं मुञ्चति हस्ततो गीः ॥९६(९७)॥
कुशाग्रबुद्धेरिति यस्य जाने, सरस्वतीयं सहजानुजाता ।
बृहस्पतिर्मङ्गलपाठको ज्ञः, कविः कलावांश्च गृहाम्बुदासाः ॥९७(९८)॥
यदाननाग्रे प्रतिवादिनोऽपि, न शब्दमात्रोच्चरणे समर्थाः ।
झरन्मदोग्रा अपि कुम्भिनः किं, पञ्चाननाग्रे प्रथयन्ति गर्जिम्? ॥९८(९९)॥
सर्वेषु शास्त्रेषु यदीयबुद्धिः, क्वचिन्न चस्खाल सुदुर्गमेषु ।
सान्द्रद्रुमद्रोणिवनेषु नूनं, तरङ्गभङ्गीव समीरणस्य ॥९९(१००)॥
यदी॰ मेधाविषयेऽखिलोऽपि, स्वान्यागमोऽमादिति नाऽत्र चित्रम् ।
यादोद्रिपूर्णोऽपि न किं प्रयातः, पीताम्बुराशेश्चुलुकत्वमब्धिः? ॥१००(१०१)॥
कुमारपालाभिधभूमिपालं, यथा प्रथावान् गुरु**हेमसूरिः** ।
प्राबोधयत् तद्वदिहा**ऽमरेशं, राणं** सुरत्राणमिव प्रभुर्यः ॥१०१(१०२)॥

अथवा-

कुमारपालप्रतिबोधकत्वात् श्री**हेमसूरि**र्न तथा जनेषु ।
यथा**ऽमरेश**प्रतिबोधनेन, **श्रीरत्नसूरि**र्हि चमत्करोति ॥
आबाल-गोपालमिति प्रसिद्धि-र्हेम्नोऽधिकं रत्नमतोऽस्ति सत्या ॥
॥१०२(१०३)॥ षट्पदी ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदीयवाक्यामृतपूरपाना-न्नरेश्वरोऽभूदमरेश्वरोऽयम् ।
तत्त्वावबोधाद् बहुसत्त्वरक्षाद्, दक्षः **प्रदेशीव सुकेशि**सङ्गात् ॥१०३(१०४)॥
न चन्दनस्यन्दिनि तत्समीरे, सुधासमुद्रस्य न चाऽपि तीरे ।
हिमद्युतौ नो हिमवालुकायां, यच्छैत्यमास्ते गिरि यस्य सूरेः ॥१०४(१०५)॥
मुग्धं न दुग्धं सितयाऽप्युपेतं, न माधुरी खण्डगताऽपि खण्डा ।
यद्वाग्विलासैस्तुलनामुपेतुं, द्राक्षाऽपि कक्षीकुरुते न पक्षम् ॥१०४(१०६)॥
सकर्णवर्ण्योग्रसुवर्णपुण्या-लङ्कारसारा सुरसार्थकाम्या ।
सद्वत्सतोषाश्रयमञ्जुघोषा, यदीय गीः कामदुघैव साक्षात् ॥१०६(१०७)॥
मन्यामहे यस्य गिरां तरङ्गै-र्जितान्तरङ्गाऽभवदभ्रगङ्गा ।
तस्मात् त्रपातोऽत्र पपात भूमौ, तदादि तस्याः खलु निम्नगात्वम् ॥१०७(१०८)॥
जानीमहे यद्वदनेन्दुमध्य-मध्यासिताऽऽकण्ठमवाप तृप्तिम् ।
पीयूषयूषैः श्रुतदेवता तद्-वचश्छलादुद्गिरणं तनोति ॥१०८(१०९)

तेजः-

महस्विनोऽपि प्रतिपक्षलक्षाः, प्राप्ता यदध्यक्षमलक्षभासः ।
स्युर्नाऽत्र चित्रं हि रवेः पुरः किं, खद्योतपोतद्युतिडम्बरोऽपि ॥१०९(११०)॥
बाढं समुत्तेजितवाग्विलासा, आसन् खलौघा खलु यस्य दासाः ।
दर्पोद्धुरा लोलकराः किराताः, किं चक्रिणः किङ्करतां न यान्ति? ॥११०(१११)॥
क्रुधैधमानं मुनिदुर्दुरूह-कूटं पटुश्रीर्निनिषेध रोषात् ।
यः सूरिशक्रोऽतिमदैरवन्ध्यं, वातापितापीव मुनिः सुविन्ध्यम् ॥१११(११२)॥

अथ यशः-

यस्य प्रभोर्भूरितरोदयस्य, सरिद्गिरिग्रावसमुद्रमुद्राम् ।
प्रयान्त्यतिक्रम्य यशांसि दूरं, तत्स्पर्द्धयैव प्रतिवादिनोऽपि ॥११२(११३)॥
आशाः समापूरयतः समेषां, यशोऽपि ताः पूरयति स्म यस्य ।
न तत्र चित्रं विबुधा यदाहुः, कार्ये गुणाः कारणतो भवन्ति ॥११३(११४)॥

अथ कीर्त्तिः-

रूपं च विद्या च यशो महश्च, चतुष्टयीयं शुभमङ्गलानाम् ।
यदीयकीर्त्तेर्दशदिग्जयार्थे, कृतोद्यमा याः पुरतश्चकास्ति ॥११४(११५)॥

---

१. '०भृतो मृषा न' - पाठां. ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जितेन्द्रियं संयमिनं सभासु, स्वैरं समाश्लिष्यति ते सुता श्रीः ।
इत्यौचिती सा किमु यस्य कीर्त्ति-र्ययावुपालब्धुमिवाऽब्धितीरम् ॥११५(११६)॥

गुणानुबद्धोन्नतवंशमेन-मासाद्य यं शीर्षधृतेन्दुकुम्भा ।
कीर्त्तिर्नटीव प्रकटीभविष्णु-र्मनोविनोदाय भवेन्न केषाम्? ॥११६(११७)॥

यथा यथा यस्य गुणाधिभर्तुः, कीर्त्तिर्धरित्रीं धवलीकरोति ।
तथा तथा शत्रुजनाननानि मालिन्यमायान्त्यतिचित्रमेतत् ॥११७(११८)॥

एषा क्षितिश्चन्दनजै रसौघै-रालिप्यते वा परिपूर्यते वा ।
क्षोदैः सुसूक्ष्मैः शुचिमौक्तिकानां, तथा प्रथावद् घनसारसारैः ॥११८(११९)॥

किं प्लाव्यते दुग्धपयोधिना वा? किं भूष्यते वा कुमुदैः सकुन्दैः? ।
यस्याऽच्छकीर्त्तिं जगति स्फुरन्तीं, समीक्ष्य दक्षा इति तर्कयन्ति ॥११९(१२०)॥
युग्मम् ॥

चैत्रीयचन्द्रातपजित्वरी यत्-कीर्त्तिर्भ्रमन्ती भुवनत्रयेऽपि ।
रात्रिंदिवं स्त्रीत्वसहोद्भवं यद्, भयं क्वचित् प्राप न चित्रमेतत् ॥१२०(१२१)॥

तैस्तातपादैर्गणशीतपादै-र्गतावसादैर्विजितोग्रवादैः ।
नतिस्त्रिसायं विगतप्रमादै-र्ममाऽवधार्या विहितप्रसादैः ॥१२१(१२२)॥

तथा-

सौजन्यसर्वस्वनिधिस्वभावा, भावावबोधानुगता गुरूणाम् ।
सुधामुधाकारिवचोविलासाः **श्रीदेवपूर्वा विजयाः** सुधीशाः ॥१२२(१२३)॥

श्रीजिन्नियोगाधिकृताभियोग-प्रयोगदक्षा अपि धर्मपक्षाः ।
श्रीजित्प्रसत्तिं प्रति लब्धकक्षाः, क्षमाः **क्षमाद्याविजयाः** सदक्षाः ॥१२३(१२४)॥

श्रीपूज्यपादाब्जरसैकलीन-पीनप्रमोदोदयिचित्तभृङ्गाः ।
गङ्गातरङ्गामलशीललीलाः **श्रीमेघपूर्वा विजया** बुधेन्द्राः ॥१२४(१२५)॥

गभीरिमग्रस्तसमुद्रमुद्राः, सद्धीरिमध्वस्तधराधराभाः ।
विद्वद्वरा **वीरमसागराह्वाः**, प्रह्वा गणाधीश्वरसेवनेषु ॥१२५(१२६)॥

वाक्चातुरीरञ्जितभूरिनागरा, गीतार्थपार्थाश्च **विनीतसागराः** ।
सुधाप्रपासन्निभसूरिराट्कृपा-रसप्रसङ्गाधिगतप्रसत्तयः ॥१२६(१२७)॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनन्यसौजन्यगुणाभिरामा, मोदप्रमोदामृतसागराभाः ।
श्रीजित्पदोपासनवासनाढ्या, **आमोदयुक्सागर**संज्ञिता ज्ञाः ॥१२७(१२८)॥
अमन्दरागा अपि मन्दरागा-नुसारिधैर्याः सुकृतैकधुर्याः ।
श्रीजिद्धुजिष्या **जयसुन्दरा**ख्या-स्तपस्विनो विज्ञपुरन्दराश्च ॥१२८(१२९)॥
श्रीजित्सपर्यैकलसत्समीहाः, **सीहा**भिधाना **विजयो**पपन्नाः ।
नियोगिवीथीतिलकोपमाना, नानार्थभाज**स्तिलका**भिधानाः ॥
प्रेमोपयुक्ता **विमला** द्विधाऽपि, क्रियाविधौ श्रीगुरुदुर्गपालाः ॥१२९(१३०)॥
॥ षट्पदी ॥

इत्यादयः श्रीगुरुराजराजत्-पदाम्बुजोपासनराजहंसाः ।
तेभ्यो मदीयाऽनुनतिर्नतिर्वा, प्रसादनीया क्रमतः समेभ्यः ॥१३०(१३१)॥
किञ्च – **इन्द्रविजया**ख्यविबुधाः, सुमेधसो मेध्यशीलसम्पन्नाः ।
लालविजयाभिधाना, ज्ञानाभ्यासप्रवणहृदयाः ॥१३१(१३२)॥
बुद्धिविशुद्धनिसर्गा बुधवर्या **ऋद्धिविजय**नामानः ।
विबुधाः **सुखविजया**ख्याः, सुधियः सुखदा विनयविधितः ॥१३२(१३३)॥
ज्ञानविजयाख्यगणयो, गणयोऽपि च **रूपविजय**नामानः ।
अतियतिमतिरतिगतयो, मुनयो **मतिविजय**सञ्ज्ञाश्च ॥१३३(१३४)॥
सुस्था ज्येष्ठस्थित्या-मित्याद्याः साधवोऽत्र गुरुचरणान् ।
उपवैणवं स्तुवन्तो, नमन्ति तत्प्रणतिरवधार्या ॥१३४(१३५)॥
अत्रत्यः सङ्घोऽपि च, भक्तिव्यक्तिप्रयुक्तसद्युक्त्या ।
नमतितरां नितरामिति, विज्ञप्तिं चाऽपि वितनोति ॥१३५(१३६)॥
धन्यः स एव दिवसः, समयोऽपि स एव रसमयो भविता ।
भवितारकगुरुराज-क्रमकमलस्पर्शनं यत्र ॥१३६(१३७)॥
पादावधारणा त-त्करुणावरुणालयैर्गणाधीशैः ।
फलवत्ता बलवत्ता-तिथित्वमानी सतामेषा[1] ॥१३७(१३८)॥
ऊनमनूनं नूनं, यल्लेखेऽलेखि मुग्धबुद्ध्या तत् ।
क्षन्तव्यमेव सर्वं, सहायतः सूरयः प्रोक्ताः ॥१३८(१३९)॥

१. विज्ञप्तिः इत्यर्थः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किञ्च -

कृतापराधोऽपि जनो निजोऽयं, कृपाकटाक्षैरवलोकनीयः ।
पाल्यो भवेद् वस्तुविदूषकोऽपि, न मूषकः किं गणनायकस्य ॥१३९(१४०)॥

॥ इति विज्ञप्तिरहस्यम् ॥

भृत्योचितहितकृत्य-प्रकाशि पत्रं प्रसादनीयं द्राक् ।
एषोऽनुचरश्चाऽऽर्हद्-ध्याने स्मृतिमात्रमानेयः ॥१४०(१४१)॥
सरसा सालङ्कारा, सुललितपदपद्धतिर्घना(न?)श्लेषा ।
श्रीजिष्णुसम्मतिसुखं, कलयतु विज्ञप्तिकमलाक्षी ॥१४१(१४२)॥

संवत १७६७ विजयदशम्यामिति श्रेयः ॥

इति श्रीगुरुविज्ञप्तिलेखः ॥ प्रथमादर्शोऽयं लिखितः पण्डित**लालविजय**गणिभिः श्री**उदयपुरे** ॥

—*—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(७)

श्रीधर्मविजयविरचितं

विज्ञप्तिपत्रम्

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

११ पत्रनी प्रस्तुत रचना विज्ञप्तिपत्र छे के लेखपद्धति – ए कहेवुं मुश्केल छे. शरुना ४ पत्रमां ८६ श्लोकप्रमाण मूळ कृति छे. पछी शेष पत्रोमां जिनस्तुति के जिनगुणवर्णन नामना ओछा-वत्ता श्लोकना ९ अधिकारो, नगरवर्णननो ३४ श्लोकनो १ अधिकार अने गुरुवर्णनना अनुक्रमे २६ अने १८ श्लोकना २ अधिकारो छे. पूर्वपत्रना ते ते अधिकारोने बदली उपरना अधिकारो जोडवाथी नवो पत्र तैयार थतो हशे? जो एम होय तो आ कृति लेखपद्धति गणाय ।

कृतिना अन्ते क्यांय कर्त्ता-रचनाकाळ वगेरेनी नोंध नथी. मूळ कृतिना ५२मा श्लोकमां 'धर्मविजय' ए नाम अने श्लोक ५०मां रचना स्थळ 'दीवबंदर' ए नोंध अगत्यनी छे. एज रीते पाछळना एक नगरवर्णनमां 'चारित्रविजय' अने 'नागपुर' ए नामनो उल्लेख छे. कदाच ए कर्त्ताना नामनो उल्लेख होय अने कदाच प्रतीक नामो पण होय.

प्रस्तुत कृति लेखनदोषने कारणे घणे स्थाने अशुद्ध छे. वळी अमने पण घणे स्थाने पाठ समजायो नथी. तेथी अमे कृतिने बरोबर उकेली शक्या नथी.

अमने आ कृतिनी हस्तप्रत श्रीकैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर-कोबामांथी प्राप्त थयेल छे. सहकार आपवा बदल ज्ञानमन्दिरना कार्यवाहकोनो खूब खूब आभार ।

* * *

॥ ॐ॥ श्रीजिनाय नमः ॥

स्वस्तिश्रीमानजस्रं तिमिरविदलनाद् वासवाद्वैतकारी,
दिग्नारीकण्ठहाराभवदनणुगुणः शुद्धमार्गानुसारी ।
पार्श्वः पुष्णातु नित्यं निजभजनकृतां सप्तविश्वाधिपत्या-
सूचानूचानभास्वद्भुजगपतिफणारत्नरश्मिप्रचारी ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिश्रीप्रणयप्रकर्षविनमद्वन्दारुवास्तोष्पतिः(ति)-
श्रेणीना(नां) मुकुटाः स्वकोटिविलसद्वैडूर्यरत्नत्विषाम् ।
व्याजाद् यस्य पदाभिषेकमुदकैः श्रेयोर्थिनः कुर्वते,
स श्रेयांसि यशांसि यच्छतुतमां श्रीपार्श्वतीर्थेश्वरः ॥२॥
स्वस्तिश्रीशतपत्रपत्रनयनासम्भोगलीलाविधिः,
श्रीपार्श्वप्रभुरस्तु कौशलसुधासिन्धौ सुधादीधितिः ।
यस्याऽद्याप्यखिलेषु नाकिषु जगज्जङ्घालमुज्जृम्भते,
विश्वोद्योतिशय(यश)स्सुधाकरसमा सिद्धापगा पाण्डुरम् ॥३॥
स्वस्तिश्रीललनाविलासविलसत्पङ्केरुहस्येशितु-
दृ(र्दृ)ष्ट्वा यस्य वितर्कयन्ति विबुधाश्चित्तान्तरेवं स्फटान् ।
श्रेयोऽर्थं शिरसि स्फुटं विनिहिता एते सुदूर्वाङ्कुरा-
स्त्रैलोक्यप्रभुणा महोदयपुरीप्रस्थातुकामेन किम् ॥४॥
स्वस्तिश्रियः केलिनिकेतनस्य, स्फूर्जत्फणौघाः फलकन्ति यस्य ।
रत्नप्रभाद्यन्धुमुखानि भव्य-नृणां पिधातुं सुविसङ्कटानि ॥५॥
बभार यः स्फारफटाच्छलेन, दीर्घाग्रहान् नूनमनन्तवीर्यः ।
न्यस्तुं जगद्वेश्मशिरस्सु सप्त-भीध्वंसनोद्भूतयशःपताकाः ॥६॥
मान्यः सदापीह सदोपकारी, सतामिति ज्ञापयितुं ध्रुवं यः ।
वहत्यहीशं शिरसा सहिष्णुं, स्वनिर्मितायाः कमठव्यथायाः ॥७॥
क्षमाभरोद्धृत्युपकारभूत-प्रभूतपुण्यप्रचयातिरेकात् ।
यन्मूर्ध्नि लेभे भुजगाधिनाथः, पदं द्विजिह्वस्य कुतोऽन्यथा तत् ॥८॥
अप्रत्नरत्नद्युतिदीप्यमाना-श्चकासते सप्त फणा यदीयाः ।
अन्तःस्थसद्ध्यानपवित्रसप्ता-र्चिषः शिखाः सप्त बहिर्गताः किम् ॥९॥
बभूव भोगी भुजगोऽङ्गभाजां, भूयिष्ठभीतिप्रददर्शनोऽपि ।
विधाय सेवां सफलां यदीया-मनारतं हारिफणामिषेण ॥१०॥
दैत्याधमोन्मुक्तकरालधारा-धराम्बुपातैः प्रशशात् स (प्रशशाम) युक्तम् ।
कोपानलश्चित्रमिदं तु यस्य, ध्यानानलः प्रत्युत वर्धते स्म ॥११॥
नाम्नाऽपि येन समवाञ्छितदायकेना-ऽनभ्यर्थितेन विधुरीकृतकल्पशाखी ।
अभ्यर्थितैहिकफलप्रददर्शनः किं, झम्पां प्रदातुमचलं त्रपया रुरोह ॥१२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कषायदण्डात्मकसप्ततालकै-र्नियन्त्रितायाः शिवपूःप्रतोल्याः ।
प्रोद्घाटने यस्य फणाकलापः, श्रियं दधाति स्फुटकुञ्चिकानाम् ॥१३॥
यः सप्तविश्वाङ्गिसमूहपुण्य-क्षेत्रेषु सप्तस्वपि बोधिबीजम् ।
उ(व)प्तुं बिभर्ति स्म फणोपधेः किं, हलानि यो दुष्कृतकर्त्तकोऽस्मिन्(?)॥१४॥
यस्य स्फटा भाति शिरःप्रदेशे, साटोपनो(तो?)ऽमी किमु दीर्घपृष्टाः? ।
अन्तस्थितात्यद्भुततत्त्वसप्त-पीयूषकुण्डावनबद्धकक्षाः ॥१५॥
कल्याणामृतशेवधि(धे)र्भगवतो यस्य क्षणालोकतः;
प्राप्तप्रौढतरप्रसादगुणतो व्यालोऽपि देवेन्द्रताम् ।
लेभे विघ्नतमोवितानतरणिः सम्पल्लतावारिदः,
श्रीवामेयजिनाधिपोऽस्तु भविनां श्रेयस्करस्तीर्थकृत् ॥१६॥
प्रोद्दामः(म)प्रशमं सुरासुरनरैः संसेवितं निर्मलं,
श्रीमत्पार्श्वजिनं - - यतिपतिं कल्याणवल्लीघनम् ।
तीर्थेशं सुरराजवन्दितपदं लोकत्रयीपावनं,
वन्देऽहं गुणसागरं सुखकरं विश्वैकचिन्तामणिम् ॥१७॥
भास्वद्देवविनिर्मिते वरतरे सिंहासने संश्रितं,
चञ्चच्चामरवीज्यमानमनिशं छत्रत्रयीराजितम् ।
रूप्यस्वर्णमणिप्रभासितवरैः वप्रत्रयीभूषितं;
वन्देऽहं **जिनपार्श्व**देवविमलं भानूयमानोदयम् ॥१८॥
प्रणम्य श्रीजिनराजपार्श्वं, व्यापल्लतोन्मूलननव्यपार्श्वम् ।
सदा भुजङ्गाधिपसेव्यपार्श्वं, भव्याङ्गभृत्कामदयक्षपार्श्वम् ॥१९॥

॥ इति जिनस्तुतिः ॥

अथ नगरवर्णनम् –

सङ्कीर्णमन्तः पुरुषोत्तमैः सः(स)-श्रीकैरनेकैश्च सतीसमूहैः ।
दृग्गोचरीकृत्य यदद्भुतं किं, स्वप्नेऽपि सन्तः स्पृहयन्ति नाकम्? ॥२०॥
यस्यां समां वीक्ष्य समृद्धिमुच्चै-र्मेदस्वि-मन्दाक्षविषि(ष)ण्णचेताः ।
निवासमाधाय मनुष्यजाते-रदृश्यदेशे सुरपूः स्थितेव ॥२१॥
कुबेरलोकैः कलिताऽलका किं, कदाऽपि साम्यं समुपैति यस्य ।
श्रीनन्दनोद्यत्तनुसुन्दरत्वं, विराजि भूयो जनतान्वितस्य ॥२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदीयविस्फारिविहारिवारै-स्तिरस्कृतौन्नत्यमनोहरश्रीः ।
क्षु(क्ष)रत्तुषारद्रवकैतवेन, प्रालेयभूभृत् किमु रौति खिन्नः? ॥२३॥
शिरःप्रदेशस्थसुवर्णकुम्भ-भ्राजिष्णवः सद्गतयोऽपि तुङ्गाः ।
गलन्मदश्रेण्यभिवादनीया, यस्मिन् विहाराः सुरवारणन्ति ॥२४॥
शंशन्ति यस्मिन् जिनमन्दिराल्यो, मूर्द्धाभिषिक्ता त्विह हेमकुम्भाः ।
यथा नरेन्द्रस्य शिरोपरिस्था, विभाति कोटीरधृतच्छलेन ॥२५॥
प्रासादवृन्दैरवदातदीप्तिभि-र्मित्रं स्वकीयं मिलितुं सितत्विष[म्] ।
प्रेङ्खत्पताकापटपल्लवच्छला-दूर्ध्वीकृताः किं निजबाहुदण्डाः? ॥२६॥
निष्पादितानेकसिताम्बरश्री-र्जिनाधिराजः स्वप(?म?)तिप्रभावात् ।
स्वरोचिषोच्चामलिनाम्बरं सितां-वरं विहारा अपि यत्र कुर्वते ॥२७॥
यत्रोच्चभावस्थितिशालिनि श्री-गुरौ वरे सूरिषु दोषमुक्ते ।
कदाऽपि नो कुग्रहदृष्टिदोषा, मर्माविधो भव्यजनान् व्यथन्ते ॥२८॥
यस्मिन् जनानां हृदयान्तराले, कलिद्विषां कालकलिर्भयेन ।
दानादि सर्वस्वमिव स्वकीय-मादाय धर्मो नितरां निलीनः ॥२९॥
महेश्वरान् यत्र निभाल्य भूरीन्, गौर्यश्च सत्यश्च कुरङ्गनेत्राः ।
किं दम्पती व्यत्यत(य?)भीतितः स्थितौ, सम्पृक्तरूपौ गिरिजा-गिरीशौ?॥३०॥
बहुश(श)स्तनयेन मोदिताः, वरराजाननदीनतान्विताः ।
कमलाजनकाः सतेजसो, नीरेशा इव यत्र नागराः ॥३१॥
निस्सीमसौन्दर्यरमातिरेकं, यत्सुन्दरीणां नितरां निरीक्ष्य ।
झम्पां ददौ वारिनिधौ सुराणां, सरोजनेत्राः किमिव त्रपातः? ॥३२॥
गृहे गृहे यत्र विभाति(न्ति?) सुव्रताः, सुवासिनीसन्ततयश्च गोगणाः ।
गोपप्रमोदातिशयं ददाना-स्तन्याऽतिपीनस्तनभारनम्राः ॥३३॥
विमानवद् यत्र विभाति काम-मुपाश्रयः श्रीगुरुपादपूतः ।
समुद्भवद्भूरिसुपर्वशोभा(भः), सदा सुधर्मास्पदमुन्नतश्च ॥३४॥
सञ्जायमानमहनीयसुपर्ववृन्दं, सन्नन्दनं विबुधपुङ्गवसेव्यमानम् ।
दुःप्रापमल्पसुकृतेन नृभिः सुचन्द्रो-दयादिना---[विमल?]मौक्तिकजालयुक्तैः ॥३५॥
व्याख्यानशाला प्रवरा विशाला, स्तम्भावली तत्र विराजते च ।
चातुर्यसङ्घेन सुसेविता याः(या), पवित्रिता सा गणराजमुख्यैः ॥३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भयान्विता अप्यभया सदामा-श्लिष्टा अपि ध्वस्तसमामयाश्च ।
सुशीलभावाश्च सदानशीला, भावाभिरामा सदुपासकौघाः ॥३७॥
श्रद्धावान्(वत्?) पुरुषोत्तमा भुवि वराः पुण्याकराः पावनाः,
शुद्धाचारविचारसारमतयः सिद्धान्तशास्त्रे रताः ।
साधूनां सुखकारका[:] श्रुतिपरा[:] श्रीदोपमास्सर्वदा,
राजन्ते रविमण्डलाभवपुषो द्रव्येश्वराः कोविदाः ॥३८॥
अकिञ्चनत्वं शमिनां समूहे, सव्याजता [भ]क्तिभरप्रयोगे ।
पानीयपूरेऽपि च नीचमार्ग-मुपायिता यत्र तु नैव लोके ॥३९॥
तत्राऽस्ति व्रतिपुङ्गवो गणपतिः शक्रेन्द्रदेवोपमः;
वैयावृत्त्यविधायका मुनिवरास्ते सन्ति सामानिकाः ।
धर्मध्यानरतास्सदा सुखकराः श्रद्धालवो देवताः,
सर्वज्ञोदितकारिका व्रतपराः(रा) देवाङ्गनाः श्राविकाः ॥४०॥
विश्वत्रयाख्यातवराभिधाने, मनुष्यसम्पूर्णरमाभिधाने ।
श्रीतातपादाम्बुजसन्निधाने श्रीराज(जि)ते तत्र पुरे प्रधाने ॥४१॥

अथाऽत्र नगरवर्णनम् –

अनपरधनदां वदान्यमान्य-स्थितिशुचिवैश्रमणै[:] श्रितस्य नैकैः ।
कथमिव न पुरो वदन्ति यस्य, स्फुटमलकामलकायमानलक्ष्मीम् ॥४२॥
सुरपतिनगरी विमानलक्ष्म्या, भुजगपुरी सुभगैश्च भोगिवृन्दैः ।
स्फुटमिह नरलोकसारसीमा, त्रिभुवनसारमयं ततो यदस्ति ॥४३॥
जलधिरमितशङ्खसु(शु)क्तिरत्नै-र्गिरिरिव सारतराभिरौषधीभिः ।
वनमिव कुसुमोत्करैः स्फुरद्भि-र्भुवनमिवेहितसर्वलाभतो यत् ॥४४॥
न भुजगपुरी नगरी गरीयसीयं, न खलु तथाऽस्ति पुरं पुरन्दरस्य ।
नवनवविभवैर्यथा प्रथाव-द्यदिह विलासमयं स्वयं चकास्ति ॥४५॥
प्रियगृहपदवी दवीयसीव, स्तनजघनोद्धृतभारमन्थराणाम् ।
भवति च मणिकुट्टिमेषु यस्मिन्, मृदुचरणन्यसनैर्मृगेक्षणानाम् ॥४६॥
किं नुप(पू)रं? किमुत सारसनं वरेण्यं?, किं मौलिरत्नमुत कुण्डलमण्डलं वा? ।
किं दाम मौक्तिकमुत? क्षितिचञ्चलाक्ष्याः संवीक्ष(क्ष्य) वप्रमिति यत्र
वितर्कयन्ति ॥४७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विलसति परिखापरिस्कृतं यत्, [स-]परिवेषमिवाऽमृतांशुबिम्बम् ।
मरकतमणिवेश्मरूपलक्ष्म-स्फुरत(द्)मणी(णि)गृहदीध(धि)तिप्रसारम्(?) ॥४८॥

विशेषनगरे वर्णनमेतत् । सामान्य(त)स्त्वेवम्-

यत्राऽऽस्तिकाः श्रीगुरुभक्तिरागै-र्मात्रातिगै रञ्जितचित्तवस्त्राः ।
धान्यैर्धनैश्चाऽतितरां समृद्धाः, बुद्धाः सुशीलाः सततं वदान्याः ॥४९॥
श्रीतातपाददर्शन-मनोरथापूरिताङ्गिगणचङ्गात् ।
श्रीद्वीपपुरद्रङ्गात्, तस्मादहितैरकृतभङ्गात् ॥५०॥
भूरिभक्तिभराक्रान्तं, स्वान्तः कान्तप्रमोदभाक् ।
प्रेमोद्रेकोद्भवद्रोम-विकाराङ्कूरभृत्तनुः ॥५१॥
अकण्ठोत्कण्ठया भूमि-पीठसण्टङ्किमस्तकः ।
विनयावनम्रसर्वाङ्ग[:], सुभगंभावुकाशयः ॥५२॥
शिष्याश्रवाणुदेशीय-**धर्मादिविजयः** शिशुः ।
निवेदयति विज्ञप्तिं, कार्यमत्र यथा पुनः ॥५३॥
प्रीणाति(प्रीणन्ति) प्रमदाद् यत्र, जाते मित्रोदये ध्रुवम् ।
द्विरेफद्विजसङ्घातं, सरोजानि स्त्रवद्रसैः ॥५४॥
तत्र प्रभाते प्रध्वस्त-समस्ततिमिरेंऽशुना ।
सदसि स्फारनैपथ्य-श्राद्ध-श्राद्धीजनाश्रिते ॥५५॥
श्रीमच्छान्तरसाधीश-राजधानीसधर्मणः ।
भगवत्यङ्गसूत्रस्य, व्याख्यानादिककर्मणि ॥५६॥
जायमाने च सञ्जाते, परिपाट्या गतं तथा ।
श्रीमद् वार्षिकपर्वाऽपि, पर्वकृत्यं यथाविधि ॥५७॥
भावनाभिः पावनाभि-स्तथाऽभूवन् प्रभावनाः ।
निधयोऽप्यौत्सुकायन्त, यथा भवितुमर्थिसात् ॥५८॥
साधर्मिकाणां सत्तोषात्, पुष्णाति स्म जनो यशः ।
कुर्वाणो भगवत्पूजां, फलतः स्वमपूपुजत् ॥५९॥
तप्यते स्म तपश्चित्रं, विचित्रं यत् तपस्विभिः ।
दह्यते कर्मभिस्तेन, चातुरीयमलौकिकी ॥६०॥
अभवद् विघ्नसङ्घात-वियुतं संयुतं महैः ।
श्रीतातनामनिस्तुल्य-मन्त्रस्मृत्यनुभावतः ॥६१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ श्रीगुरुराजदृग्वर्णनम् –

सरस्वती चेद् विदधाति वासं, मदीयवक्त्रे धिषणां गुरुश्चेत् ।
ददाति काव्यश्च कवित्वशक्तिं, तथाऽपि न स्तोतुमलं दृशौ ते ॥६२॥
प्रपेदिवांसौ शरणीयमीशं, सारङ्गपोतौ सततं भवन्तम् ।
चक्षुर्मिषाल्लुब्धकभीतभीतौ, नभोऽङ्गणे नूनमिलातले च ॥६३॥
ध्वनिर्मृगाणामपि मोदकस्ते, संस्तूयते तैर्ननु युक्तमेतत् ।
दृक्कृष्णसारौ कथमन्यथा ते, सदाऽपि सेवां कुरुतः शमीन्दो! ॥६४॥
जगत्त्रयाभ्यर्च्य! तवाऽक्षियुग्म-द्वयेन सान्द्रं विरचय्य मैत्रीम् ।
राज्ञः प्रसादः कुमुदां समूहैः, सम्प्राप्यते किं जडजैरपीह? ॥६५॥
विनीलराजीव-चकोर-कैरव-श्रियं समादाय विनिर्मितं तव ।
जाने विधात्रा नयनद्वयं दिने, निःश्रीकते(तै)षां किमिवेक्ष्यतेऽन्यथा? ॥६६॥
कृत्वेव नेत्रद्वितयेन साकं, स्पर्द्धा(र्द्धां) शुभं(भां?) ते महनीयमूर्ते! ।
चिन्वन्ति दीप्ताग्निकणा(णां)श्चकोरा, जिहासवोऽसून् ननु तापभाजः ॥६७॥
जगत्त्रयीमङ्गलहेतुतावके-क्षणद्वयेनाऽऽप्तसमानभावतः ।
बिसारयुग्मं शुचि मङ्गलाष्टके-ऽन्तःपात्यभूत् सौच(व)कुलाश्यपीह किम्? ॥६८॥
शुभेतरार्थप्रथनप्रवीणा, त्वदृ(द्दृ?)ष्टिरेखा श्रुतिपारमाप्ता ।
मन्ये मुनीशान्तरदृष्ट्यसूया-वशेन नैर्मल्यवती च जज्ञे ॥६९॥
नाऽम्भोभरैर्नाऽपि च चन्दनद्रवै-र्न पार्वणेन्दोः किरणैः समीरणैः ।
यः शाम्यते पातकतापविप्लवः, त्वत्सौम्यदृष्ट्या ननु भक्तभूस्पृशाम् ॥७०॥
कूर्मीदृगौपम्यजुषौ(षो)स्त्वदक्ष्णोः, प्रसादपीयूषरसानुविद्धैः ।
या वीक्षणे मे भवतीह तुष्टि-र्निधानलाभेऽपि हि सा कुतस्त्या ॥७१॥
जडाश्रयादर्णवतः प्रसूते-रुक्तिर्वृथैव ध्रुवमिन्दिरायाः ।
त्वत्सौम्यदृष्टिप्रभवा तु साऽत्र, परैः सहस्रैरनुभूयते ज्ञैः ॥७२॥
त्वल्लोचनस्फूर्तिमतीव रम्यां, मुहुर्मुहुः श्रीमुनिराज! द्रष्टुम् ।
शतानि नूनं नयनाम्बुजानां, दध्रे दशेन्द्रः सततस्मितानाम् ॥७३॥
सः श्लाघनीयः समय स एव, सुवासरः सोऽवसरो वरीयान् ।
यस्मिन् भविष्यत्यनगारराट्! ते, प्रसन्नदृग्दर्शनजं सुखं मे ॥७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुरुः कल्पवृक्षो गुरुः कामधेनुः, गुरु कामकुम्भो गुरुर्देवरत्नम् ।
गुरुश्चित्रवल्ली गुरुः कल्पवल्ली, गुरुर्दक्षिणावर्तशङ्खः पुनर्यः ॥७५॥
गुरुर्यो निशेशो गुरुर्यो महेशो, गुरुर्यः सुराद्रिः गुरुर्यो हिमाद्रिः ।
गुरुश्चक्रपाणिर्गुरुर्वज्रपाणिः, गुरुः पुष्करावर्तधाराधा(ध)रो यः ॥७७॥
गुरुः क्षीरसिन्धुर्गुरुः सिद्धसिन्धुः, गुरु(ः) पद्मबन्धुर्गुरुर्वेदगर्भः ।
गुरुर्वेश्मरत्नं गुरुर्गन्धहस्ती, गुरुः केशरी यो गुरुस्सार्वभौमः ॥७८॥
तुभ्यं नमः सकलजन्तुसुरक्षकाय, तुभ्यं नमः सुखदकल्पमहीरुहाय ।
तुभ्यं नमः शिवदधर्मसुसञ्चिताय, तुभ्यं नभः प्रवरपण्डितपूजिताय ॥७९॥
तुभ्यं नमो मुनिपमण्डलमण्डनाय, तुभ्यं नमो वरवपुर्धु(र्धर!)शर्मदाय ।
तुभ्यं नमो विशदशास्त्रविधायकाय, तुभ्यं नमो नयविदे गणनायकाय ॥८०॥
मिथ्यानिशाटे रवितुल्यतापो, धैर्येषु मेरूपमगौतमाभः ।
शीलेन जम्बू(म्बुः) सुखदः सुरागः, पाथोधिगाम्भीर्यगुणैर्गणेशः ॥८१॥
भ्रान्त्यारेकादुरितविमुक्तः, चातुर्यज्ञो वरमतियुक्तः ।
श्रीमति(मान्) साधु[ः] सुमतिसमुद्रः, सारङ्गास्यः शुभतरमुद्रः ॥८२॥
साधुभवृन्दे चन्द्रसमानो, गर्जितनादस्तर्जितमानो(नः) ।
दुःखदवाग्नौ शीतलपाथा(थो), यच्छतु सौख्यं मे गणनाथः ॥८३॥
इत्याद्यनेककोविद-परम्परावर्ण्यजाग्रदवातैः ।
स्फूर्जद्यशोऽवदातैः, श्रीतातैर्विहितजनसातैः ॥८४॥
स्वशरीरसारपरिकर-निरामयत्वाद्युदन्तसंयुक्तम् ।
तुष्ट्यै प्रसादनीयं, प्रसादपत्रं प्रसद्य शिशोः ॥८५॥
किञ्च श्रीप्रभुपादै-र्विहितानेकप्रवादिदुर्वादैः ।
नतिरवधार्या स्वशिशोः, सानुप्रणतिः प्रसाद्या च ॥८६॥

॥ इति श्रीलेखविधिः ॥

स्वस्तिश्रीप्रमदा विनम्रदिविषद्वृन्दैः पदाब्जस्थिता,
प्रल्हादादभिषिच्यते स्म नितमां प्रोद्यत्किरीटैर्घटैः ।
निर्यद्रत्नमयूखमञ्जरिजलभ्राजिष्णुभिः किं जगद्-
भर्त्तुर्यस्य पदोन(नं)खांशुकुसुमश्रेणीमनोहारिभिः ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिश्रीमुकुरस्थलान्यनुदिनं यत्पादकामाङ्कुशान्,
नम्रानेक नरा-ऽमरा-ऽसुरवराः प्रोत्तेजयन्ति ध्रुवम् ।
भूयिष्ठैर्मुकुटोपटङ्किविलसन्माणिक्यशाणोपलै-
र्मालिन्यभ्रममालिनः प्रसृमरैर्मौलीन्द्रनीलांशुभिः ॥२॥
स्वस्त्यब्धिजा यद्वदनारविन्द-सरस्वतीमन्दिरमाप्य मोदम् ।
दधावसाधारणमात्मशत्रु-स्थानोपलब्ध्येव सदालिसेव्यम् ॥३॥
स्वस्त्यब्धिजा यमधिपं भजति स्म मोदान्-नम्राऽमरा-ऽसुर-नरावलिसेव्यमानम् ।
बद्ध्वा(ह्वाः)दरं निजसुतस्य जनार्त्तिदस्य, प्रध्वंसने किमुत सान्त्वयितुं स्मरस्य ॥४॥
स्वस्त्यब्धिजा सौवपतिभ्रमाद् यं, शिश्राय सच्चक्रविराजमानम् ।
तथा जगन्नाथमदिष्टकूट-विघट्टकं व्यूढबहुक्षमाभरम् ॥५॥
विनिर्मिमाणः परपङ्कजा तेऽरतिं वलक्षोभयपक्षशाली ।
सन्मानसे स्वं रचयन्निवासं, यो हंसवद् भाति युतो मराल्या ॥६॥
समीरणे गन्धगुणस्य सत्ता-मसाधयत् स्वश्वसितानिलेन यः ।
घ्राणेन्द्रियाध्यक्षसुमाद्युपाधि-व्यपेतसौगन्ध्यभृता जगन्नृणाम् ॥७॥
प्रोद्भूतसान्द्रतरपापभरं स्मरा(रः?)स्त्री-भूयःप्रभूतभवभृत्परिपीडनेन ।
मन्ये निवेदयितुमाश्रितवान् मुनीशं, किङ्केल्लिवेषविगलद्वृजिनं जिनं यम् ॥८॥
यद्देशनावनितले त्रिदशैर्विकीर्ण-श्चञ्चत्प्रसूननिकरः परितो व्यराजत् ।
श्रीमज्जिनाननविधोर्विलसत्सदस्या-ऽऽनन्दोदधेः किमुदितोज्ज्वलमौक्तिकाली ॥९॥
आकण्ठपीतनवयद्वचनामृतेन, तृप्तं निकाम[म]भरप्रकरं निरीक्ष्य ।
जानन् सुधां करभवैर्ननु भारकल्पां, चन्द्रः क्षितौ क्षिपति तस्य करे धृतां स्वाम् ॥१०॥
यस्य प्रभोरुभयतः शरदभ्रशुभ्र-भ्राजिष्णुभाभरधरौ वररोमप(षि)च्छौ ।
सद्दण्डमण्डलत_पतियुग्मपिण्डी-भूतांशुपल्लवचयाविह रेजतुः किम् ॥११॥
शश्वत्त्रिकालविदुपासनसादराणां, स्वःसद्मनां सुरगिरिः स्वनिवासभाजाम् ।
आगाद् विधातुमिह शुद्धमिभारिपीठे, यस्मिन् विभौ स्थितवतीति वितर्कयन्ते ॥१२॥
अण्वादिसूक्ष्मतमभावविकाशनेऽपि, सर्वज्ञा(ज्ञ)राट्! घटय मां यदुशक्तियुक्तम् ।
विज्ञप्तुमित्युपगतस्तमसामराति-र्भामण्डलस्थ(च्छ)लधरः किल यत्समीपम् ॥१३॥
दिव्यध्वनिर्दैवतदुन्दुभिर्यत्-पुरस्तथा व्योमनि दंध्वनीति ।
यथा स्थिरीभावमुपैति शब्दा-द्वैतप्रवादिप्रकरप्रतिज्ञा ॥१४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यस्याऽनुमौलिविलसद्रविजालभाञ्जि, प्रोद्भ्रान्त्यतीवविशदातपवारणानि ।
किं ज्ञान-दर्शन-चरित्रहरिप्रियाणां, केल्यम्बुजानि तिलकान्युत चन्दनानि ॥१५॥
यस्येशितुः श्वसितनित्यगतिः प्रकामं, सौगन्ध्यबन्धुरतरः सततं विभाति ।
वक्त्रान्तरस्थरदनाङ्कुरकुञ्जराजी-रोचिष्णुभूरितरसौरभसन्निधेः किम्? ॥१६॥
देहः श्रीजिनभास्वतो निरुपमः कान्त्याऽपि सौरभ्यतः,
स्वेदेनाऽपि मलेन वर्जिततया धत्ते श्रियं काञ्चनीम् ।
स्वर्णं तेन कषोपलेन नितरां संघृष्यते वह्निषु,
स्वात्मानं च जुहोति लज्जितमिव ब्रूते कदाचिन्न वा ॥१७॥
तं श्रीमन्तममेयगेयमहिमामुक्तौघमुक्ताकरं,
नृणां कामितपूरणे सुरमणिं मर्त्यौघभद्रङ्करम् ।
श्रीमद्**योधपुराव**नीसुनयनीसद्भालभूप्राकरं,
नत्वा श्रीधरणेन्द्रसेवितपद**श्रीपार्श्व**तीर्थङ्करम् ॥१८॥

॥ इति श्रीसाधारणजिनद्वादशगुणवर्णनम् ॥१॥

अथ तदेव देवजिन(जिनदेव)गुणस्तुति[:] पाठान्तरे लिख्यते-

स्वस्तिश्रीसदनं विनम्रदिविषत्कोटीरकोटीघट-
ज्योत्स्नाम्बुस्नपितोल्लसत्पदपयोजन्मद्वयश्रीर्जिनः ।
निर्जित्य त्रिजगत्समक्षमसुमदुःखाकरं यः स्मरं,
द्वैष्यं लक्ष्मिषाद् बिभर्त्ति मकरं केतुं तदीय(यं) ध्रुवम् ॥१॥
जगत्प्रतीक्ष(क्ष्य)स्त्वमहं तु पामरी-पादाभिघाताधिसहः किमेयम्? ।
अशोकभावे सदृशेऽपि चाऽऽवयो-र्यमित्युपेतो गदितुं त्वशोकः ॥२॥
यद्देशनासद्मनि सूनवारैः(रः), सुरैर्विकीर्णः परितो व्यराजत् ।
श्रीमज्जिनेन्दोर्विलसत्सदस्या-नन्दाम्बुधेरुद्गतमौक्तिकाः किम्? ॥३॥
सुधातिरस्कारगिरा यदीयया, तापापनोदे विहिते जगन्नृणाम् ।
तापः पदं किं क्वचिदप्यनाप्नुवन्, पपात वार्द्धौ वडवानलच्छलात् ॥४॥
यत्पार्श्वयोर्वैबुधवीज्यमाना, विभाति वालव्यजनावली सिता ।
पलायमानस्य विधुन्तुदाद् विधोः, स्रस्तांशुकानां ननु धोरणीव ॥५॥
ददद् बुधानाममृतं सिताभ्र-भ्राजद्वपुःश्रीरजनिप्रियश्च ।
योऽभान्मृगेन्द्रासनसंनिविष्टः सुमेरुसानाविव पूर्णिमेन्दुः ॥६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मितार्थदर्शी मितितीतवस्तु-प्रकाशिनः श्रीजगदीश्वरस्य ।
पृष्टेऽविशद् यस्य सहस्ररश्मि-स्त्रपातिरेकादिव भाभरच्छलात् ॥७॥
यस्याऽभिरामं सुरदुन्दुभिर्ध्वनन्, पुनः प्रभोम(र्म)ङ्गलपाठकायते ।
भूयिष्ठमोहप्रबलप्रमीला-विलुप्तचैतन्यनृणां प्रबोधने ॥८॥
समागतानां जगदीशरूप-प्रेक्षाकृते त्रैधजगद्गमाणाम् ।
विभान्ति नूनं तिलकानि चान्दना-नीवाऽऽतपत्राणि यदीय मौले(लौ) ॥९॥
यस्य त्रिलोक्यप्रतिरूपरूपा-भ्यसूयिनं चेतसि चिन्तयित्वा ।
किमङ्गजं भूरि रुषा भवानी-पतिः स्वभालानलगोचरं व्यधात् ॥१०॥
हृदाननाम्भोरुह-दन्तकुन्द-प्रसूनसौरभ्यभराभिसङ्गात् ।
सौगन्ध्यसारः श्वसितानिलः किं, संसक्तमाभाततरां यदीयः ॥११॥
अन्तःस्फुरत्सर्वगसारशुक्ल-ध्यानप्रसारिप्रभयेव नित्यम् ।
गोक्षीरवत् पाण्डुरमामिषं तथा रक्तं यदीयं किमु भाति देहे ॥१२॥
आहार-नीहारविधिर्यदीया, पश्यन्ति नो कर्ह्यपि चर्मचक्षुषः ।
चित्रं महद् वा तनुदुष्टगन्धा-दिकस्वकार्याजनकत्वतो ह्रिया ॥१३॥
वप्रैस्त्रिभिर्मणि-सुवर्ण-सुरूप्यजातैः, श्रीमान् विभाति नितमां शरणागतैर्यः ।
भीतैर्भृशं शिखरिपक्षभिदः सुरेन्द्रात्, किं रोहणार्जुनगिरि(रि)स्फटिकावनीध्रैः ॥१४॥
यस्येश्वरस्य परमाप्रतिरूपपुण्य-प्राग्भाररञ्जितमनाः क्षितिकामिनी किम्? ।
सन्दर्शयत्यनुपदं नवकं निधीनां, सौवर्णवर्णकमलच्छलतो विहारे ॥१५॥
यः पापनभ्राड्हृतिदैत्यदेवः, स्मरस्मयध्वंसनवामदेवः ।
नमन्मनुष्यामरपूर्वदेवः, कैवल्यमाक्रीडनवामदेवः ॥१६॥
निरस्तरोषादिकदुर्विकारः, विनिर्मिताशेषजनोपकारः ।
प्रणीतनिर्बाधनयः(य)प्रकारः, स्वधीरतामेरुकृतानुकारः ॥१७॥ युग्मम् ॥
निःस्सीमसौन्दर्यमहो! यदीया-ना(न)नारविन्दस्य विभाति निस्तुलम् ।
यन्मोहिते यत्र (तत्र) मिथो विरोधा-न्विते स्थिते श्रीश्रुतदेवतेऽपि ॥१८॥
यद्वागप्रतिस्पर्द्धिनमम्बुजन्मा-सनः समन्तुं समवेत्य रज्जुभिः ।
किं चन्दनद्रुं भुजगैर्नियम्य, क्रुधाऽक्षिपद् रोहणकन्दरीषु ॥१९॥
यत्पादयोर्नम्रसुरासुराणां, भ्राजिष्णुकोटीरततिच्छलेन ।
यदास्यसौन्दर्यरमातिरस्कृता(ताः?), पतन्ति नूनं कमलिन्यधीशाः ॥२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनोवनान्तेऽशुभवारणानां, दुष्कर्मणां भीर्न भवेत् तदीये ।
स श्रीजिनेन्द्रो मृगराट्(ड्)निवासं, करोति यस्मिन्नुरुविक्रमाढ्यः ॥२१॥
सदाऽमरालीप्रमदं ददाना(नः), सन्मानसान्तर्विहितस्थितिश्च ।
मनोज्ञयानः शुचिपक्षशाली, यः श्रीजिनो भाति सितच्छदाभः ॥२२॥
प्रणम्य तं प्रीणितचित्तरामं, विपद्यमीनिर्दलनैकरामम् ।
जिनाधिपं मुक्तसमग्ररामं, **श्रीपुष्पदन्तं** सुगुणाभिरामम् ॥२३॥

॥ इति श्रीजिनमूलद्वादशगुणकलितसाधारणस्तुतिः ॥

स्वस्तिश्रियो यत्पदपद्मकेली-निवासमासाद्य मुदं लभन्ते ।
स्थानाधिवासाधिगमान्न को वा, प्रमोदमासादयति प्रतीतम्? ॥१॥
स्वस्तिश्रियो तत्पदपङ्कजस्यो-पचारकाणामुपलब्धिरिष्टः ।
एवोद्ध्वरेखाकृतिरत्नराशि-र्न्यासीकृते वासवती यदस्मिन् ॥२॥
स्वस्तिश्रियः चारुनिवासयोग्यं, पदद्वयं नीरजमेव यस्य ।
दिवानिशं स्मेरमपङ्कजस्य, निष्कण्टकं चाऽत्र यदेतदेव ॥३॥
स्वस्तिश्रियश्चारुपदं यदंह्री, धाता विधानादित एव मेने ।
यत्पद्मवासाभिधया च तस्याः, तयोश्च पद्मव्यु(व्य)पदेशिताया: ॥४॥
स्वस्तिश्रियः शोणिमरम्यहेम-कूर्माविव क्रीडनकामनायाः ।
भातः प्रभोर्यस्य पदावुदारौ, जिनः स वः पापमपाकरोतु ॥५॥
स्वस्तिश्रिया पङ्कजदीर्घवासाद्, विरक्तया प्राप्य पदावमोदि ।
विरागिणी पल्व[ल]तो मराली, स्ववापिकामाप्य यथैव दृप्येत् ॥६॥
स्वस्तिश्रियश्चारुविचारिताहो, स्त्रियोऽपि यत्(द्) यत् पदमाददाति ।
पद्मं न किञ्चित् पदलक्ष्मिरूपं, निरुक्तिबाधादवधारितार्था ॥७॥
स्वस्तिश्रिया राजति यत्क्रमाम्बुजे, रेखाऽतिदीर्घा विदुरेण वेधसा ।
चक्रे विचिन्त्येति पुमानतः परं, कोऽप्यस्ति **विश्वत्रितये**ऽपि नोत्तमः ॥८॥
स्वस्तिश्रीतटिनी प्रादु-र्भूता यस्मात् क्षमाता(?) ।
दा(आ)नन्दयति सत्त्वानां, तृष्णाकुलितचेतसाम् ॥९॥
स्वस्तिश्रीभुजगस्याऽपि, यस्य विश्वातिशायिनी ।
ब्रह्मचारी(रि)धुरीणेषु, कीर्त्तिः कामं विजृम्भते ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिश्रीताम्रपर्णीनां, मणीव किल यः प्रभुः ।
युक्तं मुक्तावलेर्मध्य-भागेऽस्य श्लाघ्यते स्थितिः ॥११॥
स्वस्तिश्रीश्रेणिकर्त्तारं, धर्त्तारं सर्वसम्पदाम् ।
लोकत्रितयभर्त्तारं, पार्श्वनाथजिनं स्तुमः ॥१२॥
स्वस्तिश्रियं सदा पुष्या-दसङ्ख्यातगुणोदधिः ।
पद्मा-नागेन्द्रसंसेव्यः, **श्रीपार्श्व**जिनपुङ्गवः ॥१३॥

स्वस्तिश्रीमति तीर्थपे मतिरसावस्मादृशां खेलतु,
प्रोच्चैः प्रीणितमेव_ _मधुलिट्सीमन्तिनीपङ्कजे ।
योऽरक्षच्छरणागतां भवभराद्भीतां शरण्याग्रणीं(णीः?),
संस्थाप्य स्वपदे प्रसन्नवदनां राजीमतीं सर्वदा ॥१॥
त्यक्त्वा राजीमतीं यः स्वनिहितहृदयामेकपत्नींसुरूपां,
सिद्धिस्त्रीं भूरिरक्तामपि बहु चकमेऽनेकपत्नीमपा(पी?)शः(?) ।
लोके ख्यातस्तथाऽपि स्फुरदतिशप्यान(?) ब्रह्मचारीति नाम्ना
स श्री**नेमि**र्जिनेन्द्रो विशतु शिवसुखं सात्वतां योगिनाथः ॥२॥
नेमिं जियं (जिनेन्द्रं) प्रणमन्ति देवाः, सेन्द्रा नरेन्द्रा अपि सिद्धिसंस्थम् ।
साक्षाददृश्यं प्रतिमानिवेशा-दादर्शवासादिव नेत्रवक्त्रम् ॥३॥
सुरयुतरजताद्रिः पर्वतश्चाऽऽञ्जनः किं, विमलसुरनिवासा कृष्णराजिश्च नूनम् ।
विशदवनयुतः किं राजते रत्नसानुः(नु)-स्तदुपमपुरपार्श्वे **रैवतः** शृङ्गिनाथः ॥४॥
स्वस्तिश्रियः पदमदः पदपुण्डरीकं, श्रीकण्ठहासयशसः शशभृन्मुखस्य ।
श्री**त्रैशलेय**जिनपस्य निपस्य शान्तेः,
शान्ते(श्रान्ति?)च्छिदे भवतु वो भवतापजायाः ॥१॥
स्वस्तिश्रियं श्रीजिनवर्द्धमानः, पुष्णात्वनुष्णांशुयशा[:] प्रशस्याम् ।
विश्वत्रयं स्वच्छरसा पुनाति, यदीयगीः स्वर्गतरङ्गिणीव ॥२॥
श्रीमद्वीरजिनं जनैकशरणं सिद्धिश्रिया(यः) कारणं,
श्रीसिद्धार्थनरेन्द्रनन्दनवनं तीर्थङ्करं तारणम् ।
शास्तारं त्रिशलोदराभ्रशशिनं सौवर्णवर्णं स्तुवे,
पूज्यं सम्प्रति शासनेश! सुखद(दं) देवेन्द्रवन्द्यक्रमम् ॥३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सान्द्रानन्दनमन्नरेन्द्रविबुधाधीशालिमौलिप्रभा-
भास्वत्(द्)यत्प्रतिबिम्बदम्भित इवाऽनेकस्वरूपो विभुः ।
उद्धर्तुं जगदेव [यो] भवमहापङ्कात् कृपावारिभिः,
श्रीमच्छांवान(च्छासन)नायकः स तनुतां श्रीवर्द्धमानः श्रियम् ॥४॥
श्रीवर्द्धमानस्य जिनस्य यस्या-ऽप्यासाद्य विद्यां हृदि वर्द्धमानाम् ।
भवन्त्यनेके भुवि वर्द्धमानो-दयास्तदाराधनसाधनस्था(स्थाः) ॥५॥
क्षमावतामीश! मम प्रदेहि, क्षमागुणं येन भवाम्यनर्घ्यः ।
हस्तीव विज्ञप्तुमनाः किमेवं, लक्ष्मच्छलाद् यं मृगराट् समेतः ॥६॥
यस्मादनन्तेन बलेन शालिनः, स्फूर्जद्बलं याचितुमाजगाम ।
विजेतुकामः शरभं स्वशत्रुं, कण्ठीरवोऽङ्कव्यपदेशतः किम्? ॥७॥
स्वप्नेऽपि सर्वेष्वपि मुख्यनो(ता) मे, माताऽमुमेव प्रविशन्ति(न्त)मास्ये ।
अपश्यदस्थापयदात्मपार्श्व-मतः किमङ्काङ्गगजद्विषं यः ॥८॥
मृगारिनाम्नाऽपशदेन मेऽलं, गजारिनामैव सदस्तु देव! ।
सुगोत्रदायिन्नितु(ति) वक्तुमागात्, सिंहो यदभ्यर्णमिवाऽङ्कलक्षात् ॥९॥
स्वस्तिश्रियां परं धाम, काममक्षयकामितम् ।
अतुच्छं यच्छतान् (यच्छता)च्छ्रीमत्-त्रैशलेयक्रमद्वयम् ॥१०॥

॥ इति वीरस्तुतिः ॥

स्वस्ति[श्री]सदनं विनम्रदिविषत्कोटीरकोटीघट-
ज्योत्स्नाम्बुस्नपितोल्लसत्पदपयोजन्मद्वयश्रीर्जिनः ।
निर्जित्य त्रिजगत्समक्षसुमहद्दुःखाकरं यः स्मरं,
द्वैष्यं लक्ष्मामिषाद् बिभर्त्ति मकरं केतुं तदीयं ध्रुवम् ॥१॥
स्वस्तिश्रीभवनस्य यस्य जगतीभर्तुः द्विपादीपुरः-
क्रीडन्नाकिनिकायनायकशिरःस्रस्ता(स्त)प्रसूनव्रजैः ।
व्याख्यापर्षदि निर्विशेषमुदयत्तत्सङ्गरङ्गच्छलात्(द्),
जायन्ते स्वरसेन भोगिसुभगाः सर्वेऽपि वन्दारवः ॥२॥
पुष्पदन्तमभिनम्य विनिद्रा, नन्दताऽऽप्य नवमं नवमं तम् ।
वीतरागमथअवेतमनन्तं(?), ब्रह्मवीर्यसुखदर्शनरूपम् ॥३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिश्रीनिलयं भेजे, चा(वा)सवो यं सनातनम् ।
पार्श्वः पुनातु वः श्रीमान्, नितरां हितकारकः ॥१॥
लेभे यत्करुणादृशैव धरणो नागाधिपत्यं फणी,
शुश्रूषा-प्रणति-स्मृति-स्तुतिफलं वक्तुं समर्थः कथम्? ।
योगिध्येयपदावधिं निरवधिं ध्यायामि शुद्धाशयः,
सान्निध्यं विदधानमुद्यमवती स्वाभीष्टकृत्यैरपि ॥२॥
पार्श्वमीश्वरमुपास्तकषाया-द्यन्तरङ्गरिपुवर्गमसङ्गम् ।
अश्वसेननृपवंशदिनेशं, तं प्रणामपदवीमधिरोप्य ॥३॥
स्वस्तिस्वस्तटिनीतटीश्रितरतिस्सर्वज्ञहंसोत्तमः
श्रेयःश्रीनलिनी(नीं) विभूषयतु वः सोऽच्छच्छविः सन्नतम्(तः) ।
यद्वाणी सुभगा पवित्रचरिता सद्दर्शनानन्दिनी,
सद्वर्णा वरवर्णिनीव रमते भव्यांशुभाजां हृदि ॥१॥
निर्मातुं किल यस्य मूर्त्तिमतुलां चक्रे पयोजन्मभूः,
प्राक् पीयूषमयूखमुख्यनिवहानभ्यासहेतुर्भुवि ।
नो चेत् तत्र समानवस्तुकरणे को हेतुरास्ते यतः,
स्यान्न क्वाऽपि कदाचिदेव महतां प्रायः प्रवृत्तिर्वृथा ॥२॥
रणरणककदम्बप्रोल्लसद्रोमराजी, प्रणमति पदयुग्मं प्राञ्जलिर्निर्जराली ।
नयनपुटनिपेयं दर्शनं युष्मदीयं, सृजति च सुरवर्गात् तं पुरोगं प्रतीमः ॥३॥
वदनविजितचन्द्रः सर्वदा पूर्णभद्रः, प्रविगलदघनिद्रः पुण्यकर्मापतन्द्रः ।
नमदमरमहेन्द्रः क्षुद्रभेदी समुद्रः, मदनमथनरुद्रः शर्मसम्पत्समुद्रः ॥४॥
यन्नामधेयस्मृतिमात्रतोऽपि, क्षणेन दुष्टाष्टमहाभयानि ।
नश्यन्ति भव्याङ्गभृतां नितान्तं, वारीन्द्रनादादिव दन्तिपूगाः ॥५॥
जिनो **द्वितीयो** जगदद्वितीयो, योऽदाज्जयं मातुरुदग्रशक्तिः ।
मणिर्न तेजः किमु मुद्रिकायाः, गर्भे स्थिते श्लाघ्यतम(मं) प्रदत्ते ॥६॥
ददाति यः **सुमतिर्म**तिः(तिं) सतां, स्वकीयनामग्रहणोद्यतानाम् ।
अन्वर्थनामा सुरवृक्ष-चिन्ता-रत्नाधिकेभ्योऽप्यधिकप्रभावः ॥१॥
एतान् जिनान् कामितकामकुम्भान्, विश्वत्रयीशान् गतसर्वदम्भान् ।
कल्याणवल्लीवरवारिवाहान्, प्रमादहर्यक्षितिहव्यवाहान् ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तान् श्रीजिनान् नाभितनूज-शान्ति-वामेय-सिंहाङ्कजिनाधिनाथान् ।
नीत्वा नुतेर्मार्गममेयमोद-कृत्प्रातिहार्यप्रभुतासनाथान् ॥३॥
स्वस्तिश्रीसुखदं सदा गतमदा(द:) **श्रीशान्तिनाथं** मुदा,
वन्देऽहं विबुधावलीनतपदं श्रीवि[वै?]श्वसेनं सदा ।
कल्याणावलिवल्लिपल्लवकरं कारुण्यकेलीगृहं,
विश्वानन्दपदं सदोदयमयं मोहान्धकारे रवि:(विम्) ॥१॥
य: स्वस्तिलक्ष्मिललनामधुपीपरीतं,
मातङ्गराजगतिमङ्ग समीक्ष्य हर्षात् ।
मेध्यं सदा कविवरा प्रवदन्त्यहो द्राक्,
श्रीमान् स शान्तिरचिराततनुज: सुखाय ॥२॥
स्वस्तिश्रियं दिशतु वो जिनभानुमाली, श्रीवैश्वसेनिरनिशं शिवकृन्नराणाम् ।
अप्युल्लसत्सकलभूतिभराभिराम:, चित्रं सदा भव इहाऽभवदीश्वरो य: ॥३॥
भीतिर्ममाऽत्र गगने वसतस्तमोजा, भूमौ च केसरिभवा प्रबला सदोग्रा:(ग्रा) ।
सञ्चिन्त्य चेतसि निजे हरिणोऽयमीशं, लक्ष्मच्छलादविरतं भजतेऽपनेतुम् ॥४॥
नित्यं वनाश्रयनिर्वासमनङ्ग! येऽमी, निघ्नन्ति शुष्कतृणनिर्झरनीरखल्व(वृत्तिम्?) ।
तेषां गति: परभवे भविता मृगांक:(ग: का), प्रष्णुं(ष्टुं) यमीशमिति लक्ष्ममिषात्
किमे(मै)त ॥५॥
दोषाकराच्छशधराद् घनजाड्यभाजो, नित्यं कलङ्कमलिनान्नमृ(नृ)जुत्वदुष्टात् ।
मुक्तिर्ममाऽऽशु मुनिराज! विधेह्यमुष्मात्(द्), विज्ञप्तुमेणमिह(मेण इह)
लक्ष्ममिषात् किमे(मै)त ॥६॥
गवां विलासैरमृतद्रवैक:, सम्प्रीणयन् विश्वविशेषमप्यलम् ।
कलाभि..... तमस्तति, योऽभून्मृगाङ्क: किल साम्प्रतं तत् ॥६॥
गवां विलासैरमृतद्रवैक:, प्रीणाति विश्वावलयं समस्तम् ।
तमस्ततिध्वंसनबद्धकक्षो, युक्तं जिनेन्दुर्ननु यो मृगाङ्क: ॥७॥ पाठान्तरम् ॥
दृग्गोचरीकृत्य सुदृग्समूहै:, सर्वैरहंपूर्विकयाऽर्चनीयम् ।
सद्दृष्टिषु प्राग्रहर: कुरङ्ग:, किं पर्युपास्तेऽङ्कनिभाद् यमीशम् ॥८॥
अह्नाय मातङ्गपदापहारिणी(णं), तथा महानादपराक्रमाद्यम् ।
विलोक्य यं सौवपतिं मृगोऽङ्क-व्याजादुपेत: किमु सेवनाय ॥९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निरागसं मामपि केन नाथ!, दुष्कर्मणा घ्नन्ति नृपादयोऽपि ।
प्रष्टु(ष्टुं) किमित्यागतवान् यदीय-समीपमेणोऽङ्कमिषात्तमूर्त्तिः ॥१०॥
नोल्लासकारी कुमुदां न दोषा-करश्च नित्योदयदीप्यमानः ।
न पक्षपाती क्षयभाग्वपुर्नो, तथाऽपि चित्रं मृगलाञ्छनो यः ॥११॥
दैवज्ञशास्त्रेषु न केष्वपि श्रुतः, कुरङ्गभृच्छान्तिकरश्च षोडशः ।
योऽर्हन् पुनर्दृश्यत एव साक्षा-च्चित्रं मृगाङ्कः शिवदोऽपि षोडशः ॥१२॥
शान्तं शिवं शिवकरं करुणानिधानं, निस्सीमसत्त्वसदनं कृतदेवमानम् ।
श्रीविश्वसेननृपवंशवियद्न(ग)भस्ति(स्ति-न)र्नत्वा जिनं विनयतः प्रणत-
भूर्वर्गम् ॥१३॥

निःसीमसौभाग्यमनोरमां यद्-विलोचनद्वन्द्वरमां निभाल्य ।
त्रपातिरेकात् कुवलयावली ध्रुवं, निजाननं दर्शयति स्म रात्रौ ॥१३(१४)॥
॥ इति जिनस्तुतिः ॥

अथ नगरवर्णनम् –

विराजमानं सुमनस्ततीना-मधीश्वरैर्भूरिजयावदातैः ।
महेश्वरैर्नैकशिवाभिरामै-र्निभाल्य यत् किं स्पृहयन्ति नाकम्? ॥१॥
निरीक्ष्य निःशेषपुरीगरीयः-सौन्दर्यसर्वस्वहरस्वरूपम् ।
यदीयमाशङ्कितमानसा किं, स्वःसत्पुरी मेरुगिरौ निलीना ॥२॥
असन्निभेन स्वकवैभवेन, नीता पराभूतिमतीव लङ्का ।
तज्जैत्रमन्त्रं लहरीनिनादै-र्नूनं जपन्तीत्यम्बु वगाह्य भूयः ॥३॥
कुबेरलोकैः कलिताऽलका किं, कदापि साम्यं समुपैति यस्य ।
श्रीनन्दनोद्यत्तनुसुन्दरत्व-विराजि भूयो जनतान्वितस्य ॥४॥
सुवर्णगेहं भरतावनीप-प्रियं वी(वि)नीताख्यपुरोपमं यत् ।
सुमङ्गलोद्भूतसुताभिरामं, सत्सुन्दरीकं प्रविराजतीह ॥५॥
श्रीवर्द्धमानप्रभुराजधानी-लसद्गुणश्रेणिकलोककान्तम् ।
धत्ते तुलां राजगृहाभिधस्य, द्रङ्गस्य यद् विश्रुतचैत्ययुक्तम् ॥६॥
भयङ्करैर्भोगिभिरावृताङ्गा, सद्वल्लभैर्भोगिभिरावृतेन ।
येनाऽभ्यसूयाघटनोत्थपापात्(द्), भोगावती श्वभ्रतले पपात ॥७॥
परःसहस्रैस्तुरगैः समृद्धं, दृष्ट्वा परोलक्षवसुप्रभुं च ।
यं नव्यसूरं त्रपयाऽब्धिपातं, करोति सूरोऽल्पतुरङ्गमा – ॥८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यच्छास्ति निर्विघ्नमनेकभूभृ-न्निषेव्यमानांह्रिसरोजयुग्मः ।
यथार्थनामाऽसहनद्विपेन्द्र-वित्रासकृत् **श्रीगजसिंहराड्** सः ॥९॥
यत्राऽर्हतालङ्कृतिसिंहमल्लः, श्रीमान्नमात्यद्विप**हस्तिमल्लः** ।
श्रीजैनराज्यं जनयत्युदार-मेकातपात्रं निजदेशमध्ये ॥१०॥
किं नूपुरं कुण्डलमण्डलं वा? किं मौलिरत्नं क्षितिचञ्चलाक्ष्याः? ।
किं वा कटीसूत्रमिति प्रबुद्धा, यद्वप्रमालोक्य वितर्कयन्ति ॥११॥
प्रासादवृन्दैर्विशदैर्यदीयै-र्गृहीततुङ्गत्वरमाः प्रकामम् ।
रुदन्ति गौरीगुरुमुख्यशैलाः, किमु श्रवन्निर्झरकैतवेन? ॥१२॥
यदुच्चचैत्यैः सह शत्रुभावः, शिलोच्चयैर्यद् रचितोऽतिमात्रम् ।
तत्पक्षभङ्गः किमिव व्यधायि?, क्रोधादमीषां दिविषद्वरेण ॥१३॥
समीरसङ्गप्रचलत्पताका-करैः किमाह्वानविधिं सृजन्ति ।
दिग्वारणानां सुहृदां यदीय-प्रासादराज्यः कमनीयरूपाः ॥१४॥
अनेकसत्त्वोपकृतिं क्षमायाः, प्रभूतभारोद्धरणेन नित्यम् ।
कुलाचलाः सप्त वितन्वते यत्-प्रासादसादृश्यगुणाप्तये किम्? ॥१५॥
प्रवीज्यमानः सुरचामराली, प्रोक्षिप्तधूमोद्भवधूमलेखा ।
विराजते सूर्यसुता सुरेश-स्रोतस्विनीसङ्गममुत्सुकेव ॥१६॥
चैत्योच्छलन्निर्मलधूपधूम-स्तोमान्नतुच्छान्नभितः समीक्ष्य ।
अभ्रंलिहान्नभ्रततिभ्रमेण, शब्दायते चातकचक्रवालम् ॥१७॥
सुधोज्ज्वलस्वल्पनिवासभास्वत्-प्रासादसौवर्णनिपांशुजालैः ।
न स्वैरिणीलोकसमक्षपक्ष-क्षणः कदापीक्ष्यत एव यत्र ॥१८॥
सच्चन्द्रशालासु विलासिनीनां, निशामुखे खेलनकारिकाणाम् ।
वक्त्राणि यस्मिन् गगनारविन्द-भ्रान्तिं वितन्वन्त्यपि तार्किकाणाम् ॥१९॥
कैलासवद् यत्र विभाति साध्वा-लयः स्फुटं वै श्रमणेन युक्तः ।
भृतस्तथा पुण्यजनैस्तु चित्रं, न षण्ढ-गौरी-पशुक्लृप्तवासः ॥२०॥
निःसीमसौन्दर्यरमातिरेकं, यत्सुन्दरीणां नितरां निरीक्ष्य ।
झम्पा ददुर्वारिनिधौ सुराणां, सरोजनेत्राः किमिव त्रपातः ॥२१॥
आदर्शसङ्क्रान्ततदाकृतिर्य-न्मृगीदृशां नूनमुपैति साम्यम् ।
वक्त्रस्य नैवेन्दुसरोजमुख्याः, कलङ्कितामुद्भटदोषदुष्टाः ॥२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदङ्गनानामसरूपरूपं, दृष्ट्वाऽन्यरूपश्रियमाददानम् ।
कामः सकान्तः शरणीचकार, ता एव तूर्णं ननु भीतभीतः ॥२३॥

श्रीमद्गुरूपासनबद्धरङ्गा, सुरा इव श्राद्धवरा यदीयाः ।
सदामृतेहाः क्षितिमस्पृशन्त-स्तथा पदात्यद्भुतसौख्यलीनाः ॥२४॥

जनांश्च यस्मिन् विपिनः(न)प्रदेशान्, व्यालोक्य सन्पुण्यफलोदयाद्यान् ।
प्रमोदमेदस्विलता भजन्तो, केषां न चेतांसि सुमाभिरामाः ॥२५॥

अकिञ्चनत्वं शमिनां समूहे, सव्याजता भक्तिभरप्रयोगे ।
पानीयपूरेऽपि च नीचमार्गा-नुयायिता यत्र तु नैव लोके ॥२६॥

विश्वत्रयाख्यातवराभिधाने, मनुष्यसम्पूर्णरमाभिधाने ।
श्रीतातपादाम्बुजसन्निधाने, श्रीराजिते तत्र पुरे प्रधाने ॥२७॥

यत्राऽऽस्तिका श्रीगुरुभक्तिरागै-र्मात्रातिगै रञ्जितचित्तवस्त्राः ।
धनैश्च धान्यैर्नितरां समृद्धाः, शुद्धाः सुशीलाः सततं वदान्याः ॥२८॥

श्रीतातपाददर्शन-मनोरथाऽपूरिताङ्गिगणचङ्गात् ।
श्रीनागपुरद्रङ्गात्, तस्मादहितैरकृतसङ्गात् ॥२९॥

सद्भक्तिभराक्रान्त-स्वान्तः प्रादुर्भवत्प्रणयकान्तः ।
विनयावनम्रमौलि-र्मौलीकृतचारुकरयमलः ॥३०॥

विधिवत्तरणिप्रमिता-वर्तैरभिवन्दनैः समभिवन्द्य ।
चारित्रविजयः शिष्यो, विज्ञपयति कृत्यमिह च यथा ॥३१॥

प्राचीदिग्भालस्थल-कौङ्कुमतिलकाभभानुमत्युषसि ।
सुमहेभ्यसभ्यभविजन-राजिभ्राजिष्णुतरसदसि ॥३२॥

श्रीमच्छन्तरा(र)साधीश-राजधानीसधर्मणः ।
श्रीअमुकाङ्गसूत्रस्य, व्याख्यानादिककर्मणि ॥३३॥

जायमाने च सञ्जाते, परिपाट्यागतं तथा ।
श्रीमद्वार्षिकपर्वाऽपि, पर्वकृत्यपुरस्सरम् ॥३४॥

अभवद् विघ्नसङ्घात-वियुतं संयुतं महैः ।
श्रीतातनामनिस्तुल्य-मन्त्रस्मृत्यनुभावतः ॥३५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ गुरुवर्णनम् –

दत्ते पतिश्चेद् रसनाः फणीना-मायुर्विधिर्वा धिषणश्च मेधाम् ।
काव्यस्य शक्तिं दितिजन्मसूरि-स्त्वां स्तोतुमीशस्तदपीह किं स्याम्?॥१॥
पदोस्तले ते भजते च रागः(गो), विज्ञप्तुकामोऽरुणिमच्छलेन ।
मा(मेऽ)नादिकालीनमदास्पदानि, प्रणाशयाऽरागपदप्रदेहा(ह!) ॥२॥
समुल्लसन्त्यप्रतिमप्रभाभिः, प्रभासुराः पादपुनर्भवास्ते ।
जाने दशा - सुमतां समूह-तमोविनाशे दश दीप्रदीपाः ॥३॥
दशप्रकारव्रतिधर्ममाणा(?)-मादर्शकामाङ्कुशसश्रयानाम् ।
उद्दण्डदण्डाः शमिमण्डलीना-मीशं स्फुरन्त्यङ्गुलयस्त्वदंह्र्योः ॥४॥
जगत्त्रयात्यद्भुत! तावकीन-गुप्तेन्द्रियत्वस्य हि शिक्षणाय ।
अत्युन्नतांह्रिव्यपदेशतः किं, कूर्मद्वयं नाथ! निषेवते त्वाम् ॥५॥
अदृश्यभावं समुपाश्रितास्ता[:], कुग्रन्थयः कर्ममया अपि श्राक् ।
त्वयि प्रभो! याः किमु तत्र चित्रं, गूढाः पदग्रन्थिगणा बभूवुः ॥६॥
वृत्तानुपूर्वे(र्वं) सरले(लं) च जङ्घा-युग्मं गताघं भवतो विभाति ।
निभाल्य यं नूनमिभेन्द्रशुण्डा(ण्डा)-दण्डा श्रवन्ति स्वमदातिरेकम् ॥७॥
तवोरुयुग्मं मुनिराज! रम्भा-स्तम्भद्वयीसन्निभतां दधाति ।
श्रीधर्मभूजानिमतल्लिकायाः, साम्राज्यमङ्गल्यनिमित्तमुच्चैः ॥८॥
अतीव गुप्ते नितमां सुवृत्ते, अपि स्थिते मञ्जुलजानुनी ते ।
कथं कथं संयमिनामधीशा-ऽऽश्चर्यं मदीये महदेतदन्तः ॥९॥
कटीविलासं जनकोटिकोटी-दृष्टिप्रमोदप्रदमद्भुतं ते ।
ध्रुवं विभाव्य व्रतभूमिभर्तः!, सिंहो वनान्तर्भ्रमति त्रपातः ॥१०॥
त्वन्मध्यदेशः कृशतां बिभर्ति, प्रकाममित्येवमवेत्य नूनम् ।
मत्तोऽप्यधःस्थस्य सदा पदादे-र्न मध्यमत्वं मम तत्कुतस्तु ॥११॥
नाभीनदे निम्नतरे निशंस-ल्लावण्यनिस्तुल्यजलप्रपूर्णे ।
पालीवनालीतुलनां प्रयाति, रोमावली स्थि(स्नि?)ग्धतमा तवेश! ॥१२॥
वक्षःस्थली ते कथयत्यभिख्या-मास्थानभूमिर्विपुलेव रम्या ।
श्रीधर्मभूमीरमणस्य भास्वत्-सौवान्वयाम्भोरुहभास्कराभ! ॥१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भव्यासुमत्कामितकल्पवृक्षे, सन्मण्डलाखण्डल! बाहुवल्ली ।
भातस्त्वयीवाऽङ्गुलिपल्लवाढ्ये, स्फूर्जन्नखांशुप्रसवाभिरामे ॥१४॥
कूर्मत्रिरेखानिमिषाः क्षमीश!, त्वामाश्रिताः पाणिपयोजयुग्मे ।
इतीव विज्ञापयितुं सुरेखा-लक्षात् कथं नोऽत्र जडाङ्किताऽभूत् ॥१५॥
सद्रोपतेः पुण्यभरोद्वहस्य, भद्रस्य राजद्गमनस्य नेतः! ।
अत्युन्नतौ पीनतमौ तवांऽशौ, धत्तः श्रियं मौक्तिकमेव चैतत् ॥१६॥
कृतप्रयाणासुमदावलीनां, निर्वाणपुर्याः सरणौ शरण्य! ।
मञ्जुध्वनिस्ते गलकन्दलः किं, शङ्खः स्वनन् मङ्गलकृद्वचांसि ॥१७॥
उल्लासकारी कमलोत्कराणां, मित्रोदयश्रीप्रविधायकश्च ।
भवस्य वैरी भवदाननेन्दु-र्देदीप्यते नूतन एव नेतः! ॥१८॥
चिद्रूपदुग्धाम्बुनिधे! हृदन्तः, प्रोल्लासिनस्ते प्रकटत्वमेतौ ।
किं रक्तकन्दौ दशनच्छदौ श्री-सूरीन्द्र! लोकस्पृहणीयरूपौ ॥१९॥
विश्वप्रतीक्षास्यसहस्रपत्र-स्थाष्णोस्तव श्रीश्रुतदेवतायाः ।
मुक्तावलीव द्विजधोरणीयं, विभ्राजते भङ्गुरभाग्यसिन्धोः ॥२०॥
वक्त्रं कपोलद्वितयं च वीक्ष्य, श्रीजैनसिद्धान्तरहस्यविज्ञाः ।
विचारयन्तीति कथं नु जम्बू-द्वीपेऽपि चन्द्रत्रितयं चकास्ति ॥२१॥
नासोपमानं भवतः स लेभे, सच्छिद्रवंशोऽपि दुरापमुच्चैः ।
तेनाऽभवन् मौक्तिकभूतिपात्र-मेषः क्षमायां किमिव क्षमीश! ॥२२॥
मिथ्यात्वमोहोद्धुरयोधदर्प-ध्वंसे शरौ किं भवताऽक्षिरूपौ ।
सज्जीकृतौ वीरपुरन्दरेण, स्फूर्जद्गुणभ्रूद्वयधन्वयुक्तौ ॥२३॥
नाऽहं क्षमस्तावकभालपट्टं, श्रीवीरपट्टाम्बरपद्मपाणे! ।
तं स्तोतुमक्ष्णोर्विषयीकृतेऽपि, यस्मिन् सका सिद्धशिलाऽपि दृष्टा ॥२४॥
वक्त्रश्रियः केलिकृते विधात्रा, दोलाद्वयी ते श्रवणस्वरूपा ।
मन्ये विधाप्य प्रतिमा तनूभृ-च्चित्तेहितार्थप्रथने सुरेन्द्रौ(सुरद्रो!?) ॥२५॥
मूर्द्धारविन्दं पदमिन्दिराया, आघ्रातुकामाः किमुपागतास्ते ।
जात्याञ्जनश्यामलकुन्तलाली-लक्षादलीनां निवहाः शमीश! ॥२६॥

इति गुरुस्तुतिः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बालार्कबिम्बं प्रविलोक्य दीप्रं, लीलारसोत्को भवतीति कोषः ।
त्वद्दर्शनं वीक्ष्य मुमुक्षुराज!, मनो मदीयं प्रमदप्रफुल्लम् ॥१॥
आकर्ण्य मेघस्तनितं शिखण्डी, विनिर्मिमीते किल ताण्डवं मुदा ।
निपीय भावत्कगुणोत्करोऽहं, हर्षप्रकर्षात् किल हृष्टचित्त[:] ॥२॥
ग्रहपतिरसौ रात्रौ हृत्वा भवद्वदनश्रियं, विमलतरसत्कान्ति भीतो जगत्यपवादतः ।
तविषसरणौ दिव्यं तप्तोऽसृजन् घनगोलकं, निजशयतलेऽधात् किं दग्धः
कलङ्कमिषात् ततः ॥३॥
त्वदङ्गसौन्दर्यभरं विचिन्त्य, जितोऽहमेतेन रतेश्च पत्या ।
स्वाङ्गं त्रिनेत्राक्षिहुताशकाले, हुतं ततोऽनङ्ग इति प्रसिद्धिः ॥४॥
श्रीमत्तपागच्छपरम्परागग्र्या र्वाद्या(?)वलीनन्दनकल्पवृक्षः ।
शाखावृतस्त्वं फलदोऽसि भूरे(सूरे!), सच्छाययुक्तो जय वाञ्छितप्रदः ॥५॥
कैलाशतुल्यः खलु नाकिभूध्रः, सुधांशुकल्पं किल कुङ्कुमं हि ।
बभूव कीर्त्या भुवने सितीकृते, सूरीश! ते **श्रीविजयप्रभा**भिधः ॥६॥
अन्ये तु कूपा इह सूरयस्ते, त्वं सागरोऽपारगुणावलम्बी ।
किं तारकाः सन्ति नभेऽप्यनन्ताः, सहस्रपादः कतमस्तुला हि ॥७॥
विभो! त्वदीयप्रवरप्रतापो-ऽपूर्वप्रवृद्धानल एष रेजे ।
जक्ष्यन् कुवादिप्रकरार्जुनानि, केषां न सन्तापकरोऽतिचित्रम्? ॥८॥
ऊरीकृतं यद्वदनेन पद्मं, गन्धाकृतिभ्यां च निजोपमायाम् ।
षडंह्रिझङ्कारगिरा समीर-प्रेङ्खोलितैर्मुच्छदनैस्तनोति ॥९॥
असङ्ख्यवारीश्वरमेघपुष्प-सुबिन्दवस्ते गणितुं हि शक्या ।
विदा भवन्तीति भवद्गुणौघो, विभो! गणेयो न कदाऽपि केन ॥१०॥
यदीयपादारुणतां विलोक्य, संत्यक्तुकामः स्वखरत्वदूषणम् ।
संसेवते रोहितनोपधेश्च(?), निलीनबालारुणसारथी पदौ ॥११॥
भवत्पदाम्भोजजुषा मयाऽव-कीर्णानि रत्नानि नखालिलक्षात् ।
इमा विमानस्य पदौ गदित्वा, तस्मै ददे यः स न तं निखे(षे)वते ॥१२॥
पश्यन् स्वबिम्बादि(नि) यदीयपाद-कामाङ्कुशेषु प्रतिरूपितानि ।
नैवामुमिन्द्रो विरतिं भवेत् प्रभु, साश्चर्यचित्तः प्रणतेः विधाना(न)म् ॥१३॥
तवोपदेशः किल कोऽप्यऽपूर्वो, दीपोऽस्ति दीप्रो जगति प्रवर्त्तते ।
एकोऽप्यनेकस्य जनस्य चेतो-ऽगारस्य चित्तं मलिनं निबर्हते ॥१४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रसूतवान् यं हि सहस्रपादः, पादेन पङ्गुः स कथं शनैश्चरः ।
प्राप्नोति पुत्रो जनकस्य साम्य-मत्रोत्तरं नोऽजनि चित्रभानुः ॥१५॥
भवत्प्रतापक्रमणे स्फुटीभवन्, सहस्रसङ्ख्यैरपि पङ्गुरंह्रिभिः ।
सूरीश! लोकस्पृहणीयरूपा-तिरेकसन्दोहनिवासभूमो(?) ॥१६॥
चेतांसि चात्यन्तचलानि लोके, प्रसिद्धिरेषा मरुतान्(त्) प्रवर्त्तते ।
भवद्गुणालीस्तवने ध्रुवीभवेत्, तामेव चेतो हरतीति मामकम् ॥१७॥
जगत्त्रये द्यौम(र्म)हती च तस्यां, देवास्ततस्तेषु महान् महेन्द्रः ।
त्वदीयदेहातिमनोहरश्रीं, द्रष्टुं स जातोऽपि सहस्रनेत्रः ॥१८॥ इति गुरुस्तुतिः ॥

—*—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(८-९-१०)

त्रण पत्रो

– शी.

मुनि-मित्र श्रीधुरन्धरविजयजी तरफथी मळेल जूना पानांनी जेरोक्समां विभिन्न त्रण पत्रो लखायेला छे. पत्रो लखनार व्यक्तिओ अलगअलग छे के एक ज ते स्पष्ट थतुं नथी. सम्भवतः आ पत्रो नकलरूप अथवा तो खरडारूप होय तेम जणाय छे. मोटी साइजना छ पत्रोमां मोटा अक्षरे लखायेला पत्रोना हस्ताक्षर एक ज व्यक्तिना जणाय छे. प्रथम पत्रना मथाळे **पं.सु.ग.मि.** एवो नामोल्लेख छअेक वार थयो छे, तेथी एम अनुमान थई शके के आ बधा पत्रो ते एक व्यक्तिने उद्देशीने होय.

पत्रोनी भाषा चमत्कृतिपूर्ण, छटादार अने विद्वत्ताथी छलकाती छे. प्रथम पत्रमां, पत्रना (पानाना तेमज पत्रना) मथाळे **पं.सु.ग.** एवो नामोल्लेख छे, अने तेमने माटे लेखकने अत्यन्त लगाव के मैत्रीभाव होय ते रीतनो ते उल्लेख छे. आ नाम 'पं. सुरचन्द्रगणि'नुं हशे? ते 'पण्डित' पदस्थ हशे, लेखकना परममित्र पण हशे तेम समजी शकाय छे.

१

पत्रना प्रारम्भे विद्वत्ताथी छलकाती शैलीथी ऋषभदेवनुं स्मरण थयुं छे, तेमां ऋषभदेव माटे '**सौरभेयध्वज**' एवो शब्द प्रयोजायो छे. **सौरभेय** एटले वृषभ-बळद, ते जेनो ध्वज एटले चिह्न ते सौरभेयध्वज-आदिनाथ.

पत्र '**नीं. नग.तः**' कोई 'नीं'थी शरु थता नगरथी लखायो छे. लखनार पोतानुं नाम '**दे.विमलः**' एम नोंध्युं छे, एनो अर्थ **देवविमल** एवो थई शके छे. ते अटकळ योग्य होय तो आ पत्र तेमणे लख्यानो निश्चय थई शके. जेमना पर पत्र लखायो ते (पं.सु.ग.मि.) ते वर्षे '**सोमधरी**' नगरमां बिराजता हशे ते पत्रमां ते क्षेत्र-नामना उल्लेखथी नक्की थई शके छे.

पत्रलेखक साथेना अने पत्रप्रापक साथेना साधुओनां नामो साव टूंकाक्षरमां नोंधायां छे : गणि विजयविमल, गणि जस, मुनि विनयविमल, मुनि अमृत विमल, तेमज मुनि अमृतकुशल, मुनि रविकुशल – आम ते उकेली शकाय छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हरिविक्रमचरित्रनी प्रत विशे चर्चा पत्रमां जोवा मळे छे. ते प्रतनां पानांना गुंचवाडा उकेलवा माटे तेमां पत्राङ्क लखवानी वात लागे छे. उत्तराध्ययनसूत्र-वृत्तिनी वाचना, अध्ययन-अध्यापन, सांवत्सरिक पर्वाराधना - इत्यादि विशे नोंध जोई शकाय छे.

२

बीजो पत्र साव नानो छे. लखनार लावण्यविजय छे, श्रीधलो. नगरथी लखेल छे. आ कयुं नगर हशे? ते ख्याल नथी आव्यो. धोलका, धोलेरा के तेवुं कोई नगर होई शके.

आमां पण टूंकाक्षरी नामो जोवा मळे छे. भ.कु. एटले भक्तिकुशल, ग.ह. एटले गणि हर्षकुशल एम लागे छे, अहीं वन्दारुवृत्तिवाचननो निर्देश छे.

३

त्रीजो पत्र पण **ला.वि.यो** एटले के लावण्यविजयजीए ज लखेल छे. प्रारम्भनां ५ पद्यो तेमज पत्रनो भाषावैभव लेखकना पाण्डित्य प्रत्ये माथुं झुकाववा प्रेरे छे. आ पत्रमां समयवायाङ्गसूत्रनुं व्याख्यान सूचवायुं छे. साध्वादिना पाठ उपरांत उपधानवहननो उल्लेख पण थयो छे. पर्युषणनां सुकृत्योनुं वर्णन नोंधपात्र छे, तेमज तेमां क्यांय स्वप्नदर्शन-उछामणी विशे अक्षर पण नथी ते ध्यानपात्र बाबत छे. साधुओनां टूंकां नामो छे त्यां साध्वीओनां नामो पण छे ते आ पत्रनो विशेष छे. ५७ बोलना पट्टा साथेनो विज्ञप्तिपत्र पोते लखेलो तेनो उल्लेख पण ध्यानार्ह छे.

एकंदरे त्रणे लघुपत्रो तेमना लालित्यने कारणे आपणुं ध्यान खेंचे तेवा छे. पत्रोनो समय १८मो शतक होय तेम अनुमान थाय छे.

*   *   *

त्रण पत्रो

सकलसकलकोविदकोटिकोटीरहीरायमान पं. श्रीसु.ग. शचीरुच्यानाम् । पण्डितजनचित्तमानसमरालबालायमान पं. श्री५श्रीसु.ग. परममित्राणाम् । पण्डितप्रकरसार्वभौमपण्डित श्री५ श्रीसु.ग. मिश्राणाम् । पण्डितसदोऽलङ्कार पं. श्रीसु.ग.मि. । विद्वज्जनसदोऽलङ्कार पं. श्रीसु.ग.मि. । सकलप्राज्ञपुङ्गव पं. श्रीसु.ग.मि. ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१)

स्वस्तिक्षीरधिनन्दनां प्रदिशतु श्रीमन्महोक्षध्वज-
स्त्रैलोक्याद्भुतवैभवः स्फुरति यत्कण्ठस्त्रिरेखाङ्कितः ।
वक्त्रेन्दूदयतोल्लसत्किततमध्यानामृताम्भोनिधे-
स्तस्थौ कम्बुरुपेत्य सैकततटे किं दक्षिणावर्तकः? ॥१॥

तं श्रीमन्नाभिभूमीमण्डलाखण्डलाकुलकुवलयकाननविकाशननिशाकरं, निचिततमतमःस्तोमतिरस्करणार्णवार्णस्सम्पूर्णातूर्णतराम्बरतलचलनमन्थरपाथोधरोद्धुर-धोरणीरोधापगमनप्रसरत्करनिकरविभाकरं, त्रिभुवनभवनजनमनःकमनीयकामित-सन्ततिसम्पूरणगीर्वाणसार्वभौमकारस्करं, संसारासारापारदुरुत्तारकान्तारपारवर्तिस्फूर्त्ति-मत्तरदुर्गापवर्गपत्तनपथसंप्रस्थितानेकभविकसार्थश्रेयस्करं, दशदिग्वशावासवासन-प्रगुणीभवत्स्वाभाविकगन्धबन्धुरगन्धफलीविकचमणीचकचक्रवालचारिमावहेलन-प्रगल्भीभविष्णुस्वभूघनभूमपीतिमावगणितविलीनचारुचामीकरं, श्रीमत्**सौरभेय-ध्वजा**भिधानतीर्थकरं प्रणतिपद्मिनीमधुकरं विधाय

नीं.नग.तः श्रीमन्मित्रक्रमकमलयामलोत्तंसितभूतले श्रीमति **सोमधरी**नगरे, **दे. विमल**स्सानन्दं सोल्लासं सरणरणकं समादिशति । यथाकृत्यं चाऽत्र -

पूर्वपर्वतोच्चचूला(लां) चुम्बति भगवति भानुमति हर्षोत्कर्षवत्पर्षदि **श्रीमदुत्तराध्ययनसूत्रवृत्ति**वाचन-श्राद्धसाधुसाध्वीजनपठनपाठनादि धर्मकृत्यं समजायत संजायते च । क्रमागतं श्रीमदाब्दिकपर्वाऽपि निर्विघ्नतया महामहमबी-भवत् । किंच श्रीमद्देवगुरुनामधेयध्येयमहामन्त्रस्मरणासाधारणकारणतः, तथा श्रीमत्सुहृत्सौम्यनयननिभालनानुभावतश्च ।

किञ्च - भुवनाद्भुतभाग्यसौभाग्यगाम्भीर्यधैर्यौदार्यचातुर्याद्यगण्यपुण्य-वरेण्यगुणमणीगणसागराणां गगनतरङ्गिणीरङ्गत्तरङ्गसङ्गमावगणनप्रगुणवचनचातुरी-रञ्जितानेकनागराणां स्वकीयधीरिमावधीरितसुधाशनसार्वभौमभूधराणां न्यक्षप्रतिपक्ष-लक्षासह्यशौण्डीरिमावमानितवितानप्रत्यवसानाधीशसिन्धुराणां श्रीमतां श्रीमतां प्रीतिपत्रिका राजमरालिकेव मत्करकमलक्रोडमलङ्कृतवती । ज्ञातं च तदन्तर्गतं समस्तं प्रमेयं, परमा सन्तुष्टिरजनिष्ट ।

किञ्च - हरिविक्रमचरित्रं भवति तदा तदतः स्थाने स्थाने क्षिप्यते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदि तद् भवेत्तदा प्रेषणीयम् । तदन्तः साङ्कानि कृत्वा पत्राणि क्षिप्यन्ते । अन्यथा किं क्रियते ? यान्यधिकारेण एकीभूतानि तान्येकत्र कृतानि सन्तीत्यवधार्यम् । ममाऽनुनतिरवसातव्या । **ग.विज.विम. ग.ज. मु.विनयवि. मु.अमृतवि.** साध्वीनां च यथार्हं नत्यनुनती ज्ञेये, ज्ञाप्ये च निकटवर्ति **मु.अमृतकु. मु.रविकु.लानाम्** । मन्नाम्ना च श्रीमज्जिनजगतीकुमुद्वतीप्राणेश्वराः प्रणतिगोचरीकार्याः । किञ्च तत्रत्यसकलसङ्घस्याऽस्मद्धर्माशीर्वाच्येति मङ्गलम् ॥

(२)

स्वस्तिश्रियं सृजतु नेमिजिनेन्द्रचन्द्रः प्राज्यप्रपञ्चितविभास्तवियोगितन्द्रः ।
कूर्मीकृतात्मरहितः सुधृतक्षमोऽपि चित्रं चकास्ति चतुराशयचेतसीदम् ॥१॥

तं श्रीमन्तं श्रीमन्तं निस्समानासमानमानवामेयमहिमानं गाम्भीर्याद्यनेक-गुणगणराजमानं पापव्यापतापसन्तापसन्तप्तजन्तुजातकायमानं श्री**समुद्रविजय**-भूपालतनुजन्मानं श्रीजिनसामजन्मानं मनोनर्मदातीरे रममाणं विधाय **श्रीधलो० नगरतः**, श्रीमति तत्र, **लावण्यविजय**स्सबहुमानमालापयति । यथाप्रयोजनं चाऽत्र –

प्रातर्महेभ्यसभ्यसदसि **श्रीवृन्दारुवृत्ति**वाचन-प्रस्तुतयतिजनाध्ययना-ध्यापनादि सुकृतकृत्यं सुकृतिकृतं – – – – – समजायत संजायते च । तथा क्रमागतं श्रीवार्षिकपर्वाऽपि निःप्रत्यूहव्यूहं महामहःपुरस्सरं च समजनि श्रीमद्देवगुरुपादप्रसत्तेः । अपरं – श्रीमतां धीमतां बहुदिनविलोक्यमानवर्त्मा लेखः प्राप्तः । समवसितं च तदन्तर्गतरुच्यवाच्यं हर्षप्रकर्षश्च समजनि । पुनरपि लेखाः प्रेष्या मन्मनोमोदसम्पत्तये । किञ्च – ममाऽनुनतिरवसेया । ज्ञाप्या चाऽन्येषाम् । अत्रत्य **ग. र.वि. मु. तत्त्ववि. मु. लालवि. मु. लक्ष्मीवि.या**दीनां नत्यनुनती ज्ञेये, ज्ञाप्ये च तत्रत्य **पं. भ.कु. ग. ह. मु. पद्मकुशल** प्रभृतियतीनाम् । तथा – तत्रत्यसकलसङ्घस्य धर्मलाभो वाच्यः । तथा श्रीपूज्यपादसत्को धरित्रीसत्कश्च कश्चिदप्युदन्तः समागतोऽद्यप्रभृति विशेषतो नास्ति । समागमने च यथावसरं ज्ञापयिष्यते । तथा ज्ञापनार्होदन्ता ज्ञापनीयाः । तथा मन्नाम्ना तत्रत्याः श्रीजिनरजनिजानयः प्रणमनीया इति भद्रम् । भाद्रपदसित १३ दिने ॥ अत्यौत्सुक्यात् पत्रीयं लिखिताऽस्तीति समवसेयम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३

स्वस्ति श्रीमतिमातनोतु जगतां गाङ्गेयगेयच्छवि-
च्छन्नाङ्गो भगवाननङ्गसुभगज्ञानप्रदीपोदयः ।
क्रीडा यस्य सुगन्धलुब्धमधुपैः प्रारम्भिरम्भासभा-
प्रोज्जृम्भाक्षिकटाक्षिलक्षत इव स्मेराननाम्भोरुहे ॥१॥
जीयान्मद्रसमुद्र इन्द्रसदृशः श्रीनाभिसर्वंसहा-
पर्जन्याभिजनाम्बुजन्मतपनः श्रीमारुदेवो जिनः ।
यस्याऽऽस्यस्य समीक्षणादपि सदा प्रह्लादमापद्यते,
बिम्बस्याऽपि मनः सतामिव सरित्कान्तः सितज्योतिषः ॥२॥
यस्य स्फारतरं निरीक्ष्य वदनं पद्मानि पद्माकरं,
गन्तुं लज्जितवन्ति सन्ति विजने पुर्या वने निर्ययुः ।
ते निर्वास्यवयस्यगौरमहसस्तत्राऽपि सन्दर्शना-
न्मन्ये सङ्कुचितानि तानि भगवद्भानुस्तनोतु श्रियम् ॥३॥
निश्शेषक्षितिपालभालफलकालङ्कारकारिक्रम-
द्वन्द्वाम्भोजरजा रजांसि हरतादर्हन्निशाधीशिता ।
यस्याऽऽस्येन निरस्यमानमहिमादाघज्वरीजातवा-
ञ्ज्ञानेऽब्जः कथमन्यथा प्रतिकृतिव्याजादसावम्भसि ॥४॥
यस्याऽम्भोजविराजमानवदनं विद्यावदानन्दनं,
पुण्याम्भोनिधिनन्दनं शमवचःपीयूषनिःस्यन्दनम् ।
- - - - - - - - - - - - - -
आमोदार्दितचन्दनं कुरु सदा दुष्कर्मनिष्कन्दनम् ॥५॥

तं श्रीमन्तं श्रीमन्तमनन्तदन्तिज्योतिःपश्यतोहरकीर्तिनिकरक्षीरपूर-प्रक्षालितत्रिभुवनभवनान्तरालं निर्मलशशिसकलकलविशालभालं विशदतमदेशना-कादम्बिनीजलविदलितसकलाकुशलकलिमलजम्बालजालं प्रणमद्भक्तिभरनिर्भर-विश्वविश्वम्भराशिखरिवैरिवारशिरःशेखरहीरनिस्सरत्करनिकरनीरधारानिचयसिच्यमान-चरणकल्पसालं श्रीमन्नाभिभूपालबालं श्रीभगवन्मरालं मनोमानसविलासिनं निर्माय श्रीमत्तत्रभवत्पादपादपद्मप्रसृमरमकरन्दसुरभीभूतभूतले श्रीमति तत्र,

नवीननगरतो ला.वि.यो विनयावनतशिरस्कं हर्षप्रकर्षसंभृतमनस्कं सप्रीतिवचस्कं सरणरणकं यमुनाजनक[१२]मितावर्तवन्दनेनाऽऽभिवन्द्य विधिवद्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विज्ञप्तिपत्रिकां प्रपञ्चयति । यथा प्रयोजनं चाऽत्र - चित्रभानुभानुवितानविनिर्मित-निबिडतरतिमिरप्रमेये प्रभातसमये महेभ्यसभ्यसदसि **श्रीसमवायाङ्गसूत्रवृत्ति**वाचन-प्रस्तुतवाचंयमवाचंयमिनीजनाध्ययनाध्यापन-सश्रद्धश्राद्धश्राद्धीजनोपधानोद्वाहनादि सुकृतकृत्यं सुकृतिकृतं प्रावर्तत प्रवर्त्तते च । तथा क्रमागते सर्वपर्वाखर्वगर्वापहारिणि पापव्यापसन्तापनिवारणवारिणि सुकृतततिनर्तकीनर्तनशतपर्वणि **श्रीमदाब्दिक-पर्वणि** सक्षणनवक्षणप्राणिगणानल्पसंकल्पकल्पद्रुकल्प**श्रीकल्पसूत्र**वाचन-निष्प्रतिमप्रभावप्रभावनाभवन-सप्तदशप्रकारजिनवरार्चाविरचन-द्वादशदिवसामारि-पटुपटहोद्घोषणपुरःसरसर्वसत्त्वाभयदानप्रवर्तन-चाक्रिकतैलिकादिकुकर्मनिवर्त्तन-याचकजनदानप्रदान-साधर्म्मिकजनवात्सल्यविधान-दुष्टाष्टकर्मकाष्ठदहनदहनायमाना-ऽसमानानेकमासक्षपण-पक्षक्षपण-दशका-ष्टाहिका-बृहत्कल्पा-ष्टमादिदुस्तपतपस्त-पनादिपर्वधर्मकर्म सशर्म निरन्तरायं निरमायि । श्रीमद्देवगुरुध्येयतमनामधेयध्यान-विधानात् श्रीमदर्चनीयचरणसौम्यदृशा चाऽपरम् ।

अनवद्यविद्याविद्याधरं(?री?)परीरम्भविभूषितकरणानाम्, पुण्यप्रयोजन-परम्परोपार्जनकरणानाम्, स्फटिकविमलान्तष्करणानाम्, सहृदयहृदयाम्भोजवनविभा-सनसहस्रकिरणानाम्, धृतचतुरचेतश्चक्रवालचमत्कारकारणाचरणानाम्, विशदवृत्त-रमारमणशरणानाम्, शिष्यसमुदयप्रदेशितविद्याभरणानाम्, श्रीमत्कोविदकुलकैरव-विबोधनसुधाकिरणानाम्, श्रीमदर्चनीयचरणानां बहुदिनविलोक्यमानमार्गो लेखो ऽथैवाऽऽनन्दयिष्यति मन्मनः, तेन सौवङ्गारोग्यपरिच्छन्दवार्तवार्त्तापिशुनाः प्रसादलेखाः प्रसद्य सद्यः प्रसाद्या मन्मनोमोदसम्पत्तये ।

किञ्च- ममोपवैणवं प्रणतिरवधार्या । प्रसाद्ये च नत्यनुनती तत्रत्य **पं. ज.ल.ग. ग. लब्धिवि. ग. वृद्धिवि.** प्रभृतिनिकटवर्तिव्रतिवारणेन्द्राणाम् । अत्रत्य **पं. सिं.वि. मु. कम.वि.य**प्रभृतियतयः, तथा **साध्वीरू.ई. सा. ला.ई. सा. न.श्री सा. चांपां सा. राऊश्री सा. सहजश्री**प्रभृतिसाध्व्यश्चा-ऽत्रत्यसङ्घश्च श्रीमदर्चनीयचरणचरणान् प्रति प्रणमन्तितमाम् । तथा-

पूर्वमितः सप्तपञ्चाशज्जल्पपट्टसहितो विज्ञप्तिलेखः प्राभृतीकृत आसीत्, तत्प्राप्त्युदन्तपिशुनो वलमानप्रसत्तिलेखः प्रसाद्यः । तथा मदुचितं कृत्यं प्रसाद्यम् । तथा वलमाना हिताशीः प्रसाद्या । तथा श्रीमन्महनीयनाम्नाऽत्रत्याः श्रीजिनरज-निजानयः प्रणताः सन्तीति मङ्गलम् । भाद्रपदासिततृतीयायाम् । तथा कियन्त चा(श्चा)त्रत्योदन्ताः **पं. श्रीकु.स. ग.** लेखादवधार्याः श्रीआर्यवर्यैरिति दिग् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(११)

उन्नतपुरात् श्रीविजयप्रभसूरिलिखितं पत्रम्

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

प्रस्तुत पत्र **श्रीविजयप्रभसूरिजी**ए **ऊना**नगरथी लख्यो छे. घणुं करीने आ प्रसादपत्र हशे. कोई मुनिराजना पत्रना उत्तररूपे लखायेल आ पत्र छे.

प्रारम्भनां ५ पद्योमां **श्रीनेमिनाथ**परमात्मानी स्तुति करी छे. शेष पत्र गद्यबद्ध छे. तेमां पूज्यश्रीए करेली 'सांवत्सरिकचतुर्थीकन्याकरग्रह'नी कल्पना ध्यानार्ह छे. अन्य पत्रोनी जेम चातुर्मास दरम्यान सभामां (प्रवचनमां) करेल **आवश्यकसूत्र** अने **उत्तराध्ययनसूत्रवृत्ति** वाचननी नोंध पण अगत्यनी गणाय.

पत्र अपूर्ण छे छतां मजानो छे. प्रस्तुत पत्रनी नकल अमने सुरत-श्री नेमि-विज्ञान-कस्तूरसूरि ज्ञानमन्दिरमांथी प्राप्त थई छे. ते आपवा बदल संस्थाना व्यवस्थापकोनो खूब-खूब आभार.

स्वस्तिश्रीसुभगोऽपि गोपललनालीलारसे सारसे,
यः पाणिग्रहसङ्ग्रहाग्रहवशात् तूष्णीमपुष्यात्(ज्) जिनः ।
स्वप्राचीननितम्बिनीभवभुवो मन्ये निदिध्यासया,
प्रज्ञैकप्रणिधिः कृतावधिविधिर्नूनं नियुक्तोऽमुना ॥१॥
स्वस्तिश्रीस्तिमितामितादरभरस्थिग्धोरसा यः प्रभु-
र्वीवाहव्यपदेशतः प्रियतमामाहूय राजीमतीम् ।
नित्यानन्दघने सुसिद्धिभवने तत्सङ्गरङ्गे चिरं,
शुद्धाभोगदशाभियोगरसिको योगीन्द्रमुख्योऽप्यभूत् ॥२॥
('योगाधिभूरप्यभूत्' इति पाठान्तरम् ।)
स्वस्तिश्रीवदनारविन्दमधुपस्सन्त्यज्य राज्यं जवात्(द्),
यः साम्राज्यमनन्तमुत्तरतरं निर्वाणपुर्या ललौ ।
दक्षाध्यक्ष! गजो रजोवदपरोऽप्याप्तुं परोत्कर्षितां,
को वा नोपनतामपि श्रियमहो! तुच्छां जहत्यच्छधीः ॥३॥
स्वस्तिश्रीमदनः परास्तमदनोऽप्यासीद् विलासीश्वरो,
यः श्यामोऽपि विशुद्धकीर्त्तिललितैर्विश्वं चकारोज्ज्वलम् ।
सन्त्यज्याऽपि पुरा सुरार्यविनतो यो नाम राजीमतीं,
स्वीचक्रे सुचिरं शिवाश्रयगतोऽप्युच्चैर्न मन्दाक्षवान् ॥४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्तिश्रीप्रणयाविभिन्नहृदयो नेमिर्धने भिन्नधी-
र्देयाद् वोऽभ्युदयं तदंह्रियुगलीरागाविभागात्मनाम् ।
येनाऽभाजि भुजोद्धृतेस्तुलयता शोणास्यविश्वम्भरं,
स्वःसद्बालतरोः प्रवालविलसच्छालस्य विस्फूर्जितम् ॥५॥

तं श्रीमन्तममन्दानन्दभ(क?)न्दसन्दोहदोहदफलदविशालप्रवालपुष्पकालं दुष्टाष्टकर्मविकर्मधर्मसमूलंकषज्ञप्तिकूलङ्कषाकूलानुकूलसंसर्पणपयोदजालं विमलतराभिवन्द्यानवद्ययदुकुलकमलमरालं **श्रीशिवाबालं** जिनेश्वरं प्रणामककुद्यन्तमारोप्य **श्रीउन्नतपुरात् श्रीविजयप्रभसूरिभि**स्ससन्मानममानस्निग्धतानैर्दिग्ध्यमादिश्यते यथा -

साधनाधीनात्मलाभं चाऽत्र, प्रतिप्रभातं च रोषितरुचिरुचिरराजीविनीजीवितेशसमागमप्रसृमरविहगनादनान्दीघोषपोषश्रवणसमुल्लसितसितकमलिनीवनीहासप्रकाशादिव समुज्ज्वलीभूतभूतले विशीर्णतारकमुक्ताहारमाश्लिष्यति श्रीतरणितरुणे रागारुणगगनलक्ष्म्या सश्रद्धास्तिक-सस्वस्तिकसदःपर्यस्तिकामध्ये **श्रीआव[श्यक]स्वाध्याय**शान्तिकमन्त्रोच्चारपूर्वं **श्रीउत्तराध्ययनसूत्र**कुमारं स्पत्ररवृत्तिशृङ्गारमध्यारोप्य चतुर्विधाभ्यसनसेनाङ्गसशोभं प्रभावनादिवितरणसंप्रीणितबन्दिवृन्दजेगीयमानगौरवपूर्वं विवाहाग्रमहे विधीयमाने प्रह्वीभूतक्रमलग्नदिने श्रीसांवत्सरपर्वयुवराजोऽपि श्रीसङ्कल्पकल्पद्रुमोपम**श्रीकल्पसूत्रवाचना**डिण्डिमोद्घोषपूर्वं विविधधर्मकर्मकेलिललितैः सांवत्सरिकचतुर्थीकन्याकरग्रहं सुखेनाऽकरोत् ।

तत्राऽन्तरायनिकायप्रतिबन्धस्तु श्रीपरमगुरुस्मरणानुबन्धप्रबन्ध एव भावनीयो(यः) । अपरम् - आयुष्मतां परमभक्तिभामिनीभ्रूविभ्रमावगृहीतमनसां पत्रसितपत्रीमानसप्रियः सुवर्णमुक्ताहारयो(?) सिद्ध इव सुगमो अत एव सचित्रचक्राङ्गोऽपि सुभगः सरस्वत्यावाहो विबुधानुसरणीयभावोऽस्मत्करकमलमलञ्चक्रे । तुष्टिवल्लीपल्लविनीव तद्वचःसुधासेकातिरेकादुल्ललास पौनःपुन्येन । तथैवाऽनुष्ठेयम् । किं चाऽस्माकं उ.श्री...

[एतावन्मात्रमेव पत्रमिदम् ।]

(पत्रना पृष्ठभागमां-)

पूज्याराध्य सकलभट्टारकसभाभामिनीभालस्थलतिलकायमान भट्टारक श्री१९श्री विजयप्रभसूरीश्वरचरणकमलानाम् ॥ ऊनाबन्दिरे ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१२-१७)

केटलाक पत्र-खरडा

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

एक त्रण पत्रोनी प्रति छे, तेमां पत्र ३-४-७ ए क्रमाङ्कनां पत्रो छे. तेमां विज्ञप्तिपत्रोनो सङ्ग्रह होय तेम जणाय छे. तेमांना अमुक पत्रो त्रुटित के अधूरा छे. ते पत्रो खरडारूप होय तेम लागे छे. ते पत्रोना जेटला अंशो उकल्या ते अंशो अहीं आपेल छे.

पत्र १ : आमां २६ थी ४३ पद्यो छे. आर्याछन्द छे. ४१मा पद्यमां चेदिलपुर, उष्मापुर अने वजीलपुर एम ३ स्थळनामोनो उल्लेख छे, अने ४२मां बे गृहस्थ-नामो छे. पोताना गुरुने 'पितृचरण' तरीके निर्देश्या छे.

पत्र २ : आ पत्र २३ पद्यात्मक छे, पूर्ण छे. राजधन्यपुर-रांधनपुरमां विराजता वाचकवर्य (उपाध्यायजी) पर लखायेल पत्र छे. खरेखर तो आ पत्रात्मक खरडो छे, आ रीते पत्र लखी शकाय तेवुं सूचववा माटे हशे. एटले लेखकनुं, लेखनस्थान व.नुं नाम नथी.

पत्र ३ : आ पत्र पण पूर्ण छे, ३८ पद्यात्मक छे. आ पण खरडो होवाथी कोईनो नामोल्लेख नथी. श्लोकोनी रचना प्रासादिक छे.

पत्र ४ : आ खरडो पण पूर्ण छे, २५ पद्यात्मक छे. श्लोकरचना चमत्कृतिसभर छे. वसन्ततिलका आदि छन्दो पर कर्तानुं सारुं प्रभुत्व जणाय छे.

पत्र ५ : आ खरडामां २ ज पद्य सांपड्यां छे. बाकी प्रतिनां पत्रो नहि होवाथी उपलब्ध नथी.

पत्र ६ : आ त्रुटक-अधूरा पत्र-खरडामां त्रुटित ९ श्लोको मळे छे, जेना प्रान्ते 'इति लेखविधिः' एम लखेल छे.

आ पछी ते पत्रोमां १ थी २० पद्यो छे, जे कोई पत्रमां लखवायोग्य गुरुवर्णनना खरडास्वरूप पद्यो जणाय छे.

अनुमानतः १७मा सैकामां लखायेल आ पत्रो छे. त्रुटक के खण्डित होवा छतां काव्यरचनानी रीते उपयुक्त लागवाथी ते अत्रे प्रगट करीए छीए.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आ प्रतिनी जे. नकल आपवा माटे कोबा-आ.कैलाससागरसूरि ज्ञानभण्डारनो खूब आभार मानीए छीए.

पत्र खरडो नं. १

(अपूर्ण २६ थी ४३)

....

.... नाम् ॥२६॥
रोचिष्णुरुचिररोचि-श्चामीकरकान्तिकान्तकरणानाम् ।
वरगुप्तियुक्तिरज्वा, नियन्त्रिताशेषकरणानाम् ॥२७॥
कम्रप्रणम्रपृथिवी-पुरन्दरै रचितसुपरिचरणानाम् ।
भावारिवारभीरुक-जगत्त्रयीजन्तुशरणानाम् ॥२८॥
त्रिभुवनभव[न]निरन्तर-दुरिततमस्तोमतिग्मकिरणानाम् ।
कल्याणकुवलयावलि-विकासनश्वेतकमलानाम् ॥२९॥
दुर्जेयजगत्त्रितयी-प्रसर्पिकन्दर्पदर्पहरणानाम् ।
पादप्रणतिप्रवण-प्राणिगणप्रणयकरणानाम् ॥३०॥
निःसारतरदुरुत्तर-संसारावारपारतरणानाम् ।
भुवनत्रयविद्रोहि-व्यामोहमहार्त्तिहरणानाम् ॥३१॥
चेतःप्रार्थितविलसत्-पदार्थसार्थप्रथावितरणानाम् ।
धैर्यस्थैर्यगभीरिम-प्रगुणगुणग्रामशरणानाम् ॥३२॥
दुःकर्मान्तरदुर्धर-तरद्विषद्धोरणीविशरणानाम् ।
दूरीकृतकन्दर्प-क्रूरतरशितप्रहरणानाम् ॥३३॥
विशदान्तःकरणानां, यशश्चयान्तर्हितेन्दुकिरणानाम् ।
कृतसुकृतिस्मरणानां, सुधियां श्रीतातचरणानाम् ॥३४॥
विशदानन्दनिदानं, प्रसादलेखं शिशुः समभिलषति ।
गर्जत्पर्जन्यागम-मुत्कण्ठी नीलकण्ठ इव ॥३५॥
तेन श्रीसौववपुः-परिकरनैरुज्यसूचनाचतुराः ।
सद्यः प्रसद्य हृद्याः, प्रसादलेखाः प्रसाद्या मे ॥३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा : शैशवी प्रणतिस्तात-चरणैरवधार्यताम् ।
श्रीमतां प्राज्ञपादानां, चाऽवधार्या च सा सदा ॥३७॥
सौभाग्यभाग्यनिधयः, सुक्त्युक्तिशुक्तिप्रधापयोनिधयः ।
श्री .... विबुधाः, सुधाकरप्रवरकीर्त्तिभराः ॥३८॥
निरवद्यहृद्यविद्या-जलधिसमुल्लासने सुधाघृणयः ।
..................., सकलविपश्चिच्छिरोमणयः ॥३९॥
पितृपादनिकटवर्ती-त्यादिश्रीसाधुसाध्वीनाम् ।
नत्यनुनती प्रसाद्ये, श्रीपितृपादैः परमकृपया ॥४०॥
अत्रत्या मुनयोऽपि च, सङ्घः**श्रीदिलपुर**स्य सर्वोऽपि ।
उष्मापुरस्य च तथा, **वजीलपुर**नामधेयस्य ॥४१॥
वाघजी-सङ्घजी चेति, प्रमुखाः श्रावकोत्तमाः ।
प्रणमन्ति परमभक्त्या, श्रीपितृचरणान् प्रमोदेन ॥४२॥
लेखे यत् स्यादनौचित्यं, क्षन्तव्यं पितृभिश्च तत् ।
अलेखि लेखो विजय-दशम्यामिति मङ्गलम् ॥४३॥

॥ इति लेखविधिः ॥

पत्र खरडो नं. २

स्वस्तिश्रियं स शान्ति-र्दिशतु सतां यस्य दर्शनं नित्यम् ।
चिन्तामणिवच्चिन्तित-मर्थं सर्वं प्रसाधयति ॥१॥
ससुराः सुराधिपतयः, सुरगिरिशिखरे यदीयजन्ममहम् ।
हर्षाद् रचपयामासुः, स शान्तिदेवः शिवं तनुतात् ॥२॥
यः(ये?) प्रणमन्ति जिनेशं, दुस्तरभवसागरं सुराधीशाः ।
भक्त्या तितीर्षव इव, प्रमोदमर्हन् ददातु स वः ॥३॥
श्रीमन्तं श्रीमन्तं प्रणत्य(म्य) तं विश्वसेननृपपुत्रम् ।
केवलकमलाकमला-कान्तं शान्तिं जिनाधीशम् ॥४॥
तत्र श्रीमति लक्ष्मी-युक्ते **श्रीराजधन्यपुर**नगरे ।
श्रीमद्वाचकपादा-म्बुजरेणुपवित्रिते रम्ये ॥५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

.... ग्रामात्, प्रौढार्हच्चैत्यमण्डितताद्वर्यात् ।
सुश्रद्धश्राद्धभरा-न्मङ्गलमालारमोपेतात् ॥६॥
सद्विनयं सप्रणयं, संयोजितपाणिपङ्कजं भाले ।
सरणरणकं सहर्षं, वसुधासन्न्यस्तनिजशीर्षम् ॥७॥
अमृतव्रतगुरुकिरण-प्रमितावर्तैः सुवन्दनैर्हर्षात् ।
अभिवन्द्य..........., शिशुः करोति स्वविज्ञप्तिम् ॥८॥
प्रातर्यथात्र कार्यं, भगवति भानावुदीयमाने च ।
प्रध्वस्ततमोनिकरे, पूर्वाद्रिशिरःस्थिते रुचिरे ॥९॥
इभ्यजनाकीर्णायां, प्रौढसभायां निरस्ततन्द्रायाम् ।
श्रीसप्तमाङ्गवाञ्च(च?)न-मनन्तहर्षप्रकर्षवशात् ॥१०॥
व्रति-व्रतिनीनामध्यापनादि-कृत्ये प्रजायमाने च ।
श्रीमद्वार्षिकपर्वणि, समागतेऽनुक्रमाद् भव्ये ॥११॥
द्वादशदिवसान् याव-ज्जीवाभयदानघोषणं नगरे ।
सप्तदशभेदपूजा-रचनं निःशेषकष्टहरम् ॥१२॥
श्रीकल्पसूत्रवाचन-मभिरामं नव-नवक्षणैः सम्यग् ।
अष्टाह्निकादितपसां, तपनं दुष्टाष्टकर्मभिदाम् ॥१३॥
साधर्मिकजनपोषण-मतितोषणमर्थिनां कलापस्य ।
चैत्यानां परिपाटी-घटने सुखदायिभव्यानाम् ॥१४॥
इत्यादिधर्मकार्यं, समजनि समहोत्सवं निरातङ्कम् ।
श्रीवन्द्यपादपङ्कज-भवभूर्यनुभावतो रुचिरात् ॥१५॥
अपरं – सकलावदातगुणगण-परिकलितै रूपनिर्जितानङ्गैः ।
कामितपूरणकल्पै-र्निजदेहविभास्तकलधौतैः ॥१६॥
विद्याविभवविनिर्जित-सुरगुरुभिः प्रणतनाकिनरनाथैः ।
श्रीमद्वाचकपादैः, प्रमादमुक्तैः प्रमोदयुतैः ॥१७॥
आत्मीयकरणपरिकर-निरामयत्वाद्युदन्तसंयुक्ता ।
पत्री प्रसादनीया, सद्यो निजबालकस्य मुदे ॥१८॥
प्रणतिरवधारणीया, श्रीमद् (?) शिशोः स्वकीयस्य ।
श्रीअमुक... विदुषां, सा च मुदा प्राभृतीकार्या ॥१९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्येषां च मुनीनां, श्रीवन्द्यक्रमणसेवनपराणाम् ।
नत्यनुनती यथार्हं, प्रसादनीये शिशोः शिशुभिः ॥२०॥
अत्रत्या बुधमुख्या श्री.......................... ।
प्रणमन्ति वन्द्यचरणान्, प्रणतेन्द्रान् सकलसाधुयुताः ॥२१॥
कृत्यं प्रसादनीयं, शिशूचितं सत्कृपां विधाय शिशोः ।
श्रीसङ्घस्य [च] प्रणति-रवधार्या वाचकोत्तंसैः ॥२२॥
मन्नाम्ना नन्तव्याः, श्रीमद्वन्द्यैः सदा जिनाधीशाः ।
कार्त्तिकसितपञ्चम्यां, सहस्रभानाविति श्रेयः ॥२३॥

॥ इति श्रीविज्ञप्तिः ॥श्री॥

पत्र खरडो नं. ३

स्वस्तिश्रीमरुदेवीयं, प्रासूत प्रथमं जिनम् ।
पद्मपाणिमिव प्राची, साधुचक्रसुखावहम् ॥१॥
स्वस्तिश्रीर्वृषभो यस्य, पदद्वन्द्वपयोरुहम् ।
सेवां कर्तुनि(मि)वाऽऽयासी-ल्लाञ्छनव्यपदेशतः ॥२॥
स्वस्तिश्रीः पर्यणैषीद् यं, श्रीनाभिनृपनन्दनम् ।
रोहिणीव निशानाथं, सत्तारानन्ददायिनम् ॥३॥
स्वस्तिश्रीः सेवतेऽर्हन्तं, प्रथमं नाभिराट् सुतम् ।
चाणूरसूदनमिव, सुता श्रोतस्विनीपतेः ॥४॥
प्रणिपत्य तमर्हन्तं, प्रथमं परमात्मनाम् ।
नमन्नरेन्द्रकोटीर-सङ्क्रान्तनखसञ्चयम् ॥५॥
संयता(ताः?) संयता यत्र, राजन्ते वारिदा इव ।
अपूर्वजडसाङ्गत्यं, बिभ्रतश्चाऽम्बरोन्नतिम् ॥६॥
विरताविरता यत्र, भासन्ते भ्रमरा इव ।
नालीकमधुसाङ्गत्य-धारिणः सुमनःस्पृहाः ॥७॥
अमर्त्य इव सुन्दर्यो, नार्यो यत्र विरेजिरे ।
पुरेऽनिमेषसंवीक्ष्या, स्फुरद्गोप्रीतचेतसः ॥८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्रकान्तगृहज्योति-र्ध्वस्तरात्रितमा जनः ।
यत्रत्यो नाऽन्तरं वेत्ति, विशदेतरपक्षयोः ॥९॥
सार्वसौधशिरःप्राप्ताः, काञ्चनाः कलशा बभुः ।
स्वीयप्रभाभरस्पर्द्धि, सूर्यं जेतुमिवाऽचलन् ॥१०॥
तत्र श्रीमति सौवर्ण-चारूचैत्यविभूषिते ।
वन्द्यपादरजःपूते, साधुभक्तार्हतान्विते ॥११॥
श्री......................., नगराच्चैत्यभूषितात् ।
वन्द्यपादाभिधामन्त्र-सर्वदास्मृतिकृज्जनात् ॥१२॥
विनयी अमुक........, द्वादशावर्त्तवन्दनाम् ।
विदधानो मुदोदञ्च-द्रोमराजिविराजितः ॥१३॥
रुचिराक्षररोलम्ब-मुपमामकरन्दभृत् ।
राजहंसमनःप्रीण-द्रोस्वामिप्रमदोदयम्(?) ॥१४॥
वाचकव्रातमुख्यानां, श्रीवन्द्यानां महौजसाम् ।
विज्ञप्तिपत्रपाथोजं, प्राभृतीकुरुते शिशुः ॥१५॥
यथाप्रयोजनं चेह, पूर्वदिग्(क्)प्रौढयोषिति ।
चित्रं बोभुज्यमानायां, बालेनापि विवस्वता ॥१६॥
महेभ्यसभ्यसन्दोह-समलङ्कृतसंसदि ।
श्रीमद्विवाहप्रज्ञप्तेः, सवृत्तेर्वाचनाविधिः ॥१७॥
वाचंयमसमारब्ध-सिद्धान्तस्य तमश्छिदे ।
अध्यापनमधीतिश्च, सोद्यमं विधिपूर्वकम् ॥१८॥
सप्तदशभेदपूजा, प्रायः प्रतिरचनमाप्तगेहेषु ।
निजतनुपङ्कविनाशन-निरन्तरस्नात्रकरणविधिः ॥१९॥
भूतेष्टादिषु पर्वसु, कृतपौषधपारणासुकृतकृतये ।
इत्थं भव(वि)जनजनिते, श्रेयःकृत्ये सदा भवति ॥२०॥
तथा परम्पराप्राप्ते, सर्वपर्वशिरोमणौ ।
अगण्यपुण्यनिर्माण-श्रीमद्वार्षिकपर्वणि ॥२१॥
सर्वसम्पत्तिसम्प्राप्ति-निधानैरिव नूतनैः ।
व्याख्यानैस्त्रिशलासूनु-जिनेन्द्रगण[९]सम्मितैः ॥२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनल्पकल्पनाकल्प-तरुकल्पस्य देहिनाम् ।
सवृत्तेः **कल्पसूत्रस्य**, वाचनं भव्यपर्षदि ॥२३॥
अर्धमासोपवासाष्टा-ह्निकादितपसां कृतिः ।
पटहोद्घोषणापूर्वं, सर्वत्राऽमारिनिर्मितिः ॥२४॥
निवर्त्तनं निर्वृतिदं, चाक्रिकादिकुकर्मणाम् ।
याचिताधिकवस्तूनां, याचकानां समर्पणम् ॥२५॥
सर्वसर्वज्ञचैत्यानां, परिपाटीप्रवर्तनात् ।
प्रणामपरया भक्त्या, महोत्सवपुरस्सरम् ॥२६॥
एवं सुकृतकृत्यौघः, प्रावर्त्तत प्रवर्त्तते ।
सर्ववाचकधौरेय-वन्द्यपादाभिधास्मृतेः ॥२७॥
विजिग्ये भवतः कीर्त्या, यतः पीयूषदीधितिः ।
त्वद्वक्त्रमित्रपद्मानि, सङ्कोचं नयतीति किम् ॥२८॥
तरङ्गा अपि गण्यन्ते, पारावारस्य पण्डितैः ।
परं न कैरपि गुणा-स्त्वदीया गुणिनां वर! ॥२९॥
स्वामिंस्तव यशोराशि-रपूर्वः क्षीरनीरधिः ।
महानपि परं मेयः, स्थैर्यभाग् जडतां दधत् ॥३०॥
त्वदीयकीर्त्तिकौमुद्या, विष्टपे धवलीकृते ।
मराली भजते काकं, पार्वती कृष्णमीहते ॥३१॥
काचिद्विलासिनी चक्षु(क्षू)-रञ्जनाय कृतस्पृहा ।
घनसारभ्रमवशात्, कज्जलामत्रमत्यजत् ॥३२॥
क्षीराम्भोधिरपि क्षीर-ह्रदिनीप्राणनाथति ।
केशेषु पलितभ्रान्त्या, युवाऽपि स्थविरीयति ॥३३॥ त्रिभिर्विशेषकम् ।
आवृत्ता दाडिमीबीज-पङ्क्तिर्विस्मृतविद्रुमैः ।
शिखा च गृहरत्नस्य, खञ्जरीटद्वयी पुनः ॥३४॥
एतानि यदि वस्तूनि, भवेयुः सरसीरुहे ।
लभते तन्मुनिस्वामिं-स्तदा त्वद्वदनोपमाम् ॥३५॥ युग्मम् ॥
वीक्ष्य स्वामिनि विद्वत्त्व-मामनन्तीति धीधनाः ।
नभोभ्रमिवशात् श्रान्तः, प्राप्तोऽत्रैव बृहस्पतिः ॥३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इत्थं मेधाविसन्दोह-गीयमानगुणोत्करैः ।
सद्यः प्रसादपत्रं मे, प्रसाद्यं साधुसिन्धुरैः ॥३७॥
श्रीवाचकशार्दूलां-स्त्रिसन्ध्यं भक्तिसंयुतः ।
विनयात् ...., प्रणत्यनुवासरम् ॥३८॥

तत्रत्य मुनीनामनुनतिं कुरुते च । अत्रत्याः श्रीवाचकपादान् प्रणमन्ति ।

॥ इति लेखविधिः ॥श्रीः॥

पत्र खरडो नं. ४

मन्दारभासुरतरं द्विजराजराज-मानं विमानिपथवद् वृषमेषयुक्तम् ।
सूराश्रितं गुरुतरं गुरुसङ्गतं च, विभ्राजते पुरमिदं बुधबुध्यमानम् ॥१॥
यस्मिन् गवाक्षशिखरस्थितकामिनीनां, वक्त्राम्बुजैः सपदि तर्कविचारदक्षाः
पक्षं विधाय किममी गगनारविन्दं, वादं वदन्ति सुरभीति परस्परेण ॥२॥
उच्चैस्तरां सदनपङ्क्तिशिरःस्थिताना-मन्योन्यहास्यरुचिरोचितचन्द्रिकाणाम् ।
चन्द्रोदये मृगदृशां वदनैर्विशेषान्, मन्ये नभः शतशशाङ्कमयं किमत्र ॥३॥
श्रेयस्विनामतिशयोन्नतमन्दिराणां, वातायने मणिमयूखगतान्धकारे ।
विष्वग् विकीर्णकुसुमभ्रमदं स्थिताऽत्र, तारागणं स्पृशति काऽपि करेण मुग्धा ॥४॥
रम्भाभिरामसदना मदनानुरूपाः, सुस्वामिका गुरुगरिष्ठपरीष्टिमन्तः ।
सानन्दनन्दनमनोरमकेलिकान्ता, राजन्ति नाकिनिकरा इव यत्र पौराः ॥५॥
दोषामुखभ्रमकरं भ्रमरालिनीलं, यत्रेन्द्रनीलनिलयावलिशृङ्गसङ्गि ।
छाया-तमोविरहदं समवेक्ष्य दूरा-न्नित्यं दिवाऽपि किल चक्रकुलं बिभेति ॥६॥
यद्भोगिवासभुवनेषु लसत्प्रभेषु, नानामणिप्रकरकल्पितभित्तिकेषु ।
ध्वस्तान्धकारनिकरेषु विभावरीषु, दीपावलिर्भवति मङ्गलहेतुरेव ॥७॥
यत्राऽतिमात्रमणि-मौक्तिक-शुक्ति-शङ्ख-बालप्रवालपटलीसुविराटजौघान्(?) ।
व्यापारिणां विपणिगानिति वीक्ष्य दक्षाः, प्रोचुर्ध्रुवं जलनिधिर्जलमात्रशेषः ॥८॥
का वल्लभा मुररिपोस्त्वमिव स्वभर्तुः, कृत्यं त्वदास्यमिव धर्मधियां च कीदृग् ।
लज्जां त्वदीक्षणजितः श्रयते क एवं, प्रश्नोत्तरोक्तिकुशलामिह काऽप्यपृच्छत् ॥९॥
[सारङ्गः]

श्रीसूरिराजचरणद्वयपुण्डरीक-स्फूर्ज्जद्रजोव्रजपवित्रितमध्यदेशे ।
स्वःस्पर्द्धिऋद्धिभरभासुरभूमिभागे, श्रीमत्यशेषसुखसद्मनि तत्र चङ्गे ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सद्धर्मकर्मविधिनीरधिपीनमीन-सद्ब्रह्मचारिचरणस्तिकसन्निवेशात् ।
संशुद्धबुद्धिवरऋद्धिविवृद्धिवृद्ध-बुद्धप्रसिद्धतर**सिद्धपुर**प्रदेशात् ॥११॥
प्रादुर्भवद्विविधभक्तिभराभिजात-रोमाञ्चकञ्चुकितपेशलदेहदेशः ।
हर्षप्रकर्षकजिनीहृदयाधिनाथ-ज्योर्निरस्ततमसंतमसप्रवेशः ॥१२॥
पाथोजिनीप्रियतमप्रमितप्रमाणा-वर्त्तप्रमाणपरिवन्दितपूज्यपादः ।
विज्ञप्तिकां वितनुते बहुमूर्खमुख्यः, ...सनयं तथाहि ॥१३॥
यथाप्रयोजनं चात्र, निरपायतयाऽनिशम् ।
तर्कशास्त्रार्थदानादि-श्रेयःश्रेणीकुमुद्वती ॥१४॥
विकाशसम्पदं प्राप, प्राप्नोति च निरन्तरम् ।
श्रीतातचरणध्यान-कौमुदीनायकोदयात् ॥१५॥

॥ अथ गुरुवर्णनम् ॥

सदा पिनाकमाली यो(?), ब्रह्मचारी गणाधिपः ।
भवान्तकृज्जयत्येष, सूरीन्द्रः कमलापतिः ॥१६॥
अनन्यसौभाग्यपदं त्वदीयं, विधाय वेधा वदनं व्रतीश! ।
शिल्पश्रमे किं नियमं चकार, न चेत्कथं तत्प्रतिरूपमन्यत्? ॥१७॥
आस्यं त्वदीयं परिपूर्णपौर्ण-मासीशशाङ्कोपमितं निरीक्ष्य ।
सम्यग्दृशां चारुविलोचनानि, विचक्षणानां कुमुदन्ति नेतः! ॥१८॥
आदाय पीयूषरुचः _ _ सारं त्वदीयं वदनं व्यधायि ।
स्वयम्भुवा भूरिविभूतिभासि, न चेत् कृशाङ्गी कथमत्रिदृग्जः? ॥१९॥
यौष्माकवक्त्रं यदि चन्द्रमण्डलं, वयं चकोराश्चतुरा निरीक्षणे ।
सरोरुहं वा यदि तद् द्विरेफ-समानभावं वयकं श्रयामहे ॥२०॥
स्वस्तिश्रियां(याः) सद्मनि यस्य वक्त्र-सरोरुहे शीतरुचिश्चकार ।
किंवा समानन्दितसच्चकोरः, श्राक् स्पन्दते साधुवचोऽमृतं यत् ॥२१॥
तस्थौ मानससन्निधौ त्रिपथगां मूर्ध्ना दधानः शिवः,
पादस्थामपि तां वहन्मुररिपुः शेते स्म वारांनिधौ ।
मग्नो वारिरुहे कमण्डलुजलं धत्ते स्वयम्भूः स्वयं,
मत्वा त्वत्प्रबलप्रतापदहनं मन्यामहे भाविनम् ॥२२॥
एतैः सुपर्वपतिकीर्त्तितकीर्त्तिपुञ्ज-ज्योतिर्निरस्ततुहिनाचलशीतपादैः ।
प्रोन्मादिवादिकुमुदोत्करतोदनोद-प्राज्यप्रतापतपनाल्पितचण्डपादैः ॥२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुक्तप्रमादनिचयैः प्रभुतातपादैः, प्रौढप्रसादनिपुणैर्विगतावसादैः ।
वार्त्तप्रवृत्तिसहितं प्रहितं हितं द्राग्, लेखं विशेषसुखवाचि(च)कमीहतेऽसौ ॥२४॥
श्रोतस्विनीशरसनानिहतोत्तमाङ्गः, संयोजितप्रवरपाणिपयोजयुग्मः ।
शिष्यस्त्रिसन्ध्यमनवद्यमनाः सदैव, श्रीतातपादचरणान्प्रति नंनमीति ॥२५॥

इति वर्णनकाव्यानि ॥

पूज्याराध्यध्येयतमसकलभट्टारकपरम्परापौलोमीप्राणप्रियसमानासमान-
भट्टारकप्रभुश्री १९ श्रीअमुकसूरीश्वरपत्कजानाम् ।

पत्र खरडो नं. ५

स्वस्तिश्रीरमणी मणीदिनमणिः श्यामामणीमण्डले,
कर्णाभ्यर्णमणी विभूषय मम स्वःसद्मणीग्रामणीः ।
वक्तुं व्यक्तमिवेति संश्रितवती यत्पादयुग्मं सकः,
श्रीनेमी रमणीयविष्णुरमणी जीयाज्जिनाहर्मणिः ॥१॥

स्वस्तिश्रीरतिरागिणी समभजद् यत्पादपद्मद्वयी-
मङ्गन्नङ्गविगोपनं स गदता गोविन्दतासङ्गतेः ।
निन्द्योः वद्यवदेष मत्प्रियतमो मत्त्वे ....
.... ॥२॥

पत्र खरडो नं. ६

.... ।
.... णमति प्रतिवासरं तैः ॥७३॥

येषां निष्प्रतिमानतां गतवतां, विद्याविलासाहतौ,
पातालालयताविषालयगुरू ह्रीणौ प्रवीणावपि ।
पातालद्युसदालयौ प्रविशतः स्माऽचार्यवर्याय यम्,
श्रीसूरीन् **विजयादिसिंहमुनिपान्**, वन्दे सदा तांस्तथा ॥७४॥

निर्दूषणा गुणविभूषणभूष्यमाणा, ...
.... ॥७५॥

इत्यादिव्रतिचन्द्राणां, तातसेवाविधायिनाम् ।
प्रसाद्याऽनुनतिस्तेषां, श्रीतातैर्मम सर्वदा ॥७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्रत्याः शास्त्राध्यसनासक्ता, इत्यादियतयो(यः) ।
तत्रत्याः सङ्घश्चापि प्रमोदतः, श्रीतातपादपादाब्जान्नमन्ति प्रतिवासरम् ॥७७॥

किञ्चाऽत्र परिसरे - इत्यादि मुनिवरा ये, यत्र चतुर्मासकं स्थितास्तत्र ।
निरपायतया जाताब्दिकपर्वाणः सुखं सन्ति ॥७८॥

किञ्च - शुक्लापाङ्गशिशुर्घनाघनरवं बालो यथा मातरं,
चक्रः पङ्कजिनीपतिं हिमरुचेर्ज्योत्स्नाप्रियश्चन्द्रिकाम् ।
कान्तं प्रोषितभर्तृका च करटी विन्ध्याचलोपत्यकां,
श्रीमत्तातपदारविन्दयुगलं ध्यायामि चित्ते तथा ॥७९॥

अर्थौचित्यविमुक्तं, यदुक्तमिह मन्दबुद्धिवशतः स्यात् ।
तत् क्षन्तव्यं तातै-र्भवन्ति सर्वसहा गुरवः ॥८०॥

नानालङ्कृतिकलिता, सकर्णगणवर्णनीयवर्णवृता ।
सुललितपदविन्यासा, पत्री सुस्त्रीव शं दिशतु ॥८१॥

॥ इति लेखविधिः ॥

अथ भारतीवर्णनद्वारा श्रीमद्गुरुराजवर्णनप्रस्तावनाप्रपञ्चः ॥

अम्भोवाहमिवाऽम्बुवाहसुहृदः कोका इवाऽर्कोदयं,
माकन्दं पिकपुङ्गवा इव गजा विन्ध्याचलोर्वीमिव ।
प्रौढप्रीतिकदम्बका यदमभृद्धानो(?) भवद्भारतीं,
मन्यन्ते महते मुधाकृतसुधाधाराश्चिरं सज्जनाः ॥१॥

नो मुञ्चन्ति तदन्तिकं निजतनुच्छाया इवोग्रापदो,
नो पश्यन्ति तदाननं सुजनताः प्रेष्याः प्रनष्टा इव ।
श्रीवाचंयमवासरेश्वर! भवद्वाचां विना वन्दनं,
ये काले क्षिपयन्ति हन्त! पशुवत् सद्बोधशुद्ध्युज्झिताः ॥२॥

भव्यानां प्रकटीकृतातनुमुदि स्वामिन्! विलासे गवां,
सञ्जाते भवतस्तदत्ययकरः कश्चिज्जडस्तर्हि किम्(?) ।
भूमौ भूयसि वर्षति प्रविलसच्छस्यप्रशस्योद्गमे,
पाथोदे परितः किमर्कतरुणा श्रीः प्रापि कापि ध्रुवम् ॥३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लीलालापसमुत्थिताऽपि भवतो भिक्षुप्रभो! भारती,
जाग्रज्जाड्यमपाकरोति मनुजश्रेणेः प्रमोदप्रदा ।
रत्नानां निकरो निसर्गतट(टि)नीप्राणाधिनाथोच्छल-
ल्लोलोल्लोलबहिष्कृतो भवति किं नो सान्द्रदारिद्र्यभित्? ॥४॥
संसारद्रुममूलपाततटिनी वेगावली प्राणिनां,
त्वद्वाणी श्रुतिगोचरं यदि विभो! प्राप प्रतिष्ठास्पदम् ।
उग्रक्रोधविशालवाडवबृहद्भानुप्रकाशस्तदा,
किं निर्माति दुरन्तदुष्कृततत्श्रोतस्विनीवल्लभः ॥५॥
भारत्या भवतो भवभ्रममुखो(षो) माहात्म्यमत्यद्भुतं,
नो शक्यं कविकोटिभिर्निगदितुं शास्त्रार्थविस्तारिभिः ।
वल्ली स्वर्गसदामिव क्षितिरुहः स्वल्पाऽपि या मानसा-
भीष्टं शिष्टधियां नृणां घटयति स्पष्टं पटिष्ठोन्नतिः ॥६॥
व्याख्याते विशदे विविच्य विपुलग्रन्थार्थतत्त्वे त्वया,
भव्यानां पुरतः प्रयाति परमं सद्धर्ममार्गं न कः? ।
पश्यत्त्वेव पदार्थसार्थमभितो द्रष्टा पुमान् ह्यब्जिनी-
प्राणेशप्रवरप्रभासमुदयप्रद्योतितं वेगतः ॥७॥
तद्वाचं प्रतिवन्दितक्रमकज! स्वान्ते सतां बिभ्रतां,
जाड्यं न स्थिरतामुपैति विपुलं स्थल्याविवाऽम्भोभरः ।
प्राप्नोति प्रसरं विवेकविभवस्तूच्चैरिव स्रोतसां,
प्राणेशः पृथिवीतले कुमुदिनीकान्तातिकान्तोदयात् ॥८॥
तेषां तुच्छतरोदयो रिपुरिव द्रोहाय मोहो नहि,
स्याद्धामं न पुनः स्मरस्तृणमिवाऽऽधातुं पटीयान् भवेत् ।
कान्ताकार्मणकीलितेव करुणा कुर्यात् स्थितिं चाऽन्तिके,
ये कम्रां कलयन्ति चेतसि चिरं .... ॥९॥
सिद्धं धान्यमिव क्षुधातुरतनुस्तोयं तृषेवाऽर्दित-
स्तापव्यापजखेदमेदुरमना च्छायामिवोर्वीरुहः ।
विश्रांम(विश्रामं?) सरणिश्रमाकुल इव प्राज्ञः सुविद्यामिव,
ब्राह्मीं तारक! तावकीं भवति कः श्रोता विहातुं विभुः? ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

का द्राक्षा किल नाऽऽप्यते जगति या तुच्छैः कृतान्साभरैः(?),
किं पीयूषमशेषमानवगणैर्यल्लभ्यते न क्वचित् ।
का कम्रा खलु शर्कराऽपि कठिना या कर्करौघात्प्रभो!,
मृद्व्यास्ते पुरतः समस्तजनतासाधारणीया गिरः ॥११॥
लोकानां कुमतग्रहः शिवपथप्रत्यूहभूतः प्रभो!,
प्राप्नोति प्रलयं त्वदीयविशदब्राह्मीवितानश्रुतेः ।
नन्वम्भोदरवर्षणाज्जनमनःसन्तापपूगप्रदः,
किं तापप्रकरः प्रभूष्णुरभितः स्थातुं भवेद् भूतले ॥१२॥
वाचस्ते व्रतिवासवोरुविबुधावाच्याक्षरोद्युन्मुख-
श्रेणीदाननिदानतोदयजुषः स्वर्द्रोर्लता स्वल्पदा ।
अप्युद्दीप्रविभावतो गृहमणेरुद्योततः सम्भवेद्,
भूयानेव ननु प्रकाशविषयः सूर्यस्य तीव्रत्विषः ॥१३॥
तावद् द्यत्यतिमानमानतटिनीवेगो वृषानोकहं,
तावद् क्रोधविभावसुर्गुणतृणश्रेणीं दहत्यङ्गिनाम् ।
तावल्लोभतमास्तनोति च भयं सन्तोषशीतद्युते-
र्यावत् तावकवाक्सुरद्रुमलता न प्रापि पापापहा ॥१४॥
कण्डूयामपनेतुमिच्छति वपुष्यग्रेण कुन्तस्य सः,
व्यालं कालवपुर्विभाव्रजजुषं कण्ठे करोत्याशु सः ।
कारागारगुहोदरेऽभिलषति स्थातुं स मूढाग्रणी-
स्त्वद्वाचां वचनीयतां वितनुते विश्वार्च्य! जाड्येन यः ॥१५॥
धिक् धिक् तान् किरति त्वयि स्फुटकृते ब्राह्मीरसे सर्वतः,
सर्वानन्दनिदानतामधिगते पङ्कापहारक्षमे ।
वर्षत्याशु जवासका इव नवाम्भोवाहवृन्दे गलत्-
कामोत्तापकदम्बके किल न ये सन्तोषपोषं ययुः ॥१६॥
दुष्टाः शिष्टपथप्रयाणविमुखाः कारुण्यपुण्योज्झिताः,
कन्दर्पद्विपकेलिपातिममहा मन्दाक्षवृक्षाश्च ये ।
भारत्या भवतो भवभ्रमभिदा स्वामिन्! समानिन्यिरे,
ते सद्वर्त्मनि गाव उत्पथगता रज्ज्वेव सूतस्थया(?) ॥१७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्त्वं त्वद्वचसां विना न जनता दीप्ताऽपि विद्याग्रहा-
दन्येषां नितमां तमःसमुदयं नेतु प्रणाशं प्रभुः ।
पुण्याम्भोनिधिवृद्धिसिद्धिजनकं प्रोद्यत्कलापेशलं,
पीयूषद्युतिमन्तरेण तुहिनाभीशोरिव प्रेयसी ॥१८॥
पाण्डित्यं जडतावतां प्रकटयत्युत्पादयत्युच्चकै-
रानन्दं रुचिरं चिरं विरचय(?) क्लेशप्रबन्धात्मनाम् ।
स्थैर्यं संयमिनां च संयमपथे सम्पादयत्यद्भुतं,
सर्वत्राऽपि सरस्वती तव विभो! जाता गुणस्फातये ॥१९॥
एवं विश्वमनश्चयस्मयहरप्रोद्यद्गुणश्रेणिभि-
स्तातैर्जातजगत्सुखैः शिशुशिखिप्रीत्यैः प्रसाद्याः जवात् ।
स्वाङ्गारोग्यपरिच्छदादिकतनूल्लाघत्ववृत्तान्तसान्-
नीरव्यक्तिकरी प्रसादविलसत्पत्री पयोमुग्धया ॥२०॥

* * *

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१८)

लक्ष्मणपुर्यां विराजमानं श्रीजिनचन्द्रसूरिं प्रति जयपुरनगरतः कमलसुन्दरगणिप्रेषितं विज्ञप्तिज्ञप्तिपात्रं पत्रम्

– सं. म. विनयसागर

विज्ञप्तिपत्र-लेखन मौलिक, स्वतन्त्र एवं जैन विधा है । प्राकृत, संस्कृत और देश्य भाषाओं में इसकी रचना की जाती थी और वह गद्य-पद्य मिश्रित भी होती थी । पढ़ते हुए ऐसा आभास होता था कि स्वतन्त्र काव्य हो या लघु काव्य या चम्पू काव्य हो । सभी प्रकार से अलङ्कारों से वेष्टित यह विधा १५वीं शताब्दी से चली आ रही है और आज तक चल रही है । आज का स्वरूप अवश्य बदल गया है । इस विधा में लिखित शताधिक विज्ञप्तिपत्र प्राप्त हो चुके हैं । कोई छोटे से छोटे हैं तो कोई बड़े से बड़े १०८ फिट लम्बे । कई चित्रित हैं तो कई अचित्रित । कईयों में नगर की वीथियों का, बाजारों का, गन्तव्य स्थलों का विशेष वर्णन होता था और कईयों में पूज्यश्री का, स्थान का, प्रेषणस्थान का और समाचारों का वर्णन होता था। यह विज्ञप्तिपत्र अचित्रित और केवल पूज्यश्री का, दोनों नगर-स्थानों का और समाचारों का संकलन मात्र है ।

प्रस्तुत विज्ञप्तिपत्र में श्रीजिनरङ्गसूरिशाखा के छठे पट्टधर श्रीजिनचन्द्रसूरि का वर्णन है । इनके सम्बन्ध में खरतरगच्छ बृहद् इतिहास पृ. ३१२-३१३ में परिचय छपा है वह पठनीय है ।

विज्ञप्तिपत्र का वर्ण्य विषय :

प्रस्तुत विज्ञप्तिपत्र में वर्ण्य-विषय निम्न है । प्रारम्भ के १-११ दोहा में पञ्चतीर्थी - श्री ऋषभ, शान्ति, पार्श्व और महावीर को नमस्कार कर १२वें दोहे से सत्रह तक स्वस्ति से प्रारम्भ कर श्रीजिनचन्द्रसूरि जो कि कौशल देश के लक्ष्मणपुर में विराज रहे हैं उनको यह पत्र लिखा गया है । तत्पश्चात् गुरु-महाराज के चरणों से पवित्रित श्रीलक्ष्मणपुरी का वर्णन निम्न छन्दों में किया गया है –

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाति छन्द पद्य १-९, दोहा १, एक संस्कृत वसन्ततिलका छन्द, चन्द्रायणा में एक पद्य में, लक्ष्मणपुरी (लखनऊ) के जिनमन्दिर, उपाश्रय, बाजार, श्रेष्ठीवर्ग का सुन्दर वर्णन किया गया है। कौशलदेश स्थित लखनऊ का श्रेष्ठ वर्णन भी किया है। इसके पश्चात् दोहा १-५, छन्द जाति भुजंगी ८, कवित्त १, दोहा ५, अमृतध्वनि छन्द २, दूहा १, छन्द ८, निसाणी ९, दूहा ७, छन्दजाति त्रिभङ्गि ११ में श्रीजिनाक्षयसूरि पट्टधर श्रीजिनचन्द्रसूरि के गुणवर्णनों से ओत-प्रोत है। ओसवंशीय केसरदे के पुत्र के गुणगणों का, आचार्यपदस्थित गुणों का वर्णन करते हुए, मूलराय का और यादवकुलीय रायसिंह का वर्णन किया गया है। मूलराय और रायसिंह सम्भव है लखनऊ के अधिकारी होंगे, जो कि आचार्यश्री के भक्त थे।

तत्पश्चात् लक्ष्मणपुरी का संस्कृत भाषा में अनुष्टुब् छन्द में २८ पद्यों में वर्णन किया गया है। इसमें कहा गया है कि दशरथ के पुत्र राम का लक्ष्मण के प्रति बहुत स्नेह था इसीलिए लक्ष्मणपुरी बसाई गई। नगर की बड़ी-बड़ी हवेलियों का, अग्निहोत्रीय ब्राह्मणों का, शतघ्नियुक्त युद्धविशारदों का, हाथियों का, ध्वजासंयुक्त देवमन्दिरों का, गोमती नदी का, उद्यानों का, ऋषियों का सुन्दर सा वर्णन किया गया है और निवेदन किया गया है कि आप जयपुर नगर पधारिए, यहाँ के भक्त आपके दर्शनों के लिए तरस रहे हैं।

तत्पश्चात् जयपुर का संस्कृत अनुष्टुप् छन्द में ६७ पद्यों में काव्यरूढी के अनुसार सुन्दरतम वर्णन है। भगवान पार्श्वनाथ को नमस्कार कर वर्णन प्रारम्भ किया गया है जिसमें कहा गया है कि सूर्यवंशीय सवाई जयसिंह ने यह नगर बसाया था। यूपद्वारों से अलङ्कृत, कदलीवनों से शुभित, मृगादि पशुओ से वेष्टित, वेदीमण्डल से मण्डित, अग्निकल्प ऋषियों से सेवित, चारों तरफ पर्वतों से वेष्टित, जलप्रपातों से युक्त, हंस आदि पक्षियों से सेवित, सुन्दर राजमार्ग, व्यापारियों से युक्त, दुर्ग और परिखा से संयुक्त, शतघ्नि आदि अनेक यन्त्रों से युक्त, पवित्र ध्वजाओं से तोरणों से युक्त, हाथी-रथ इत्यादि से अलङ्कृत, देवायतनों से विराजमान, विद्वानों से सेवित, वेणू-वीणा इत्यादि वाद्यों से रात-दिवस उत्सवयुक्त, ब्रह्मघोष शब्द से युक्त, बड़ी-बड़ी अट्टालिकाओं से युक्त, बड़े-बड़े चौराहों से मण्डित, स्वाहा इत्यादि ब्रह्मघोषों से सुशोभित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नगर का सुन्दर वर्णन है। जहाँ अनेक समृद्धि से युक्त श्रावकगण निवास करते हैं। भगवान पार्श्वनाथ मन्दिर है जो कि ध्वजापताकाओं से पहचाना जाता है। उसके पश्चात् संस्कृत गद्य में यह चाहना की गई है कि हे प्रभु! आप हमें दर्शन दीजिए जिससे हमारे सर्व मनोरथ पूर्ण हों। आप अन्यत्र कहीं न जाएं, जयपुर ही पधारें।

तदनन्तर संस्कृत अनुष्टुप् के १३ श्लोकों में आचार्यश्री के निर्मल गुणगणों का वर्णन है। इसके पश्चात् समासबहुल गद्य शैली में रमणीय वर्णन है। इस वर्णन में आचार्यश्री का नाम दिया गया है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि इस गद्य भाग को कहीं से लिया गया है। क्योंकि अमुक नगरतः उल्लेख किया गया है, इसीलिए यह इसका अंश प्रतीत नहीं होता है।

तदनन्तर प्राचीन राजस्थानी और ढूंढाणी मिश्रित भाषा में यहाँ के समाचार हैं। लेखक ने पर्युषणपर्वाराधन करते हुए अपने कार्यकलापों का वर्णन किया है और आचार्यश्री के गुणगणों का वर्णन है। यह भी लिखा गया है कि आप हमारे ऊपर कृपादृष्टि रखें और जैसे भी हो जयपुर पधारने की कृपा करावें किंसंसे कि हमारे मनोरथ पूर्ण हों। उसके बाद ६ दोहों में कल्पसूत्र वाचन और प्रभावना इत्यादि का उल्लेख किया गया है।

अन्त में भास लिखा गया है जिसमें कि भगवान महावीर से पट्ट-परम्परा दी गई है। सुधर्म गणधर से प्रारम्भ कर जिनेश्वरसूरि और दुर्लभराज का उल्लेख करते हुए, नवाङ्गवृत्तिकारक अभयदेव, जिनवल्लभ, जिनदत्त, जिनकुशलसूरि का उल्लेख करते हुए, जिनरङ्गसूरि परम्परा में श्रीजिनअक्षयसूरि के पट्टधर श्रीजिनचन्द्रसूरि का वर्णन किया गया है और यह कहा गया है कि इस पंचम काल में नामधारक आचार्य तो बहुत हैं, किन्तु आपके समान कोई नहीं है, कहते हुए वाचक लावण्यकमल के शिष्य कमलसुन्दर का उल्लेख किया गया है। इसके पश्चात् संस्कृत के स्रग्धरा के पाँच छन्दों में ऋषभादि पञ्चतीर्थी का वर्णन किया गया है।

यह प्रति श्रीजिनरङ्गसूरि शाखा के उपाश्रय में श्रीमालों के मन्दिर के भण्डार में विद्यमान थी, किन्तु अब यह सङ्ग्रह श्रीमालों की दादाबाड़ी, जयपुर में आ गया है। पत्र संख्या ७ है, साईज २५.३ x १२.३ से.मी. है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पङ्क्ति १८ और प्रतिपङ्क्ति अक्षर ४४ हैं। लेखनकाल २०वीं शताब्दी है।

पत्रप्रेषक कमलसुन्दरगणि है जो कि लावण्यकमल के शिष्य है। इनके सम्बन्ध में और कोई विशेष परिचय प्राप्त नहीं है।

सम्भवतः विज्ञप्तिपत्र प्रेषण के समय श्रीमालों के मन्दिर का और दादाबाड़ी का निर्माण नहीं हुआ था क्योंकि इसमें सुपार्श्वनाथ मन्दिर का ही उल्लेख है। मन्दिर और दादाबाड़ी का निर्माण उनके पट्टधर श्री जिननन्दीवर्धनसूरि से हुआ है, अतएव यह पत्र उसके पूर्व का ही है।

दूहा

स्वस्तिश्री शिवसुख करण, हरण अशिवदुख दूर।
सरण प्रथम जिनवर चरण, प्रणमुं आणंद पूर ॥१॥
जगकारण तारण-तरण, वरण अठारह नाथ।
वृषभांकित श्रीऋषभजिन, समरण कीयां सन्नाथ ॥२॥
स्वस्तिश्री जिन सोलमो, शान्तिनाथ सुखकार।
मृग-लांछन कंचन-वरण, प्रणमुं जग आधार ॥३॥
पारेवो भय पांमतो, सरणें राख्यो जेण।
अनुकंपा-भंडार जिन, इन्द्र प्रशंस्या तेण ॥४॥
स्वस्तिश्री यादव-तिलक, नेमीस्वर जगदीस।
ब्रह्मचारि-चूडामणि, वांदु हुं निसदीस ॥५॥
तोरणथी पाछो वल्यो, पसुआं सुणी पुकार।
राज तजी संजम भजी, राजीमती-भरतार ॥६॥
स्वस्तिश्री वामा-तनय, तेवीसम जिनराज।
अहि-लंछन संसार-जल, तरिवा पोढी पाज ॥७॥
मेघमाली बहु मेघनो, उपसर्ग कीध जि वार।
तिण वेला आव्या तुरत, सुर दोय सानिधकार ॥८॥
स्वस्तिश्री लघु वेस जिण, गिर कंपाव्यो धीर।
सुरपति-चित चमकी करी, जांण्यो ए महावीर ॥९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धारथ-नंदन नमुं, वर्द्धमान जिनचंद ।
केसरि-पय-लंछन प्रगट, कनक-वरण सुखचंद ॥१०॥
नाभि-नंदन अचिरा-सुतन, नेम पास महावीर ।
त्रिकरण सुद्ध त्रिकाल हुं, प्रणमुं पांच सधीर ॥११॥
स्वस्तिश्री सुख-मंजरी, शोभा-फल शिरदार ।
सुनिजर-वर-छाया-सघन, समर सुगुरु-सहकार ॥१२॥
राजे रूप छती रती, सती सरसती मात ।
सुप्रसन सनमुख होत ही, पाप पहार विलात ॥१३॥
भट्टारक सूरिंदवर, श्री**जिनअक्षयसूरीस** ।
पट्ट-प्रभाकर रवि समो, श्री**जिनचंदसूरीस** ॥१४॥
गाम नगर पुर पट्टणे, देता धम्मुवएस ।
जिन आगम आसे मुदा, विचरें कौसल-देस ॥१५॥
कौसल देश सुहामणो, तामें नगर अनेक ।
लछमणपुर अति सोभति, ओपम अतिहे छेक ॥१६॥
गुरु चोमास तिहां रह्यां, श्री**जिनचंदसूरिंद** ।
मुनिगण मांटे राजतो, ज्यों तारा मधि चंद ॥१७॥

अथ गुरुचरणरजपवित्रीकृत-श्री**लछमणपुर**वर्णनम् —

छन्द जाति

सकल नगरमां **लछमणपुर** वर अमरी अवतार ।
मंदिरगिरि सम जित-वर-मंदिर दंड कलस ध्वज सार ।
ऋषभादिक श्रीजिनवर राजे छाजे महिमा अगम अपार ।
सुखदायक एही सकल जिणेसर परमेस्वर अवतार ॥१॥
परमदयाल ए परमकृपानिधि भव-भय-भंजणहार ।
इम विहार मनोहर दीसें सुंदर अतिहि उत्तंग उदार ।
श्रावक श्रद्धावंत विवेकी पूजे सतर प्रकार ।
रूपवंती रंभा सदृस रामा युगतें करे जुहार ॥२॥
पंच शब्दा वाजा अतिहे वाजे गाए गीत रसाल ।
धणणण घंटा झणणण झल्लर ठणणण ठणके ताल ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दोंदो बाजे गुहिर पखावज धौं धौं गुहिर निसांण ।
नाटिक बहु नृत्यें करत सुभक्तें बोले अमृतवांण ॥३॥
भविजन सुभ भावे भावत भावें बोलें छंद विसाल ।
जिहां पोषधशाला रंग रसाला दीपे झाकझमाल ।
श्रावक भावक तिहां कण बहुला करता धर्म सुभाव ।
नित पोसह ध्यानें रहत सुवानें भवसमुद्र ज्यौं नाव ॥४॥
ए नगर निरोपम उत्तम मंदिर सप्तभूमि आवास ।
गोख जोखनां ठाम झरोखा सुपरे विविध विलास ।
चोहटा बहु सोहै जन मन मोहै दीठां आवे दाय ।
व्यवहारी मोटा नहीं धन छोटा दुंदाला सुभ ठाय ॥५॥
संघ सोभागी गुणनो रागी जीवदया प्रतिपाल ।
पुण्य प्रभावे छत्र धरावे असवारी सुखपाल ।
कोटीसर लखपति जिहां लायक सोभावंत गृहस्थ ।
देश देशाउर सघली चहुंदिस जेहनी जोर प्रशस्त ॥६॥
गंगा नीर परें मन उज्ज्वल दीरघ चित्त न रोस ।
धण कण कंचन विनय विचक्षण लक्षण माणिक कोस ।
दान तणें गुण जेणें रोपी कीरत-वेल उदार ।
त्रिभुवन-मंडिप कीधो तेणें चढित चढित विस्तार ॥७॥
एम अनेक वसें व्यवहारी अधिकारी सुविचार ।
सूत्र सिद्धांत सुणें सुभ भावें मन धरी हर्ष अपार ।
खरतरगच्छपति गुरुराज-पसाइं वरते जयजयकार ।
लछमणपुरवरनो संघ सनेही संघ सकल सिणगार ॥८॥
गुरु तिहां पधारे देव जुहारे सारे वंछित काज ।
लछमणपुरना संघ प्रति गुरु वंदावे सुभ साज ।
भाव धरी सदआगम सुणतां तुम वयणें निसदीस ।
श्री**जिनअक्षय**सूरिसर पाटे प्रतपें श्री**जिनचंद**सूरीस ॥९॥

इम श्री**लखनोऊ**ा, केता करुं वखांण ।
गछपति चोमासो रह्या, तिण सुंदर सुभ ठांण ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धन्यास्त एव वर**कौशल**देशधन्या,
यस्याऽऽगता प्रलुसजङ्गमकल्पवृक्षः ।
धन्यास्त एव नरनाथ नरः श्रियाणं,
यः सेविता प्रभुपदाम्बुजस्तेऽपि धन्याः ॥१॥

चन्द्रायणो

सहेर जुं **कौसल** मांहि अनेक पिछांनीये,
एक एक तें एक अमोलक जानिये ।
गछपति रहे चोमास सुवास प्रभातियें ।
हरि हां, ता ते लछमणपुरीयें विशेष वखांनियें ॥१॥

अथ भट्टारकश्रीजिनचन्द्रसूरीश्वरपरमगुरुगुणवर्णनम्-

दोहा

हवे गुण गाऊं गुरु तणा, सुणज्यो सहु सावधान ।
पट्ट परंपर परगडो, ठांम ठांम जस मांन ॥१॥
पूज्याराध्यतमोत्तमह, परमपूज्य गुणवंत ।
चारित्रपात्र-चूडामणि, साधु-सिरोमणि संत ॥२॥
कुमति-विध्वंसन-दिनकरु, सकल-कला-संपूर्ण ।
विद्वज्जन-मुगटां-मणि, सरसती-कंठाभर्ण ॥३॥
चिंतामणि जिम दोहिलो, पांमीजे कृतपुण्य ।
तिम श्री दर्शन स्वामिनो, जे पामे ते धन्य ॥४॥
सकल साधु सिरोमणि, गुण छत्रीस भण्डार ।
बुद्धिनिधान महाबली, सूरीश्वर सिरदार ॥५॥

छंद जाति भुजंगी

सदा साधु आचार सारे सराहे, सहु ओपमा अंगमे रंग आहे ।
चुरासी-गच्छां राव दीपे सचावो, रिधुराज राजे खरो गच्छरावो ॥१॥
महायोगविद्यासणी मोह माया, कसे ठद्ध(?) अट्ठादिके कट्ठकाया ।
दमें पांच इन्द्री कीयो काम दूरे, च्यारुं ही कषायादि के चक्र चूरे ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सझे शीलसन्नाह सामंत सूरा, पुणा पेत माता विण्ये पक्ष पूरा ।
धरे धीर ध्यानं के धोरी धकावे, चुणे चातुरी तीर चूंपे चलावे ॥३॥
खिमा खग्ग साहे क्षत्री वट खेले, अरिकंध कर्मादि आठे उथेले ।
दया पग ऊरे चढी एक डांणं, सवाडे मवाडे लिया धम्मसाणं ॥४॥
ऑधारे दया ध्रम्म आचार ओपे, लगी लीह मर्याद कद्दे न लोपे ।
मंडे वाद कुमति तणां मांन मोडे, जुडे जेन आचार गोतम्म जोडे ॥५॥
झलक्के भलो तेज भाते सुभाणं, त्रिभे मुक्खचंदो इसो भाल जाणं ।
गिरा सार सा आप ओतार गावे, सुधा जेहवी वांण बोले सुहावे ॥६॥
इला रूप जीतो सहुओ अनंतो, गुणे गात उज्जास गंगा तरंगो ।
महीपति मोटा जिके आंण माने, करे छत्र ऊभा थका हेक काने ॥७॥
सोहै पाटवी सूर तेजे सवाई, **जिनाक्षय्य** पाटे प्रतप्पे सवाई ।
जिनचंदसूरिंद सूरीस राजा, चिरंजीव जो **खरतरागच्छ** राजा ॥८॥

कवित्त

ठोर ठोर थिर थांन सकल जग जास सराहे,
महिमावंत महंत चरण परसिद्ध सु चाहे ।
छत्रपति छोगाल लुलित कर पावां लागे,
कीरत गुणी कहंत राजवी वंदे रागे ॥
तप तेज विद्या अतुल ई दन को आवे आवर ।
जिनअक्षय पाट राजे रिधू श्री**जिनचंद**सूरीसवर ॥१॥

दूहा

स्वस्तिश्री श्रीपूज्यजी, भवियण वंदे पाय ।
थुणिये भाव धरी सदा, जिम होइं विउल पसाय ॥१॥
चिंतामणि सुरतरु समो, महिमा जास विसाल ।
भाल रती अष्टम शशि, जग जयवंत मयाल ॥२॥
सयल कला करि दीपतो, मदन मनोहर रूप ।
अनुपम गुणनिधि अतिनिपुण, पय प्रणमें नित भूप ॥३॥
तेजस्वी गुण मोहतो, मानवमन संसार ।
माननि भा(गा?)वे गीत गुण, निर्जित कामविकार ॥४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जय जय सुविहित-मुनि-रयण, चंदन-वयण रसाल ।
तिहुअण-मंडप दीपतो, कीर्त्ति फुरे नितु जास ॥५॥

अथ गुरुगुण अमृतध्वनिः

पद पायो खरतर प्रगट, अधिके पुण्य अंकूर ।
श्रीजिनचंदसूरिंदजी, लब्धि गुणें भरपूर ॥
चालितो भरपूर, गुणेसर भूर, चढते नूर, वाजे तूर, शशिहर सूर,
तेजे पूर, मनमथ चूर, सील सनूर, कामित पूर, दालिद चूर,
पुण्य अंकूर, लच्छी लूर, घृतगुडचूर, वंछितपूर, कर्मकसूर,
देखत दूर, सदा सनूर, गुण भरपूर, एम जरूर, पुण्य पंडूर,
पद पायो खरतर प्रगट० ॥१॥

पायो खरतरगच्छ प्रगट, पुन्य अधिक परसिद्ध ।
जिनचंदसूरि दीठां दरस, सदा होइ नव निद्ध ॥
तो चालतो नवनिद्ध, ऋद्ध समृद्ध, दिन दिन वृद्ध, पावत ऋद्ध,
कामित सिद्ध, बहु दत दिद्ध, सुक्रत किद्ध, जस धण लिद्ध, मेरु प्रसिद्ध,
कहे जस किद्ध, वंछित दिद्ध, प्रणमित सिद्ध, पुण्यप्रसिद्ध,
पायो खरतरगच्छ प्रगट० ॥२॥

दूहा

इम अनेक गुणें करी, सोहै गुण छत्तीस ।
विविध करीनें वर्णवुं, सहु गच्छनो तूं ईस ॥१॥

छन्द चालि

जिहां सोहे नरवर राज धर्मी पुन्यनो भण्डार ए ।
तिहां धर्मकरणी सोह तरुणी लच्छीने अनुहार ए ।
बहु लोक दाता धर्म ताता रसिक ने छोगाल ए ।
तिहां द्रव्य खरचे पाप विरचे दिए दुर्बल भाल ए ॥१॥
प्रासाद सोहै मन्त्र मोहै जैन नें शिव सोहता ।
पोषधशाला धर्म चाला साधु ध्यान सुसोहता ।
नर नार पूजे कुमति रूजे साधता सहु धर्म ए ।
इम हाथ जोडी मांन मोडी भाषता नही मर्म ए ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

घर घरे ओच्छव मांन मोच्छव करत रंग रसाल ए ।
नर नार सुंदर नवे नाटक पुजत पाप पखाल ए ।
भरि फेर ताल कंसाल मद्दल तंतुवेणी सार ए ।
ढमढमें ढोल नीसांण तबला सरणाई बहु ताल ए ॥३॥
अनमीय राज अबीट अगंजन आय तें सहु जेनमें ।
चतुरंग सेना सज जेता पेसतां मन ही गमें ।
ढींचाल उद्भट सुभट सोहे भीम जिम ते सोहता ।
सरपें लपेटा बांध फेंटा देखनें मन मोहता ॥४॥
वली ईत नांही नीतिमारग लोक सब ते पालता ।
इण देस नांही दुक्ख दुरभिख शुद्ध पंथ सहु चालता ।
गुणराज भरीयो ज्ञान दरीयो धर्म अर्थ साधे सहु ।
जिहां लोक सुखीया नांही दुखीया धनद जिम ही सेवहु ॥५॥
दुंदाल ने फुंदाल सोहै धर्म चरचा नर साधता ।
नरनार सुरता ध्यांन धरता ज्ञान शुद्ध आराधृता ।
जप जाप करता तत्त्व धरता ब्रह्मचर्य पाले सदा ।
षट्दर्श पोषे रहे जोषे दान मांने सहु मुदा ॥६॥
केई रुद्र पूजे मल्ल झूझे करत क्रीडा अति घणी ।
बहुनार सखियां मिरग अंखियां अंक हरिपूजन भणी ।
मिल कंठ वाहे गीत गाहे रसिक इहविध चालता ।
करि चोट नेणां बोल वेणां रंग रली करि हालता ॥७॥
जिहां सुगुरु सानिध होइ नवनिध इत ठे नवि भीत है ।
महिमा विराजे साध छाजे धर्मनी बहु रीत ए ।
गुणवंत गुहरा लोक सोहरा सुजसरा भंडार ए ।
इम देख महिमा कही जेहमां सहेरनो आचार ए ॥८॥

नीसाणी

हंसासण माता अक्षरदाता, तुझ सहु पाय नमंदा है ।
जिनचंदसूरिंदा जस मकरंदा, सहु देसां पसरंदा है ।
केसरदेनंदन सब जग वंदन कामरूप जीपंदा है ।
तुम गुण के आगर विद्यासागर कंचन काय दीपंदा है ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सब गछ के राजा बहोत दिवाजा रिपुवाता भाजंदा है ।
मोहन अवतारी विद्या सारी आगम अर्थ जाणंदा है ।
सब शास्त्र संपूरं सदा सनूरं नयणां दीठ ठरंदा है ।
जिनाक्षय पटधारी शुद्ध आचारी, सवि गुण मांगा सोहंदा है ॥२॥
सवि भूपत रांणा हुकम प्रमाणां तुझ चरणां आय नमंदा है ।
करुणा को दरीयो गुणमणि भरीयो सबकुं सुक्ख करंदा है ।
इकविध कुं टाले दुविध संभाले तीनूं तत्त्व जाणंदा है ।
च्यारुं कुं चूरे पांच हजूरे जीवदया पालंदा है ॥३॥
भय सप्त निवारे मद सहु वारे नवविध ब्रह्म धरंदा है ।
दस श्रमण के धारक सहु अंग पारक बार उपांग जाणंदा है ।
त्रयोदशकुं टारे चवद्दकुं धारे पनरह सिद्ध समरंदा है ।
कला षोडशं धारी लगे प्यारी वांणी चित्त मोहंदा है ॥४॥
सतरह परिहारं बंभ अढारं सदगुरु ते टालंदा है ।
काउसग के दोषं कढनह रोषं मनसुं दूर तजंदा है ।
वीस विसवा पाले दया संभाले निश्चल ध्यान धरंदा है ।
संबल इकवीसं बावीस परीसं सुद्ध मनें जीपंदा है ॥५॥
जे सुगडांगं अध्येन सुचंगं चौवीस जिन ध्यावंदा है ।
पचवीस कुं भावे चित्त रमावे भली जुक्त भावंदा है ।
छावीस साधारं कल्पविचारं तिणसुं चित्त लागंदा है ।
जे गुण अणगारं सतवीस संभारं सब ते अंग रमंदा है ॥६॥
कहे मुनीसं आचार अडवीसं ताका अर्थ कहंदा है ।
श्रुत ओगणतीसं तजे मुनीसं तांकुं दूर करंदा है ।
मोह निवारे तीसकुं डारे निरमल जाप जपंदा है ।
सिद्ध गुण इकवीसं लक्षण बत्तीसं श्रीगुरुध्यान ध्यावंदा है ॥७॥
तेत्रीसकुं टाले दोष निहाले तांकुं गुरु वारंदा है ।
एहवा जिनेशं अतीशय चोतीसं गुरु के अंग वसंदा है ।
पेंत्रीस गुण वांणी अमृत सम जांणी सुरनर सुणि रिझंदा है ।
छत्तीस गुण पूरा सदा सनूरा गुणे करि अधिक फाबंदा है ॥८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खरतरगछनायक विश्वमें लायक सब जन आय नमंदा है ।
गछपति गुणधारी सुद्ध आचारी श्री**जिनचंद**सूरिंदा है ।
बहु कीर्त्ति तुमारी जस विसतारी मेरु अचल गिरिंदा है ।
प्रतपो गछधारी जिम दुतारी रवि ससि तेज तपंदा है ॥९॥

दूहा

तुम गुण रयणायर भरयो, लेहर ज्ञान लीयंत ।
पार न को पावै नहीं, अतिसय धीर अनंत ॥१॥
ज्ञानादिक मोटा रयण, अंतरंग भासंत ।
च्यारुं दिस चारित्र सजल, पसरयो पूरण पंत ॥२॥
गयणांगण कागद करुं, लेखण करुं वनराय ।
सात समुद्र स्याही करुं, तोही गुरु गुण लख्या न जाय ॥३॥
अमह हीयडुं दामिन कुली, भरीया तुम गुणेण ।
अवगुण इक न सांभले, वीसारिजे जेण ॥४॥
हीयडा ते किम वीसरे, जे सहगुरु सुविचार ।
दिन दिन प्रति ते सांभरे, जिम कोयल सहकार ॥५॥
वीसार्यां नवि वीसरें, समर्यां चित्त न मांय ।
ते गुरुजी किम विसरे, जे विण घडी न जाय ॥६॥
गिरुआ सहेजे गुण करे, कंत म कारण जांण ।
तरु सींचे सरवर भरे, मेघ न मांगे दांण ॥७॥

गुरुगुणवर्णनम्, छंद जाति त्रिभंगी

प्रभुतागुणपूरं सुजस सनूरं पुण्य अंकूरं सत्सूरं ।
हर रोज हजूरं तप रन तूरं किय दुसवंता चकचूरं ।
शासनपति साहं बेपरवाहं धर्मजिहाजं लिय लज्जं ।
सूरी शिरताजं सकल समाजं जिनचंदसूरि श्रीगछराजं ॥१॥
अति निरमल अंगे गंग तरंगे किरिया रंगे सत्संगं ।
अहनिसि उछरंगं वजत मृदंगं ग्यान सुधंगं चितचंगं ।
साहिब सिरदारं दिलदातारं पसरी कीरति दधि-पाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिहर छल पासं करत विकाशं संजम मारग अभ्यासं ।
माधुर मृदु हासं चंद उजासं नीतनिवासं स्यावासं ।
कीरत कैलासं खूबी खासं हीय हुलासं सुखसाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥३॥
भज हे वैरागं नोबत आगं भवभय जागं बडभागं ।
आगम अथागं दोष न दागं लालच हंदा नवि लग्गं ।
साहिब सोभागं मालिम मागं कोटि सुधारत जनकाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥४॥
आलिम उजवालं झलहल भालं शत्रुशालं किरणालं ।
माया मदजालं तजि जंजालं सदा खुस्यालं प्रतिपालं ।
लय सांई लालं मधि छतिपालं कहे अष्टापद ओगाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥५॥
श्रीजिनअक्षय के पाटं सहजे सुघाटं थप्पे जन मिलि थिरथाटं ।
भेरी भरु भ्राटं मचि गहगाटं सुध सहनाई चहचाटं ।
उड जात ओचाटं खुलत कपाटं देखत दरसन सम्राजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥६॥
लोचन अरविंदं मुख सुखकंदं राकाचंदं आनंदं ।
फेडत दुखफंदं वखत विलंदं मुनिगण इंदं योगिंदं ।
असरन आधारं श्रेष्ठाचारं कुमति काचर शिरवाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥७॥
कृत अधम ओधारं पर उपगारं धन अवतारं व्योहारं ।
ओसवाल उदारं वंशशृंगारं सभासोहागन-हीयहारं ।
थेई थेई ततकारं शब्द उचारं, दृगदिगगं ध्रुव गतिछाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥८॥
दे आदर मानं देत सुदानं पूरनब्रह्म ही पहिचानं ।
करिया कमठानं अखय खजानं रूपनिधानं नहि छानं ।
ज्ञानामृतपानं धर्मसुध्यानं पंडित गुन पेरंदाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिन्दूपति रानं हुकम प्रमाणं शिरेजिहानं आज्ञानं ।
मूलराय सुजानं दरस लुभानं **यादवकुल** में राजानं ।
रायसिंघ जुबानं मानित आनं सामिल सज्जन साहाजं ।
सूरी शिरताजं.... ॥१०॥
मूलराय सुजानं दे सनमानं आलिम पन्ना फुरमानं ।
विधि विधि वाखानं व्रत पचखानं दसधा मुनिध्रम दीवानं ।
सूथरी हेसानं नीतनिदानं करम कुरोग ही इल्लाजं ।
सूरी शिरताजं सकल समाजं, जिनचंदसूरि श्रीगच्छराजं ॥११॥

अथ लक्ष्मणपुरीवर्णनम् --

धन्या ह्येषा पुरी लोके यत्र यूयं व्यवस्थिताः ।
धन्याश्च श्रावका ह्येते युष्मत्सेवनतत्पराः ॥१॥
ह्यत्रैव कथयिष्येऽहमितिहासं पुरातनम् ।
सावधानतया स्वामिन्! श्रोतव्यः च विशेषतः ॥२॥
पुरा ह्यासीन्नृपः कश्चि**दयोध्या**धिपतिर्महान् ।
नाम्ना **दशरथो** नाम सर्वलोकेषु विश्रुतः ॥३॥
तस्य ह्यपत्यकामस्य जातं पुत्रचतुष्टयम् ।
तत्र ज्येष्ठतरो **रामः** सर्वैश्वर्यगुणान्वितः ॥४॥
तस्य प्रीतिर्महा जाता **लक्ष्मणे**न समं खलु ।
तस्यैव लक्ष्मणस्येयं पुरी रम्या पुराऽभवत् ॥५॥
सर्वसम्पत्तिसंयुक्ता धनधान्यसमन्विता ।
सुरपादपसंबाधा रत्नसोपानवापिका ॥६॥
नानाजनसमाकीर्णा स्वर्णप्रासादशोभिता ।
ब्रह्मघोषेण संयुक्ता ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥७॥
धूपिता चाग्निहोत्रेण वृक्षराजिविराजिता ।
दुर्ग(र्गा) दुर्गपरिक्रान्ता सर्वतः परिखान्विता ॥८॥
शतघ्नीपरिघोपेता सहस्रघ्नीभिरेव च ।
सुभटैश्च समायुक्ता नानायुद्धविशारदैः ॥९॥
मत्तमातङ्गयूथानां कर्दमैश्च सुगन्धिता ।
शिबिकास्यन्दनाश्वैश्च ह्याकुला बहुभिस्तथा ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवतामन्दिरैश्चैव ध्वजकेतुसमन्वितैः ।
भ्राजिता सर्वशोभाढ्या सर्वगन्धसुगन्धिता ॥११॥
काञ्चनानि विमानानि राजतानि गृहाणि च ।
तपनीयगवाक्षाणि मुक्ताजालान्तराणि च ॥१२॥
हैमराजतभौमानि दिव्यमालयुतानि च ।
प्रभया भ्राजमानानि काञ्चनानि बृहन्ति च ॥१३॥
हैमराजतमुख्यानां भाजनानां च सञ्चयैः ।
ह्येतैश्चाऽप्यधिकैश्चाऽपि राजमाना विशेषतः ॥१४॥
एषा सरिद्वरा स्वामिन् गोमतीनाम नामतः ।
ईदृशी हि पुरा शोभा ह्यस्या वै वर्णयामि ते ॥१५॥
दीपिता काञ्चनैर्वृक्षैः कान्त्या ह्यग्निशिखोपमैः ।
शालैः प्रियकतालैश्च पूर्णकैश्च द्रुमैस्तथा ॥१६॥
चम्पकैर्नागपुष्पैश्च नानाशकुनिनादितैः ।
तरुणादित्यसंकाशैः रक्तैः किशलयैर्वृता ॥१७॥
नीलवैडूर्यवर्णाभिः पद्मिनीभिर्विराजिता ।
महद्भिः काञ्चनैः पुष्पैः वृता बालार्कसन्निभैः ॥१८॥
जातरूपमयैर्मत्स्यैर्विचरद्भिः सकच्छपैः ।
विद्युत्सम्पातवर्णैश्च सामवेदसमस्वनैः ॥१९॥
आरूढैर्वृक्षशाखासु भ्रमरैः काञ्चनप्रभैः ।
ऋषीणामाश्रमैश्चैव पारावारविराजितैः ॥२०॥
कादम्बैः सारसैर्हंसैः वञ्जुलैर्जलकुक्कुटैः ।
चक्रवाकैस्तथा चान्यैः शकुनैर्नादिता भृशम् ॥२१॥
चरद्भिः सर्वतो युक्ता स्थलीषु विविधैर्मृगैः ।
प्रभिन्नकरटैश्चापि शुक्लदन्तविभूषणैः ॥२२॥
इदानीमीदृशी चैषा पुरी च कालयोगतः ।
दृश्यते च्य(य)वनाक्रान्ता हिंसकैर्बहुभिर्वृता ॥२३॥
युष्मत्तेजसा नूनं हिंसका नहि हिंसकाः ।
जानेऽहं श्रीगुरो! स्वामिन्! कृपया युष्मदीयया ॥२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अधुना शृणु मे स्वामिन्! विज्ञप्तिं दीनवत्सल! ।
दूतोऽहं प्रेषितः सर्वैः श्रावकैश्च विशेषतः ॥२५॥
नाम्ना **जयपुरो** नाम सर्वस्थानशिरोमणिः ।
तत्रस्थाः श्रावकाः सिंहाः युष्मद्दर्शनकांक्षिणः ॥२६॥
ते हि ब्रुवन्ति वै नित्यं ह्येवमेवमहर्निशम् ।
--[अत्र?] ह्यागति गच्छेन्द्राः तदा पूर्णमनोरथाः ॥२७॥
भविष्यामो वयं नूनं श्रीमद्गुरुप्रसादतः ।
त(अ?)त्रत्येषु कृपा स्वामिन्! कर्त्तव्यैव जगद्गुरो! ॥२८॥

अथ **जयपुरवर्णनम्** –

प्रणम्य परया भक्त्या पार्श्वपादसरोरुहम् ।
कविताकुशलं चापि सूरिं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥१॥
क्रियते वर्णनं रम्यं सूर्यवंशिपुरस्य हि ।
साकेतवच्च सौन्दर्यं यस्य जयपुरस्य तु ॥२॥
नाम्ना च पर्णदूतेन त्वत्प्रसादेन श्रीगुरो! ।
जगज्जातनिकृन्तेन जडचैतन्यकारिणा ॥३॥
यूपद्वारं सुसंमृष्टं कदलीवनशोभितम् ।
क्षान्तव्यालमृगाकीर्णं वेदिमण्डलमण्डितम् ॥४॥
स्वर्गस्य विवृतं द्वारं भ्राजमानं वनश्रिया ।
बहुपुष्पफलं रम्यं यक्षराक्षसवर्जितम् ॥५॥
नानामृगगणैर्युक्तं देवर्षिगणपूजितम् ।
देवदानवगन्धर्वैः किन्नरैरुपशोभितम् ॥६॥
तपश्चारणसंसिद्धैरग्निकल्पैः महात्मभिः ।
सततं संकुलं श्रीमन्! ब्रह्मकल्पैर्महात्मभिः ॥७॥
अब्भक्षैर्वायुभक्षैश्च शीर्णपर्णाशिभिस्तथा ।
फलमूलाशनैर्दान्तैर्जितरोषैर्जितेन्द्रियैः ॥८॥
संप्रक्षालैरश्मकुट्टैर्दन्तोलूखलिभिस्तथा ।
ऋषिभिः वालिखिल्याद्यैर्जपहोमपरायणैः ॥९॥
द्रष्टव्यो ह्यचलः तत्र रमणीयो नगेषु च ।
वनराजिसमायुक्तः नानाद्विजसमाकुलः ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिखरैः खमिवोद्ध्वोंद्ध्वै-र्धातुमद्भिः विशेषतः ।
केचिद्रजतसंकाशाः केचित् क्षितिजसन्निभाः ॥११॥
सम्यक् वर्णवनाभाश्च केचिज्ज्योतिःसमप्रभाः ।
विराजन्त्यचलेन्द्रस्य शतशश्च विभूषिताः ॥१२॥
शाखामृगमृगद्वीपचरैर्क्षु(चरर्क्ष?)गणसेवितैः ।
सानुभिर्भाति शैलो यो नानावृक्षोपशोभितः ॥१३॥
अप्रजस्त्वासनैर्लोध्रैः प्रियालैः कुकुभिर्धवैः ।
अंकोष्ठैर्भव्यपनसैर्बिल्वतेन्दुकवेणुभिः ॥१४॥
कास्मयीशिष्टवरुणैर्मधुकैस्तिलकैस्तथा ।
बदर्यामलकैर्नीपैर्वेत्रचन्दनवीजकैः ॥१५॥
पुष्पवद्भिः फलोपेतैः छादयद्भिर्मनोरमैः ।
एवमादिभिरध्यास्ते श्रिया पुष्पमयो गिरिः ॥१६॥
शैलप्रस्थेषु रम्येषु वर्तते देवरूपिणः ।
किन्नरा द्वन्द्वशो यत्र रममाणा मनस्विनः ॥१७॥
जलप्रपातैर्निनदैर्वातैः सुभगशीतलैः ।
स्रवद्भिर्भाति यः शैलः श्रवन्मद इव द्विपः ॥१८॥
गुहाभ्यः सुरभिर्गन्धो नानापुष्पगणान्वितः ।
प्राणतर्पण उद्भूतः कं नरं न प्रहर्षयेत् ॥१९॥
विचित्रपुलिनं रम्यं हंससारससेवितम् ।
कुसुमोत्करसंछन्नं दर्शनीयतमं सरः ॥२०॥
नानाविधैः तीररुहैः संवृतं फलपुष्पदैः ।
मृगयूथनिपाताभिः कलुषाम्भः समन्ततः ॥२१॥
तीर्थानि रमणीयानि प्रीतिं संजनयन्ति ते ।
विचित्राणि च स्थानानि तेषु तेषु च सन्ति हि ॥२२॥
जटाजिनधराः सिद्धाः कल्कलाजिनवाससः ।
ऋषयो हि विगाहन्ते काले काले सरोजलम् ॥२३॥
मारुतोद्धूतशिखराः पतन्त इव पर्वते ।
पादपाः पुष्पवर्षेण किरन्त्येते च मेदिनीम् ॥२४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एते हि वल्गुवचसो रथनाभाह्वयद्विजाः ।
अवरोहन्ति कल्याणि विकूजन्तः शुभा गिरः ॥२५॥
विधूतकल्मषैः सिद्धैः तपोधनसमन्वितैः ।
नित्यविक्षोभितजलं द्रष्टव्यं च त्वया गुरो! ॥२६॥
तत्पार्श्वे वर्तते सम्यक् नगरो लोकविश्रुतः ।
मनुनाम्ना न चेन्द्रेण **जयसिंहेन** निर्मितः ॥२७॥
सुविभक्तान्तरद्वारः सुविभक्तमहापथः ।
शोभितो राजमार्गेण जलसंसिक्तरेणुना ॥२८॥
नानावणिग्जनोपेतो नानारत्नविभूषितः ।
महाशालान्वितो दुर्ग उद्यानप्रवरैर्युतः ॥२९॥
दुर्गगम्भीरपरिखो नानायुधसमन्वितः ।
कपाटतोरणैर्युक्तः उपेतो धन्विभिः सदा ॥३०॥
दृढद्वारप्रतोलीकः स्वविभक्तान्तरायणः ।
नानायन्त्रैः समायुक्तो नानाशिल्पिगुणान्वितः ॥३१॥
शतघ्नीपरिघोपेतो ह्युच्छ्रितध्वजतोरणः ।
नानारत्नचयाकीर्णो धनधान्यसमन्वितः ॥३२॥
हस्त्यश्वरथसम्पूर्णो नानावाहनसंकुलः ।
नानापार्थिवदूतैश्च वणिग्भिश्चोपशोभितः ॥३३॥
वितानशतसम्बद्धः सर्वैश्च विभवैर्युतः ।
देवतायतनैश्चैव विमानैरिव शोभितः ॥३४॥
शुभोद्यानप्रपाभिश्च रुचिराभिरलङ्कृतः ।
सुविभक्तमहाहर्म्यो नरनारीगणान्वितः ॥३५॥
विद्वद्भिरार्यपुरुषै-राकीर्णश्चाऽमरोपमैः ।
आरोहमिव रत्नानां प्रतिष्ठानमिव श्रियः ॥३६॥
महाप्रासादशिखरैः शैलाग्रैरिव शोभितः ।
विमानचयसंयुक्त इन्द्रस्येव पुरं महत् ॥३७॥
नानारत्नचयैश्चित्रोत्कृष्टपुष्टजनैर्युतः ।
अविच्छिन्नान्तरगृहैः समभूमिनिवेशनः ॥३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मृदङ्गवेणुवीणानां रम्यैः शब्दैर्निनादितः ।
नित्योत्सवसमाजाढ्यो नित्यहृष्टजनाकुलः ॥३९॥
ब्रह्मघोषस्वनैर्युक्तो धनुःस्वनावनादितः ।
वरान्नपानसलिलः शालितन्दुलभोजनः ॥४०॥
गृहैश्च गिरिसंकाशैः शारदाम्बुदसन्निभैः ।
पाण्डुराभिः प्रतोलीभिरुच्चाभिरुपशोभितः ॥४१॥
अट्टालकासनाकीर्णाः पताकाध्वजमालिनः ।
तोरणैः काञ्चनैः दिव्यैर्लताभिश्च विचित्रितः ॥४२॥
सुविभक्तमहारथ्यः चत्वरापणमण्डितः ।
सज्जयन्त्रोपकरणः प्रभूतवनवाहनः ॥४३॥
तृ(तु)ष्टनागरसम्पूर्णः सर्वकामसमृद्धिमान् ।
शीलाप्रवालैर्वैडूर्यमुक्ताकाञ्चनराजतैः ॥४४॥
भ्राजमानो गृहश्रेष्ठै-र्नक्षत्रैर्गगनं यथा ।
प्रासादमालाविततः स्तम्भैः काञ्चनराजतैः ॥४५॥
शातकौम्भमयैर्जालैर्गान्धर्वनगरोपमैः ।
तलैः स्फाटिकसंवीतैः प्रासादैः स्वर्णभूषितैः ॥४६॥
वैडूर्यमणिचित्रैश्च मुक्ताराजतचित्रभिः(?) ।
भ्राजमानगिरिश्रेष्ठैः विद्युद्भिरिव संयुतैः ॥४७॥
जाम्बूनदमयैर्जालैर्वैडूर्यकृतवेदिकैः ।
मणिस्फाटिकमुक्ताभिः प्रवालकृतभूमिभिः ॥४८॥
क्रौञ्चबर्हिणसंघुष्टै ग्रजहंसैर्निसेवितैः ।
तूर्यावरणनिर्घोषः सर्वतः प्रतिपादितः ॥४९॥
मातङ्गमदगन्धाढ्य-चारुप्रासादसंवृतः ।
ध्वजाग्रसदृशैश्चित्रैः पद्मस्वस्तिकसंयुतैः ॥५०॥
वर्धमाननिवेशैश्च वर्द्धमानगृहैस्तथा ।
गृहमेधैः पुरी भूयः शुशुभे द्यौरिवाऽम्बुदैः ॥५१॥
वराभरणनिर्ह्रादैः समुद्र इव सस्वनः ।
दिव्येनाऽगुरुणा सिक्तो मुख्यैश्च वरचन्दनैः ॥५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वाहाकार-वषट्कारै-र्ब्रह्मघोषैर्विनादितः ।
मुदितः सर्वतो रम्यः सर्वसत्त्वसुखावहः ॥५३॥
भेरीमृदङ्गाभिरुतः शङ्खघोषविराजितः ।
नित्योत्सवमहापूजः सदा पर्वसु पूरुषैः ॥५४॥
समुद्र इव गम्भीरः पर्जन्य इव सस्वनः ।
महाजनसमाकीर्णो हंसैः सर इवाकुलः ॥५५॥
माल्यदामभिराकीर्णः पुष्पभक्तिविचित्रितः ।
दिव्यगन्धो सवैर्युक्तो(?) दीपिकाभिर्विदीपितः ॥५६॥
इतश्चेतश्च धावद्भिर्वृतैश्च विटगणैरपि ।
.... ॥५७॥
हृष्टः प्रमुदितो लोकः तुष्टः पुष्टः सुधार्मिकः ।
निरामयो निरोगश्च दुर्भिक्षायासवर्जितः ॥५८॥
न पुत्रमरणं तत्र पश्यन्ति स्म नराः क्वचित् ।
नार्यश्चाऽविधवा नित्यं पतिशुश्रूषणे रताः ॥५९॥
न वातजं भयं किञ्चित् नाऽप्सु मज्जन्ति जन्तवः ।
न चाऽग्निजं भयं किञ्चित् यथा तुर्यारके तथा ॥६०॥
तस्य राष्ट्रे न भयिनो नाऽनाथस्तत्र नाऽबुधः ।
न दुर्गतो न कृपणो न व्याध्यर्त्तोऽभवन्नरः ॥६१॥
तत्र ह्युपाश्रयाः सन्ति यतीनां धर्मचारिणाम् ।
तेषु मुख्यतमश्चैको द्वारि तोरणभूषितः ॥६२॥
हेमस्तम्भसमायुक्तः सर्वलक्षणलक्षिणः(तः?) ।
श्रावका बहवो यस्य सेवका धनसंयुताः ॥६३॥
गन्तव्यं तत्र भो स्वामिन्! यदि चित्ते विरोचते ।
यतिभिः शास्त्रनिपुणैः साकं ध्यानपरायणैः ॥६४॥
तस्मिन्नेव पुरे स्वामिन्! **सुपार्श्वस्य** महात्मनः ।
प्रासादो राजते तत्र ध्वजपताकलक्षितः ॥६५॥
तत्र वै भ्राजते स्वामिन्! सूर्यकोटिसमप्रभः ।
अज्ञानतिमिरं नृणां दर्शनादेव नाशनात् ॥६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नित्यं कुर्वन्ति चैतस्य पूजां भव्यजनाः शुभाम् ।
कल्याणकारिणी तेषां सा च दिक् सप्तधाऽनिशम् ॥६७॥

अतः परं किमधिकं भो गुरो! बद्धाञ्जलेर्ममैषैव विज्ञप्तिः । तत्र गन्तव्यं गन्तव्यं गन्तव्यं एव अन्यन्न विचारणीयम् । तत्रस्थाः सिंहाः श्रीसुपार्श्वोपकण्ठे गत्वा अहर्निशं सम्प्रति हिं मामेव कामनां याचन्ते । भो प्रभो! येन केन प्रकारेण श्रीगुरोर्दर्शनं भवतु । तेनैवाऽस्माकं सर्वे मनोरथाः पूर्णाः भविष्यन्ति, नाऽन्येन । तस्मात् स्वामिन्! गन्तव्यं अवश्यमेव तत्र । सिंहो युष्मदीय एव अस्मदीय इति ज्ञात्वा कृपा करणीया भवद्भिर्वारंवारंवारं इदमेव याचेऽर्हम् । नान्यत्र गन्तव्यं इति राद्धान्तः । किं प्राचुर्यतरे विज्ञविज्ञतरेषु । अलमिति विस्तरेण ।

नमः श्रीसच्चिदानन्दगुरुपादाम्बुजन्मने ।
सविलासमहामोहग्राहग्रासैककर्मणे ॥१॥
पञ्चाचारवियुक्ताय तथा सुमतिपञ्चकैः ।
गुणगुप्तिनियुक्ताय ब्रह्मचर्ययुजे तथा ॥२॥
निर्ममत्वाभियुक्ताय निरहङ्कारकारिणे ।
अयुजे क्रोधमानाभ्यां मायावर्जितरूपिणे ॥३॥
लोभनिर्मुक्तचित्ताय शान्तमुद्रान्विताय च ।
भवबन्धच्छिदे तुभ्यं नमो विज्ञातधारिणे ॥४॥
पद्मवद् गतलेपाय शङ्खवत् व्यञ्जनाय च ।
जीववच्चाऽच्छिदे स्वामिन्! निराधाराय व्योमवत् ॥५॥
वातवद् गतबन्धाय कूर्मगुप्तेन्द्रियाय च ।
भारण्डोपमयुक्ताय चाऽप्रमादेन हेतुना ॥६॥
धर्मस्य धोरिणे तुभ्यं नमः सौण्डीरतायुजे ।
गजवत् सिंहवच्चापि तथा दुर्धर्षरूपिणे ॥७॥
सागरोपमगाम्भीर्ययुजे -- तुभ्यं नमः ।
चन्द्रवत् सोमलेश्याय सूर्यवद् दीप्तितेजसे ॥८॥
स्वर्णवज्जातरूपाय भूवत् सहनशीलिने ।
तुभ्यं ह्यतुलरूपाय शास्त्रेषु सागराम्बुवत् ॥९॥
चन्दनोपमयुक्ताय गन्धधारणहेतुना ।
हेमपाषाणयोश्चैव तुल्यदृष्टाय वै नमः ॥१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा पूजापमानेषु समचित्ताय वै प्रभो! ।
मुक्तौ तथा भवे चापि रत्नत्रययुताय च ॥११॥
नौकातुल्याय वै नृणां भवसागरमज्जताम् ।
चर्मतीर्थङ्करे पट्टे दीपकाय नमो नमः ॥१२॥
प्रतिरूपादिषट्त्रिंशत् सदाचार्यगुणाश्च ये ।
तेषां धारणसामर्थ्यसंयुक्ताय च नित्यशः ॥१३॥

अथ नगरवर्णनम् –

विपुलकमलाविलासकुलनिवेशे विभवनिवहप्रदानविद्रावितभुवनरौद्र-दारिद्र्यशिष्टजनसंयुते निवासिजनजनितहर्षप्रकर्षे प्रशस्तसमस्तवस्तुविस्तारपरिपूर्णापणे पुरुषोत्तमवक्ष इव सश्रीके सच्चारित्रपात्रमुनिजनचरणविन्यासपवित्रीकृतधरातले **मरुदेश**विशालभालस्थलबहलतिलकोपमे सुस्थितलोकसुखविलासकेलिमन्दिरे अखिलाश्रीविजयकरिणचतुरे यशःकुसुमसौरभसुरक्षितदिग्वलये श्री**गजसिंहभूप**-संशोभिते श्रीमत् अमुकनगरे अमन्दानन्दपूर्णचतुर्वर्णसंघपरिकरितान् सकलभव्यो-पकाराय सजलजलधरध्वानानुकारिणा स्वरेण परमानन्दसुधारसस्राविणी-निविडतर-मोहान्धकारविद्राविणी-निखिलजगज्जन्तुचित्तचमत्कारकारिणी-महामनोहारिणी-सद्धर्मदेशनादायकान् गम्भीरापारसंसारसागरमध्यमध्यासीन-कृष्णेतरपाक्षिकप्राणि-संघसमुद्धारकारकान् दुरन्तानन्तचतुर्गतिस्वरूपप्रसारिसंसारप्रशस्तसम्यक्त्ववत्समस्त-जगज्जन्तुनिदेशप्रमाणार्हान् कषायोपसर्गपरीषहाद्यन्तरङ्गारिगणमतङ्गजमथनदुर्दान्त-पञ्चाननान् दुरुत्तारसंसारकान्तारसञ्चारजनितापत्तापनिवारणैकछत्रान् निबिड-जडिमसम्भारतिमिरतिरस्कारकरणतरणीन् दुःषमान्धकारनिमग्नजिनप्रवचन-प्रकाशनगृहमणीन् परमानन्दरूपानन्तसुखदनिःश्रेयसतरुबीजभूतसम्यक्त्वरत्नदातृन् सकलप्रसिद्धसिद्धान्तसंदोहपठनपाठनावाप्तसुधांशुधामधवलयशःप्रसरधवलित-सकलवसुन्धरावलयान् कणादाक्षपादप्रभृतिप्रवादिसर्पदर्पसौपर्णेयान् भुवनभय-प्रथितविपुलचन्द्रकुलविमलनभःस्थलमृगाङ्कान् जङ्गमयुगप्रधानान् सकलगणपति-भट्टारकपुरन्दरान् श्री१०८ श्री**जिनचन्द्र**सूरिसूरीश्वरान् नानातर्कवितर्कसम्पर्ककर्क-शमुच्छलद्वाक्छटोट्टङ्कितबौद्धसांख्यमीमांसकाक्षपादप्रभृतिगजघटादुर्द्धर्षकण्ठीरव-कल्पसकलपाठकवाचकमुनिजनसंसेवितचरणेन्दीवरान् श्रीमत् **अमुकनगरतः** सदाज्ञाधारकश्चरणशरणाभिलाषुकः सम**स्तखरतरभट्टारकश्रीसङ्घः** सादरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीमज्जिनपतिप्रणीतमुनिजनप्रतिमा[१२]प्रमिताऽऽवर्त्तवन्दनेन अभिवन्द्य विज्ञपयति । यथाविधेयमत्र श्रेयःप्रतानिनी न च पल्लवता-मुपैति युष्मच्चरणप्रसत्तेः । श्रीमच्छ्रीपूज्यानामपि श्रीमदिष्टदेवकृपया योगसमाधिपूर्विका कुशलक्षेमवार्ता प्रत्यहं समीपे(हे) ।

अथोदन्ता लिख्यन्ते –

तथा अत्र सों पर्वाराधनस्वरूप पत्र पूर्वें दीयो है सो पुहतो होसी जी । तथा आपको कृपापत्र पर्यूषणापर्व आराधन व्यतिकर संयुक्त आयो सो वांचि कर परम साता पाई जी । अनुमोदना करिकै अनेक भव्यजीवों मैं परम पुण्यबंध कीया सो जाणना जी । तथा आप रत्नत्रय धारक छो । पंच महाव्रत पालक छो । च्यार कषाय निवारक छो । पंचाचार साधक छो । पंच प्रमाद-निवारक छो । नवतत्त्व षड्द्रव्यादि पदार्थना ज्ञाता छो । नववाडि ब्रह्मचर्यना पालक छो । दसविध मुनिधर्मना आराधक छो । चन्द्रकुल उद्योत कारक छो । वादी जीपक छो । श्रीजिनशासन दीपक छो । भव्यजीव प्रतिबोधक छो। सकलसभालोक रंजक छो । अविचलवचन पालक छो । सम्यक्त्वरत्न दायक छो। संसारसमुंद्र तारक छो । दुरगति निवारक छो । सरणागतसाधारक छो । सागरनी परि गंभीर छो । मेरुनी परि धीर छो । चंद्रमानी परि सौम्यलेश्यावंत छो । तप तेज दिवाकर छो । महा यशवंत छो । परम सौभाग्यवंत छो । दिन दिन अधिक प्रतापवंत छो । मनवंछितपूरण कल्पद्रुम समान छो । सकलबुद्धि निधान छो । चौरासी गच्छ शृंगार छो । श्रीसिंघ(संघ) नै सदा हितकार छो। कुमति अंधकारना फेडणहार छो । करमसुभट निवारणहार छो । अनेक उत्तम गुणगणालंकृत छो । आपका गुण पत्र मैं कहां तक लिखैं । लिखतां पार आवै नहीं, सो जाणना जी । तथा धन्य उह देस छै ज्यो श्रीजी साहि का चरणकमल को फरस पाय करि परमउत्तमत्ता प्रतैं धारै हैं । और धन्य हैं वह भव्यजीव श्रीजी साहिब का मुख सैं धर्मोपदेश सुणि कर धर्मकरणी मैं सावधान होय मनुष्यावतार सफल करते हैं, सो जाननाजी । तथा हमारै चित्त मैं आपका दर्शन की बहोत अभिलाषा रहै छै, परन्तु पूर्वार्जित अंतराय कर्म योगैं कुछ वणि नही आवै छै । सत कोश अंतर आप विचरते हो तो पिण संसार सम्बन्धी मोहमग्नतावसाय थकी आवणो अतिदुर्लभ छे । मन को मनोरथ मन ही मैं रहे छे । परन्तु आप पवननी परि अप्रतिबद्ध विहारी छो, तिसलैं सर्वलोक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हितकारक आदिवे करि निज विरुद संभाली, कृपादृष्टि धार करि श्रीसंघ को अवश्य अवश्य करि वंदावोगा जी । उपगारी पुरुष मेघ की परि सर्वजीव का उपगार करते हैं, तिसतें हम भी आप ही के सेवक हैं । ज्यो आप ही सेवकों का धर्मोपदेश दे करि धर्मथिरताचरणरूप उपगार नही करोगे तो और कौंण करैगा? तिसतैं श्रीसंघकी वीनती प्रमाण अवश्य करोगा जी । हमारा जोर तो वीनती करणे का है, परन्तु श्रीसंघ की मनोरथ संपूर्ण करणा आपकै आधीन है। सो बहोत क्या लिखों? आप सर्व जाण हो । श्रीसंघ कों दर्शन दे करि श्रीसंघ का मनोरथ सफल करोगा जी । श्रीसंघ पिण आपका चरणारविंद को दरसन करसी सो दिन सफल गिणसी जी । तिसतैं आपका आगमन जणावणरूप पत्र वेगो दिरावोगा जी । ढील करावोगा नही जी । संघ लायक काम चाकरी होय सो फुरमावस्यो जी । संघ आपको आग्याकारी है सो जाणस्यो जी ।

देवसुगुरु परसादथी अत्र अछे सुखसात ।
श्रीजिना सुख लेख पण देज्यो धरि हित वात ॥१॥
छठ अठम दसम द्वादशम अर्द्धमास वलि मास ।
तप अनेक ईहां किण थयां पार न कोई तास ॥२॥
इण पर अनुक्रमें आवीया परव पजूसण सार ।
पुर सगले तिहां पाठवी आठे दिवस अमार ॥३॥
पोसह पडिकमणां प्रगट जिनपूजा जिन जान ।
ध्यांन ग्यांन दानादि ध्रम भविक करे बहु भांति ॥४॥
कल्पसूत्र नव वाचना भविक सुणें मन भाव ।
श्रीफल पूग प्रभावना दिनदिन चढते दाव ॥५॥
दान संवत्सरी पारणा साहमीवत्सल सार ।
आडंबर अधिका थका, कहेता नावै पार ॥६॥

अथ भास लिख्यते

[ढाल - भविजन भेटो रे शीतल जिनपती रे – ए चाल]

सुखकर स्वामी रे चरम तीर्थंकरु रे, वरधमान जिनराज ।
दरसण जेहनो रे दरपण ज्युं दिपै रे, सोभित तेज समान ॥
भविजन वंदौं रे भावैं गछपती रे ॥१॥ आंकणी ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तसु पट राजै रे सुधर्म गणधरु रे, ज्ञाता द्वादश अंग ।
जंबूस्वामी रे शिष्य सोहामणौ रे, चवद पूरवधर चंग ।।प० २।।
प्रभव शयंभव जगमें परगडो रे, श्रीयशोभद्र मुणिंद ।
श्रीसंभूतिविजय भद्रबाहूजी रे, श्रीथूलभद्र मुणिंद ।।प० ३।।
एम अनुक्रम दस पूरवधरू रे, हूवा वयर मुणीस ।
श्रीजिनमत दीपायो भूतलैं रे, सुर नर नामत सीस ।।प० ४।।
तास परंपर चन्द्रकुलें भला रे, श्रीकोटिक गणधार ।
श्रीउद्योतनसूरि सुहामणां रे, वयरी साख मझार ।।प० ५।।
वरधमान परमुख सीस जेहनां रे, च्यारअसी (८४) परमाण ।
गच्छ चौरासी प्रगट्या त्यां थकी रे, जाणो चतुर सुजाण ।।प० ६।।
तास सीस जिनेश्वरसूरिजी रे, दुर्लभराय समक्ष ।
खरतर विरुद लह्यो अति रूवडो रे, मठपति जीत प्रतक्ष ।।प० ७।।
नवअंगी वृत्तिकारक दीपता रे, **अभयदेव** मुनिराय ।
श्रीजिनवल्लभ ज्रिनदत्त गछपती रे, **श्रीजिनकुशल** अमाय ।।प० ८।।
परम प्रभावक इण गछ मैं थया रे, आचारिज गुणवंत ।
सुद्ध समाचारी जग तेहनी रे, सुणि हरखित होय संत ।।प० ९।।
सुद्ध परंपरामां थया अनुक्रमैं रे, **श्रीजिनअक्षयसूरीस** ।
तास पटोधर जगमां परगडा रे, **श्रीजिनचन्द्र** मुणीस ।।प० १०।।
तेज प्रतापैं जीत्यो दिनमणी रे, सौम्यगुणैं द्विजपत्ति ।
गंभीरम गुण सागर जीतीयो रे, सुर सेवैं दिनरत्ति ।।प० ११।।
स्यादवाद जिनधरम वखाणतां रे, नय निक्षेप विचार ।
भंग पदारथ अति विस्तारसों रे, भाखै भवि हितकार ।।प० १२।।
ग्यान पूरव किरीया साधै भली रे, जिन वाणी अनुसार ।
एहनैं सेवो रे क्युं भूला भमो रे, थाय सफल अवतार ।।प० १३।।
सुरतर छंडी बांवल आदरै रे, कोई नर मूढ गमार ।
ए ओखांणो साचो मत करो रे, लहि एहवो गणधार ।।प० १४।।
नामधारक आचारिज छै घणां रे, पंचम काल मझार ।
पिण इण सरिसो जगमां को नहीं रे, स्व पर तारणहार ।।प० १५।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाचक लावण्यकमल पसायथी रे, **कमलसुंदरनी** ए वांणि ।
जे मातेसी ते सुख पामसी रे, पालक नी करि हांणि ॥प० १६॥

इति

स्वस्तिश्रीदानशीलं सुरनरपतिभिः प्राप्तपूजात्रिकालं,
रागादीनां रिपूणां निखिलबलहरं दुक्खकान्तारदावम् ।
योगीन्द्रैर्ध्यायमानं परमगुणनिधिं विष्टपाग्रोपविष्टं,
सिद्धं बुद्धं जिनेन्द्रं कनकसमवपुं मारुदेवं नमामि ॥१॥
उर्व्यां गुर्व्यस्ति भीतिर्मम मृगपतितस्तत् किमाकाशदुर्गे,
चन्द्रं सेवेन(नु) तत्रापि हि भयमधिकं सैंहिकेयग्रहान्मे ।
इत्थं मत्वा मृगो यत्क्रमकमलयुगं स्वान्यरक्षातिदक्षं,
कक्षीचक्रेऽङ्कदम्भात् स भवतु भविनां शान्तये शान्तिनाथः ॥२॥
आबालब्रह्मचारी सुरमनुजगणैः स्तूयमानस्त्रिकालं,
संसाराब्धौ नितान्तं पतिततनुभृतां यानपात्रोपमानः ।
कल्याणानां निवासो परिमितसुखदो दुष्टकर्माष्टहर्ता,
दाता मोक्षश्रियो मे स भवतु भगवान् नेमिनाथः प्रसन्नः ॥३॥
यस्य च्छद्मस्थभावे शठकमठहठोद्धृष्टधाराधराम्भः-
सम्भारे तुङ्गरङ्गद्गुरुलहरिपरिप्लावितक्षोणिदेशः ।
मग्नस्याऽऽकण्ठपीठं वदनमतितरां स्मेरराजीवशोभा-
मङ्गीचक्रे स वामातनयजिनपतिर्वोऽस्तु विघ्नोपशान्त्यै ॥४॥
जन्मस्नात्रमहे महेन्द्रनिकरोदस्तोरुदुग्धाम्बुधि-
क्षीरापूर्णसुवर्णकुम्भमुखतो निर्यज्जलश्रेणयः ।
लग्ना यस्य तनौ ततश्च कणशो भूत्वाऽधुनाऽप्यम्बरे,
ताराणां निभतः स्फुरन्ति स जिनः श्रीत्रैशलेयः श्रिये ॥५॥

इति नमस्कारः ॥

[श्रीजिनरंगसूरि शाखा का उपासरा, श्रीमालों का मंदिर, भण्डार, ग्रन्थाङ्क पत्र ६ साइज २५.३ x १२.३ सी.एम., पंक्ति १८, अक्षर ४४, लेखनकाल अनुमानत २०वीं]

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(૧૧)

પાર્શ્વચન્દ્રગચ્છીય આ. શ્રીવિવેકચન્દ્રસૂરિજી પર
રાજનગરથી લખાએલ વિજ્ઞપ્તિપત્ર

– સં. સાધ્વી સમયપ્રજ્ઞાશ્રી

સં. ૧૮૪૨ના કારતક મહિને અમદાવાદ-રાજનગરથી લખાયેલો આ ચિત્રયુક્ત વિજ્ઞપ્તિપત્ર તત્કાલીન શ્રીપાર્શ્વચન્દ્રસૂરિગચ્છમાં થયેલા આ.શ્રી વિવેકચન્દ્રસૂરિજી મ. ઉપર લખાયો છે.

ઓસવાલવંશમાં થયેલા મૂલચંદજી પિતા અને લાછલદે માતાની કુક્ષિના રત્ન સમા આ પૂજ્યશ્રી ખમ્ભાતમાં બિરાજમાન હતા, ત્યારે લખાયેલો આ પત્ર છે.

માત્ર સામાન્યપદ્ધતિથી સીધો સાદો લખાતો એવો આ પત્ર નથી. આમાં, સંસ્કૃત અને ગુજરાતી બન્ને ભાષામાં ગદ્યાત્મક-પદ્યાત્મક લેખપદ્ધતિથી તેમજ પ્રારમ્ભમાં ચિત્રો દ્વારા વૈવિધ્ય આવ્યું છે. પદ્યમાં ૪ ગુજરાતી ગેય રચનાઓ - ભાસ વિ. અલગ-અલગ દેશીમાં રચાયેલી ઢાળો રસાળ છે.

પ્રારમ્ભમાં સંસ્કૃત વિશેષણોથી ગુરુ ભ.ને નવાજ્યા છે. પછી એકથી ૩૬ છત્રીસના અંક પ્રમાણે ગુણસ્તુતિ કરી છે. તેના પછી જે થોડાં સંસ્કૃત વિશેષણો-ઉપમાઓ આપી છે તે ખૂબ સુન્દર છે.

સૌથી વિશેષ તો, શિષ્યના હૃદયમાં ગુરુ પ્રત્યે કેવો બહુમાનભાવ છલકાતો હોય તે આમાંની ગુણસ્તવના દ્વારા સમજાય છે. પત્રમાં લિખિતંગ તરીકે મુખ્ય પં. શ્રી ત્રિકમજીના શિષ્ય પં. શ્રી રવચંદજીના શિષ્ય શ્રીચન્દ્રજી છે પણ સાથોસાથ મુખ્ય સાધુ-સાધ્વી, શ્રાવક ને શ્રાવિકાના નામોના ઉલ્લેખથી સમજાય કે આ પત્ર શ્રીસંઘ તરફથી એક મહાપુરુષને લખાયેલો રાજનગરમાં પધારવા માટેનો વિનન્તિપત્ર છે. અને તેનું સર્જન શ્રીચન્દ્રજીએ કરેલ છે.

આ વિજ્ઞપ્તિપત્ર ખમ્ભાતના શ્રીપાયચંદગચ્છ સંઘના ભણ્ડારમાં છે. ઉપાધ્યાયશ્રી ભુવનચન્દ્રજી મહારાજ દ્વારા આ પત્રની જેરોક્સ નકલ મળી છે. તે પરથી આ પત્ર ઉતાર્યો છે. ત્યાં "શ્રીવિવેકચન્દ્રસૂરિ-વિજ્ઞપ્તિપત્ર લે ૧૮૪૬ રાજનગર" એવી રીતે તેની પ્રવિષ્ટિ જોવા મળે છે. વિભાગ બીજામાં ૧૧૪/૧૪૨ ક્રમાઙ્ક હેઠળ નોંધવામાં આવેલા આ પત્રની લંબાઈ ૨૧ ફુટ અને પહોળાઈ ૧૦ ઇંચ જેટલી છે.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पत्रमां १ थी ३६ एम चडता आंके गुरुना गुणोनुं वर्णन छे ते विविध पत्रोमां सामान्य छे तेथी, तेमज नाम आगळ 'श्री'नी लांबी भरमार छे तेथी ते आमां छापवानुं टाळ्युं छे. जोडणीनी तथा संस्कृतनी अशुद्धिओ जेमनी तेम राखेल छे.

—x—

स्वस्तिश्रीशर्मधामा त्रिभुवनविजयी दुष्टकर्मारिवर्मा,
श्रेयस्सौभाग्यदाई शिवरमणीवरः पुण्यपीयूषपूर्णः ।
जीयाच्छ्रीशान्तिनाथस्स सकलभविकान् कल्पशाखी कलौ यो,
स ध्येयः शुद्धचेतां(ताः) प्रशमरसनिधिर्विघ्नव्यूहापहारी ॥१॥

श्रीस्थम्भतीर्थे श्रीसकलविद्वज्जन-विद्याविनोदसञ्जातप्रमोदामृतवर्षनिष्पन्न-समस्तप्रशस्तमदनस्थित-भव्यवरपुण्डरीकवन-नवघनाघनन(नि)भान्, सर्वस-श्रीमदर्हत्परमेश्वरवन्दनाविदसञ्जात-सप्तत्त्व-नवपदार्थ-षड्द्रव्य-पञ्चास्तिकाय-विचारचातुरीचमत्कृतचतुर्विधसंघसमाच्चरितयशःकीर्त्तिपुण्यगुणकीर्त्तिनं (कीर्तीन्), मन्दाकिनीप्रवाहपवित्रित-त्रैलोक्यसंस्थितपदार्थसार्थसमर्थवा(का?)न्, वाग्विलासानुरञ्जित सरस्वतीयनक्रीडाम्बुजसञ्च्वि(र्चि)चरणजुगलान्, कुवादिमते[भ]कुम्भस्थल-विदारणैकहर्यक्षान्, षट्त्रिंशतिमूलगुणोपेतान्, पञ्चमहाव्रतधुराधुरणधौरेयात्(न्), अष्टप्रवचनमातृकाप्रतिपालक(न)समर्थान्, केवललक्ष्मा(क्ष्म्या)दिआश्लिष्टैको-त्सुकचित्तान् इत्यादिगुणगणालङ्कृतशरीरान्...

कुमतीना उथापनहार, मिथ्यामतना नीकंदनहार, जिनशासन उद्योतकारी छे। जिनशासनना प्रभावकारी छो। एहवा छत्रीस छत्रीस गुणें करी विराज्यमांन। पुनः ज्ञानादिरत्नत्रयसमाराधनसमर्जित-हीरक्षीरोज्ज्वलकीर्त्तिपरिमलसू(सु)रभिकृत-दिगन्तान्, विशिष्ट(ष्ट)शिष्टि(ष्टा)चारप्रतिपालनप्रवीणान्, दुर्वादिकुम्भस्थलविदारण-पञ्चास्यपराक्रमान्, सज्जनमनःकुमुदोल्लासनपार्वणसुधाकरान्, षट्द्रव्यपञ्चास्तिकाय-अष्टप्रवचनमातृकाप्रतिपालनें समर्थान्, मनोज्ञमधुकरवाक्यान्, संसेव्यचरणकमलान् पुनः इति ॥१॥

सिवसुख आपे हो एहवा गणधरु, श्री**विवेकचंद**सूरिस ।
नाम जपंता पातिक सवि टलइं, पूरइं मनह जगीस ॥ सिव० ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मात **लाछलदे** उयरे सुखकरु, **ओसवाल** वंस ओदार ।
मूलचंद साह शुभ नंदन गाईइं, मनवंछित दातार ॥ सिव० ॥२॥
जिहां जिहा विचरे हो पूज्य मनोहरु, तिहा तिहां आणंद थाय ।
गुण गावे जे श्रावक भगतिसुं, तेहना संकट जाय ॥ सिव० ॥३॥
मरुधर मालव देस वखांणीइं, **सोरठ**नइ **गुजरात** ।
पूरव महिमा कीरति गुरुतणी, देस विदेसे विख्यात ॥ सिव० ॥४॥
सहु को मानें आंन प्रतापथी, रूपइं अति सुखकार ।
नव रस वांणी वरसें देसना, श्रीसिद्धांत विचार ॥ सिव० ॥५॥
गुरु विन वाट न लहीइं धर्मनी, गुरु विण न्यान न होय ।
जुं परदेसी राजानी परइं, वाहननी परइं जोइ ॥ सिव० ॥६॥
कलियुगमाहि गौतम सम कह्या, करुणा रस भृंगार ।
न्यान चरण दर[स]ण सोभता, गुण नवि लाभइं पार ॥ सि० ॥७॥
जलनिधि जेम गंभीर, मुख सोहे पूनमचंद ।
सूर प्रताप तपइ जिम आकरो, **श्रीविवेकचंद**सूरिंद ॥ सि० ॥८॥
श्रावक श्रावी वंदें हरखसुं, साधु साधवी परिवार ।
कर जोडी इम विनवे, **श्रीचंद**नें द्यो सुखकार ॥ सि० ॥९॥ इति ॥

परमपटोधर वंदिइं, सुखदायकजी, **विवेकचंद** सूरिंद, गछना नायकजी
श्रीओसवालवंसमां, सुखदायकजी, जन्म्या पुत्ररत्न, गछना नायकजी
कुछ अजुआली आपनो, सुखदायकजी, लीधो संजम भार, गछना नायकजी
सा. मुलचंदनो बेटडो, सुखदायकजी, धन लाछलदे मात, गछना नायकजी
रूपवंत रलीआंमणा, सुखदायकजी, मुख सोहे पूनमचंद, गछना नायकजी
उद्योतकारी उगीया, सुखदायकजी, जिम प्रगट्यो अभिनव सूर, गछना नायकजी
सरवे साधु परीवर्या, सुखदायकजी, जिम मानसरोवर हंस, गछना नायकजी
सकल सास्त्रना राजीया, सुखदायकजी, वली जांणें वेद पूरांण, गछना नायकजी
वादि सवि हराविआ, सुखदायकजी, सयल सूरी सिरताज, गछना नायकजी
भरतखेत्रना मांनवी, सुखदायकजी, तुमने सेवे जोडी हाथ, गछना नायकजी
आप [त]र्या पर तारता, सुखदायकजी, करता भवि उपगार, गछना नायकजी
सूर उगमते गाइयो, सुखदायकजी, पोहती मननी आस, गछना नायकजी
संवत **अढार बेंतालीसे**, सुखदायकजी, **श्रावण** मास मझार, गछना नायकजी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजनगरमांहि रही, सुखदायकजी, गुरु गुण गाया सार, गछना नायकजी
पंडित श्री रवचंदतणो, सुखदायकजी, **श्रीचंद**ने देजो चरणे वास, गछना नायकजी

इति श्री भास संपूर्णः ॥

सखी गुज्जर देस पधारिया, सखी **पासचंदगछ** सिणगार, भविजन
सखी सर्वे साधु परिवर्या, सखी **विवेकचंद** सूरिंद, भविजन
सखी चलोनें सइरो वांदवा ॥१॥
सखी सफल हुओ दिन आजनो, सखी आणंद हर्ष न माय, भविजन
सखी धन **लाछलबाई** कूखने, सखी धन **मूलचंद** तात, भवि० ॥२॥
स० धन **ओसवाल** वंसने, सखी जन्म्या पुत्ररत्न, भविजन
स० कूल अजुआली आपनो, सखी लीधो संजम भार, भवि० ॥३॥
स० **पासचंदगछ** अजुआलवा, सखी प्रगट्या दिनकर तांम, भवि०
स० छत्रीस गुणें करी सोभता, स० बोधता सब जन लोक भवि० ॥४॥
सखी स(सुं)दर गुरुवाण सांभली, स० सफल करो अवतार भवि०
स० आप तरे पर तारता, स० करता भवि उपगार भवि० ॥५॥
सखी ग्यांन दरीआ भरीआ गुणें, स० वरसे अमृत धार भवि०
स० ग्यांन अमृत रस पीजीइं, स० तरीइं भवजल पूर भवि० ॥६॥
सखी सूर उगमते गूहली, सखी वाजते ढोल ददाम भवि०
सइरो सरव थोके मिलि, स० लावती गुहली रसाल भवि० ॥७॥
सखी वच वच लोछन लेवती, स० गावे गीत रसाल भवि० ॥७॥(?)
सखी माणक मोतीइ वधावती, स० लली लली करय त्रिकाल भ०
सखी धर्मलाभ श्रीपूज कहे, सखी करावे व्रत पचखांन भ० ॥८॥
स० **संवत् अढार पसता(बेंता)लीसे,** स० मह शूद पंचमी सार भ०
पंडित **श्रीरवचंद**नो, स० **श्रीचंद** गुरु गुण गाय भ० ॥९॥ इतिश्री ॥

नानानन्दमयं प्रमोदसुकरं चिद्रूपभावोद्धुरं,
ज्ञानं विश्वशरीरिभावकथकं कर्मारिनिर्दाहकम् ।
श्रीसर्वज्ञविकासितं गणधरैः सेव्यं परं मुक्तिदं,
भक्त्या संविभजामि यत् त्रिभुवने कीर्त्तिप्रमोदावहम् ॥१॥
विकासितभव्यसुयोगिचरित्र, क्रियावरभूषित पुण्यपवित्र ।
जयामरसेवित बोधविकास-समुज्वल मुक्तिद पापविनाश ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अखिलनरपसेव्यं, मोहम(मा)तंगसिंहं
परमपदविकासं, बोधनं चित्स्वरूपं ।
त्रिभुवनयशसे तत् कर्मदावेधमेघं
भजति शिवपदं यः सेवते सस्व(त्त्व)सारम् ॥१॥
गुणैर्गरिष्ठं भुवनं गुणानां, स्वर्गादिदाने विदधाति दाक्ष्यम् ।
करोतु बोधो भवतान्तसारं, [सारं?] च सौख्यं भवदुःखपारम् ॥१॥
इति ज्ञानेषु त्रिषु अर्था वा पुष्पाञ्जलिः ।
एवं स्तुतं श्रुतं नित्यां, त्रैलोक्यसौख्यसागरं ।
ज्ञानायाऽस्तु च भव्यानां, त्रिभु मादिकीर्त्तये(?) ॥१॥

इत्यादिगुणै(णा)लङ्कृत अनेक ओपमाविराज्यमांन पुरंदर भट्टारकत्तम भट्टारक श्रीश्रीश्रीश्री १०० श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्री सजी साहिबजी श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्री सहस्रसिरिणां समन्वितं श्री**विवेकचंद्र**सूरीश्वरजीचरणान् कमलान् चिरंजीवी घणी होज्यो ।

श्रीराजनगर थकी लिखितं ऋषि श्रीश्रीमलूकचंद्रजी, ऋषिश्री उदयचंदजी, ऋषिश्री सूरताजी, ऋषिश्री दोलतचंदजी, ऋषिश्री लालचंदजी, ऋषिश्री फतेचंदजी, ऋषिश्री नेंणचंदजी, ऋषि श्रीवृद्धिचंदजी, ऋषिश्री सदानंदजी चेला लाभानंदजी, चेला खुशालचंदजी, सपरिकरांन् सहितैः श्रीराजनगर थकी लिखितं आज्ञाकारक सदासेवक ऋषि नरसिंघ, ऋषि श्रीचंदनी वंदणा १००८ वार करी अवधारज्योजी । तथा संघमुख्य चू. सखरचंद नाथा, पा. हेमचंद झवेरचंद, प. सूरचंद वीरचंद, तो. पानाचंद खुस्याल तथा फूलचंद अभेचंद, चू. प्रसोतम पीतांमर, सा. हेमचंद रूपचंद, चू. गोकल नाथा, चू. सूरचंद फूलचंद, चू. देवचंद नाथा, मा. हर्षा हीरा, सा. पानाचंद सोमकर्ण, प. खेमचंद प्रेमचंद, त. मानचंद मोतीचंद, सा. विमलसी हर्षा, सा. कपुर जगजीवन, सा. माणकचंद प्रेमचंद, त. मानचंद देवीदास, सा. इछा नाथा, सा. झवेर फी(की?)का, सा. सोभागी जीवन, सा. हीरा प्रतापसी, सूरमल वरधमांन, चो. मोतीचंद प्रेमचंद, सो. सकल वरधमांन, सि. खुस्याल रायचंद, वो. मांनकचंद हीराचंद, चो. खेमचंद, वो. कल्याणचंद मानकचंद, दो. रायसी रतनचंद, सा. फतेचंद हीराचंद, ओ. जेचंद, ओ. मूलजी अभेचंद, वो. रूपचंद खेमचंद, चू. खेमचंद फूलचंद, ओ. झवेरी, सा. संबु पीताम्बर, म. हीरा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कीका, सा. मंछा इछा, सा. वेला भाइचंद, म. वीरमल जेठा, सा. फूलचंद इछा, सा. मांनचंद इछा, चू. मीठा देवचंद, सा. गोकल भाईचंद, सा. हूलीचंद मांनकचंद, चू. कल्याण गोकल, सा. मूलचंद पानाचंद, म. अमरचंद फत्ते, पा. इछा हेमचंद, सा. बेचर हीराचंद, सा. मानकचंद रूपचंद, सि. बेचर खुस्यालचंद, सो. खेमचंद सकल, सो. गलाबचंद सकल, वो. बेचर चूडमल, चू. हीराचंद फुलचंद, दो. हेमचंद रायचंद, चू. लखमीचंद, न. पुंजा, न. लाधा पुजा, प. भक्ति इंद्रजी, प. भाई, सा. कुबेर, प. जगजीवन कुबेर, सा. बेचर हरचंद तथा श्रीहरखबाई, त. जोइतीबाई कस्तूर, त. जीवी त. अगरबाई त. जेठीबाई त. इंद्रबाई त. लाधीबाई त. श्रीजेठी त. अबलबाई त. श्रा. लाडु तथा श्रा. धनकुअर त. नंदकुअरबाई त. बजीबाई त. श्रा. लखमी श्रा. वजी श्रा. अबल श्रा. अज श्रा. पांन श्रा. रायकुअर श्रा. नवी श्रा. अमृत ब. श्रा. रामकुंअर श्रा. सलतान ब. श्रा. इछी ब. श्रा. अमृत ब. श्रा. जोईती ब. श्रा. नवी ब. श्रा. धनकुअर ब. श्रा. रामकुअर संघसमस्त बालगोपालनी वंदणा १००८ वार करी अवधारज्योजी। तथा ईहां देव गुरुप्रसादे श्रीसंघने सुखसाता छे. आपना सुखसाताना कागल देवाजी जिम विसेषथी सुख उपजे। तथा श्रीजी साहिब आप मोटा छो, गीरुआ छो, पूज्यनीक छो, सूर्य समांन छो, चंद्रमानी परे सोम्यकांति छो, सोल कलाइ करी संपूर्ण छो, गुणसमुद्र छो, महर्धिक छो, मौलिमुकट समान छो, लब्धिपात्र छो, कदंबना पुफ समांन छो, तिलकसमांन छे, पंडितमा अग्रेसिरि छो, संसारी जीवने बोधवा समर्थ छे, **घासचंद्र**सूरीजीना गादीना खांवन छो, दीसवंत छो। आपना गुण घडी १ श्री संघने वि[स]रता नथी ते सही जांनज्योजी। धर्मस्नेह श्रीसंघ उपर राखो छो तेहथी विशेष राखज्योजी। देवजात्रा करो तिहां श्रीसंघने संभारज्योजी। संघ पिण आपनें घणुं संभारे छेजी। तुम्हारा दर्शन देखवा उत्कण्ठा घणी करे छे। जिम जल विण मिन अथवा मैयुर, आम्र विण कौकिल, तिम संघ तुम्हारी वाट ज्योइं छे। ते वास्ते श्रीसंघ उपर कृपा करी अत्र वेहला पधारवुंजी। श्रीसंघनी विंनती १०८ वार प्रमांण करी वेहला पधारवुंजी। घणुं स्यु लखीइं? जरूर जरूर वेहला पधारवुंजी ॥

॥ अथ ॥

राजनगरनी वीनती अवधारो स्वामी.

करजोडी संघ विनवे वेहला पधारोजी ॥ राज० ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीसंघ तुमनें विनवे अमने पार उतारोजी
घणा दिवस भेट्यां हुया दरसन वेहला देखाडोजी ॥ राज० ॥२॥
दिनकर जिम उदय थयो रयणी विहांणीजी
तिम तुम आवे थके पाप तिमर सवि नासेजी ॥ राज० ॥३॥
वाणी अतिह सोहांमणी अमृत सरखी सोहावेजी
विधसउं आगम वांचिआं वरसावोजी इहांजी ॥ राज० ॥४॥
भविक जीवनें बौधवा तुमे स्वामिजी आवो,
रातदिवस तुम ध्यावता संघने करो उजमालोजी ॥ राज० ॥५॥
श्रावक श्राविका विनवे तुम लागे पायजी
वारोवार विंनवे करुणा कीजेजी सारजी ॥ रा० ॥६॥
जिहां जिहां तुमो विचरता तिहां तिहां नवनिध थावेजी
पुन्यवंत जिहां विचरता तिहां भवपार उतारोजी ॥ रा० ॥७॥
जिहां जिहां तुम पगलां ठवो तिहां कुंमति नाठीजी
सुमति आवी आदरे कुगति कीधी दूरजी ॥ रा० ॥८॥
देस देसना राजीया जिहां विचरो स्वामीजी
तिहांना लोकने बूझता करता धर्मस्नेहजी ॥ रा० ॥९॥
इण पर विंनती मानजो संघने करजौ प्रमाणोजी
राजनगरनी विंनती लख्यो लेख रसालोजी ॥ रा० ॥१०॥
ओछो अधिको जे लख्यो ते खमजो भगवांनजी
मात पिता आगल सही बालक बोले कालुंजी ॥ रा० ॥११॥
संवत **अढार बेंतालीसे** कार्तिक मास मझार
लेख लख्यो सोहामनो राजनगरथी सारजी ॥ रा० ॥१२॥
पंडित **त्रीकमजी** तणो तसु सीस **रवचंदो**जी
तसु सिस **श्रीचंद**ने प्रभू करज्यो प्रमांणोजी ॥ रा० ॥१३॥

इति श्री विंनती चित्रलेख जे वाचे ते दीर्घायु चिरं नंदा(दता)त् श्रीश्रीश्रीश्री ॥

आ पछी श्रावकोना हस्ताक्षरो छे ॥

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२०)

सिरोही–विजयलक्ष्मीसूरिजीने सुरतथी श्रीसङ्घनो पत्र (सचित्र)

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

ऋषभदेव, शीतलनाथ अने पार्श्वनाथ ए त्रणे इष्ट जिनेश्वरोने नमस्कार करवापूर्वक संस्कृत मङ्गलाचरण करी कविए उपकारी पांच जिनेश्वरोनुं गुर्जर-भाषामां पत्रनी शरुआतमां स्मरण कर्युं छे । त्यार पछीनां पद्योमां कविए सिरोहीनगरनी वर्णना करता ते प्रांतना मुख्य तीर्थस्वरूप अर्बुदगिरिनी स्तवना करी छे । जो के आ स्तवनाना केटलांक पद्योना भावो अन्य पत्रमां मळता सिद्धिगिरिनां पद्यो समान ज छे. सिरोहीमां बिराजमान विजयलक्ष्मीसूरिजीना १०८ गुणवैभवनुं वर्णन करता पूर्वे कविए सिरोही नगरनुं तथा त्यांनां जिनमन्दिरोनुं सुन्दर वर्णन कर्युं छे. त्यार पछी ''मारा घणु....' ए देशीमां कविए सूरिजीना आन्तरिक गुणोनुं वर्णन आलेख्युं छे. गूढार्थवाळां ७ पद्यो ए आ पत्रनी विशेषता कही शकाय. एवी ज रीते त्यार पछी पत्रमां आलेखायेलुं सुरत शहेरनुं वर्णन ऐतिहासिक दृष्टिए घणुं महत्त्वनुं छे. सुरतना प्रसिद्ध अश्विनीकुमार, भीडभंजन महादेव, तापी नदी, तथा सूरजमंडणसाहिब, धर्मनाथ विगेरे प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध जिनालयो वळी नवापुरा, देसाईपोळ, उमरवाड, सइदपुरा, छापरीया जेवी घणी विगतोने कविए पत्रमां जे रीते वर्णवी छे ते परथी कविनी सूक्ष्म प्रज्ञा जणाई आवे छे. सुरतमां पं. मानविजयजी चातुर्मासार्थे पधार्या तेथी सङ्घमां केवी आराधना थई ते विगतनी पत्रमां 'दूहा' रूपे रचना करी पू. लक्ष्मीसूरि साथे बिराजमान साधुवृन्दने वन्दना जणावी पत्र रच्या संवत्नी नोंध साथे पत्र (पद्य) पूर्ण करे छे. सुरत चातुर्मासार्थे बिराजमान मुनिवृन्दनी संख्या ते पण अहीं विशेष नोंधवा योग्य छे. गद्य पत्रनो प्रारम्भ १८ मुनिगुणनी वर्णनापूर्वक करी श्रीसङ्घना श्रावक, श्राविकाओनी वन्दना जणावे छे. सूरिभगवन्तना गुरु, जन्मस्थान, माता-पिता, वंश इत्यादि ऐतिहासिक सामग्री पूर्वक गुणस्तवनारूप भासनुं आलेखन करी खामणा लखी गद्य पत्र पूर्ण करे छे. अत्रे मूळ पत्रनी भाषा तथा जोडणी यथावत् जाळववामां आवी छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादनार्थे प्रस्तुत कृतिनी हस्तप्रत आपवा बदल आर्ट गेलेरी ओफ साऊथ ओस्ट्रेलीयाना डायरेक्टरश्री, नलिनीबेन बलवीर, कल्पनाबेन शेठ, हिरेनभाई पंडितजी तेमज उमंगभाई (श्रुतभवन वाळा)नो खूब खूब आभार.

पत्रना कर्ता कोण छे ते ख्याल आवतो नथी पण तेओ 'कवि' तरीके पोतानुं अन्य नाम ढाळना अन्ते दर्शावे छे. जोके कर्तानी ते बाबते विशेष विचारणा थवी घटे.

आ पत्रनी पण अमने जे. नकल ज मळी छे, तेने आधारे आ सम्पादन थयुं छे. पण आ पत्रमां अनेक चित्रो छे, जे मूळ रंगीन फोटा मळे तो पत्र साथे छपाववा योग्य लाग्यां छे. खरेखर तो बधां सचित्र पत्रोनां चित्रोनो एक आगवो संग्रह प्रगट थवो जोईए.

* * *

॥ ८० ॥ श्रीऋषभाय नमः ॥ श्रीमद्गुरु प्रति लेखो लिख्यते ॥

अथ काव्य

स्वस्तिश्रीवृषभं जिनेन्द्रवृषभं त्रैलोक्यरत्नर्षभं,
श्रीमत्(च्छा)शान्तिजिनं सू(सु)धाभवव(द?)नं देवैः कृताभ्यर्चनम् ।
नेमि(मिं) नो(नौ)मि जिनं ह्यमेयमहिमं वामेयति(ती)र्थाधिपं,
श्रीवीरं प्रणमामि.....[पञ्च] जिनपाः कुर्वन्तु वो मङ्गलम् ॥१॥
स्वस्तिश्रीकमलं विभूतिविमलं क्षीराब्धिवन्निर्मलं,
नश्यत्कर्ममलं विधूतसबलं मायारजस्स्वानिलम् ।
भ्रश्यन्मोहबलं भवानलजलं धैर्यास्तदेवाचलं,
चक्षुःपद्मदलं नना(मा)मि सकलं श्रीमज्जिनं शीतलम् ॥२॥
स्वस्तिश्रीभुवनं मनोज्ञवचनं त्रैलोक्यलोकावनं,
विद्यावल्लीवनं प्रहृष्टभुवनं सौभाग्यभूभावनम् ।
क्लिप्ते(ष्टे)र्नोलवनं शिवाद्व(ध्व)जवनं श्रेयोवनीजीवनं,
पापाब्धेः पवनं भृशा निधुवनं पार्श्वं स्तुवे पावनम् ॥३॥
स्वस्तिश्री(क्षे?)मकरं सरोरुहकरं गाम्भीर्यरत्नाकरं,
शा(श्या)माशा(श्या)मकरं जगद्दिनकरं कीर्त्त्या ज्जि(जि)तोषाकरम् ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ध्वस्तारातिकरं चिदास्तु(स्त)मकरं श्रीपद्मपद्माकरं,
सूद्धाङ्गिप्रकरं(?) समाब्धिमकरं पार्श्वं स्तुवे शङ्करम् ॥४॥
स्वस्तिश्रीशरणं विपत्तिहरणं श्रेयःस्तुतेः कारणं,
मुक्तिस्त्र्याभरणं प्रियङ्करणं संसारनिस्तारणम् ।
त्रैलोक्याचरणं प्रतिक्षचरणं मोहारिनिर्दारणं,
गोगोनिर्सरणं दिगत्तस्मरणं(?) पार्श्वं स्तुवे पूरणम् ॥५॥

इति श्रीपञ्चकाव्येन मङ्गलाचरणस्तुतिः ॥ अथ श्रीमल्लेखपद्धति आरभ्यते ॥

दूहा

स्वस्तिश्री जस नामथि, पांमिजें आणंद,
श्रीऋसहेसर जगतिलो, श्रीमरुदेविनंद ॥१॥
स्वस्तिश्री जस पदकजे, भमरि परि निवसंत,
अचिरानंदन गुणनिलो, ते प्रणमूं श्रीशांति ॥२॥
स्वस्तिश्री ललितांगना, आलिंगत जस देह,
श्रीनेमिसर जिनवरू, ते प्रणमुं धरी नेह ॥३॥
स्वस्तिश्री नीत संपजें, जस नांमे घहघट्ट,
पास जिणेसर परगडो, परता-पूरण-हट्ट ॥४॥
शासननायक वीरजी, जीवन जगआधार,
तिसलासुत सोहांमणों, नांमे जय जयकार ॥५॥
पांचे तीरथ परगडां, पंचमिगतिदातार,
प्रणमी प्रेमें तेहनें, लेंख लखू श्रीकार ॥६॥

॥ अथ गुरुगच्छाधिराज सिवपूर्यै चातुर्मासके स्थित तत् सिरोहीनगर-वर्णनमाह ॥श्री॥

॥ अथ ढाल - धमाल ॥ देवानंद नरिंदने रे, मनमोहनां रे लाल - ए देशी ॥

सकल देशदेशांसिरे रे मनमोहनां रे लाल,
देश सीरोही समृद्ध रे मनमोहनां रे लाल;
धण कण कंचन पूरीओ रे मनमोहनां रे लाल,
अमरपूरि ज्यूं प्रसिद्ध रे मनमोहनां रे लाल. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जंबूद्वीपना भरतमां रे मन..., मोहे घणुं श्रीकार रे मन...
अवर देश अनुचर थया रे मन..., देश सिरोहि सिरदार रे मन... २
सिरोही देस सोहांमणो रे मन..., देखंता दुख जाय रे मन...
नर नारि निरुपम सहु रे मन..., वसय सदा सूखदाय रे मन... ३
सूरसरिता जिम सोहति रे मन..., नदियां निरमल निर रे मन...
तिर तरंड विहंगसूं रे मन..., शीतल जीहां समीर रे मन... ४
पग पग पांणी पंथमे रे मन..., वड जिम मोटा वृख रे मन...
शीतल जल छाया सदा रे मन..., पंथी पांमे सूख रे मन... ५
शालि तणां खेत संपजे रे मन..., नीका भरीया नीर रे मन...
पाका आंबा तोडता रे मन..., केल करे बहु कीर रे मन... ६
गिरीवर कंचनगिरि जिसा रे मन..., उन्नत शिखर आवास रे मन...
निझरणां नदियां वहे रे मन....., षट् रितु बारह मास रे मन... ७
आगर सोहे अति भला रे मन..., साते धात सूरंग रे मन...,
वस्तु विशेष जिहां घणां रे मन..., परिघल पांचे रंग रे मन... ८
आंबा रायण आंबलि रे मन..., करेणा केलि खजूर रे मन....,
बहू फल फूलें शोभता रे मन...., तरवर तरल सनूर रे मन... ९
सरवर भरीयां सूंदरु रे मन..., पंखि करता केलि रे मन...
कमल सुगंधा ऊपरे रे मन..., षटपद करता गेलि रे मन.... १०
वन उपवन आरांमना रे मन...., पग पग न लहु पार रे मन....
अढार भार वनस्पति रे मन...., फल्यां फूल्यां सहकार रे मन.... ११
इंम अनेक गुण शोभता रे मन...., सूंदर सीरोहि देश रे मन...
कहिई जिहां लहीई नही रे मन.., दुरभिख डमर प्रवेश रे मन... १२

अथ काव्यम् —

यत्रानेकोच्चदुर्गाऽचलविमलसरित्-सुन्दराराम-वापी-
कूपोत्तुङ्गागराम्भःसरसजलरुहाकीर्णसङ्कीर्णभूमौ ।
राजन्ते सन्निवेशा विपुलतरलसद्धाम्यधर्मप्रवेशा,
सीरोहीदेशकोऽयं जगति विजयतां सर्वदेशावतंसः १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

इंम अनेक गुण सोहतो, देस सिरोही सिरदार,
तिहां तिरथ अति दिपतो, आबूगीरी जग सार. १
आबूगिरि गिरिसेहरों, मोखप्रासाद-सोपांन,
इंण वाटे वहेंता तिके, पोहोचे सिवपुरथांन. २
आदि न कांइ इण गिरि तणी, तिम वली नावे अंत,
सदाकाल ए सासतो, जिनवर एम कहंत. ३
ए गिरि चिंतामणी जिस्यों, मनोवंछितनो गेह,
नयणे परतिख निरखतां, गिरिपति अधिको एह. ४
अमरपति सहु आविया, भरतादि सवि राय,
तिर्थंकर सब मूंनिवरा, सेवित किय थिर थाय. ५
धन धन ए देशांतिलक, धन जन इहां बसंत,
श्रीआबूगिरी नित प्रतें, निज नयणें निरखंत. ६
कांमधेनु जिम दोहिलो, पांमीजे कृतपूण्य,
तिम दरिसण ए गिरि तणो, जे पांमे ते धन्य. ७

॥ अथ अर्बूदवर्णनम् ॥ढाल॥

॥ मिठि लागे रे तुमारी चाल छेहडो नाहि मेलुं – ऐ देशी ॥

आबूगीरी रलिआमणो रें, शिखर उन्नत असमांन रें,
चिहुं दिसि निझरणा झरे रें, नीरमल नीर प्रधांन. १
अर्बूदगिरि वारू रे, पर्वतमां मूगट समांन [ए आंचली]
सिद्धगिरि जांणो तुहमे रें, **शेत्रुंजगिरि**नो शृंग रें,
प्रह समें उठि प्रणमिये रें, आंणी भाव अभंग. २ अर्बूद०
जोगीस्वर सूभ ध्यांनथी रें, अणसण लेई उदार रें,
साधि पोहतां पंचमगति रे, तिण ए तिरथ सार. ३ अर्बूद०
पंडूकवन सम सारिखा रें, वन वाडि विस्तार रें,
चंपक केतकी मालति रें, सोहे अति सहकार. ४ अर्बूद०
पातिक चूरे पाजें चढ्यां रे, गिरि फरस्यां गहगाट रें,
देवल नयणे देखतां रें, अलगो जाइं उच्चाट. ५ अर्बूद०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोवनवरण सोहामणो रें, मूरत मोहनवेल रें,
चोमूख मूरति अति भली रें, रूडी सिवसुखरेल. ६ अर्बूद०
केसर अगर कस्तुरिसुं रें, मृगमदनो करि घोल रें,
पवित्र थई जे चरचस्यें रें, कर ग्रही रतनकचोल. ७ अर्बूद०
धुप अनोपम आरति रें, करे सदा सूखसंग रें,
नाटिक नव नव रंगस्यूं रें, वाजत ताल मृदंग. ८ अर्बूद०
गिर दरसण दुरगति टलें रे, पग पग वंछितपूर रें,
भाव धरि भेटे जिकें रें, सदा उगमते सूर. ९ अर्बूद०
भवी भावे गिरिवर नमो रें, सिवपूरीस्थांनक एह रें,
भावना भावो गुण गीरी गावो, कवियण जंपे एह. १० अर्बूद०

काव्य : यत्सोत्सङ्गमुपागता जिनमताचारेण पञ्चव्रती-
मासाध्योत्तमभावभावितस(ह)दा प्राप्ता ह्यनेके शिवम् ।
भव्या[:] संश्रुति(सृति)सागरान्तमिल...जन्तुप्रतारी (?) यत:,
नाव(वा) सोऽयमिलातले विजयते तीर्थाधिपश्चार्बुद: ॥१॥

दूहा : तिण देशें अति दिपतों, नगर वडो चोसाल,
सिरोहिपूर गुणे गहिर, सोहे झाकझमाल. १
अमरपूरी तिणि आगलें, किरत न पावे कांई,
जिम चिंतामणी आगलें, फिटक न शोभा थाई. २
पवित्रकरण पंचम अरि, जंगम सूगुरू जिहांग,
श्री**विजयलक्ष्मीसूरि**श्वरू, जिहां विचरे सूरिराज. ३
तेह नगर सूभ थांनिके, सकल गुणौघ-निधांन,
चारित्रपात्रचूडामणी, पंडित मांहि प्रधांन. ४
सासनपति श्रीवीरजी, श्रीश्रीसुधर्मास्वांम,
श्रीजंबूस्वांमी प्रमुख, प्रभवादिक अभिरांम. ५
तेहि ज पट्टपरंपरा, अंबरभासन सूर,
श्रीविजयलक्ष्मीसूरिश्वरु, नायक चढतें नूर. ६

॥ अथ ढाल - ३ रसीआनि(नी) - धर्म जिणेसर गावूं रंगसूं - ए देशी ॥

सिरोहि नगर सदा सोहांमणो, अमरपूरी अवतार सोभागी,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नर नारि निरुपम सोभति(ता), अपच्छर सूरअवतार सोभागी. १
सिरोही...
गढ मढ मंदिर मोटा मालिआ, पोलि अनेक प्रकार सोभागी,
डाली झूलण गोख जूगत करी, सोभें अति श्रीकार सोभागी. २ सिरोही...
ऊंची लांबी धज असमानसूं, लहकंति करे वाद सोभागी,
सोवनकलस सिखिर तणां, प्रौढा प्रभूना प्रासाद सोभागी. ३
सिरोही...
वाजित्र वाजै राजै अति घणा, झालरिना झणकार सोभागी,
अगर उवेखी उतारे आरतिं, गावे जिनगुण सार सोभागी. ४
सिरोही...
रंगमंडप मांहि रलीयामणा, खेले(ल) खेले मनअंत सोभागी,
ताता तनन थेइथेइ उच्चरें, घूघर पग धमकंत सोभागी. ५
सिरोही...
श्रीजिनवर-प्रासाद सिरोहि में, जांणे रविप्रकास सोभागी,
भाव धरि भवियण जन नितप्रतें, त्रिकरण सेवे पय तास सोभागी. ६
सिरोही...
वारु वरण सदा च्यारु वसैं, परगट पवन छत्रीस सोभागी,
सोवनमूरति सरिखि सिरोही, देख्या पोहोंचे रे जगीस सोभागी. ७
सिरोही...
श्रीयुत्त श्रीश्रीपूज्य चरण ठवैं, तिहां किण नित परधांन सोभागी,
कनक सूगंधाने हरि पाखर्यो, ए पांम्यो उपमांन सोभागी. ८
सिरोही...
आज इंणे पंचम आरें कही, कुंण करसे एहनि जोड सोभागी,
श्रीश्रीपूज्यक्रम पूजै भावसौं, महीमा करे मनमोड सोभागी. ९
सिरोही...

॥ अथ गुरु-गच्छाधिराजवर्णनम् ॥

श्रीगुरुपदकमले करि, पवित्र थयुं भूपीठ,
ते श्रीमरुधर देशमां, सिरोहि सहेर गरिट्ठ. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ ढाल ॥ माय मोहिं दक्षणीआं न मिलाय - ए देशी ॥

पूज्याराध्यतमोत्तमा रे, वंदनीक पूजनीक,
सकल गुणे करी सोभता रे, हो (जी) गच्छपतियां सिर टीक. १
सूरीसर गच्छनायक गुणवंत [आंकणी]

भारति कंठभूषणसमा रें, कलि गौंतम अवतार,
अबोध जिवप्रतिबोधकुं, हो जी तपतेजें दिनकार. २ सूरीसर..

एकविध असंजमतणा रे, राजक गुणमणिखांण,
कथक दोय धर्मना, हो जी त्रिण्य तत्त्वना जांण. ३

च्यार कषाय जीति करिरें, पंच माहाव्रतधार,
रक्षक षट्विध जीवना, हो जी भय-सप्तकना वार. ३ सूरीसर....

टालक आंठे मद तणा रें, नव विधि पालैं ब्रह्म,
आदर करिने आदर्या, हो जी दश भेदे जतिधर्म. ४ सूरीसर....

वाचक अंग इग्यारना रें, बार उपांग वखांण,
जिपक काठिआ तेरना रे, हो जी चउद विद्या-गुणजांण. ५ सूरीसर....

पन्नर भेद सीधना रें, तेह तणा केहेणार,
सोल कला पूरण शशी, हो जी सम मुं[ख] जस श्रीकार. ६ सूरीसर....

सत्तर भेद संजम ग्रह्यो रें, पापस्थांन[क] अढार,
वारक वली काउसग्गना रे, हो जी ओगणीस दोष निवार. ७ सूरीसर....

वि(वी)सथानकतप आदरे रें, श्रावकगुण एकवीस,
दुर्धर परिसह जीपीया, हो जी मनसूधे बावीस. ८ सूरीसर....

नृप मंडलिक पहेले भवि रें, थया ते जिन तेवि(वी)स,
कथक वली पालक सदा, हो जी आणां जिन चोविस. ९ सूरीसर...

पंचविस भावन भावता रें, कप्पाज्झयण छविस,
उपदेशीक अंगे वली, हो जी मुनिगुण सत्ताविस. १० सूरीसर....

अडविस भेद मतिज्ञांनना रें, उपदेशक मूंनिराय,
ओगणत्रिस पापश्रूत तणों, हो जी संग नहीं जस माय. ११ सूरीसर...

मोहनियथांनक अछे रें, तिस भेदें सूविचार,
सिधभेद एगतिसना, हो जी बत्रिस लक्षणधार. १२ सूरीसर...

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेत्रीस आसातन कही रें, ते टालें निसदिस,
चोत्रिस अतिसय जांणता, हो जी वांणीगुण पांत्रिस. १३ सूरीसर...
छत्रिस उत्तराध्ययनना रें, उपदेशक गणनाथ,
गणधर कुंथु जीणंदना रे, हो जी सगतिस ज सिवसाथ. १४ सूरीसर...

दूहा : खूड्डियाविमांणवर्गे बिअें, उद्देशा अडतीस,
समयक्षेत्र मांहि अछे, कुलगिरि गुणच्यालिस. १
देहमांन श्रीशांतिनो, धनुष च्यालीस जगीस,
पढम महल्लीयवग्गना, उद्देशा एगतालिस. २
बायालिस कालोदधें, सूरज करें उदबोध,
करमविपाकोद्देश छें, त्रयालिस सुबोध. ३
उद्देंशा वर्गे कह्यां, चौथै चौआलीस,
धर्मनाथजिनदेह छे, धनूष ज पणयालिस. ४

॥ ढाल - संयमथी सूख पांमीई - ए देशी ॥

बंभि लिपिना जांणिई, अक्षर छेंतालिस सुगुरुजी,
अगनभूति गृहमें वस्या, वरस ज सगच्यालीस सुगुरुजी १
उपदेशक तेहना तुह्मे

पन्नरमां धरम जिनेशना, गणधर अडतालिस, सुगुरुजी,
तेरंद्रीनुं आउखू, ओगणपंचास जगीस सुगुरुजी. २ उपदेशक....

देह अनंतजिणेशनुं, धनूष भला पंचास सुगुरुजी,
उद्देशा एगावह्ना, नवे ब्रह्मना खास सुगुरुजी. ३ उपदेशक...

मोहनि कर्म तणा भण्यां, सूत्रे नांम बावह्न सुगुरुजी,
पंच अनुत्तरे उपना, वीरना शीस त्रेपह्न सुगुरुजी. ४ उपदेशक....

नेम प्रभू छद्मस्तपणे, विचर्या दिन्न चोपन्न सुगुरुजी,
अंत समें वीरें कह्या, अज्झयणा पणपन्न सुगुरुजी. ५ उपदेशक....

विमलनाथना शोभता, वली गणधर छप्पन्न सुगुरुजी
त्रिण गणपिट्टक मली, अज्झयणा सगवन्न सुगुरुजी. ६ उपदेशक....

नांणावरणी नें वेदनी, आऊ नांम अंतराय सुगुरुजी,
उत्तर प्रकृति ए पांचनी, अट्ठावन्न समूदाय सुगुरुजी. ७ उपदेशक...

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक रितु चंद्रसंवत्सरे, ओगणसठि निसि मांन सुगुरुजी,
विमलनाथ जिनरायनुं, सांठ धनुंष देहमांन सुगुरुजी. ८ उपदेशक...
चंद्रमंडल इगसठीआ, भागे भजीई जांण सुगुरुजी,
शांतिनाथ जिन मूनिवरा, बासठि सहस वखांण सुगुरुजी. ९ उपदेशक....
निषध निलगिरि[ए] त्रेसठा, करे प्रकास दिनकार सुगुरुजी,
चक्रवर्ति पहेरें सदा, चोसठ शिरनो हार सुगुरुजी. १० उपदेशक...
जंबूद्वीपे भासिया, रविमंडल पणसठि सुगुरुजी,
दक्षिण मानुषगिरि सदा, चंद्र तपें छासठि सुगुरुजी. ११ उपदेशक...
श्रीश्रेयांस जिणंदना, गणधर वली सगसठ सुगुरुजी,
धातखि खंडे जिनवरा, उत्कृष्टा अडसट्ठि सुगुरुजी. १२ उपदेशक...

दूहा : सात कर्म उत्तरप्रकृति, उगुणसित्तर विण मोह,
सत्यरि घणुं ऊंचा पणो, वासूपूज्य जिन मोह. १

एकोत्तरपूरव सहस लग्ग, अजित वस्या घरवास,
कला बहोत्तर जांणता, विद्यागुण-लिलविलास. २

विजयदेवनुं आउखू, त्रेहोत्तर वरस सहस्स,
अग्नीभूति गणधर तणुं, आऊ चिहोत्तर वरस. ३

पंचोत्तरशो केवलि, पुप्फदंतना जांण,
छिहोत्तर लाख पूरव पछी, भरते थया महारांण. ४

अठ्योत्तर लवथी होवें, एक मूहूरतनो मांन,
अकंपितनो आऊखो, अठ्योत्तर वरस प्रमांण. ५

जंबूद्वीप पोलैं अंतरुं, जोयण गुण्यासि सहस्स,
श्रीश्रेयांस तनुंमांन छे, अैसी धनूष सहस्स. ६

नव-नवमीया मूनिवर तणा, प्रतिमांना दिनमांन,
एकाशी ते जांणीइं, तेह सयलना जांण. ७

॥ ढाल ॥ कपूर होइ अति ऊजलो रे – ए देशी ॥

देवानंदा उर वस्या रें, ब्यासी दिन श्रीवीर,
शीतलनाथना गणधरा रें, त्र्यासी वडह वजीर. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोभागि साहिब तेहना छो तमे जांण, एतो गुरुजी चतुर सुजांण
[आंकणी]

ऋषभदेवना जांणीई रें, चोरासी गणधार,
उद्देशा पढमांगना रें, पंच्यासी सुखकार. २ सोभागी...
सूवधिनाथ जिनवर तणा रें, गणधर छ्यांसि जांण,
उत्तरप्रकृति छ कर्मनि रें, सत्यासि विणु नांण. ३ सोभागी....
अठ्यासि ग्रह वश किया रें, धर्मबले मुनिराय,
शांतिनाथनि साधवी रें, सहस नव्यासि थाय. ४ सोभागी...
नेउ धनूष शीतल तणुं रें, देहनुं मांन उदार,
आयु गोत्र विणु छ कर्मनि रें, प्रकृति एकांणु सार. ५ सोभागी...
इंद्रभूत गणधर तणुं रें, बाणुं वरसनुं आंय,
चंद्रप्रभू जिनचंदना रें, ... ६ सोभागी...

....,
...., पंचाणु गणधार. ७ सोभागी....
वायुकुमार तणा कह्या रें, भूवन छन्नु लाख,
उत्तरप्रकृति अडकर्मनि रें, शत्ताणुनि भाख. ८ सोभागी...
ऋषभ साथे सिद्ध थया रें, अठाणुं निजनंद,
योजन सहस नवांणु छे रें, सुरगिरि सोवनकंद. ९ सोभागी...
पारसनाथनुं आउखू रें, एकसो वरस उदार,
दश-दशमीया पडिमा तणा रें, एकसो दिन विस्तार. १० सोभागी...
एकोत्तरसो कुल तणा रें, तारक श्रीगुरुराय,
बिडोत्तर रूपक तणा रें, भेद लहो मुनिराय. ११ सोभागी...
तिडोत्तरशत नामना रे, भेद तणा किहिंणार,
चिडोत्तरशत रागना रे, भेदना जांणणहार. १२ सोभागी....

दूहा : पंचाधिक शत जेह छे, कुंडलिआना भेद,
षट् उत्तर शत तेहना, वेधक छंद सूभेद. १
एकशत साते आगली, गाथा दोधक जात,
इत्यादिक बहु बोलना, उपदेशक विख्यात. २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मणीया नोकरवालीऐं, एकसो आठनो माप,
तिणे नित्ये **गुरूजि** जपे, सूरीमंत्रनो जाप. ३

इत्यादिक गुणमणी तणा, अविचल अनोपम हट्ट,
वादिवृंदसिंह सारिखा, वादिधांनघरट्ट. ४

॥ ढाल ॥ ढोलो तो मुख रो मारू, थारा जानईआ दीशे वारू रे
मारा घणुं सवाई ढोला - ए देशी ॥

मांरा परम सूग्यांनी पूज्यजी, मात **आणंदबाई** जाया,
सा.हेमचंद कुलमें आया रें मांरा...
मांरा घणु सवाई गुरुजी, राजराजेसरं राया,
प्रणमें जेहना नित पाया रें मांरा... १

रूपे अनंग सोहाव्या, तेजे रवितेज सवाया रे मांरा...
वांणी सूधा सम गाया, सूणतां दूख दुर नसाया रें मांरा... २

दरसणमोह न माया, देखंता तृपति न पाया रे मांरा... ३*

चारित्रथी चित्त लाया, जिण मोहमहिप हराया रें मांरा...
जित्या क्रोधकषाया, मन उप[सम]रसमां ठाया रें मांरा.... ४

कुसि तपस्याई काया, जिणे परिहरि ममता नें माया रें मांरा...
ने साधूगुणे सूहाया, पंचम आरें प्रभू पाया रें मांरा... ५

श्रीविजयउदयसूरिराया, **तपगच्छपति** तेज सवाया रें मांरा....
तस पाटे सूखदाया, **श्रीविजयलक्ष्मी**सूरि ठाया रें मांरा... ६

सूरज ससि गिरिराया, तां लगि प्रभू प्रतपो पाया रें मांरा...
धन्य ते देश कहाया, जिहां विचरें श्रीगुरुराया रें मांरा... ७

पालड़ीनगरना राया, घणु प्रागवंस सोहाया रें मांरा...
इंम कविइं तुम गुण गाया, सहु संघनें मांम सवाया रें मांरा... ८ ॥इति॥

अथ दूहा

धर्मधुरंधर मेरु परे, महिमा जगविख्यात,
षट्विध जीवनिकायना, मात तात नें भ्रात. १
सत्रु-मित्र समचित्तधर, कृपासमुद्र पवित्र,
गंगाजल परिं निर्मला, जेहना सरस चरित्र. २

* अत्रे एक चरण ओछुं छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गयणंगण कागल करुं, लेखण करुं वनराय,
सायर सघला मिस करूं, तोहि तुंम गुण लिख्या न जाय. ३
हियडा ते किम विसरें, जे सद्गुरु सूविचार,
दिन दिन प्रतें ते सांभरे, जिम कोयल सहकार. ४
गिरुआ सहेजे गुण करें, कंत म कारण जाण,
तरु सिंचे सरवर भरे, मेघ न मांगे दांण. ५

अथ गूढा ॥

दधिसूता गुणसें भरी, चंद्रप्रियासू खास,
मूगताहार जिस पर धरें, प्रथमक्षर उहां बास. १ [ ]
गोहुं पहेलां निपजे, सरिखो तरवर तास,
पेहेलि चोथि मातरा, सोई तुह्मारे पास. २ [जीव]
प्रथमाक्षर विण पंखिओ, मध्यक्षर विण ताप,
भोजन अंतक्षर विना, ते जांणज्यो आप. ३ [ ]
राधावरके कर वसैं, पांच अक्षर गुणलेह,
प्रथमाक्षर दुरें करी, बाकी हमकु देह. ४ [सुदरसण]
दोय नारि अति सामली, पांणी मांहि वसंत,
ते तुह्म दरिसण देखवा, अलजो अति करंत. ५ [कीकी]
सो वाता श्रवणे सूंणी, सो धर लीनी सीस,
भूपति तुंम लिख भेजिओ, उलटे अक्षर वीस. ६ [ ]
अरध नांम नृपद्वारको, धुर कागलको तात,
जब होवेगो रावलो, तब सूख पामे गात. ७ [ ]

अथ काव्यम्

अशितगिरि सम(मं?) स्यात् कज्जला(लं) सिन्धुपात्रे,
सुरतरुवरशाखा लेखिनी पा(प)त्रमुर्वी ।
लिखि(ख)ति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं,
तदपि तव गुणानामीश! पारं न यान्ति(ति) ॥१॥
यथा स्मरन्ति(ति) गो(गौः) वत्सं, चक्रवाकी दिवाकरम् ।
सति(ती) स्मरणि(ति) भर्त्तारं, तथाऽहं तव दर्शनम् ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

तपगछमें मेढी समें, गछदीपावणहार,
श्री**विजयलक्ष्मीसूरि**सरुं, सूविहितमूनिशृंगार. १
भाग्यवंत महिमानिलो, सोभागिसिरदार,
परउपगारी परगडों, महिमा मेरु अपार. २
श्रीश्री[श्री] अति घणी, एकसो आठ धरान्,
श्रीविजयलक्ष्मीसूरीसरू, सपरिवार चरणान्. ३

इत्यादि अनेक शुभ कोटिओपमांविराजमांन, सकल भट्टारक-पुरंदर-भट्टारक श्री १००८ श्री... विजयलक्ष्मीसूरिश्वरजीचरणान् चिरंजिवि **श्रीसूरजपूर**नो लेख लिख्यते ।

अथ सूर्ज(रज)पूरनयरवर्णनमाह ॥

दूहा

ते श्रीगुर्जर देशमां, गुणमणिगुणे गहीर,
सुरति सब सहिरां सिरे, हेमजडित जिम हीर. १

[ढाल] ॥ ते तरिआ रे भाई ते तरिआ - ए देशी ॥

जंबूद्वीपना भरतमां वारू, गुर्जर देश दिदारुं रें,
पालनपुर शांतलपूर सारू, **पाटण** पूंण्य विचारू रें. जंबूद्वीप... १
राधनपूर जन धरमना रागी, **अमदावाद** सोभागी रें,
त्रंबावती जोतां चित्त जागि, चतुराई गुंणरागी रे. जंबूद्वीप... २
जंबूसर अति जोवा सरिरपू(खुं), **वडोदरे** वलि निरख्यूं रें,
[11]**दूरग** मोटो **डभोई** देखूं, **भरूअच्च** सूपरि परखूं रें. जंबूद्वीप... ३
इम अनेक नगरे करी सोहें, दीठडा मनडुं मोहइ रें,
नव नवी वनराजी ताजि, निरखे चित्त होवे राजि रें. जंबूद्वीप... ४
तस सीरमूगटोपम तिहां दि(दी)से, **सूरतबंदिर** चारू रें,
वन उपवन आराम प्रमुखनी, बहुलि सोभा धारु रैं. जंबूद्वीप... ५
असनिकुंमार छैं पूरव दिशै, मिथ्यात्त्वि बहु मांने रें,
दक्षणदिशि **भिडभंजन** नांमें, **महादेव** मनमां आंणे रे. जंबूद्वीप... ६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पश्चिम दिश **हनुमंत**नि पूजा, चाली अती घणुं चावी रें,
लोक अनेक मिलें तिहां पर्वे, मिथ्यात्वि बहु भावि रें. जंबूद्वीप... ७
कुबेरदिशि **कांतेसर** कहिइं, **वरतिया देहडि** लहिइं रें,
श्रावणमासें सोमदिनें बहु, तमासगीरी गहगही[ए] रें. जंबूद्वीप... ८
वप्र सरिखा तिहां घणुं सोहे, कांगरा देखी मन मोहि रें,
उंचा मोहोल अनोंपम राजै, **कील्लो** अतीहि छाजे रें. जंबूद्वीप... ९
सोभें **तापी** तस हेठें ताजी, नारिओ धोवे झाझी रें,
स्वदेशी परदेशी तिहां किण, वाहिण रह्या तिहां गाजि रें. जंबूद्वीप... १०
लाठ हरामिने कंठी-छोडां, कपटि जण पण केता रें,
अवलचंड उच्चका बहुला, ते पिण तिहां सूखस्याता रें. जंबूद्वीप... ११
श्रद्धावंत विवेक(की) सूगुणा, गुणीजनना बहु रागी रें,
शक्ते व्रत धरता दृढधर्मा, सूत्रार्थानुविभागि रें. जंबूद्वीप... १२
जीवादिक बहु भेदनें जांणे, गुरुसेवा मन आंणे रें,
पोसह पडिकमणे घणु रसिआ, विधि करें शास्त्रप्रमांणे रें. जंबूद्वीप... १३
पंचमि प्रमुख तणां उजमणां, करे बहु भक्ति उदार रें,
चोरासि गच्छनें पिण [१३]चोंपें, वेहेंरावे सूविचार रें. जंबूद्वीप... १४
श्रीसी(सि)द्धाचल आबूगढना, जिहां किण संघपति राजै रें,
सासन-सोह चढावण सुरा, निज कुलमां घणुं छाजै रें. जंबूद्वीप... १५
दिनकरणीमां देव जूहारे, शक्ति तणें अनुसार रें,
सूरजमंडण पास जोहारें, **धर्म**प्रभू चित्त धारे रें. जंबूद्वीप... १६
शंभवनाथ स्तवें हित आंणी, **माहावीर** उपगार जांणी रें,
अभिनंदन आणंदे पूजैं, **चिंतामणी** चित्त आंणी रें. जंबूद्वीप... १७
नाहना **अजित** जिणंदनें प्रणमें, **प्रेमजी** घरे प्रभू पासे रें,
मोटा अजित जिणेसर राया, नमें नित मन उल्लासि रें. जंबूद्वीप... १८
देशाईपोले दोलतदाई, **चंद्रप्रभु** चित्त लाई रें,
आदिसर अलजे पूजीनें, **उंबरवाडे** आई रें. जंबूद्वीप... १९
शांतिकरण **श्रीशांति**जिणंदा, भेटे भक्ति अमंदा रें,
नवेपूरें पंचम जिन पूजी, **ओलि छापरिआ** आवंदा रें. जंबूद्वीप... २०
सईदपूरामें सबले साजैं, **शांति**जिणेसर भावैं रें,
गढे श्रीजिन आगलि, बहुलि भावना भावैं रें. जंबूद्वीप... २१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अष्टप्रकारि सत्तर प्रकारि, अठोत्तरसो भेदें रें,
पूजा रचैं बहुला धन खरचैं, नरकादिक गति छेदें रे. जंबूद्वीप... २२
बीज पांचम आठम ईग्यारस, चौदश तिथि घणुं सोहे रें,
गीत ग्यांन नाटिक अनुसरता, भावना भावें जोहे रें. जंबूद्वीप... २३
इण परिं सघलो संघ सोहावें, **सूरत** सहेंर मझार रें,
श्रीश्रीजीनुं ध्यांन धरंतो, **कवि** तुंम आणा धारे रे. जंबूद्वीप... २४

॥ अथ दूहा ॥

संघ समस्त सूरत थकी, लेख लख्यो श्रीकार,
त्रिविध त्रिविध करि वंदणा, अवधारो गणधार. १
धर्मध्यांन इंहां किण घणा, नित नित नवले नेह,
ओच्छव मोच्छव अभीनवा, कहेतां नावे छेह. २
छठ्ठ अठम दसम पन्नर, मासखमण तप तेम,
थया अनेक इंहां किणैं, नित अधिका ध्रमनेम. ३
परव पजुसण पारणा, सांहमीवच्छल सार,
आडंबर अधिका थया, परिघल अनेक प्रकार. ४
निराबाध सूखतप तणां, श्रीजीना सूखकार,
समाचार श्रीसंघनें, देज्यो धरि अति प्यार. ५
जिम इंहां संघ समस्तनें, उपजें अधीक आनंद,
पूज्य तणा परभावस्यूं, नित नित हुवें सुखकंद. ६
श्रीजीना आदेंसथी, **मांनविजय** पन्यास,
जप तप पच्चक्खाणे करी, उत्तम थयो चोंमास. ७
सर्वजांण श्रीपूज्यजी, हितवत्सल हितवंत,
अबूधजीव प्रतिबोधवा, साचो तुं समवंत. ८
सकल संघनी वंदना, अवधारवी त्रीकाल,
अवसर जोई संभारज्यों, धरज्यों कृपा कृपाल. ९
सकल गुणे करी सोभता, मुनिवरमांहिं प्रधांन,
श्रीप्रेमविजय पंडितवरु, सकलक्रियासूजांन. १०
सकलसास्त्रसंगितरस, सरलस्वभावसंयुक्त,
श्रीलक्ष्मीविजय गुंणनिलो, सूधक्रियासूपवित्त. ११

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कलाकेलिकोटिर जें, **विनयविजय** मूर्निद,
पंडित **कपूरविजय** प्रगट, **न्यांनविजय** सूखकंद. १२
आगमविद्याविद्याधरी-रमण रमणगुंणधांम,
पंडित **मांनविजय** अधिक, सोभाधर अभिरांम. १३
उकतियुकति करि सोहतो, जसधारी जगमांहि,
रत्नविजय विबूधवर, रहे सेवामां त्यांहि. १४
इत्यादिक बहु साधुगण, श्रीजीनो समुदाय,
ते सहुनें वंदना, कहेज्यो मनने भाय. १५
वलता कागल तुरत, करि कृपा गुरुराय,
आपण सेवक लेखवी, करिज्यो माहा पसाय. १६
गुंणसमूद्र साहिब छो, सकलजीवहितकार,
पोताना निज लेखवी, धरज्यो कृपाविचार. १७
संवत अढारएकावनें(१८५१), मागसिर सूद गुरुवार,
तिथि पंचमि(मी) महुरत विजय, लेख लिख्यो धरि प्यार. १८

॥ इति श्रेयः ॥

बिजूं अत्रथी **पं. मांनविजय, पं. मानवर्धन, पं. कल्याण. पं. तिर्थ, पं. मांन, पं. पद्म, पं. जीवण, पं. नेम, पं. रूप, पं. दिप, पं. रत्न, पं. हर्ष, मुं. जयविजय** प्रमुख ठांणा २५नी वंदणा त्रिकाल १०८ दिवस प्रतें अवधारज्यो जी । तत्र श्रीजीना पार्श्ववर्ति सर्व साधुनें वंदना केवी ।

शवशतीजी सीरोई नगर माहशुभाशथाने पुजराधेतमेतमा परमपुज शंकल-गुणाआरचणानीआ चारीतरपतरचुरामणी कुमतंधाकारनाभैमाणी इतादीक शंकर शुभां ओपमा-लाआक, अेक श्रीजणा आणापतीपालक, दो वीध धारम पारकाशका, तीन तातवना जाणक. चार कीषाआना जीपाक, पाच माहावारतना पालक, छ काआना पीहरां, शात भओ नीवारक, आठ माद सुरक, नाव वाडवी सुधा बेरमचारज पालक, दाश वीध जती धारम आरधाक, आगीआर आगना जणानार, बारे उपागना उपदेशक, तेरे काथीआना शाशी वदणा, शतिर भेदै शंजमना पालनार, आडदश पांपथानक नीवारक, इतादीक शंकल सुभां उपामा वीराजमांण कालीकाल गउताम आवतार, शंकलजी अतारक, पुरधारभट्टारक-श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीवीजैआ **लखमी**सूरीशंरजी शांपरी..... चारणाजीवी, चारणाकामलणा श्रीसुरतबंदिरथी लख्यतगशादाशेवाक, आगनाकारी, हुकमी,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाआरजराणुशंमांण शा० रूपचंद कापूरचंदना, वीमकचंद रूपचंदना, लाहरचंद हारखचंदना, नागरदास शांतीदासना ताराचंद नागरदाशना, शामां रूपाजीना, पानाचंदना, शावाईचंदना, सुरचंदना, जीवाराज पानाजीना, कचाराचंदना, हांजेचंदना, पानाचंदना, लखमीचंद वीरदासना, कलाणाचंद शा० शांतीदास जणादारना, नागेरदाश, शा० हीराचंद रांतनजी शा० नामी छताना रांतनचंद शा० परशात्तम आदा शा. गंलाल परशवीरना, खुशाल तोलाहा नामचंद पांमचंद तोलाह, फतो हेमचंद तोलाहा, हरखचंद दवांनमाजी, मीलापचंद दवांनमाजी, शा० हरखचंद धारमचंद शा. गंगादास भुराजीना शावाई शोनी गता झवार खीआ(?) आक रामचंद धीइआना, गंलाल वीजेचंदना, हीरा मूलाना - झवारना, झवार खीमराजना, जआचंद रूपचंदना, वीरचंदभाईना, फलचंद नांहनाचंदना, गंलालचंद जआचंदना, सागलचा दरभाणा, शा० देवीचंद नाथूभाईना मांणकचंद तीलकाचंदना, लखमीचंदकीकाना, खाचार हीरजी पारखेना, धामजी जआचंदना, रातनचंद गादंणाचदना, गनांनचंद.........., फूलचंद चाकसीना, तोलाहादामलकलाणाना लावजी रीखाव कलाणाचंदना लखमीचंदमान ?, हीरा भोजना, तीलक शोभागना, मोती नाथूना, झवार-नाथना, जोई जीवा, नहार परेखना, नाहलु नामचंदना, नाथा करमाजीना, नांहलचंदना, मोती हीराना, शुखांणा हीराना, राअचंद हीराना, ताथा शांघशामश लखतग वांदाना १०८ वार तीकालवादना आवधारजोजी । जतार इहां खांमकुशल छ । श्रीजी शाहबानी खांमी कुशलना पातार लावाजी । श्रीजी साहब मोहता छनी, गुरुदेवा छआजी । श्रीजी शाहबजीना शारी[र]ना जतान कारवाजी । श्रीनी शाहबा शांघा उपर कीरपा राखा छनाथी वीशोश राख वी. श्रीजी सुरतना शंघान वादवाने वाला पाधारपुजी । ओज पानास पामवीजेजी, पानास वाणा(वीजैजी) पानास कामुरवीजैजी, पानास कापूरवीजैजी, पानास लखमीवीजैजी, पाना० नानवीजैजी. वीगेर शंकल साधुना शंघामीना तरफेथी वादना काहजेजी वालमाण पातर लखवा । श्रीजी शांघाना घाणा आवशर शाभारवाजी । शांघा सामस्ताजी श्रीजी शाबान शाभरीआ छओजी शावत् २८५१ना वरवाना मागशुर सुद ५ गरे-

अत्रथी श्राविका लाडकुंअरबाई, श्रा० रूपबाई० श्रा. भूलीबाई, श्रा. अबजबाई, श्रा. चंदनबाई, श्रा. कोडिबाई, श्रा. जोईतीबाई, श्रा. घनाबाई, श्रा. सूरजबाई, श्रा. मीठीबाई, श्रा. रामकुंअरबाई, श्रा. मांनकुंअरबाई, श्रा. खुशालबाई, श्रा. चंदाबाई, श्रा. रतनबाई, श्रा. चांपाबाई, श्रा. चांपाबाई, श्रा. रतनबाई, श्रा.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हरखबाई, प्रमुख समस्तनी त्रिकालवंदना अवधारवी.

॥ ८०॥ अथ श्रीमद्गुरुविज्ञप्तिभास लिख्यते ॥

अथ श्रीढाल ॥ पटोधर पाटिइं पधारो - ए देशी ॥

श्रीविजयलक्ष्मीसूरिंदा, वडतपगच्छगगनदिणंदा,
जेहोना पग प्रणमे भवीवृंदा. १
मनोहर विनति अवधारो, पूज्य गुर्जरदेस पधारो [ए आंचली]
श्रीविजयउदयपट्टधारि, जेहनी कीरत्त जगमें सारि
नित नमण करे नर नारि. २
मनोहर विनति अवधारो, पूज्य सूरत सेहेर पधारो
गुरुजी छे जाचा हीरा, ए तो मेरु परे वली धीरा,
सायरनी परे गंभीरा ३ मनोहर....
लघु **मरुधर** देश वखाणें, जगमां **पालडी** सहु ज़ांणें,
गुरू जनम्या पूंण्य प्रमांणें ४ मनोहर....
गुरु मात **आणंदबाई** जाया, **सा. हेमचंद**कुलमें आया,
भले **प्रागवंस** दिपाया ५ मनोहर....
गुरु सोहे सू(सु)धर्मा-पाटें, वरते वली खास सूथाटें,
एतो सूधाचारनि वाटे. ६ मनोहर....
छत्रीस गुंणें भरीआ, गुरु समतारसना दरिआ,
वारुं संजमवामा वरिआ. ७ मनोहर....
एहवा सत्रुं ते तेरथी दूरा, त्रिण मित्र साथे वली पूरा,
गुरु च्यार तें जीपण शूरा. ८ मनोहर....
एणें सकल गुणे करी राजें, गुरु दिन दिन अधिक दिवाजैं,
मूंख देख्यां [त]म सवी भाजैं. ९ मनोहर....
श्रीमरुधर देस वकीनो, तामें **सीरोही** नगर नगीनो,
चौमास जिहां पूज्यजीनो. १० मनोहर....
श्रीगुर्जरदेस ते वारु, जिहां सेहेर सू सूखकारू,
जिहां नर नारि व्रतधारु. ११ मनोहर....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इंण देशने पावन कीजें, संघवीनति मांनी लिजें,
सिद्धाचलयात्रा करिजें. १२ मनोहर....
कवि इंम दे छे आसीस, प्रणमे भविक निसदिस,
गुरू प्रतपो कोड वरीस. १३ मनोहर....

॥ इति गुरू गच्छाधिराजभास सम्पूर्णम् ॥

॥ए ६०॥ इच्छाकारेण संदेसह भगवन् अब्भुठिओहं अब्भिंतर पांचै खांमणे करि खामेउं - देवसीअं, राईयं, पक्खिअं, चौमासीअं, संवत्सरिअं । बारसन्न-मासाणं चोवीसपक्खाणं, तीनसेसांठ रायंदिआणं-जंकिंचि अप्पत्तिअं, परपत्तिअं, भत्ते, पाणे विणए, वेआवच्चे, आलावे, संलावे, उच्चासणे, समासणे, अंतरभासाए, उवरिभासाए, जंकिंचि मज्झ विणय परिहीणं, सुहुमं वा, बायरं वा, तुब्भे नाणह अहं न याणामि तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ॥१॥ इति मंगलिकमाला ॥ श्रीश्रीश्री ॥

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२१)

राधनपुर-विजयजिनेन्द्रसूरिजीने विजैवापुरथी पं. चतुरसागरगणिनो पत्र

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

प्रस्तुत पत्र राधनपुरमां बिराजमान विजयजिनेन्द्रसूरिजीने उद्देशीने विजैवापुरना श्रीसङ्घे पाठव्यो छे. मङ्गलाचरणमां आदिनाथ, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ तथा वीरप्रभुने नमस्कार करी कविए गुर्जर भूमिना मुकुटसमान शत्रुञ्जयतीर्थाधिराजनुं वर्णन कर्युं छे. त्यार पछीनी ढाळोमां अनुक्रमे राधनपुरनगरनुं, १०८ गुणवैभवनुं, गुरुभगवन्तनी प्रभावकतानुं, गुरुभगवन्तना वंशादि ऐतिहासिक उल्लेखोनुं आलेखन करी मरुधरदेशना विजैवापुरनुं, त्यांना श्रावकोनुं वर्णन कविए आलेख्युं छे. वीजैवा ते हाल वीजोवा एवा नामे प्रख्यात छे. श्रीसङ्घमां चातुर्मासमां थयेली आराधना त्यार पछीनी ढाळमां वर्णवाइ छे. सङ्घमां पूज्यश्रीनी पधरामणी माटेनी उत्कण्ठानुं वर्णन करतां ते पछीनां पद्यो पण सुन्दर छे. गद्य लेखमां मुडिया लिपिमां चातुर्मासिक आराधनानी विगत फरी जणावी त्यांना राजादिनी तेमज श्रावकोनी महत्त्वपूर्ण विगत पद्यात्मक रीते गुंथाई छे. अहीं पधारता पंचतीर्थयात्रा थशे एवुं प्रलोभन आपी चातुर्मास पधारवा विनति करे छे. वळी अत्र योग्य कामकाज जणाववा विनवे छे. पत्रान्ते पूज्यश्रीना सहवर्ती परिवारने वन्दनादि कही पोतानी साथेना साधुवृन्दनी वन्दना अवधारवा विनवी पत्र पूर्ण करे छे.

सम्पादनार्थे प्रस्तुत प्रतनी हस्तप्रत नकल आपवा बदल श्रीनेमिविज्ञान-कस्तूरसूरिजी ज्ञानमन्दिरना व्यवस्थापकश्रीनो खूब खूब आभार. तेमज श्रीजंबूसूरिजी ज्ञानमन्दिरमांथी प्रस्तुत पत्रनी अन्य नकल आपवा बदल श्री जंबूसूरि ज्ञानमन्दिरना व्यवस्थापकोनो खूब खूब आभार.

प्रस्तुत पत्र सचित्र ओळियारूप छे. तेनी लंबाई ३० फूट जेवी होवी जोईए. मूळ ओळियुं जोवा मळेल नथी, तेनी खण्डशः जे. नकल ज अमोने प्राप्त छे, तेथी चोक्कस साईज जाणवी शक्य नथी. आमां पत्रारम्भे १ साध्वीजी सामे ३ श्राविका – एवुं रंगीन चित्र छे. पत्रमां एकथी वधु स्थाने रिक्तलिपिनां चित्र जोवा मळे छे. अत्रे पत्रमां जोडणी यथावत् जाळवी छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ ए ८०॥ श्रीजिनाय नमः

स्वस्ति श्रीशैत्रुंजधणी, ऋषभ वडो महाराज,
जनम-मरणसंसारजल, एह उतरेवा पाज. १
आदिनरेसर आदिजिन, आदिकरण अरिहंत,
भरतपीता पति मंगला, भयभंजन भगवंत. २
शैत्रुंजगीरनो सेहरो, नाभिनंदन सूखकंद,
शिवमारगदायक मूदा, प्रणमूं प्रथमजिणंद. ३
स्वस्ति श्रीजिन सोलमो, मनवंछितदातार,
शांतिजिणेसर नित नमुं, पंचम चक्री सार. ४
मेघरथराजा भवे, शरणे राख्यो जीव,
जीवदयागुण कारणे, प्रणमूं ताम सदीव. ५
मृगलंछन मन मोहतो, अचिरादेवीनंद,
विस्वसेनकुलदीपतो, नमीइं शांतिजीणंद. ६
स्वस्ति श्रीयादवतिलक, राजिमतीभरतार,
सांवलवरण सोहामणो, शीवादेवीमातमल्हार. ७
समुद्रविजयसूत सोहतो, गुणमणीरयणभण्डार,
बालब्रह्मचारी रिधू, नमीइं नेमकुमार. ८
श्रीगीरनारगीरें थया, दिक्षा ज्ञान निर्वाण,
धर्मचक्री प्रणमूं सदा, नेमिस्वर जिनभांण. ९
स्वस्ति श्रीरमणीतिलक, केवलकमलाकंत,
शिवसूंदरीनो साहिबो, विघनकोट हरंत. १०
वामाराणीकुंखसर-राजहंस जिनराज,
प्रणम्यांथी पातिक हरै, आपै अविचल राज. ११
अहिलंछन पय सोहतो, सेवै सूरनरवृंद,
अश्वसेनअंगज सदा, वंदू पासजिणंद. १२
स्वस्ति श्रीसाशनधणी, वर्धमान भगवंत,
केवलज्ञानदिवाकरूं, अतिसयवंत महंत. १३
चरणांगुलि लघु चालवी, जीण कंपायो मेर,
सो जीनवर नित सेवीइं, सूतां उठ सवैर. १४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धारथकुलकेशरी, त्रिसलादेवीनंद,
सीहलंछन पय सोहतो, वंदू वीरजिणंद. १५
श्रीऋषभजिणेसर शांतिजिन, श्रीनेमीसर पास,
वर्धमांन जिनवरचरण, प्रणमुं मन उल्लास. १६

॥ अथ गुर्जरदेशवर्णनम् ॥

दूहा

श्रीगुज्जरदेश लछी भर्यो, वांछो सुखनै छोड,
सकलदेशदेशां-सिरे, महियल-हंदो मोड. १
सरवर वर सोहामणा, पोढा अनड पहाड,
वन उपवन तिहा किण वली, सोहै अति सुखकार. २
जिनप्रासाद तिहां जुगतिसूं, पग पग लाभै अपार,
गुर्जर तेण सराहियो, सहू देशां सिरदार. ३

॥ ढाल - चोपाईनी ॥

लाख जोयण जंबू परमांण, साधिक तृगुणी परध वखांण,
भरतखण्ड तिहां किण अतिभलो, पांचसेछ्वीस जोयण गुणनिलो. १
वली ऊपरि कला षट् कही, जिनवचने सची सद्दही,
बत्तीससहस सहु देश उदार, साढां पचवीस आरज सूखकार. २
गुर्जरदेश तिहां शिरदार, तिहां तीरथ शेत्रुंज अतिसार,
तीरथनी महिमा उदार, सिद्धांते गुरुमुखथी सार. ३
श्रीसिद्धगति चढिवा सोपांन, थिर समकित उपजवा थान,
मनसूद्धे महीमा जे करै, सदगति निहचै ते संचरै. ४
जे पापी दुष्ट परचंड, मनमै हिंसानो जिहां मंड,
ते पीण सहू ए गीरने जोग, भावै पाम्यां सुरनरभोग. ५
देवल दीठो दोहग हरे, सूद्ध भाव मनमें जे धरे,
रोग सोग नवि आवै वली, रिद्ध सिद्ध पांमै रंगरली. ६
सोले मोटा थया उद्धार, श्रीसिद्धांते छे अधिकार,
ए गीर फरस्यां पातिक हरे, समकित सूद्ध हियै अनुसरै. ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिमा जे पूजै धरी भाव, इंद्रादिक सहू अधिकै चाव,
सिद्ध जाइं भव त्रीजै सार, ए जीनदरशणनो अधिकार. ८
आज विषम पंचम इण अरै, पातिकहरण ए विण कुण करै?,
ए तीरथ मोटो महीमा धार, चिंतामणि जिम सूखदातार. ९

दूहा

चिंतामण जिम दोहिलो, पांमीजै कृतपुण्य,
तिम दरसण ए गीर तणो, जे पांमे ते धन्य. १
हिवै तिण देसे पूर घणा, पिण सहू जगतप्रसीद्ध,
राधनपुर अति सोभतो, नांमे हूइ नवनिद्ध. २
राधनपुरनै सुरपरी, उलै-भोलै आज,
नर नारी सुर अपछरा, देवराज मछराज. ३
दंड लाभै तिहां देहरै, नारी वेणीबंध,
जिहां गाल वीवाहमां, अवगुण देखण अंध. ४
इम अनेक गुण दीपतो, राधनपुर सूखदाय,
थलचर जंतु तणै सदा, दीठा आवै दाय. ५
तेह नगर सूभ थांनकै, सकल गूणौघप्रधांन,
चारित्रपात्रचूडामणी, पंडितमांहै प्रधांन. ६
शाशनपति श्रीवीरजिन, श्रीश्रीसूधरमास्वाम,
श्रीजंबूस्वामी प्रमुख, प्रभवादिक अभिरांम. ७
तेहमै पट्टपरंपरै, अंबरभासनसूर,
श्रीश्री**विजयजिनेन्द्र**सूरीस्वरू, नायक चढते नूर. ८

॥ ढाल - २ ॥ रंगरो रे रसरो रे फूल गुलाबरो - ए देशी ॥

सूंदर मंदिर सोहती, दीठां आवै दाय रे,
तनसुं रे मनसुं रे गछाधिप वंदिइ
भवीजन नयन चकोरडा दिलरंजन निसीराय,
तनसुं रे मनसुं रे गछाधिप वंदि(दी)इ. १
चतुर नमो गुरुचंद्रमा, नीत नीत चढते नूर रे, तनसुं....
छदस कला सोहतो, उदयो पूण्यअंकूर रे. २. तनसुं....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुमततीमिर दूरै करै, पूरे समीहित आस रे, तनसुं...
तारा जीम अन्य तिरथी, अधिक न तास उजास रे. ३. तनसुं....
जिनशाशनसमुद्र उल्लसै, सूरपत-रयण सुखकार रे, तनसुं....
हरखित श्रावक श्राविका, कुमुद अनै कासार रे. ४ तनसुं....
अमृतपूर झरे देशना, संयमऔषधी सुख रे, तनसुं...
आनंदित दीस दीस थई, कुमतवियोगण दूख रे. ५ तनसुं...
नित्य उदय ए जांणीइ, राहू तणै वस नाह रे, तनसुं....
जलधर पिण नही उलवै, कलंक नही इ[ण] माहि रे. ६ तनसुं....
सीतल मनसाता करुं, उज्जल विमल अभंग रे, तनसुं....
गुरुमुख शशीयर उपमा, राजै अविहडरंग रे. ७ तनसुं....
चंद्रवदन गुरुजी तणो, दीठो अतिसूखकार रे, तनसुं....
वंछितपूरण जगजयो, सूंदर अति श्रीकार रे. ८ तनसुं....
गच्छनायक गुरु गच्छपति, गच्छाधिप गछैस रे, तनसुं....
गच्छदिवाकर गणधरु, गणराजा गणेश रे. ९ तनसुं....
गुण अनंत गुरुजी तणा, मूख कहि न शके कोइ रे, तनसुं...
आपमुखे जो भारती, जो कहै तो धन होय रे. १० तनसुं....

दूहा

एक असंजम परी(रि)हर्यो, दू(दु)विध धरमउपदेश,
तिन तत्त्वपरसंगथी, जीता कषाय कलेश. १
पंच महाव्रत पालता, षट कायक आधार,
भय साते जिण भंजीया, चूर्या मद आठ मार. २
नव वाडि सूद्ध नित प्रतै, पालै शील शरीर,
दशविध धरम जती तणौ, पालै थई महाधीर. ३
अंग अग्यारे जिन भण्या, बालपणै सुविशैष,
बार उपांग जिण उपदिस्या, काठी जीता अनेक (अशैष?). ४
चवद विद्या चुपस्युं, भणीया सीधगुणभेव,
सोल कलासंपूर्ण मुख, सतरह पूजा सदैव. ५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ ढाल-३ ॥ बिदलीनी ॥

अष्टादश शीलंगरथ अंगे, आज लहीइं श्रीगुरुसंगे हो सेवो जिनेंद्रसूरिंद
उगणीस दोष काउसग्गना टाले, वीसथानिकतप उजवाले हो " " . १
श्रावकगुण एकवीस उपदेशक, गुरु नीशदीस हो, सेवो.....
परीसह सहै बावीस, सूगडांगना अध्ययन तेवीस हो. २ सेवो.....
श्रीजिनवर चोवीसनी आंण, पाले थई गुरु सावधांन हो, सेवो.....
पंचवीस भावन भावै स्वांमी, ए कलीमां सूभावै हो. ३ सेवो....
छवीस दशाकल्पना भेव, साधूगुण सत्तावीस नितमेव हो, सेवो.....
अठावीस आचार प्रभुजी, पालै निराधार हो. ४ सेवो.....
पापश्रुतपरसंग निवारै, महामोहनी थानिक वारे हो, सेवो.....
एकत्रीस गुण सीद्धना दाखै, जोगसंग्रहवीध बत्तीस भाखें हो. ५ सेवो.....
आसातना गुरुनी वरजंत, अतीसय चोत्रीस जीनना कहंत हो, सेवो....
पैत्रीस गुण वाणीना प्रकासे, सूरीगुण छत्रीस उल्लासे हो. ६ सेवो....
खूड्डियाविमांनविभत्तिवर्ग, अडत्रीस कालगुणना संसर्ग हो, सेवो....
उगणचलीस कुलपरवत जाण, लख चालीस भूतानैंद्रविमांन हो. ७ सेवो.....
एकतालीस नांम शैत्रुंजना प्रकासैं, बैतालीस दोषरहित आहार अभ्यासे हो, सेवो.....
कर्मविपाकना अध्ययन विचारै, श्रीधरणेंद्रना भूवन संभारे हो. ८ सेवो...
पैतालीस आगम उपदेसे, लिषी अंकूर छैतालीस सूवीसेसे हो, सेवो....
सहस छैतालीस जोयण जाझेरा, मंडल रवि आवै अधिकेरा हो. ९ सेवो.....
विद्याधरनी सहस अडतालीस, विद्या ते जांणै नीसदीस हो, सेवो.....
सत्तसठीया भीखूपडिमा सार, अनंतनाथ शरीरमान धारे हो. १० सेवो..
एकावन्न उदेशना काल, ब्रह्मचर्यना जाणे ततकाल हो, सेवो....
बावन्न जिनालयना प्रभु जांण, इम अनेक गुणनी खाण हो. सेवो.... ११
श्रीमहावीरना त्रेपन साध, अनूत्तरे पहुंता निराबाध हो, सेवो....
छदमस्था नेमीश्वरनी जांणइ, दीवस चोपन तणी सहू ए वखाणें हो. सेवो...१२
कल्याणफलविपाकना अध्ययन, अंतरात्र वीरे गुण्या गयन हो, सेवो....
जंबूद्वीप नक्षत्र छप्पन्न, जांणे ते सहू गुणनीप्पन्न हो. १३ सेवो.....
संवर तत्त्व सदाइ संभारै, ज्ञानावरणनी प्रकृति निवारे हो, सेवो....
अठावन सुभ बूद्ध विचारै, सहू भेद स्वांमी एकें वारे हो. १४ सेवो.....

उगणसठ दिन एकेकी रत्ति, चंद्रसंवत्सर जांणे चित्त हो, सेवो....
नागकुमार साठ सहसना जांण, पढम पयरना बासठि विमांन हो. १५ सेवो....

दूहा

त्रेसठ शिलाकापूरूषना, जांणे भेद जूगति,
चोसठ इंद्रसेवित सदा, पैसठ रविमंडलपंति. १
छासठ मंडल सूरना, जाणे मन अनुसार,
सतसठ मांन नक्षत्रना, उपदेशक अधिकार. २
विमलनाथजिन साधूवर, अडसठ सहसना जांण,
सात कर्म मोहनी विना, उगणोत्तर भेद वखाण. ३
मोहनीकर्मथिती अंतमै, नांणै न करे संग,
अजितनाथगृहवासनी, थित जांणै मनरंग. ४
कला बहोत्तर जांणयै, विजयदेव बलदेव,
तिहोत्तर लाख वरसनो, आयु कह्यो जिनभेव. ५
अगनिभूत गणधर तणौ, आयु चिहोत्तर वरस,
सूबुद्धि(विधि) जिणंदना केवली, पंच्योत्तरसे सरस. ६
भूवन विद्यूतकुमारना, छिहोत्तर लाखना जांण,
अकंपित गणधर आयुखो, अठ्योत्तर वरस प्रमाण. ७
जंबूद्वीपना गढ विषै, एकथी बिजी पौल,
उगण्यासी सहस जोयण तणौ, अंतर जांणै न भोल. ८

॥ इडर आंबा आंबली - ए देशी ॥ण

इसांन देवलोके कहे रे, असि सहस्स सामानीक इंद्र,
नव नवमीय भिक्खू परीतमा रे, दिवस जांणै मुनिइंद्र,
भविक जी(ज)न वंदो श्रीगुरुराय. १
जिन प्रणम्यां पातिक जाइं, सेव्यां संपत थाय भविक.....
श्रीमहावीर ब्यासी रात्रना रै, वसीया देवानंदाकुंख,
गणधर श्रीशीतलतणा रे, त्र्यासीना जांणै सुख. २ भविक....
आदिसर अरिहंतरो रे, आयुखो आखै आप,
श्रीआचारांगसूत्रना रै, पंच्यासी उद्देसण थाप. ३ भविक....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छीयासी गणधर सुविधना रै, तेहनो जांणे विरतंत,
उत्तर प्रकृति कर्मषट्‌कनी रे, सत्यासी पभणंत. ४ भविक....

ग्रह अठ्यासी उपदिसे रे, श्रीमुख श्रीसूरींद,
जांणै साध्वी श्रीशांतिनी रे, नव्यासीसहस मुणींद. ५ भविक....

शरीरमान सीतल तणो रे, नेउ मांन कहंत,
कालोदध्युदधि पर्घना रे, लाख एकाणुं लहंत. ६ भविक....

इंद्रभूतिनुं आउखुं रे, वरस बाणुं विख्यात,
गणधर चंद्रप्रभुस्वामीना रे, त्रांणुं सहू सी(वि)ख्यात. ७ भविक.....

अवधिज्ञान(नी) जिन अजितना रे, सय चौराणुं सीस,
पंचाणुं सुपार्श्व गणधरू रे, भेद सहू जांणे निसद्दीस. ८ भविक.....

छीनुं कोड चक्रवर्त्तना रे, गांम पायकनो गेय,
प्रकृति उत्तरकर्म अष्टनी रे, सताणुं जांणै भेव. ९ भविक.....

आत्मज आदीसर तणा रे, संख्या जांणे संत,
वली दीख्या ग्रहीं तेहना रे, जांणे गुरु मुलमंत. १० भविक.....

दसदसमीया साधूप्रतिमा प्रते रे, एकसो दिवसना जाण,
एकोतरसो परीया कुल तणा रे, भेद सदाइं भणंत. ११ भविक.....

एकसो आठे गुण इम कह्या रे, लाभे ते सहू गुरुमाहै,
वांणी निज प्रज्ञा प्रती रे, गुणनो न लाभे छेह. १२ भविक.....

दूहा

तुं रयणायर गुण भर्यो, लहरे ज्ञान लियंत,
पार न को पावे नही, अतिसय धीर अनंत. १

ज्ञानादिक मोटा रयण, अंतरगति भासंत,
च्यारु दीस चारित्रजल, पसर्यो पूरण पंत. २

इण जगमां अति दीपतो, जीपतो कोडदिणंद,
श्रीविजयजिनेंद्रसूरिंदने, सेवे सुरवहूवृंद. ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ ढाल - ५ ॥

श्रीगछनायक गुणनीलोजी साहिबा,
गुण ग्राहक गुणवंत कै भावे भेटीइं हे श्रीश्रीजिनेंद्रसूरिंद
भविकजीव प्रतिबोधवाजी साहिबा
साचो तुं समकितवंत कै भावे..... १
दरसण ताहरो जे करेजी साहिबा, सदा उगमते सूर कै भावे....,
ते नर सुखसंपत्ति लहेजी साहिबा, नित नित वधते नूर कै भावे.... २
जे तुम मुखवांणी सुणेजी साहिबा, परतिख प्रांणी प्रभात कै भावे....,
धन धन ते नारी नराजी साहिबा, धन तेहनी कुल-जात कै भावे... ३
जे पडिलाभे भावस्युंजी साहिबा, धरि मन अधिक आनंद कै भावे....,
कर सोवनथाल संग्रहीजी साहिबा, धन्य तेही कहवाय कै भावे.... ४
जे पडिलाभे भावस्युंजी साहिबा, धरि मन अधिक आनंद कै भावै...,
पुन्य तणो पोतो भरेजी साहिबा, पांमे परमाणंद कै भावे..... ५
सोल सिणगार सजी करीजी साहिबा, पेहरी नव्रसर हार कै भावे....,
कर सोवनथाल संग्रहीजी साहिबा, करती स्वस्तिक सार कै भावे.... ६
धन्य तेही ज जग कामनीजी साहिबा, गुरुगुण गावै रसाल कै भावे....,
सात पाच मिलि सांमठीजी साहिबा, चतुरंगी चोसाल कै भावे..... ७
श्रीगुरु नायक गछधणीजी साहिबा, जिनसासनसिणगार कै भावे....,
सूरी छत्रीस गुणे राजताजी साहिबा, सूरीस्वर सुखकार कै भावे..... ८
श्री**विजैधर्म**सूरिंदनोजी साहिबा, पट्टप्रभावक सूर कै भावे.....
श्री**विजैजिनेंद्रा**[सूरी]स्वरूजी साहिबा, नायक चढतै नूर कै भावे..... ९

दूहा

आज विषम दुसम अरै, बल संघेयण न तेह,
तो पिण गुरु जिनधर्मसु, जिनवचन मन-देह. १
समत गुपत सुद्ध आदरी, विषय विकारनो त्याग,
कीधो लीधो चारित्तजी, राखे चढते राग. २
बालपणे संयम लीयो, तपयोग कठोर,
करि तप निज काया कसी, जीती ममता जोर. ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ओसवंस जीण उद्धर्यो, साह **हरचंदकुलसीह,**
मात **गुमानदे**नंद तुं, अतिसयवंत अपार. ४
श्रीगुरु नायक गछधणी, जिनशासनशृंगार,
गुण छत्रीस विराजतो, सूरिगुण श्रीकार. ५
श्रीविजैधर्मसूरिंदनो, पट्टभावक सूर,
श्रीविजैजिनेंद्रसूरिंदजी, नायक चढते नूर. ६
श्रीश्रीश्रीभट्टारकजी, सर्व गुणे सहीतान्,
एकसो अठ जिनेंद्रसूरिंदजी, सूरीश्वरचरणान्. ७

॥ अथ काव्याष्टकम् ॥

श्रीमद्गच्छाधिभत्रु(र्तुः) चरणमधुपतां ये श्रयन्तीह भव्या-
स्त्यक्त्वा कार्यान्तराणि प्रतिदिवसमहो! श्रद्धया पूरिताङ्गाः ।
तेषां गेहं कदाचित् त्यजति न कमला चञ्चलत्वं विहाय,
सत्सङ्गाभो(भा?)जनानां भवति न कथं सद्गुणानां प्रवृत्तिः ॥१॥
सकलया कलया कलितः प्रभुः, प्रभुतया विदितो विदितागमः ।
गमनयार्थविचारणतत्पर[:], परमनिवृतिनिर्वृतयेऽस्तु न[:] ॥२॥
कामं ददाति भविनां नु विलोकितो यः, आकर्षितः क्षिपति दुर्गति दुःखजालम् ।
संसेवितो वितनुते श्रियमाश्रितानां, सोऽयं शुभानि विदधातु विभू(भु)र्यतीनाम् ॥३॥
वाच्या युष्मद्यशोभिर्निबिडधवलितां वृत्रहाऽऽलोक्य वेणीं,
त्रैलोक्याखण्डभाण्डोदरविवरगतं वस्तुजातं स्पृशद्भिः ।
भ्रान्ते स्वान्ते प्रपेदे त्रिसमयविदहो निर्जरत्वे जरेति,
चित्रं गच्छाधिराजामितविततगुणाम्भोनिधे! ध्येयनाम ॥४॥
स्वामी(मि)न्! त्वदीयं किल नाम धाम श्रियामनन्तं प्रभुताश्रयं यत् ।
त्वत् किं न दन्ते परितं स्मृतं नः, सुखं सुतेऽल्पीकृतकल्पवृक्षः ॥५॥
श्रीसूरिसम्राड् भवदीयतेजसा, पराभवं पूर्वमलं प्रलम्भितः ।
धैर्यत्व(न्व)वष्टभ्य(?) कथं कथञ्चन, ब्रध्नः पुनस्तद् विजयार्थमुद्यतः ॥६॥
प्रतिप्रभातं शकुनं विलोकितं, शोचि(:) शलाका किल पद्मपुस्तके ।
चिक्षेप यस्मात् सहसा जनासितः, प्रागेव भृङ्गो निरयाय भङ्गदः ॥७॥
प्रभो! शशाङ्कोपमितं त्वदीयं, सद्दर्शनं सौम्यगुणं विलोक्य ।
प्रसीदतो मे बत दृक्चकोरा-वभीष्टमासाद्य समश्च मोद्यते ॥८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इत्थं ये विजयाच्च धर्मसुगुरो[:] सङ्कीर्तनं सादरं,
कुर्वन्त्यल्पितकल्पपादपमहल्लीलाभरस्याञ्जसा ।
तेषां कीर्त्तिरगत्वरी चिरतरस्थायिन्य एव श्रियो,
लोका सर्ववशंवदा वरमुखाम्भोजेव गीर्निर्मला ॥९॥

श्रीमदखिलभूमण्डलाखण्डलसमाननृपतिसंसेवितचरणकमलान्, श्रीगीर्वाणगुरुगुरुतरमतीन्, श्रीमत्तपागणगगनदिवाकरान्, निख(खि)लगुणरत्नरत्नाकरान्, विस्तारसुधासारसम्भारमनोहरवाक्यवाराभिनन्दितस्तम्भास्तारवारान्, समीहितपञ्चप्रतिष्ठान्, सदनुष्ठान्, यूक्यं(?)चाचारविचारविशुद्धशुद्धराध्यन्ततत्त्वतारतम्यरम्यसंवर्मितसुविहितविहितविधि(धी)न् धैर्यगाम्भीर्यसौन्दर्यमाधुर्यवर्यचातुर्यैश्वर्यप्रभृतिसत्पुरुषलक्षणलक्षितान्, सर्वतः सहीत(?) वि(वी)क्षितान्, शरण्यस(श)रणान्, श्रीश्रीश्रीश्री १०८ श्रीश्री सकलभट्टारकपुरन्दरभट्टारकभालस्तिलकायमान-श्रीमद्गच्छअधिराजेश्वर-श्रीश्री**विजयजिनेन्द्र**सूरीश्वरजीचरणारविन्दान् चरणपङ्कजान् ॥

॥ अथ लघुमरुधरदेशवर्णनम् ॥

सकल गुणे करी सोहतो, सकल गुणे शिरदार,
सकलदेशदेशां-शिरै, मरुधरमंडल सार. १
मोटा मोटा तिहां किणै, सहर वडा सोहंत,
इंद्रपुरी जिम उपता, वरण चार विलसंत. २
जैनधर्म तिहां जागतो, मोटो मूरतवंत,
आण इणै पंचम आरै, जिनकर जेम दीपंत. ३
इति भीति लाभे नही, न पडै दुरित दुकाल,
दुख दोहग व्यापे नही, जिहां नही कोउ जंजाल. ४
तिण देस देसाधिपत, अमली माण अभंग,
अनमिओ नाडागञ्जणो, जीवण मोटा जंग. ५
सूरवीर क्षत्रीसरै, ख्याग त्याग निकलंक,
मानसिंध राजा अधिक, न्यायवंत निःसंक. ६
नगर तिहां दीसे घणा, एक एकथी सार,
सर्वनगर सिरसेहरो, **विजैवापुर** श्रीकार. ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ ढाल - ७ ॥

निरुपम नयर गुणे करी लाला, सोहै झाकझमाल जी,
अलकापुर हुइं अवतर्यो लाला, वरण वसे चोसाल
चतुरनर! **विजैवापुर** श्रीकार. १
जीहां गढ मंदिर मालिया लाला, पोल अनैक प्रकार जी,
जिनभुवन जुहारता लाला, जाइं सहू जंजाल. २ चतुरनर!....
सोवनकलसै सोहता लाला, उंचा अधिक उत्तंग जी,
महिमा मेरुने जीपता लाला, दंड ध्वज दीसे सुरंग. ३ चतुरनर!...
सत्तरभेदपूजा रचै लाला, भावना भावे सारजी,
सहू श्रावक श्राविका लाला, समकितधार उदार. ४ चतुरनर!....
वडै(सै?) वडा व्यापारीया लाला, महिपति साह समान जी,
दांन मांन करि दीपता लाला, संपदा धनद समान. ५ चतुरनर!....
गोख जाली अरु मालीया लाला, चउदिसी सब चंग जी,
विचमां नगर विराजतो लाला, मेरु ज्यु एह अभंग. ६ चतुरनर!.....
परवत-प्रायः प्र(प्रा)साद लाला, सुखीया लोक सहू जी,
विलसता रिद्धसंवाद लाला, वन उपवनने वाडीया. ७ चतुरनर!....
देवकुमारसा दीपता लाला, मानवना जिहां थाट जी,
रूपै अपछर ते अनुहारडे लाला, नारीयो निरुपम घाट. ८ चतुरनर!....
रतनागर जिम रूयडा लाला, सरवर चिहुं दिसि च्यार जी,
नीर भर्या नित प्रते रहे लाला, केल करे खग सार. ९ चतुरनर!....
सुगुरु सुदेव सुधर्मना लाला, रागी सहू नर नार जी,
श्रावक तिहां नित साधता लाला, धर्मना च्यार प्रकार. १० चतुरनर!....
एम अनेक गुणे करी लाला, सहेर विजैवा सुखथान जी,
श्रीश्रीपूज्यना वचनथी लाला, घरे सदा ध्रमध्यांन. ११ चतुरनर!....

दूहा

संघ समस्त तिहां थकी, लेख लिखे श्रीकार,
त्रिविध त्रिविध करे वंदना, अवधारो गणधार. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मध्यान इहां किण घणा, नित नित नवले नेह,
उछ[व] महोछव अति भला, कहतां नावे छेह. २
छठ अठम दशम पनर, मासखमण तपनेम,
थया अनेक इहां किणै, नित अधिका ध्रम तेम. ३
परव पजूसण पारणा, साहमीवछल सार,
आडंबर अधिका थया, पुहुल अनेक प्रकार. ४
पोसह पडिकमणा तणो, नित नित अधिको नेम,
दया धर्म नित नित नवो, धर्मध्यांन वली तेम. ५
निराबाध सुख तप तणा, श्रीजिना सुखकार,
समाचार श्रीसंघनै, देज्यौ धरि अतिप्यार. ६
जिम इहां संघ समस्तने, उपजे अधिक आनंद,
पूज्य तणा परभावसुं, नित नित हूइं सुखकंद. ७
संघ सकल कर जोडनै, एम करे अरदास,
पउधारो श्रीपूज्यजी, चतुर तुमे चोमास. ८

॥ अथ विज्ञप्ति सज्झाय ॥ देशी - रसीयानी ॥

पूज्यजी पधारो हो मरुधर देशमे, श्रीविजैजिनेंद्रसूरिंद गछाधिप,
संघ निहाले हो तुमची वाटडी, मोर समा[गम] इंद गछाधिप १ पूज्यजी.....
दुर्लभ दरसण तुमचो जगतमां, जिम चिंतामणरत्न गछाधिप,
सुलभ सदा जेहने उदये थयो, पूरव पूण्य प्रयत्न गछाधिप. २ पूज्यजी.....
अमने चाह सदा तुमची रहै, थे छो बेपरवाह गछाधिप,
पण तुमने कहो कुण कहि सकै, ए नही अनुपम चाह गछाधिप. ३ पूज्यजी.....
पुर पाटण धणी तिण परसरै, एक दीठै बीजो विसराय गछाधिप,
मोहनगारा लोकमाया केवली, राखै तुम विलंबाय गछाधिप. ४ पूज्यजी....
दरसण तुमचो हर स(क्ष)ण देखवा, अम मन अधिक उछाह गछाधिप,
नयण उमाह्या हो तुम मुख जोयवा, कीजीइं किरिया विशेस(ष) गछाधिप. ५
पूज्यजी.....

श्रीविजैधर्मसूरिंदना पाटवी, **श्रीविजैजिनेंद्र**गणधार गछाधिप,
पावन कीजे हो पूजजी पधारीनइं, ए वीनती अवधार गछाधिप. ६ पूज्यजी....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ इति विज्ञप्ती(प्ति) सज्झाय ॥

इच्छाकारेण सदी(दि)सह भगवन् अब्भुठिहं अब्भितर पांचे खामणे करी खामुं चउमासीयं संवत्सरीयं पक्खियं राइयं देवसियं पूर्वमेतद्वाच्यं । संवत्सरीयं खामम् । बारण्हं मासाणं, चउवीसन्नं पक्खाणं, तीनसो साठ रायंदयाणं जं किंचि अपत्तियं परपत्तियं भत्ते पाणे विणये वेयावच्चे आलावे संलावे उच्चासणे समासणे अंतरभासाए उवरिभासाए जंकिंचि मज्झ विणयपरिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह अहं न याणामि तस्स मिच्छामी दुक्कडं ॥

ससतीश्री श्रीराधनपुर सुभ संघने पुजपरम, सकलभट्टारकपुरंदरभट्टारक सकरवरतीभट्टारक श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्री १००८ श्रीवीजैजीनेंद्रसूरजी सरणजीवी सरणकमला[यमान] इनुथी वीजोवानगरथी सदा सेवग, आगनाकारी, दासानुदास, पादरजरेणु स्मान, सदा सैवग, हुकमी, सुहण देवी, सदजी, संगवी गेला, नाथा, सुंदर वोराये (?) लाधा वीरधा, मनोर सेठ दुरगा दला....... गीमा भगा, पदमीदासद्रला, सा० छाजु, सेठ खरता, सा. खीत्ता, सा. रूपा, सा. लाला स्मस्थ पंच संग री वंदणा १०८ वार अवधारसी । अठारा स्मसार श्रीपुजजी रा तेज परतापथी करेने भला सै । श्रीजीरी सपरीवाररा कागल स्मासार दरावसी ।.... अतर श्रीजीनी करपाती करेने पजुस्ण परव ओसवमोसव गणा थीहा सै । पुजा प्रभावना पारणा पाखी स्मीयसल अठाही धरमकरणी पजुस्णमें गणी थही सै । उपवास सठ अठम अतीदुषतपसीआ वसेष थही सै । कलपसुतर रा आठे ही वखाण गंण ओसवथी वंचणा सै । हवे नएचं[द]जी नंदीसुतर वंचाए सै । वखणे षडावसकसुतर वसाए सै । तण करी संग गणों राजी सै । श्रीश्रीपूजजी री आन्य अखंड पले सै । **श्रीवीजीवारो** संग ती यणो श्रीजीरो आग्न्याकारी सै । तथा अठे आदेस श्रीजीसाहेबजीकी संग ऊपरे कीरपा करै ने **पन्यास जीवणसागरजी, तेजसागरजी** मोकली ही सो पन्यासजी भला गीतरथ सै । श्रीपन्यासजीरी देसना सारी सै । देसना सांभलनेथी संगनो मन राजीमंद थीहो सै । श्रीजी साहेबना गुण पन्यासजी रा मुखथी संभरीहा संग गणो हरखवंत थयो से जी । पन्यासजी सरीखा गीतारथी वरसी वरस आवे तो संग गणो राजी वे । पन्यासजी आइ गया धरमधान, पोस, प्ररकमा, अठाही रे दन प्रभावना गणी थही । स्मसरी रे दन टंकादवरण लाडुदवरण गण धरमधीआन् थही से । श्रीजी जोवारी संगरी अरज सै । **श्रीवरेकाणजी**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीआरी............ तो करपा करी जात्र पधारसी । .... श्रीजीना दरसणरी संगने घणी उमाहो से । अवंस पधारसी । वलता कागल समीसार देरावसी। .... देरावसी। श्रीजीनै वंदसी सो दन सोना-रूपानो वेसी । सावक सरावका सरबने...................... । चोमासे वेगा पधारसी । आसगरी अरज सै सो मनसी। संवत् १८६२ पो० सु० ३ ।

॥ ए ८०॥

सरसति स्वामण विनवुं, जोय रे बे[ह]नी,
प्रणमी नीज गुरुपाय, मोरी बेहनी हे,
गच्छपति गुणे गावता, जोय रे बेहनी,
मुझ मन आणंद थाय, मोरी बेहनी रे. १
माने पुजजीसुं भेटवाना काम छे, जोय.....
श्रीविजैजिनेंद्रसूरींद, मोरी......
प्रह उठीने प्रणमीये, जोय..... दुजो जांणे दिणंद, मोरी..... २
सकल देशां-सिरसेहरो जोय...., गुणवंतो **गोढाण** मोरी....,
राज करे राजेस्वरु जोय...., राया **मानसिंघ** महाराय मोरी.... ३
तस पदसेवक सूखकरु जोय...., संघवी मांहे सिरदार मोरी....,
लायक बुद्धे आगलो जोय...., **संघवी मेघराज** मोरी.... ४
लायक लछीआगलो जोय...., **मुंतो देवीचंद** दल दरीयाव मोरी....,
सकल गुणे करी सोभतो जोय...., **बीजैवा** नगर विसेष मोरी.... ५
तिहां श्रावक अति सुखीया वसे जोय...., धरमी ने धनवंत मोरी....,
दांन मांने आगला जोय...., अवसरे लाहा लियंत मोरी.... ६
ईहां पांच तीरथ जग मोटिका जोय..., जुगते कीजे जात्र मोरी....,
श्रीवरकाणोजी वंदीये जोय...., नीरमल कीजे गात्र मोरी.... ७
पुरव प्रेम संभारने जोय...., पउधारो गच्छराज मोरी....,
अहनीस अम मनडा तणी जोय...., आवी पूरो मन आस मोरी... ८
श्रीजी पधार्याथी हुसी जोय..., जगमे जे-जेयकार मोरी....,
श्रीविजेजीनेंद्रसूरिंदजी जोय...., प्रतपो जीम रवि चंद मोरी.... ९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पंडित गुणमणी आगला जोय...., **जीवणसागर** गुरुराय मोरी....,
तेह तणा सुपसायथी जोय...., **चतुरसागर** गुण गाय मोरी.... १०

॥ इति गुरु [भास] ॥ अथ विज्ञप्ती(प्ति) ॥

दूहा

सहू सावय सावी सदा, संघ सयल सुभ चित,
गुरुवंदन भावे करी, भाखइ छइ धरि प्रीति. १
अत्र धरमकारज हुइं, पूज्य तणे परसाद,
पुण्य काज गुरु वलि, वर्ते सदा आह्लाद. २
तुम्ह तनु संयम तप तणा, सुभचिंतन हित पोष,
कृपापत्र सेवक भणी, देई करो संतोष. ३
मठ माहे तापस वसे, विच दीजे 'जी'कार,
अम्ह तुम्ह येसी प्रीत है, जाणत हे किरतार. ४ [मजीठ]
आडा डुंगर वन घणा, विचि नदी वा(ना)ला असंख,
किम [आवुं] तुम वांदवा, देवे न दीधी पंख. ५
धरतीतल कागजं करुं, लेखन करुं वनराय,
खीरसमुद्र खडीया करुं, मोपे लिखो न जाय. ६
प्रभुजी छे तुम गुण घणा, मोपे लिखो न जाय,
सायरमे पाणी घणो, गागरमे न समाय. ७

तत्रत्य **पं. श्रीरामविजयगणि, पं. विद्याविजैजी, पं. दांनविजैजी, पं. दौलतविजैजी, पं. माणिक्यविजैजी, पं. जीतसागरजी, पं. लालविजैजी, पं. फतेविजैजी, पं. रामविजैजी,** प्रमुख श्रीजीना सपरिवारने वंदना १०८ वार कहसीजी ।

अत्रत्य **पं. जीवणसागर गणि, पं. तेजसागर गणि, पं. हिंमतसागर गणि, पं. चतुरसागर गणि, पं. भाणसागर गणि, पं. लालसागर गणि, पं. शिवसागर गणि, मु. बुधसागर गणि, मु. कृपासागर गणि, मु. लावण्यसागर गणि, मु. दयासागर गणि, मुनि जयसागर गणि, मु. भवानीसागर गणि, मु. जरुसागर गणि** प्रमुख ठाणु २६ री वंदणा १०८ वार अवधारसी श्रीजी

॥ श्री रस्तु ॥ श्रीः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२२)

चाणस्मा-श्रीविजयजिनेन्द्रसूरिजीने उद्देशीने घांणेरावनो विज्ञप्तिपत्र (सचित्र)

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

पत्रादिमां मङ्गलाचरण रूपे संस्कृत तथा गुर्जर भाषाना पद्योमां पञ्चजिनेश्वरोने वन्दना करी कविए प्रथम ढाळमां गुर्जरदेशनुं तेमज बीजी ढाळमां चाणस्मापुरनुं सुन्दर वर्णन कर्युं छे. पत्र चाणस्मापुरमां बिराजमान विजयजिनेन्द्रसूरिजीने उद्देशीने लखायो होइ त्यारपछीना दूहाओमां तथा 'ईडर आंबा...' ए देशीमां सूरिजीना ३६ गुणोनुं वर्णन कविए आलेख्युं छे. पूज्यश्रीना आभ्यन्तर गुणोने 'आधी तलाई...' ए देशीमां रजू करी फरी तेवा ज गुणोने कुंडलीया छप्पयमां आलेख्या छे. सूरिजीना विशिष्ट गुणोने संस्कृत भाषामां स्तवना करी कविए पछी मरुधर देशना घांणेरा नगरनुं वर्णन प्रारम्भ्युं छे. हाटक, गझल, पद्धडीछन्दमां अनुक्रमे नगरनुं, राजानुं, राज्य-व्यवस्थानुं, जैन-जैनेतर मन्दिरोनुं, तळाव, वाव तथा अन्य पण स्थापत्योनुं तेमज व्यापार, लोकव्यवस्था विगेरेनुं सुन्दर चित्रण रजू कर्युं छे. घांणेराना इतिहासनी केटलीय कडीयोने कविए पत्रना माध्यमे अहीं रजू करी छे. बीजा केटलाक जेवा के सुभट वर्णननां पद्यो, तळावना वर्णननां पद्यो (छप्पय), नारीवर्णननां पद्यो, पोसालवर्णननां विगेरे पद्यो कविनी उत्तम कवित्वशक्तिना नमूना कही शकाय.★ सूरिजीना निश्रावर्ति मुनिराजोने पोतानी वन्दना जणावी पोताना सहवर्ति मुनिवृन्दनी वन्दना निवेदित करी छे. श्रीसङ्घना क्षेमकुशल जणावी पूज्यश्रीनी स्वास्थ्यनी सुखशाता-पृच्छापूर्वक चातुर्मासनी विनन्तिनुं वर्णन त्यारपछीना दोहामां कविए कर्युं छे. हंजा मारू... ए ढालमां सूरिजीना दर्शननुं देशनानुं तेमज श्रीसङ्घमां पधारता थनारां अनुष्ठानोनुं वर्णन करी कवि मिलननी उत्कण्ठानुं वर्णन करे छे. अहींथी आ पत्र अपूर्ण रहे छे, छतां प्राप्त पत्रोमां आ पत्र सौथी मोटो छे.

★ गद्यबद्ध पत्ररचनामां तत्कालीन व्यवहारबोलीना शब्दो प्रचुर मात्रामां वपराया होई तेटलो भाग समजवो वधु क्लिष्ट छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत कृतिनी रचना कवि मुक्तिविजयजीना शिष्य गौतमविजयजीए करी छे. कविनो भाषावैभव तेमज कृतिरचनाकौशल्य काव्यमां घणी जग्याए जोवा मळे छे.

सम्पादनार्थे आ कृतिनी Photo Copy आपवा बदल पं. हिरेनभाई (पालीताणावाळा)नो खूब खूब आभार.

आ पत्र पण सचित्र छे. उपरांत तेमां रिक्तलिपि-चित्रो पण विपुल प्रमाणमां जोवा मळे छे.

* * *

॥ ८०॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीवरदमूर्तये नमः ॥ श्रीजिनाय नमः ॥
ऐँ नमः ॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥

स्वस्तिश्रीमधुपाङ्गनामुखरितं यत्पादपाथोरुहं,
संसिक्तं सलिलैः स्थले किमिति यै राज्योत्सवे युग्मिभिः ।
श्रीनाभिक्षितिभृत्कुलाम्बरमणिः सर्वार्थचिन्तामणिः,
भूयाद् भव्यसुखश्रिये स भविनां श्रीमारुदेवप्रभुः ॥१॥

विश्वे विश्वव्यवस्थितिं विरचयन् पादे दधन् यो वृषं,
सर्वेषामिह दर्शयन् शिवपथं भव्याङ्गिनामुत्तमम् ।
शृङ्गं येन समेत्य राजतगिरे[:] सिद्धिः प्रपेदे पुरा,
स्यात् सौख्याय स सर्वमङ्गलयुतः श्रीमान् युगादीश्वरः ॥२॥

धनजनितया वृष्ट्या शान्त्वा दारिद्र(द्य)दवानलं,
विरतिसमये येन स्वैरं पयोदवदर्थिनाम् ।
धवलितमिदं वाग्ज्योत्स्नाभिर्जगन्निखिलं स वः,
प्रथयतु जिनः श्रीनाभेयः श्री(श्रि)यं जगदीश्वरः ॥३॥

॥ इति आदिः ॥

स्वस्तिश्रियं यच्छतु शान्तिदेवः, सुराऽसुरेन्द्रैः कृतपादसेवः ।
नामाऽपि यस्योच्चरितं शुभाय, भवेत् प्रकामं दुरितक्षयायः(य) ॥१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदीयनामस्मरणं रणादि-भयेषु सर्वेष्वभयं करोति ।
......................, करोतु शान्तिं करुणासनाथः ॥२॥
आरोप्य येन स्ववपुस्तुलायां, त्रातः कपोतोऽसुपणैर्भवे प्राक् ।
कारुण्यपुण्याम्बुनिधिर्मुदं वः, श्रीशान्तिनाथः स जिनः सदैव ॥३॥

॥ इति शान्तिः ॥

श्रेयःश्रीसुखमातनोतु सततं नेमिर्जिनेशः सतां,
नीलेन्दीवरपीवरद्युतिभरः संसारपारप्रदः ।
यः शङ्खं किल पूरय----- कुर्वन्निवाऽभाद् विभुः,
स्वैरं दैत्यरिपोर्महद्भुजबलप्रोद्यद्यशःसञ्चितम् ॥१॥
पराजितः पञ्चशरोऽपि येन, द्राक् सुभ्रुवां भ्रूवनमाविवेश ।
स सौख्यलक्ष्मीं वितनोतु नो वः, श्रीनेमितीर्थाधिपतिर्नितान्तम् ॥२॥

॥ इति नेमिः ॥

स्वस्तिश्रीसेवितं पार्श्वं, नव्यनीरदभासुरम् ।
जिनेश्वरं जगद्वन्द्यं, सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥१॥
कमठकृतघनौघैः प्लावितक्षोणिदेशे,
दृढविरतिमदङ्गं मग्नमाकण्ठपीठम् ।
तदनु वदनमस्मिन् यस्य चाऽङ्गीचकार,
प्रमुदितकमलाभं स श्रिये पार्श्वनाथः ॥२॥

॥ इति पार्श्वः ॥

येनोन्नताङ्गुष्टनखाग्रभाग-प्रचालनात् क्षोभित एव मेरुः ।
मरुत्कृते जन्ममहोत्सवेऽपि, श्रेयःश्रिये वीरजिनः स भूयात् ॥१॥
चिरं स्थिरीकर्तुमिवाऽऽरकेऽस्मिन्, स्वं शासनं योऽभ्युदियाय विश्वे ।
सिद्धार्थभूपान्वयसागरेन्दुः, प्रणम्यतां वीरजिनाधिराजम् ॥२॥

॥ इति वीरः ॥ इत्येवं प्रणम्य ॥

दूहा

स्वस्ति श्रीशैत्रुंजपति, आदिकरण आदेय,
हरण पाप सुखकरण नित, जयो जयो नाभेय. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निर्विकार विज्ञानघन, चिदानंद चिद्रूप,
अलख अलेप अमूर्तिमय, नमूं आदिजिन भूप. २

स्वस्तिश्रीसुखसंपदा-दायक परम-दयाल,
विश्वसेनअवतंसकुल, जगजीवनप्रतिपाल. १

मेघराय महीपति भवे, भये भव करुणावंत,
क्रपया कीध कपोतनी, ते प्रणमूं श्रीशांति. २

स्वस्तिश्रीरमणीतिलक, सेवितसुरनरवृंद,
ब्रह्मवतीसिरमुकुटमणि, नमीये नेमि जिणंद. १
वयलाघव व्रत आदर्यो, विरमी मोहविकार,
रमणिरंभ राजुल जिसी, तजे तर्या भवपार. २

स्वस्तिश्रीलीलाकलित, वलित दुरित दुर्जेय,
कमठनिकंदन नीलतनुं, वंदूं जिन वामेय. १
अत्यद्भूत उद्योतमय, परमानंदपदीष्ट,
जगहितधर्ता ज्योतिमय, श्रीपारस परमीष्ट. २

स्वस्ति श्रीशासनधणी, वर्धमानं भगवंत,
केवलज्ञांनदिवाकरुं, अतीसयवंत महंत. १
त्रिभुवनपर्ति त्रिशला तणों, नंदन गुणह गंभीर,
सिद्धारथकुलकेसरी, वंदूं श्रीजिनवीर. २

श्रीरिसहेसर शांतिजिन, श्रीनेमीसर पास,
वर्धमांन जिनवर-चरण, प्रणमूं मन उल्लास. १
परतिख तीरथ पंच ए, पंचम-गतिदातार,
प्रणमी प्रथम ज तेहनें, लिखुं लेख हितकार. २

॥ इत्येवं नमस्कारपञ्चभि वाच्यन्ते श्रीमति तत्र श्रीमत् **चांणसमा**नाम्नी पुटभेदने तद्यथा –

॥ जी हो जाण्यूं अवधि प्रयुंजते - ए देशी ॥

जी हो जंबूधीपना भरतमां, जी हो गुर्जर देश षतंग,
जी हो देश अवरमें देखतां, जी हो ओपम एहनी उत्तंग. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चतुरनर! गुर्जर देश विशेस [आंकणी]

जी हो सकल गुणे करी सोभतों, जी हो सकल गुणे शिरदार,
जी हो मानुं भूरमणी तणों, जी हो निरुपम मौक्तिक-हार. २
जी हो गढ मढ मंदिर मालीया, जी हो पौल अनेक प्रकार,
जी हो वरण अढार वसें तिहां, जी हो अलिकापुरि अनुंहार. ३
जी हो पग पग पांणी पंथमें, जी हो वड जिम सुंदर वृक्ष,
जी हो सीतल सुहामणी, जी हो पंथी पांमें सुख. ४
जी हो सालखेत सहजें वधे, जी हो नीका भरीया नीर,
जी हो लहकें अंबा लूंबे रह्या, जी हो केल करै तिहां कीर. ५
जी हो प्रफुलित कुसुम सुप्रेमना, जी हो तरवर तरल सनूर,
जी हो लुलित विटप ते थया, जी हो फलभारे करी पूर. ६
जी हो सरवर भरीया सुंदरूं, जी हो करता पत्री केलि,
जी हो कमलसुगंधा ऊपरें, जी हो गूंजे मधूकर गेलि. ७
जी हो नदीयां नीर सुहामणां, जी हो निर्मल गंगतरंग,
जी हो वाडी वनखंडे करी, जी हो सोभा अधिक सुचंग. ८
जी हो गाम नगर पुर पूरें करी, जी हो संकीरण सहु ठांम,
जी हो ऋद्धि-वृद्धि-समृद्धें करी, ... ९
....
.... १०
जी हो........ लोचनी, जी हो हरिलंकी हर चाल,
जी हो अनूप अप्सर सारीखी, जी हो सूंदर[का]य सुकमाल. ११

दोहा

हिवें तिण देशें पुर घणा, पिण सहू पुर सिणगार,
चांणसपुरह सुहांमणो, इंद्रपुरी अनुहार. १
चांणसपुरनें कैलासपुर, ओलै-भोलै आज,
नरनारी सुर अपसरा, देवराज महाराज. २
दंड जिहां छै देहरै, नारी वेणीबंध,
गाल जिहां वीवाहमें, अवगुण देखण अंध. ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राज करे तिहां राजवी, काछ-वाच निकलंक,
जितशत्रू राजै तिहां, तोडण खलां त्रिवंक. ४

तिण राजन रा राजमें, ईत भीत नहीं कांय,
सूंदर सोभा सेहरकी, देखां आवें दाय. ५

॥ ढाल - सायण म्हारी है आज हजारी ढोलों प्रांहुणां ॥

श्रीचांणसमापुर भलो, इंद्रपुरी अनुहार, साजन म्हारां हो
तिहां जई गछपति भेटीइं, छे एहवी मननी हूंस [टेक]
नर नारी सोहें भला, अपछर सुरअवतार, साजन.... तिहां... १

गढ मढ मिंदर मालीया, पौल अनैक प्राकार, साजन...
जाली गोख सुहांमणा, सुरगृह सम आकार, साजन... तिहां... २

ऊंची ध्वजां आसमानसूं, करै लहकंती वाद, साजन...
सोवन कलसें सोभतों हांजी, पौढो जिनप्रासाद, साजन... तिहां... ३

वाजै वाजित्र अति घणा हांजी, झालरना झणकार, साजन...
अगर उखेवें आरती हांजी, गावे जिनगुण सार, साजन... तिहां...४

रंगमंडप मांहे रली हांजी, खेला खेलैं खंत, साजन...
तता-थेई-थेई ऊचरे हांजी, पय घूघर घमकंत, साजन... तिहां... ५

गुहिर सुरें मिल गोरडी हांजी, गावै जिनगुणभेव, साजन...
भाव भावें भवि नित प्रतें हांजी, त्रिकरण करतां सेव, साजन...तिहां... ६

च्यारेई वरण तिहां वसइ हांजी, परगट पवन छत्रीस, साजन...
नयर घणुं रलियामणुं हांजी, देखण हूइ जगीस, साजन... तिहां...७

गछपति जिहां पगलां ठवे हांजी, **विजयजिनेंद्र**सूरेंद्र, साजन...
तेहथी अधिक प्रभा थई हांजी, नगरनी पुर जिम इंद, साजन... तिहां...८

दूहा

इम अनेक गुणे करी, सोहे अति शिरदार,
चाणसमां पुरवर भलौं, देवनगर उणहार. १
तेह नगर सुभ थानकैं, सकल गुणे सहितान,
चारित्रपात्रचूडामणि, पंडितमांहें प्रधान. २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुमति गुपत सुद्ध आदरी, विषय विकारनो त्याग,
कीधों लीधों चरित जे, राखे चढते राग. ३
ओसवंश जिणें ऊधर्यो, **सा. हरचंद**कुलसींह,
मात **गुमानदे** जनमीया, लोपै कुण तो लीह. ४
शासनपति श्रीवीरना, शिष्य सुधर्मास्वांम,
श्री**जंबू**स्वांमि प्रमुख, **प्रभवा**दिक अभिरांम: ५
पट्टपरंपर तेहना, सासनभासनसूर,
श्रीविजैजिनेंद्रसूरेंदजी, नायक चढते नूर. ६
युगप्रधान कलि यागतो, गुरुगौतमअवतार,
साच-वाच सत्य-साहसी, क्षमा-दयाभण्डार. ७
गुण गिरुआ गुरुजी तणां, गिणतां न लहूं ग्यांन,
जिम रयणा गिरनार-तन, सब ही अछै समांन. ८
गुण प्रौढा गच्छेसना, नौढाइ आख सकेन,
अलप बुद्धि अनुंमानसें, वंदू रसि कहूं वैंन. ९

ढाल ॥ ईडर आंबा आंबली - ए देशी ॥

पूज्याराध्यतमोत्तमा रे, परम पूज्य पुनीत,
अर्चनीय छो सहू तणा जी, वंदनीक सुविनीत. १
सूरीसर गिरुए गुण गछराज तथा गछनायक गुणवंत [ए आंकणी]
सकल गुणे करी शोभता जी, गछपतीयां सिरमोड,
कुमतांधकारे नभोमणी जी, होवैं न दुजे होड. २ सूरीसर....
सरस्वतीकंठभूषण समा जी, गुरुगोयमअवतार,
सांत दांत शिरोमणी जी, सकलश्रमणसिणगार. ३ सूरीसर....
तपोगणगगनविकासने रे(जी), सासनभासनभांण,
विण सासन प्रतिसासन रे(जी), सासनर्वाधितमांन. ४ सूरीसर....
षट्त्रिंशति गुण.... खणि रे(जी), मणिमुकुटा मणिमेर,
अबोहजीव प्रतिबोधक जी, नेता कुमति अंधेर. ५ सूरीसर....
सिथिलाचार निवारक रे(जी), विसदाचारे विचार,
वदनकमल कमला वसे रे(जी), तप तेजें दिनकार. ६ सूरीसर....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

औदार्य धैर्य गांभीर्यनो जी, सौंदर्य वर्यादि गुणेह,
भूषण जैन-विभूषण जी, भूषण कीर्त्ति गुणेह. ७ सूरीसर....
धर्मधुरंधर..............., भासन करुणासिंधु,
जगजीवन छो जगधणी जी, ... बंधु. ८ सूरीसर....
आक्खेवणी पक्खेवणी जी, संवेयणी सुविचार,
निव्वेयणी कथा कही जी, पडिबोहै भवि वार. ९ सूरीसर....
चंद्र परे चढती कला जी, रूपें मयण सनूर,
रयण चिंतामणि सारिखा जी, नित नित चढतै नूर. १० सूरीसर....
सूंदर सुरति मोहती जी, सुरपतितुल्य प्रकाश,
तारा जिम अन्य तीरथी जी, अधिक न तास उजास. ११ सूरीसर....
प्रगट प्रतापे दीपता जी, सकलसूरीअवतंस,
सुरतरु सुरमणि सारखा जी, मुनीजन मानसहंस. २२ सूरीसर....
एकविध असंजम टालताजी, दुविध धरम उपदेस,
ज्ञापक गुण त्रण तत्त्वनाजी, जीता कषायकलेश. १३ सूरीसर....
पंच महाव्रत पालता जी, षट् कायक आधार,
भय साते भड भंजीया जी, मद आठ चूर्या मार. १४ सूरीसर....
नवविह सुह ब्रह्म व्रतना जी, धारक छो जइधर्म,
उपदिसें गुरु स्वयं मुखे जी, नय उपनयना मर्म. १५ सूरीसर....
ज्ञायक अंग इग्यारना जी, बार उपंग वखांण,
काठी तेरना जीपका जी, विद्या चउद सुजांण. १६ सूरीसर....
वांचै गुरु व्याख्यानमां जी, सिद्धना पणदश भेद,
सोल कला पूरण शशी जी, सतरै संयम भेद. १७ सूरीसर....
त्रिकरण थिर करी टालता जी, अघना स्थान अढार,
उगणीस दोस काउसग्गना जी, वारक मोहविकार. १८ सूरीसर....
वीसस्थानक अजुआलता जी, श्रावकगुण इकवीस,
परिसह बावीस जीपता जी, सुगडांगाध्ययन त्रेवीस. १९ सूरीसर....
कथक वली पालक सदा जी, आणा जिन चोवीश,
भावना पचवीस भावता जी, कप्पाज्झयण षट्वीश. २० सूरीसर....
सत्तावीश अणगारना जी, गुणमणि-मुगतामाल,
इण भाषणें गुरु अलंकर्याजी, समतापात्र विशाल. २१ सूरीसर....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अडवीस भेय मतिज्ञांनना जी, अहवा लबध अडवीस,
वचनसुधारस वरसता जी, इम आखे सूरीस. २२ सूरीसर....
एकें उणा त्रीस जेरे (जी), पापप्रसंगे उदास,
त्रीस थानिक मोहनी तणा जी, वरजै प्रमादनिवास. २३ सूरीसर....
इगत्रीस [गुण] जे सिद्धना जी, धारक मन-शुभ-ध्यांन,
गुरु बत्तीस लक्षण गुणे जी, दिन दिन वधते वान. २४ सूरीसर....
तेत्रीस आसातना टालता जी, सुरसहमंड(?) तेतीस,
चौतीस अतिसय जांणता जी, वांणीगुण पेंतीस. २५ सूरीसर....
उत्तराध्ययन छत्तीसना जी, उवएसक विख्यात,
इम ए छत्रीस गुणे करी जी, राजे निरमल गात. २६ सूरीसर....
गुरु रयणायर गुण भर्या जी, लहिरें ज्ञान लीयंत,
गुरुगुण जीह गिणता थका जी, पार न को पावंत. २७ सूरीसर....
इम अनेक गुणें दीपता जी, सासन जिनसर(?)
वंछितपूरण जग जयो जी, भावठ भंजणहार. २८ सूरीसर....

दूहा : गुरु दरियों भरीयों गुणे, गुणमणि रूपनिधांन,
चारित्रपात्रचूडामणी, ध्यायिक जिनवरध्यांन. १
ज्ञांनादिक मोटा रयण, अंतरगति भासंत,
च्यारु दिसि चारित्रजल, पसर्यो पूरण पंत. २

॥ ढाल - आधी तलाई बंवडोजी कांई, आधी तलाई कीच - ए देशी ॥

रंजण सहु सुरनर तणांजी कांइं, भंजण मोह अभिमांन,
गंजण परवाग्मी तणांजी कांइं, दिन दिन वधतै वान. १
हो साहिबा ऊवारी जाउं रे, उवारी जाउं गछपति, ऊवारी जाउं रे
लुलि लुलि लागूं पाय हो साहिबा ऊवारी जाउं रे. [आंकणी]
क्रोधादिक कांनें कीयाजी कांइं, मद मिथ्यात प्रचंड,
जीपक अंतर दुर्जय तणांनी कांइं, दुर्धर सिर दिइ दंड. २ हो साहिबा....
निग्रही इंद्रीय पंचनाजी कांइं, नवविह ब्रह्मना धार,
समीयक चार कषायनाजी कांइं, एहवा ए गुणह अढार. ३ हो साहिबा....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पंच महाव्रत पालताजी कांइं, पालता पंचाचार,
पंच सुमति त्रण गुप्तनाजी कांइं, सूरी छत्रीस गुणधार. ४ हो साहिबा....
जाति रूप कुल तणांजी कांइं, नांण सुविनय संपत्त,
दंसण चरित्र क्षमा दयाजी कांइं, सच्च सोय संयुत्त. ५ हो साहिबा....
चरण कमल अज्जवपणुंजी कांइं, मद्दवनें बंभचेर,
अकिंचन अनें निरलोभताजी कांइं, इम इत्यादिक गुणमेर. ६ हो साहिबा....
निर्घाटक पाखंडनाजी कांइं, मिथ्यामतना निवार,
कुमति कदाग्रह विटपनाजी कांइं, छेदन चारु कुठार. ७ हो साहिबा....
न्याइक काव्य पुराणनाजी कांइं, छंदसु सद अभ्यास,
नाटिक अलंकृत ग्रंथनाजी कांइं, भेदक पुण षट भाष. ८ हो साहिबा....
आगम नय उपनय तणांजी कांइं, टीका युक्त विचार,
अतिहास सय निरघूंटनाजी कांइं, पायक छो गणधार. ८ हो साहिबा....
तर्कशास्त्र निज परतणांजी कांइं, उत्सर्ग नें अपवाद,
निश्चयनय व्यवहारनाजी कांइं, छो जांणग सब वाद. ९ हो साहिबा....
चंद्र परें चढती कलाजी कांइं, झलहल तेजें भांण,
सरस शुधारस ताहरीजी कांइं, विहसित अविरल वांण. १० हो साहिबा....
गच्छनायक गुरु गछपतीजी कांइं, गच्छाधिप गच्छेश,
गच्छदीवाकर गणधरुजी कांइं, गणराजा गणेश. ११ हो साहिबा....
गुण अनंत गुरुजी तणाजी कांइं, कहे न सके मुख कोय,
विध सें मुख गुण वर्णवेजी कांइ, तोइ पार न पोहचे सोय. १२ हो साहिबा...
श्री**विजैधर्म**सूरिंदनें कांइं, पट्टप्रभावकसूर,
विजयजिनेंद्रसूरवरूजी कांइं, नायक चढते नूर. १३ हो साहिबा....

दूहा

धर्मधुरंधर वीरना, महिमा जगविख्यात,
षट्विध जीवनिकायना, मात तात नें भ्रात. १

सत्रु मित्र समचित धरैं, कृपासमुद्र पवित्र,
गंगाजल परि निरमला, जेहना सरस चरित्र. २

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छप्पइ – कुंडलीया

विद्या वयरकुंआर ज्यूं, इल गोयम अवतार,
लायकगुण लीलालहिर, कलि दूजो किरतार,
कलि दूजो किरतार, धीर संयमव्रतधारी,
साध्र(ध) महीयडे साच, सकल श्रमनगुण हितकारी,
गाहिड गात गयंद, इंद्रज्यूं अधिकै दावै,
प्रगुण सुगुण बुधपात्र, जास कविजन गुण गावै,
वड त्याग भाग सोभाग वड धरणि तरणि शशि धीर ज्यूं,
प्रतपो जिनेंद्रसूरींदपाट, विद्या वयरकुमार ज्युं. १
गछपति गछपतिशिरतिलक, चलै चरण सूध राह,
मिथ्यामत दूरें हरैं ....., परतिख गंगप्रवाह
परतिख गंगप्रवाह, गहिर वांणी घन गज्जें,
गरजित महिम गहिर, भेदता वारिद भज्जें,
गुणमणि-रयणभंडार, नांण-दंसण-चारित्रनिध,
अमल अचल अभंग, अखिल वंछितदायक रिध,
करुणानिधांन करुणाकरण, अति प्रताप उदयों सूरज,
कवि कहत एम गोयम सुगुण, गछपति गछपतिसिरतिलक. २

छप्पय

अस्योत्तर – श्रीविजयजिनेंद्रसूरिंद जब, कृपादृष्टि ज्यां पर करै
गवी कांम (कामगदी) तस गेह, मेह अमृत मय करसे,
परसे निर्जर विटप रयण चिंतामणि फरसै,
प्रगटै गंगप्रवाह, भेट सह दारिद्र भज्जै,
होत......................, गेह मयंगल गलगज्जै
पांमै प्रगट्ट वंछित अखिल, सकल सिद्ध करि जरूरै
श्रीविजयजिनेंद्रसूरिंद जब, कृपादृष्टि ज्यां पर करै. १

छप्पय

वैजयजिनेंद्रसूरिंद जब, कोप भृगुटि वंकी करै.
अस्योत्तर – डगगयंद डिगमगत, थगगथर कीयत्कासन,
तरणिरथ्थ खलखलिय, चंद्र चलचलीय चंद्रासन,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गणणणियत गेंणाक, धाव.... वाक धरीयधर,
खललिलियत सर सात, गात नृत्त चुक्किय सूरिवर,
सुलतांन रान..........., विकल तुंड वासिग धरै,
वैजयजिनेंद्रसूरिंद जब, कोप भृगुटि वंकी करै. २

दूहरा

गयणांगण कागल करूं, लेखण करूं वनराय,
सायर करूं मसी तणां, तोई गुण लिख्या न जाय. १
इत्यादिक गुणमणि तणां, अविचल अनूपम हट्ट,
वादीवृंदसींह सारीखा, वादीसस्यघरट्ट. २

श्रीमदखिलभूमण्डलाखण्डलसमाननृपतिसंसेवितचरणकमलान्, श्रीगीर्वाण-गुरुगुरुतरमति(ती)न्, श्रीमत्तपागणगगनदिवाकरान्, निखिलगुणरत्नरत्नाकरान्, विस्तारसुधासारसम्भारमनोहरवाक्यचाराभिनन्दितसभास्तम्भास्तारवारान्, समीहित-पञ्चप्रतिष्ठान्, सदनुष्ठान् यूक्यं(नयुक् पं)चाचारविचारविशुद्धशुद्धराध्य(द्धा?)न्त-तत्त्वतारतम्यरम्यसंवर्तिमसुविहितविहितविधि(धी)न्, धैर्यगाम्भीर्यसौन्दर्यमाधुर्य-वर्यचातुर्यैश्वर्यप्रभृतिसत्पुरुषलक्षणलक्षितान्, सर्वतः सहीत(?) वि(वी)क्षितान्, शरण्य-स(श)रणान्, श्रीश्रीश्रीश्री १०८ श्रीश्री सकलभट्टारकपुरन्दरभट्टारक-भालस्ति(ति)लकायमान श्रीमद्गच्छाधिराजेश्वर श्रीश्री**विजयजिनेन्द्रसूरीश्वरजी**-चरणारविन्दान् चरणपदपङ्कजान् श्रीमत्-

यथा(अथ) मरुधरदेशनगरवर्णनम्-

दोहा

गवरीसुत प्रणमूं गहिर, सिद्धिकरण शुभ कांम,
सारद सो मनि नित समर, हीयाकी पूरण हांम. १
मुगताधर सामिण नमों, सुवचन समपौं माय,
तो सुप्रसन्न सुवचन तणी, कुमणा न रहेवाय. २
विबुध विटप विभ्राजवा, रंभे तुं रितुराज,
मदीय क्रपा कर सामिणी, निज सुत नांण निवाज. ३
गुण वर्णू गछराजवा, अलपबुद्धि अनुमांन,
सरस युक्त अरु उक्तकी, वांणी द्यो वरदांन. ४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देस अभिनव देखीया, लिख्या चित्रांकित लेख,
लहु मरुधर सम महीयलें, ओपम नावै एक. ५
धर **मरुधर मारू** तणी, वांणी अकल विवेक,
तोड न आवै तरतमां, देख्या देस अनेक. ६
चंगा नर चंगी धरा, वनिता चंगे वेस,
मारवाड सम को नही, देख्या केइ देस. ७
मनोहर लहु मरु देशमें, महीतीय(यल)तिलकसमांन,
गोडवाड गुणियल धरा, इन सम अवर न आंन. ८
दीपत तिण देशें घणा, जनपद जगतप्रसिद्ध,
सहिर **घांणोरा** है सिरै, ऋद्धि-वृद्धि-संमृद्ध. ९
वापि कूप सर गिर सजल, गढ मढ मिंदर गौख,
वन उपवन सरिता वने, घर घर पदमणि जौख.३४ १०
सह मिंदर सूंदर वणे, वणिया वाग विहद,
विहसित चंदावदनीया, है **घांणोरा** हट्ट. ११

॥ तों छंद हाटक ॥

दीपै तिण देसें, देसमुगट-मणि लायक **लहुमरुदेश**,
वसहै तिहां भल्ला, सैहर अवल्ला, **घांणोरा** सुविसेश,
तस आगल लंका, मन धरि संका, पैठी सिंधु सुथांन
एसों घांणोरा, सहिर मनोहर, इंद्रपुरी अनुमांन. १

भारीकम ठांणा, सखर सुथांना, वन वाडी आरांम,
कैलासिक थांनं, लंका मांनं, वडे वडे इतमांम,
वातां सुणी वयणे, लखिया नयणे, नही इण नयर समांन,
एसों घांणोरा.... २

राजै तिण राजै, राजराजेश्वर, मेडतीयां सिरमोड,
अनमी अरु धरमी, है वड करमी, राज करै **राठोंड**,
भुजप्राक्रम भारी, इल अवतारी, दिन दिन चढतै वांन,
एसों घांणोरा.... ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बत्तीस लक्षण, बडा विचक्षण, कला बहोत्तर जांण,
षट् दर्शन पोषै, शत्रू शोषै, **खैमों जदयण** महिरांण,
प्रतपें पटधारी, **श्रीदुरजन** रे, **अजीतसिंघ**राजान,
एसों घांणोरा.... ४

तस कीरतगंगा, वहेती रंगा, पहुती समुद्रा पार,
गुणियण हितकारी, बहु जसधारी, दांन-मांन-दातार,
निज जनपद मांहैं, आंण अखंडित, पालै परम सुजांण,
एसों घांणोरा... ५

दोहा-सोरठां - इंद तणै उणिहार, गाहिड गात गयंद ज्यूं,
सरणागत साधार, जोध वडां जंग जीपणौ. १
साध्रम हीयडैं साव, साहसीक सोभा सध्वर,
वसुधा ऊपर वाच, लोपै कुंण **अजमाल** री. २

॥ तौं छंद हनुफाल ॥

जयवंत राय **अजीत**, भुज भींम अनड भींत,
नरनाह जे मुख नीर, धर धमल धूंखल धीर. ३
सुध सांम ध्रम सकज्ज, हद दयण हेंवर गज्ज,
निज मुख करत नांहि न मोट, कहीयें कीर्त्तिहंदो कोट. ४
पहु पाथूआं प्रतिपाल, समझू सात्रवा रों साल,
वडवडा जीपक वाद, पसरी प्रभा जस प्रथमाद. ५
तप तेज जेहो सूर, दिनदिन चढतै नूर,
करकर्ण जेहो कर्ण, नर सुरां असरण सर्ण. ६
सतवंत ज्यूं हरिचंद, मांनूं रूपमें मकरंद,
निरमल जेहवा गुण गंग, रिजवद नीपणों अरि-जंग. ७

छप्पय

न्यायनिपुण निकलंक, खाग बल खल दल खंडित,
सूरतवंत सनूर, आंण परमांण अखंडित,
प्रजा लोकप्रतिपाल, सत्य सुविनीत सनेहौं,
दोलत-दिलदातार, जगति धाराहर जेहौं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपकारवंत अधिकै गुणे, जसधारी दुर ज सरै,
दत्त दांन मांन **अजीतेसरी**, कवण आज समवड करै. १

दोहा : मोढै मन मंत्री मुदै, सुभडां भडां सकज्ज,
आज किसोंर अजीत रै, कारणीक कम धज्ज. १
आज किसोंर अजीत रै, कामां धणीकमंध,
छोडै त्यांनू छूटका, बांधै त्यांनु बंध. २
आज किसोर अजीत रै, अंग (अनंग?) समोवड अंग,
मणिधर सामंत-सीहरों, जीपण वड हय जंग. ३

जीपण वड हय-जंग, सांम ध्रम-कांम सुधारण,
राघव रै हणु जेम, सकलखलदलसंहारण,
विक्रम रै वेताल, राजभुजभारधुरंधर. १
दल-पंगुल जैचंद, सुहड भड तस संखोधर,
बुध-बलि प्रतापकै वासज्यूं, सूरवीर सुहडां सिरै,
वड दांन-मांन मोटै कुरव, आज किसोंर अजीत रै. २

॥ तो छंद हाटक ॥

तस सुभट सकज्जं, हेवड धज्जं, रणधीरा रजपूत,
मेटणरि म मर्मं, सांम(?) सुधर्मं, वडी जास मजबूत,
हणू अंगद एहा, भीमंक जेहा, कहूं केता वाखांन.
एसों घांणोरां.... ६

जुडियै रण-जंग, न द्यै पग, पाछा जोध वडा जुंझार,
कारणज्यां वंका, धरैं न संका, सूरवीर दातार,
पडता नभ झेलैं, अरज उवेलैं, मच्यां न मूकें मांण.
एसों घांणोरा.... ७

है त्यां अधिकारी, बहु जसधारी, आग्याकारी तेह,
मूंहतां नैं लोढां, हींगड सामावत, जालिम मंत्री जेह,
साचा जिनधर्मी, सुकृतकर्मी, सर्मी विमल समांन.
एसों घांणोरा.... ८

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मत-बुध किवलासं, मतकैं वासं, मणिधर मोटे मन्न,
वायक ज्यां लायक, संघमैं नायक, गुणज्ञायक गुणीयन्न,
सोभा-गुणआगर, महिमासागर, दिन दिन वधतैं वान.
एसों घांणोरा.... ९

दरबारैं राजैं, घन जिम गाजैं, मदझरता मातंग,
काछी कंबोजा, घाट कनोजा, पांणोपंथ पवंग,
तुरकी तेजाला, हय मतवाला, भरै भली मडांण.
एसों घांणोरा.... १०

उंचा असमांनं, मैहल मंडानं, अडीया अंबर आंण,
अनुपम कोरणीयां, गोखां वणीयां, जलहल तेजें भांण,
कंचनमय छाजैं, कलस विराजैं, मांनुं अमरविमान.
एसो घांणोरा.... ११

सोहै भल सूंदर, मोहनमंदिर, जुगतें जाली जोंख,
रायांगण राजै, ताक विराजै, है जोवण री जोंख,
चित्रांम बनाए, मंडप छाए, ज्याके अधिक वखांन.
एसों घांणोरा.... १२

दोढीकै नेडी, भली कचेडी, ज्यां बैठे हुजदार,
मोटे मन-शुद्धी, है बहु बुद्धी, रांम-करण भुजभार,
हिंमत तस भारी, जन हितकारी, है गुणवास निधांन
एसों घांणोरा.... १३

दोहा

खेडा दैवत खंतसू, पूज्यां पूरै आस,
विवरी नांम वखांणीइ, पेखों पुरकैं पास. १
वडडूंगर झिगर विषम, धरै... कुण धीर,
वांकां अनड विराजीयों, वीराहंदो वीर. २

सवैया

वडे ढुंक उतंग निषंग अडै वन, झाड पहाडकूं देखड राजैं,
सुविशाल वडाल विहार वणे जल, नृमल वावकी रुंस सराजैं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहु सत्रकौं चूरण आसकौं पूरण, ज्याकी जगतमें क्रीतक राजैं,
बने एकल्ल मल्ल अटल्ल सधीरज्यूं, वीर-वडों महावीर विराजैं. ३

दोहा

जगहितधर्ता ज्योतिमय, कर्त्ता कर्म-अधीर,
है हर्ता अग्यानतम, वंदू प्रथम ज वीर. ४
देखण देशां-देसरा, आवै संघ असेष,
वीरादिक अब ओंर हें, **खेडादेव** विशेष. ५

॥ तों गझल ॥

खेडादेव रूपण खास, पूज्या पूरहैं मन-आस,
रेवंतराय है गाजीक, ज्याकी साहिबी ताजीक,
ताकै निकढ ही इक **ताल**, सोभित मांनसरकौं बाल,
पर्गट नांम है **परतांप**, परघल भरीए हें आप,
वाकै पास वन वाडीक, जाझी झाडकी झाडीक,
ग्रीषम रित्तका सुखवास, चंगी जायगा कि(की)वलास,
ज्याकी जौंख हैं भारीक, केती कहीइ तारीफ,
ताकै निकट ही तट खूब, **गिरवर सागरह** महबूब,
भरीयों लहर ही गंभीर, सूंदर गौंख हें तट तीर,
वणीये विकट झंगी झाड, विषमा वंकडा पाहाड़,
भर-भर चूरमांकी पोठ, हूंसी[८१] करत है तहां गोठ.
जग्ग जुगतकी सोहैक, मुनिजन निरख ही मोहैक,
चत्रभुज चर्चिइं हरीदेव, सुर नर करैं ज्याकी सेव,
गोपीनाथकूं गाएक, केई पार ही पाएक,
देवल देखीइ अति चंग, जुगती वाव के जल गंग,
जाझी झीलणेकी रूंस[८१], रसीया आय पूरैं हूंस[८२],
लखां लोकके भेलाक, मिलत **अमावसें मेलाक,**
बैसें [८३]मांडकैं बाजार, दांणह लेत नां **हुजदार,**
वेचैं क्रयांणाकी वस्त, घृत गुड वज्र अर्बुद सुस्त,
एसें मास मासां अंत, मेला मिलै ऐसैं तंत
चामुंड चर्चिकाका थांन, ज्याका जोर है सनमांन,

मनोहर माननी मिल आत, जाझी जुगत सेंवें जात,
लेवैं भलभला तिहां भोग, टालै दुख्य आरति सोग

दोहा : सोभा **कांनस ताल**की, केती कहूं बनाय,
प्रफुलित नवपल्लित-कुसुम, मुनीमन रहैं लोभाय १

छप्पय

सूंदर अतुल विशाल, **ताल गिरवर** चिहुं तुल्लिय,
निपट सुघट-तट विमल, अनल जल जलज प्रफुल्लिय,
कुंजति कल कलहंस, केकि कोकिल कल बोलति,
ललित लता लपटानि, तरल तरवर-तित सोहति,
पथि लख सुथांन प्रमुदित हवैं हे, द्युति दीपत मांनस दरस,
कवि कहत कथ **गोयम** सुगुन, सोभा **सर कांन** सरस.

[दोहा]

प्रथुल प्रघल जल-पूर, नाडी नाम **किराडिका**,
नित उगमतै सूर, पदमणी पांणी आत हैं.

॥ तो गजल ॥

पदमन आत है पानीक, नीकी जांन ठुकरांनीक,
जालिम जुगतकी जग्गैक, मुनीमन देखकैं डग्गैक,
निरमल नीर ही भरीयाक, दरसै खूब ही दरीयाक,
नीका **कालिका**का थांन, सूधां रायका सनमांन,
परचा ताहिका भी पूर, दरस्यां दुख जाइं दूर,
पूज्यां पाईइं सुखवास, आसिक पूर हैं सहआर,

दोहा

व्यास जग्गेसर वाव की, सोभा अति सुखकार,
पदमणि आवैं पांणीयें, नाजुक नाजुक नार.

॥ तो गजल ॥

जग्नेसर वावकी हें जोख, निरमल नीरही अनैंख,
आंबा आंबलीका रोप, सूंदर झाडसें आटोप,
जग्गा जोवणे की खास, दरसें दूसरा कविलास

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनोहर मांननी मिल आत, रंभारूप झिलतैं गात,
मदछक जोवनें मातीक, कंचू भीडीयां छातीक,
रंभा रूपसी भातीक, चंचल कांमकी तातीक,
सझिकैं सोल ही शृंगार, ठमकैं पायला ठमकार,
मोहन रसीलें मृगनेंन, बोलत मधुर अमृत वैंन,
लजैं गात ज्यूं मथतूल, सूरतिह देखहे चितभूल,
ओपैं घडीसें हथ ईश, मिल मिल नायका दश वीश,
पांनी भरनकुं परभात, मोहन माननी मिल आत,
निरख्या **नागणेंची** थांन, चढिकैं डूंगरी सोपान,
ज्याका दरस ही देखाक, परचा पूरही पेख्याक,
ज्याका गुन्न ही गाएक, परिघल रिद्ध ही पेख्याक,
इतना देव पुरकै पास, पूज्यां पूरहै मनआस.

दोहा

हाव भाव अति हैजसुं, वर्णन करुं वणाय,
सैहर तणी सोभा सरस, देख्यां आवैं दाय. १
सैहेंर कोट सूंदरवणे, वर्णव पोल विहद्द,
प्रभुता ज्याकी पेखतां, मूंकै सात्रव मद्द. २
सुरसेवा हितकारणै, केई करत शुचि गात,
तैसैं पोलैं पेंसता, **वाव चौहाण** विख्यात. ३
दरवज्जो दिस **सादडी**, पोलैं प्रथम प्रवेश,
दरस समुखन ही देखीइ, **गवरीसुतन गणेश**. ४

॥ तो छंद पद्धरी ॥

वरदयण वीर गवरीसुतन्न, करिवरपदन्न हेकहरदन्न,
भजीइं सुनांम नित प्रति प्रभात, प्रसरै न विघ्न प्रावित पुलात. १
झालीय वाव रम्य सुथानं, अति नृमल नीर सुर-सूरीय मांन,
द्वै शिखरबंध देवल अनूप, निरखियें शुभ तोरण सरूप. २
रिषि करत जत्र जप जाप ध्यांन, **द्विरदास्य** तत्र थिर थहर थांन
तह करत सेव्य घृत मिल सिंदूर, मल्लिक सुपत्त नैवैद्य पूर. ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महकंत सोढ सूधांमसंद, चरचित्त गात पोहप सुगंध,
स्तुति करत ताहिं सुर नर सुरेस, मंगलसरूप नमीइं **गनेस**. ४

दोहा

वर्णूं अब छिब सहिरकी, जथा-जुक्त परमांन,
वर्ण अढारै वसत है, कहियत ताहि बखांन. १

॥ छंद-हाटक ॥

वसहै व्यवहारी, बहु अधिकारी, जसधारी धनवंत,
सुकृतआचारी, दुकृत-निवारी, सुविचारी सतवंत,
समकित-लयलीना, रंगरसभीना, ध्यावैं जिनवरध्यांन,
एसों घांणोरा..... १४

हैं जनहितकारी, पर-उपगारी, सरल प्रणांमी संत,
जिननों मुख जोता, प्रावित खोता, श्रोता नित सिद्धांत,
प्रभुपय नित सेवै, लाहा लेवै, देवै दिल भल दांन,
ऐसों घांणोरा..... १५

है चंपकवरणी, जनमनहरणी, तरुणी तरुणैं वेस,
रम्यक गुणरक्ता, है पतिभक्ता, वक्ता अमृत वांण*,
ऐसों घांणोरा..... १६

मिल मिल सह नारी, सझ शृंगारी, सारी ओढ सुचंग,
जिनना गुण गावै, भावनं भावै, अधिकै मन-उछरंग,
चालौं बाई जईइं, पावन थईइं, भेट्या जिन जगभांण,
ऐसों घांणोरा..... १७

घस केसर घोली, कनककचोली, चरचै जिनवरअंग,
भरथार विशाला, मंगलिकमाला, अधिके भाव उमंग,
बहु चूआ चोली, धूपसुं घोली, अगर उखेवैं आंन,
ऐसों घांणोरा..... १८

---

*अत्रे अेक पङ्क्ति ओछी छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भल भाव भगतें, विविध विगतें, आरतीयां कर लेह,
उत्तम आचारी, सहू नर नारी, अधिकै धर्म सनेह
निज निज ध्रमलीने, वडे प्रवीने, केते कहूं वखांन
ऐसों घांणोरा..... १९

दरवाजा नेडी, बडी हवेली, वणी विहद-विस्तार,
संघपति तिहां राजैं, चढत दिवाजैं, बडै राज हुजदार,
राजदीयां रंजण, **परदलभंजण**, गंजण अरीयणमांन
ऐसों घांणोरा..... २०

आगें अति करता, चरच अहोनिस, वेद भणंता व्यास,
देख्या अति सूंदर, मोहन-मींदर, **ब्रह्मपुरी**कै वास,
गोखांकी जोखां, पाखंड अनोंखां, साचा सुरगविमांन
ऐसों घांणोरा..... २१

इह **ब्रह्मपुरी** तो, नवी कराई, **अखेरांम विजैरांम**,
तामें अति नीका, **ठाकुरजीका**, **शिवलछिमीधांम**,
वड वडी हवेली, वाव रंगीली, वडे जास वखांन
ऐसों घांणोरा..... २२

उत्तम आचारी, भजैं मुरारी, हैं **ब्राह्मण**का थोक,
पोसालकुं पेखों, दिल भलू देखों, झुकीया आंण झरोंख,
भट्टारक भारी, वड इतबारी, बैठे है निज थांन
ऐसों घांणोरा..... २३

ज्योतिषी अरु **वेदी**, नाड सुभेदी, जांणग वडे पुरांण,
कंसारा कडीया, कंचन घडीया, जडीया है विध जांण,
घडिकें केई घाट, अनुपम ओपम, रिंझावैं राजांन
ऐसों घांणोरा..... २४

सोभित तिहां भारी, सोभा सारी, बने भले आवास,
हव्वेल्यां चंगी, पौल उत्तंगी, बैठे हैं जिहां **व्यास**,
गोंखां की झोखां, भली अनोंखां, झुकिया जांण विमांन
ऐसों घांणोरा..... २५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेवका **पौहों** करणा, आखू धरणा, साझैं नित गुरुसेव,
हरीहरके भक्ती, सेवें सक्ती, सभी पूजें जिनदेव,
मुंहतांकी पौली, **मंदिर** औलां, सोभें **गुरु सुथांन,**
ऐसों घांणोरा..... २६

कारण **कोठारी**, वड इतबारी, मांनणीक है राज,
जहां है **तंबोली**, पांनां धोली, हें हिकमतके ज्याहाल,
बायाका आला, है **ध्रमशाला**, नित प्रत ज्यां ध्रम-ध्यान,
ऐसों घांणोरा..... २७

प्रेमें करी प्रेक्ष्या, दिल भर देख्या, **उपासरा** ध्रमथांन,
जहां बेठे मुनिवर, संयमश्रीवर, गुरु बतावै ग्यांन,
पंडितगुणपूरा, सहज सनूरा, वांचै सूत्रवखांन,
ऐसों घांणोरा..... २८

सुंदर गुणसुंदर, विजयधुरंधर, मौक्तिकरांज मुनेश,
धीरजगुणधारी, जन हितकारी, ग्यांन तणो गुणवेश,
पटआज्ञाकारी, वर्ड इतबारी, साधू भले सयांन,
ऐसों **घांणोरा**..... २९

श्रावक सतवंता, बहु बुधवंता, जांणग भला विचार,
सद्दहणा सारी, उर उपगारी, दोलति दिलदातार,
गुरुकै पय आवै, वंदै भावै, सुणवा हित गुरुग्यांन
ऐसों घांणोरा..... ३०

बाली नें भोली, पैहेंरण पटोली, सझे सोल शणगार,
चालै मदमत्ती, गयंवरगत्ती, रंभ सरूपें नार,
गुरुवंदण ध्यावै, गुंहली गावै, वले सुणै व्याख्यान,
ऐसों **घांणोरा**..... ३१

बंगला तिहां देख्या, मनडां हरख्यां, ग्रीषमरित्तकी जौंख,
ओरा है इंदर, ताकसु सुंदर, जालीजुगत अनोंख,
हरीलोकसें हरीया, आंण इहां धरीया, मांनुं देवविमान,
ऐसों घांणोरा..... ३२

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पींपलकी छांया, तन सुखदाया, गहिरतरु गुणग्रांम,
पछिम दीस नीका, **ठाकुरजीका**, दीपत **सुंदरधांम**,
उंचा असमांनं, सिधरमंडानं, कनककलस धरें आंन,
ऐसों घांणोरा..... ३३

भक्ती होय भेला, नितका मेला, अधिका करै उच्छाह
लछमी-नारायण, परम-परायण, भेट्यां कैं गजगाह,
सूरत सुखकारी, लागें प्यारी, जस गुण गावै ज्यांन,
ऐसों घांणोरा..... ३४

आरतीयां कीजै, पातिक छीजै, लीजै लच्छीलाह,
सूंदर तरुछांया, आवे दाया, आसूपल्लव वाह,
हणुं गुरडह पेख्या, मनमें हरख्या, देख्या सुंदर थांन,
ऐसों घांणोरा..... ३५

मूंहताजीकी मेंडी, वडी हवेली, झुकिया तिहां झरोख,
वडी है मैहैलातां, चंगी भांतां, गोख अनोंखां जोंख,
भल चौक विहद्दं, पोंल है हद्दं, केते कहूं वखांन
ऐसों घांणोरा..... ३६

वसुधासिंणगारा, देवल सारा, ऊंचा अति असमांन,
मंडप चौसाला, चौक विशाला, देख्या दिल उल्लसांन,
अनोपम कोरणीयां, सोहै घणीयां, साचा देवविमान
ऐसों घांणोरा..... ३७

पद्मासन-पूरे, साहिब सूरे, श्रीआदि(दी)श्वरदेव,
सूरत मनहरणी, भवि निस्तरणी, सारै सुर नर सेव,
भवियण भल आवै, भावन भावै, ध्यावें तेहनों ध्यांन
ऐसों घांणोरा..... ३८

दोहा

आगैं अति आनंदसूं, देख्या राजदुवार,
हय-गयसोभा हसमदल, पायकनो नही पार. १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ तो छंद-त्रोटक ॥

अति सुंदर मंदिर ऊंच घणं, झुके जांण झरोखैं विमांण वरं,
किधूं गौरवकी जौंख अनौंखतरं, थित कोट सुसोभित थानथिरं. १
कांमध्वज अजीतह राज करैं, रघुरांम तणां तपतेज तरैं,
महा रिद्ध समृद्ध अछै अगणं, घोडां-रथ-पायक थाट घणं. २
अनमी सह(हु) आय पगां नमीया, कय-वंक-पाधोरेय नेत्र कीया,
प्रजलोक पयंपत हे जस्स वांण, उदयों अवतंस कुलोधर भांण. ३
वडी बुद्ध विशाल...,
धरे धीर मनं नित नांम धर्म, करै नांहि कछंपि...... ४

॥ छंद हाटक ॥

....,
.... रसा, कुंअर सरसा, करत गोखें मजाख(?),
गायन जन गावं, माआ पावं, देवे हयवर दांन,
ऐसों घांणोरा..... ३९

ओपैं तिहां इंदर, मैहेलसु सुंदर, वणे भले सुविशाल,
भुजबल अति भारी, है क्रमधारी, राजन **सिंहखुस्याल**,
मौंजी मछराणं, कुलमें भाणं, समझू वडे सयांन,
ऐसों घांणोरा..... ४०

दरबारकै सनमुख, दरसण **गजमुख**, चौंकी बडे सुचंग,
पौसालकूं पेखों, दिल भर देंखो, गौंख जोंख उत्तंग,
वांणारसवेसं, विसवावीसं, राजमांझ सनमांन,
ऐसों घांणोरा..... ४१

तिहां छात्र पढंता, गणित गणंता, विनये विद्या लेय,
आदू मरजादा, जहां है जादा, लगन मुहौरत देय,
हट्टांकै ऊपर, **युगल किसौंरका**, मोटां **मिंदर** जांन,
ऐसों घांणोरा..... ४२

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हट्टाके थट्टां, है गहगट्टां, है सूंदर बाजार,
बैठै व्यापारी, वड इतबारी, भले करत व्यापार,
बैठै कंदोई, हरखित होइ, ईम बोले मिष्टांन,
ऐसों घांणोरा..... ४३

जलेबी जाझा, घेवर ताजा, खाजा मोतीचूर,
पापडियां पुडीयां, घृत-रेवडीयां, पक्के लड्डू पूर,
दुधपेंडा रोटी, मुरकी छोटी, वडला गुंद मखांण
ऐसों घांणोरा..... ४४

सीरा साबूनी, खंडा दूणी, कीट्टी कौहलापाक,
फैणी पत्तासी, धरे निकासी, गुंदवडा गुंदपाक,
मगद तडभड तडीया, दूधराबडीया, इंम अनेक पकवांन
ऐसों घांणोरा..... ४५

सोहत तिहां मिंदर, देवल सूंदर, **धर्मनाथका** धांम,
दरसण तिहां देख्या, मनडां हरख्या, सीधा सघला काज,
भविजन भल भावें, दरसण आवें, गावें जिनगुणग्यांन,
ऐसों घांणोरा..... ४६

बाजार वडाला, भीड भडाला, देख्यां **माणिक चौंक**,
परदेसी आवै, वस्तु ल्यावै, मिले महाजनथोक,
बहु फिरत **दलाली**, अरु **हमाली**, सोंदा मेलै आंन
ऐसों घांणोरा..... ४७

सोभित अति भारी, सह व्यापारी, विणजै वस्तु वेस,
पाघां जरीदारी, कमखा भारी, फुलक्यारी अरु खेस,
मुखे मल्ल भासत्ती, थरमा भत्ती, सेला अतलस थांन,
ऐसों घांणोरा..... ४८

पंचरंगी छींटा, धूंसा रींटा, पटू पट सकलात,
अध्वोतरसालू कूकडी सूसी, इलायची केई भात,
परदेसी वस्तां, ल्यावै रस्तां, मस्तां भरी दुकांन,
ऐसों घांणोरा..... ४९

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

केइ हुंडीवाला, दुंददूंदाला, कुरब वडाला साह,
मांनी मछराला, छैलछोगाला, लेवै लच्छीलाह,
निज बैठे हट्टां, करै गेहैगट्टां, दि(दी)यै दपट्टा दांन,
ऐसों घांणोरा..... ५०

मालण सत्ताबां, भरीयां छाबां, बैसैं आंण बजार,
तरकारी ताजी, मुकती भाजी, मेथी मन-सुखकार,
मूला मोगरीयां, कैर सांगरीयां, चंदलेहीके पांन,
ऐसों घांणोरा..... ५१

कौहला वृंताकां, केलां पाकां, सीताफल जंभीर,
कौचर कालंगा, अंब नारंगा, षडभुजा अंजीर,
काकडीया हद्दा, सक्करकंदा, इम अनेक वखांन,
ऐसों घांणोरा..... ५२

गांधीके हट्टां, भरीया मट्टां, खारेग द्राखा खूब,
चारोली गिरीयां, सक्करडि लीयां, घणी जनस महबूब,
मणियारै बैठे, मन करसे हेठें, तेल फुलेलां आंन,
ऐसों घांणोरा..... ५३

बाजारकै नेडी, बडी हवेली, झुकीया आंण झरोंख,
ऊंचा असमांनं, सधर सुथानं, है गोंखांकी जोंख,
जहां है जस नांमं, **दौलतरांम**, **साह**जी भल सुभियांन,
ऐसों घांणोरा..... ५४

सोभित तिहां भारी, सोभा सारी, हद्द हवेल्या औंल,
सामांवत पेखौं, दिल भर देखों, देखी सुंदर पौंल,
झुके आंण झरोंखे, नगरसेठके, हट्टां ऊपर आंन,
ऐसों घांणोरा..... ५५

परखै रूपैया, पूरे पारख, धरै **सरापी** नांम,
हट्टा पर सुंदर, मोहनमिंदर, **रांम-लखमण**के धांम
पीछैं अति चंगी, **वाव** सुरंगी, नीर भरै सब ज्यांन.
ऐसों घांणोरा..... ५६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दरसण तहां देख्यां, मनडा हरख्या, पेख्या **गोडीपास**,
देवल असमांन, दुरस विमांन, मनसुध **विहारीदास**,
किय सक्रिय कांम, जिनवरधांम, खरचें द्रव्य सुथांन
ऐसों घांणोरा..... ५७

आगें अति सुंदर, जिनवरमंदिर, **श्रीजीराउलि पास,**
नमीइं सिरनांमी, शिवगतगांमी, परतिख पूरणआस,
कीधों कृत सुकृत, हरवा दुकृंत, चतुरै साह सुजांन
ऐसों घांणोरा..... ५८

जहां है **शिवजीका**, **देवल** नींका, औरु वडे आवास,
दरवज्जा सूंदर, **सोनी इंदर, क्षेत्रपाल** तिहां पास,
गोरी मिल गावैं, जात्रा आवै, भेटै **भैरूं** थांन,
ऐसों घांणोरा..... ५९

गुल मिसरी गाडै, ल्यावें भाडै, बालध पोठ असेष,
छैली छोंगालै, नर मतवालै, विणजै वस्तु विशेष,
लैहक्कह सावां, उजरुन जावां, तोलै कौंल प्रमांन,
ऐसों घांणोरा..... ६०

दोहो

देवल च्यारुं देखके, आये फिर बाजार,
फुनि याहीकों कहत हूं, यथायुक्ति विस्तार. १

॥ तो गजल ॥

देवी **सीतला** देख्याक, परचा पूरे ही पेख्याक,
ढम ढम ढोल ही ढमकैक, झणणण झंझरा झमकैक,
मंगल माननी गावैक, लडका गोदमें ल्यावैक,
भर भर थाल पूजा साज, जुगती जात देवा काज,
सेव्यां सुख्य ही पावैक, दरस्यां दुख भी जावैक,
आगें देखीयें अति खास, गोंखां जोंख हेंक विलास,
उपै हवेल्याकी ओल, सूंदर सोभती है पोल,
पटणी साह हे परवीन, जिनके धर्ममे लयलीन,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दावल पीरकुं देख्याक, परचा जाहिका पेख्याक,
मनोहर **मेडत्याक** चास, देखण दिलमें है प्यास
देख्या देहरा अति चंग, सुंदर सिखर है उतमंग,
फरती ध्वजा ही फररान, कंचन कलस ही सिर-ठांन,
दरसें **अभीनंदन** देव, सुर नर करे ज्याकी सेव,
घटणी लालजी हर्षेक, पैसे धर्महित खरचेक,
जालिम भगतमें भये नांम, कुलध्रम कीए उत्तम कांम,

दोहा

गढकी सोभा देखतां, मन पाये विश्रांम,
विध हद **घांणोराव** री, वडी वधारण मांम. १
ऊंचा अति असमांनसे, वणिया वेस बुरज्ज,
कलै कांम जुडियां थका, सखरी सरै गरज्ज. २

॥ तो गजल ॥

जुगतें गढकूं जोयाक, मनडा मौजसें मोह्याक,
ज्याका जोर हैं इतमांम, सुंदर वडे **इंदर**धांम. ३
सब ही जनसका सामांन, खाईविकर देखीआंन,
आगें देखीइ अति पास, **घांची कुंभारां**का वास,
देखे देव ध्रमके थांन, ज्याका बडा है जस नांम,
तहां फुनि वसै हैं **रजपूत**, रजवट राखणैं मजबूत,
माली लखारादिक थोक, सवे बसे केई लोक,
तिहां केई लखे सुंदर थांन, ऊहांके वड वडे वाखांन,
अब फिर देखणैं बाजार, आये हुंस इंदरधार,
परतिख पसारीकूं पेख, हट्टां थट्ट ही अरु देख,
देखी **नंदवांणा पौल**, इंदर जौख गौंखां औल,
वसियो **सिलावट**कौं वास, पढिये सिल्पके अभ्यास,
आगें देखीए **भडभुंज**, सेके सस्य ही के गंज,
देखे वरणीये **लोहार**, चंगी करत वस्त्राधार,
मोची मौंजसें बैठेक, पनही करत ही दीठेक,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सबकूं राजका सुखवास, चंगे दीपते आवास,
परिघल मानके हैं पूर, **मगजीलोक** है मगरूर.

दोहा

आगें अति आणंदसू, खंतै देखै **कुंड,**
जल हित आवत जात है, नर नारीके झुंड. १

जल निरमल जोवण जुगत, सीस छत्र सिरताज,
सोभै सोभा कुंडकी, प्रगट पद्मसरपाज. २

परतिख त्यां इक पेखीइं, सुंदर सुभग विशाल,
श्रीश्रीपतिकों बैसणों, लायक वाडी लाल. ३

देवी देखी **अंबिका**, है हाजराहजूर,
पाप कटैं पद भेटीयां, दूख जाइं सह दूर. ४

कुंड संमुख हैं **अंबिका**, ताढिग **किसन तलाव**,
जहां मंदिरकी जौंखमैं, **वैष्णव रांम** रटाव. ५

॥ तो छंद-हाटक ॥

देखें तिहां मट्ठं, निपट सुघट्टं, वणे **वजीरावास**
सेरी-सकडीया, लंबी गलीयां, आसपास आवास,
सालवीया पाटी, नाटी घाटी, वणै वस्त्र भल थांन
ऐसों **घांणोरा**..... ५१

वंका तहा वीरं, **रामापीरं**, भल देवलकी भात,
देख्या दिल रंजै, भावठ भंजै, जग सहू आवे जात,
छींपा बंधारा, अरू **लोहारा**, किसबायत केतान.
ऐसों घांणोरा..... ५२

साधांकी पट्टी, निपट सुघट्टी, थट्टां महाजन **थोक**,
सोभित ध्रमसाला, वडी विशाला, साधू कहत सिलोक,
मिल मिल नर नारी, ध्रमके धारी, आय सुणत ध्रमध्यांन
ऐसों घांणोरा..... ५३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोभित अति सूंदर, मोहनमंदिर, गोखा [झोखा?] वृंद
भल है इतबारी, सोभा सारी, जसभारी जैचंद
आगें अति नीकी, **चतुराजी**की, झुकी **हवेली** आंन
ऐसों घांणोरा..... ५४

थित महाजन थट्टा, करै गेहैगट्टां, वसें वडे रिधवंत,
मंदिरकी औंला, सूंदर पौंला, छौंला छिब दीपंत,
उहां भी इक देख्या, परचा पेख्या, **जुंझारांका थांन**
ऐसों घांणोरा..... ५५

पीरांकूं पेख्या, दरगह देख्या, देखा तुरकाके वास,
बैठें सिप्पाई, भली हथाई, पढे कुराणां खास,
काजी मुगलांणं, सैयद खांनं, नायक मीर पठांन,
ऐसों घांणोरा..... ५६

राजावत राजै, चढत दिवाजै, सोभित सुंदर वास,
है जनहितकारी, भल इतबारी, ज्यांके वडे अवास,
गोंखांकी झौंखां, वडी अनौंखा, दीपै भली दुकांन,
ऐसों घांणोरा..... ५७

धोबी अरू नाई, भाट भवाई, दरजी घडित लोहार,
सूथारनें नायत, अरु किसबायत, वसहै वर्ण अढार,
नवनारू कारू, पवन छत्तीसें, केते कहुं वखांन,
ऐसों घांणोरा..... ५८

वसतीके पीछै, बाग बगीचे, वापी कूप विशेष,
गुल्लाबांवाडी, सोभित सार(री), सुरभि तरु असेष,
जग्गाकि(की) वलासं, करणविलासं, देख्यां सूंदर थांन,
ऐसों घांणोरा..... ५९

संवत१९२१ नभअंगे, द्विरद अवीसंगे, तपसी सित हुजवार,
तेंरस तिथ वर्ते, आनंद धर्ते, कीयों छंद सुखकार,
अधिकै उछरंगैं, प्रेमप्रसंगे, पुरके कीये वखांन.
ऐसों घांणोरा..... ६०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कलस-कवित्त

कीयौं छंद सुखकंद, अधिक आनंद उल्लासें,
सुणें जिके नर सुघड, तिकां मत-बुद्धि-प्रकासे,
धर्म-पाटधर धमल-गयंद ज्यूं गछपति गाजैं,
सक[ल] सूरीसां इंद, **विजयजैनेंद्र** विराजैं.
तस पदप्रताप वंछित अखिल, पामैं सुखसंपत्ति निति,
कवि मुक्तिशिष्य गोयम कहै, जय जय जय तपगच्छपतिः ६१

सीधां श्रीसाणचमा सुभासथाने स्त्रब ओपमा पुज राजा(धा) तमोतमे सकल गुणकंरै बीराजमानै चरसतीकठा आभरण, कलुकलागोतमा आवतारी, ... जीव..... आक वद आसंजमना टालनहरा, दुवद धरम रा प्ररा? पाका, तीन तातना ज्णां, च्यर कषाई रोजीप्रका, पंच म्हावराताना पालणहरां चंकाआ जीपक, चातां भ्यनावरण(क), अठा मद जीपक, चवद वीदरा ज्णा, पानरा भेद सेंधरा जाणो, चोले काला संपुरणो, चत्र भेद रा चजमाना पालणहरा, अणरो पापथानक रा जीपक, आगणस कावसकरा पालक, वीसथानकरा तेपरा पालणहरा, आकवीस [स]रवकाना गुणना जणा, बवीस पारचा रा जीपक, तेवीसे सेकला अगरा (?) जाणा चोवीचां नायागाराना जागो, पांचीस भवनारा भावाकां, चंवचा दसाचताच कदन रा वेईकां, सातावीस श्रीसधुरा.............? .... ऊगणतीस पपाचुताचकदना ज्णो, तीस मोहणीथानका वराजणारा, एगतीसे गुयरां ? गुण न्णा, बतीसे जोगना जाणा, तेताची आसताना वरजणहार, चोतीसे अतीसेरा प्ररूपक, पतीसे वणी गुणधरका, चंछतीसे चुरी वरा गुणे वीराजमान आतीदी सकल सुभोपमा वीराजमांने ओनेक ऊपमा.... चकलाभटरकां श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्री १०८ श्रीश्रीश्रीजी[ज]णंगदसुरीसराजी चारणोजीवी चरणकमलई- श्रीधानरावीनगरसु चरयोमृतो रामचंद सृ देलतरांम, सृ तो कमा, ऊतमचंद, खेतसी० सृ० भरवदसी, सृ केनो, सृ ऊदेरमा, सृ खुमचंद, सृ मीअचंद, सृ० -- खो -- चंदर - ग, सृ चुत्ररा-जी, सृ हुकमा सू खु-सलां समाचता संगा ल्खवतु वंदणा १०८ व्ररा आवधरासीजी । अठा रा स्मचारा भल छे श्रीपुज रा सदा अरगा स्हा[ही]जेजी । श्रीनी मोटा छै. वला छैजी । श्री म्हावीरजी रा जतारा करावा पाधारसीजी । श्रीपुजा रा मलसे वदवसी सो वदसी सो दनो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वदनो चोना रूपारो वसीजी । संगा ऊपरे करवा मोरवानी राखेसं जणोसु वसेष रांखवसीजी । श्रीसुदवीजे ही चोमचा राही गणो अणदी ग्ररमाना ज्णो ग्ररमांकरा गणी ऊनती वुहीजी । ओक चमोसो करो लवावसीजी दो सृ मीअचंद खरताव्रता रा छे संघ री वनती सुफ्ल? करावसी? तथा तत्रत्य पं. हेमविजय ग., पं. दांनविजय ग., पं. राजेंद्रविजय ग., पं. मांणिक्यविजय ग., पं. दोंलतविजय ग., पं. रांमविजय ग., पं. विद्याविजय ग., पं. जीतसागर ग., पं. फ्तेविजय ग., पं. मोहनविजय ग., पं. रांमविजय ग., प्रमुख समस्त श्रीश्रीजीना सपरिवारनें वंदणा केहवी ।

अत्रत्य पं. सुंदरविजय ग., पं. मुक्तिविजय ग., पं. राजेंद्रविजय ग., पं. दोलतविजय ग., पं. रामविजय ग., पं. गौतमविजय ग. प्रमुखठांणुं १३नी वंदणा १०० वार अवधारजोजी । परं पं. रोमसागर ग., पं. राघवसागर ग. नी वंदणा अवधारसीजी ।

दोहा

संघ समस्त इहां थकी, लिखें लेख श्रीकार,
त्रिविध त्रिविध करें वंदणा, अवधारौं गणधार. १
कुशल खेम इन छौंर हैं, चाहीजैं तुम चैंन,
ते दिन सफ्लो होय जे, दिन देखेस्यां तुम नेंन. २
निराबाध सुख लख तणां, श्रीजीना सुखकार,
समाचार श्रीसंघनें, देज्यों धरि(री) मन प्यार. ३
जिम इहां संघ समस्तनें, ऊपजै अधिक आणंद,
पूज्य तणां परभावसूं, नित नित है सुखकंद. ४
संघ सकल कर जोडनें, एम करै अरदास,
पंडधारो श्रीपूज्यजी, चतुर इहां चौंमास. ५
सकल संघनी वीनती, मन आंण महाराज,
घांणोरै पधारीइं, जिम हुइ वंछित काज. ६

॥ देशी - हंजामारू घडी एक रहो झोंकार हो - ए ढाल ॥

श्रीगच्छनायक गुणनि(नी)लों गुरु म्हारों, गुणग्राहक गुणवंत हो,
भविक जीव प्रतिबोधवा '' , साचों उपशमवंत हो.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हार रों हीरौं म्हांरों, पदम नगीनो म्हारों सदगुरु गुरु म्हारों, परतिख पूरण
– आस हो [टेक]

संघ समस्त इहां थकी गुरु म्हारों, लेख लिखें श्रीकार हो,
त्रिविध त्रिविध करै वंदणा '' , अवधारौं गणधार हो. २
हार रो हीरो.....

श्रीजीना सुपसायथी गुरु म्हारों, छै ां कुशल कल्याण हो,
श्रीश्रीसाहिबजी तणां '' , चाहीनै सुख सुविहांण हो. ३
हार रो हीरो.....

धन्य जे तुम दरसण करै गुरु म्हारों, सदय ऊगमतौं सूर हो,
ते नर सुखसंपति लहै '' '' , नित नित वधतै नूर हो. ४
हार रो हीरो.....

जे जन तुम वांणी गुरु म्हारों, फरसें प्रभूना पाय हो,
जे पडिलाभै भावसूं '' '' , धन्य ते जन कहिवाय हो. ५
हार रो हीरो.....

जलधर जिम गुरु मांहरों गुरु म्हारों, वरसै अमृतवांण हो,
समकिततरुवर सींचतो '' '', नवरस नदीयां निचांण हो. ६
हार रो हीरो.....

अवर सूरी(रि) तुझ अंतरो गुरु म्हारों, जेतों सरसव मेर हो,
आंध अने वली अर्कनों '' '' , केल किहां कंथेर हो. ७
हार रो हीरो.....

क्रोधादिक कानें कीया गुरु म्हारों, मदन मनाव्यो आंण हो,
मोह महीपति जीतीयों '' '', तुं साचों सुलतांन हो. ८
हार रो हीरो.....

चंद्र परै चढती कला गुरु म्हारों, करुणासिंधु क्रपाल हो,
मनमें हूंस अछे घणी '' '', देखण गुर दयाल हो. ९
हार रो हीरो.....

तुम दरसण अम वल्लहो गुरु म्हारों, घन चातुक भव गंग हो,
कुमुदबंधवनें कमोदनी '' '', पत्रीनें जेम पतंग हो. १०
हार रो हीरो.....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्यां स्यूं गछपति मोहीया गुरु म्हारों, मूंक्या अमनें वीसार हो,
घांणोरा नगर पधारीइं '' '', वंदावण इणवार हो. ११
हार रो हीरो.....

धर्मध्यांन इहां किण घणा गुरु म्हारों, नित नित नवलै नेह हो,
ओछव महोच्छव अभिनवा '' '' , केहैतां नावै छेह हो. १२
हार रो हीरो.....

सुगुरु सुदेव सुधर्मना गुरु म्हारों, रागी सहू नरनार हो,
श्रावक इहां नित साधता '' '', धर्मना च्यार प्रकार हो. १३
हार रो हीरो.....

छठ अठम दस पनरना गुरु म्हारों, मासखमण तपनेम हो,
ते थास्यै इहां किण घणां '' '', उपधानविधि ध्रमनेम हो. १४
हार रो हीरो.....

परब पजूषण पारणै गुरु म्हारों, सांहमीवच्छल सार हो,
पोसह पडिकमणा तणौ '' '', वधस्यै प्रेम अपार हो. १५
हार रो हीरो.....

आदरस्यें भवियण घणां गुरु म्हारों, समकित अणुव्रतनेम हो,
जिनहर जिनपूजा तणों '' '', उदय थस्यै रवि जेम हो. १६
हार रो हीरो.....

मालमहोच्छव पामीइ गुरु म्हारों, खरचस्यें जन बहु आथ हो,
लाभ घणों तुमनें हुस्यै '' '', इहां आयां गछनाथ हो. १७
हार रो हीरो.....

प्रगट इहां पंचतीरथी गुरु म्हारों, सुरधट सुरगवी तुल्य हो,
जगत-जनेता जगतमें '' '', चिंतामणिसूं अमूल्य हो. १८
हार रो हीरो.....

रम्यक **राणकपुर** भलों गुरु म्हारों, **पदमप्रभू नाडूल** हो,
घांणोरै वीर जादवों '' '', **श्रीवरकांणों** अमूल हो. १९
हार रो हीरो.....

ने जिनवर प्रणमंतडा गुरु म्हारों, भव जाइ सह(हु) भाज हो,
ध्यांन धर्या नित तेहनों '' '', पामीइ शिवपदराज हो. २०
हार रो हीरो.....

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दरसण तेहनों देखवा गुरु म्हारों, वली अम पावन काज हो,
पाउधारेज्यो पूज्यजी " ", गिरुआ गुण गछराज हो. २१
हार रो हीरो.....

विजयधर्मसूरिपाटवी गुरु म्हारों, **विजयजिनेंद्रसूरीस** हो,
चिरं जीवों कहें **मुक्तिनो** ", **गौतम** द्यै आसीस हो. २२
हार रो हीरो.....

॥ अथ काव्य ॥

हंसा स्मरन्ति सततं मनसा यथैव, श्रीमानसं वनगजा वरनर्मदाया(:) ।
तीरं च निर्मलधियां(यो) मुनयो मनोज्ञा(:), तद्वत् स्मरामि भवतां गुणरत्नराशिम्
॥१॥

यथा स्मरन्ति(ति) गो(गौः)वत्सं, चक्रवाकी दिवाकरम् ।
सती स्मरति भर्त्तारं, तथाऽहं तव दर्शन(म्) ॥२॥
गयणांगण कागल करूं, लेखण करूं वनराय,
सायर करूं मसी तणां, तो हि तुम गुण लिख्या न जाय. ३
अरधनांम नृपद्वारको, धुर कागलकौ तात,
जब होवेंगे रावरे, तब सुख पामे गात. ४

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२३)

जोधपुर श्रीसङ्घनो, अमदावाद-पं. रूपविजयजीने विज्ञप्तिपत्र (सचित्र)

– सं. मुनि सुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजय

प्रस्तुत पत्र अमदावाद बिराजमान पं. रूपविजयजी म.सा.ने जोधपुरना श्रीसङ्घे चातुर्मास विनन्ति रूपे पाठव्यो छे. पत्र सचित्र छे. अन्य पत्रोमां जोवा मळतां चित्रो करतां सिद्धार्थ राजा द्वारा स्वप्नफलपृच्छानुं चित्र, जोधपुरना जैन-जैनेतर मन्दिरनुं चित्र, जोधपुरनरेश मानसिंघ महाराजानुं चित्र तेमज व्याख्यान प्रसङ्गे मुहपत्ति बांधवानी तत्कालीन परम्परानुं चित्र विशेष उल्लेखनीय छे. पत्रालेखननी शरुआतमां पार्श्वनाथ प्रभुने नमस्कार करवापूर्वक २७ मुनिगुणनी वर्णना द्वारा थाय छे. त्यार पछीनो बीजो घणो भाग पण गुरुगुणस्तवनारूपे ज लखायो छे. पछी पांच पद्योमां गुरुउपदेशनुं वर्णन करी फरी पद्य-गद्य स्वरूपे गुरुगुणालेखन थयेलुं जोवा मळे छे. श्रीसङ्घनी वन्दना जणावी जोधपुर पधारवानी विनन्तिनो तेमज कुंवरविजयजीनो चातुर्मासिक आराधनानो चितार त्यारपछीना लखाणमां जोवा मळे छे. पूज्यश्रीने 'दम' रोगमां शाता रहे ते उद्देशथी पूज्यश्रीने बेसवा माटे म्याना अंगेनी नोंध श्रावकोनी गुरुभगवन्त माटेनी समर्पितता सूचवे छे. ते ज रीते केशरीचंद सोझितवालानी नोंध श्रावकोनी श्रुतपिपासा जणावे छे. पत्रान्ते नामोल्लेख साथे श्रावकोए वन्दनादि जणाव्या छे.

प्रस्तुत पत्रनी Photocopy सम्पादनार्थे आपवा बदल प.पू.आ.श्री विजयरत्नचन्द्रसूरि म.सा. नो तेमज प.पू.आ.श्री विजयनररत्नसूरि म.सा.नो खूब खूब आभार.*

* * *

स्वस्ती श्रीपार्श्वजीन प्रणम्य श्रीराजनगरे अनेकओपमालायक, पुज्य परमपुज,

---

* २०५७मां अमदावाद मुकामे पू. रामसूरीश्वरजी म.सा.नी निश्रामां केटलाक मुनिवरोनुं मिलन थयुं त्यारे डहेलाना ज्ञानभण्डारना प्रस्तुत पत्रनी Photo Copy प्रायः उपस्थित तमाम वरिष्ठ आचार्यभगवन्तोने अपाई हती.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सर्व समे सावधांन, परमपवित्र, चारित्रपात्रचुरामणी, सरस्वतीकंठआभरणं, वाचां अविचल, मिथ्यात्वतीमरहरणं, संसारसमुद्रतरणतारणं, भविजीव-सुखकारणं, समकितदायक, मोहतिमरहरणदिनमणी, भविजीवसंसेंवारक, सुध वांणी प्रकासक, स्व-पर विवेचणकारक, एक विधी असंजमरा टालक, दुविध धर्मना परूपक, तीन तत्वारा धारक, च्यार कषायना जीपक, पंच माहाव्रतना पालक, छ कायना रख्यक, सप्त भयना नीवारक, अष्ट मदना जीपक, नव वाडी विसुध [ब्रह्मचर्य]ना पालक, दशविधी जतीधर्मना धारक, इग्यारे अंगना जांणक, बार उपंगना परूपक, तेर काठीयाना जीपक, चउद विद्याना जांणक, पनर भेदे सीधना कथक, [सोल?], सतरे भेदे संजमरा पालक, अढार सेहस सीलंगरथना धारक, उगणीस ग्नाता अधेनना परूपक, विस असमाधी दोषना टालक, ईकविस श्रावकगुणना परूपक, बावीस परिसाना जीपक, तेविस पंचद्रीना वीषेना जीपक, चोविस जीन आग्याना पालक, पचवीस मुनीभावनाना भावक, छविस कल्पाध्येनना परूपक, सताविस साधुगुणना पालक, सासनना सोभावक, गछना नायक, संवेगगुणधारक, सुद्धमारगदायक, अंतरतत्त्वधारक, स्वदया-परदया-पालक, वडी वडी ओपमालायक, स्व-परप्रकासक, तत्त्वातत्त्वरूप अनेक मारगना जांणक, नयसंजुत्त नीखेपाना परूपक, अंतर-उपयोगी, ग्यान-चरचा कारक, निहचे-विवहाररूप सुध मारगना धारक, जीव अजीव रूप नव तत्त्व, षट द्रव्यना परूपक, स्याद्वादरूप अनेकता नये करि सुध मारगना दायक, द्रव्य-भावरूप चरचाकारक, ढुंढमत्त(त)नीवारक, अंतरंग-उपयोगरूप साध एक साधन अनेक ईण रिते सुध मार्गना परूपक, सप्त भंगीये करि सर्व वस्तु पदार्थना जांणणहार, नव नीयांणाना टालणहार, आत्मतत्त्वना रसीया, अनुभवरूप अमृतकुंडमें झीलता, सुध उपयोगी, त्यागी, वैरागी, च्यार गतीरूप संसारसु उदासी, स्वतत्त्वना रसीया, परतत्त्वसु विरक्तभाव, सर्व समे सावधांन, परमतना मद गालवानें गंधहस्ती समांन, विषे-कषायरूप बलतरने टालवा चंद्रमानी परे सीतलना करणहार, मीथ्यात्वरूप तीमरने टालवाने सूर्यने परे उद्योतना करणहार, सारणा-वारणारूप शीखस्याना दातार, कलिकालमे सर्वगनसिरोमणी, अंतरद्रष्टीगोचर, विवहारक्रीया, नीश्चै-विवहाररूप दयाना पालक, कारण-कार्जरूप धर्मना बतावणहार, समताना सागर, गुणना आगर, नीसचे-विवहाररूप नीत्यअनीत्यादि आठ पक्ष्ये करि आत्मतत्त्वना रसीया, द्रव्य-गुण-प्रजायरूप,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समे समे उतपात्-वयना जांण, उतसर्ग-अपवादरूप सुध मार्गना चालणहार, द्रव्य-खेत्र-काल-भावरूप चोभंगीये करि नवतत्त्व षट्द्रव्यना जाण, हेय-ग्नेय-उपादेरूप सर्व वस्तुना पदार्थना जांणणहार, षट् कारकरू तत्त्वातत्त्वना जांण, पंच समवायंगरूप अनेक वस्तुना जांण, नईगमादी सात न, अठावीस उपनय, सातसे भांगे करी सर्व सब्दना जांण,

दुहा

सुण प्रांणी मन लायके, चेत चेत चित्त चेत,
समज समज गुरुको सबद, ईह तेरो हित हेत. १
सुख सारु समजै सबद, समज न भुलेइं रंच,
तु मुरत नारायणी, उवे तो खग तीर्जंच. २
हुइ तुहैरि जगतमे, घटकी आंखे खोल,
तुला संवार विवेककी, सबद जुहायर तोल. ३
सबद जुहवैरी सबद गुरु, सबद-ब्रमको खोंज,
सब[द]गु नगर भित सबदमइ, समझ सबदको चोज ४
समज सके तो समज अब, हे दुरलभ नरदेह,
फिर एह संगत कब मिले, तु चातुरक हु मेह. ५

एणी रीते अनेक प्रकारे भव प्रांणीने देशना दैइ संसारसमुद्रथकी तारणहार ।

दुहा

जीम वरसे विरषा समय, मेह अखंडीत धारा,
तीम सदगुरु वांणी खरै, जगतजीवना हितकारा. ६

श्लोक

जिणेंद्रप्रणी(णि)ध्या(धा)नेन, गुरूणं(णां) च वन्दनं चैव ।
नीच्चचिष्ट(?) चीरं पापं, छीद्रहस्तो(स्ते) ज(य)थोदकम्. ७
पांच वरत धरे सदा, संजम सत्तर प्रकार,
ब्रमचरिज नव वारसु, दश जतीधरम उदार. ८
तप द्वादश भेदे करे, दश वइयावच त्रीण तत्त्व,
जीत्ते क्रोधादीक चउ, ए चरण-सीत्तरी सत्व. ९
पांच सुमती बारें भावना, यम्यादीक चउ जेह,
पंचविश परलेहण सदा, त्रण गुपती धरे नेह. १०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रूधें इंद्री पांचने, द्वादश पडीमा सार,
अभिग्रह च्यारने आदरे, ए करण-सीत्तरी सार. ११

एणी रीते चरण-सीत्तरी करण-सीत्तरीने गुणे करि विराजमांन, समताना सागर, गुणना आगर एहवा साधु मुनीराज अनेक ओपमा लायक, भवदुखवारक, शीवसुखकारक, पुज, पंडितशिरोमणी, पुज पन्यासजी श्रीश्रीश्रीश्रीश्री ५ **श्रीरूपविजेजी** गणी, गीतारथ, सर्व प्रकार समसत्त, चरणजीवे, श्री**जोधपुर**गढ माहादुरगेसु लीखतु **सिघवी फोजराज गुलराज**जीनी वनणा १०८ वार दीन प्रते अवधारसी । इहां गुरजी सायबने प्रत्तापें करी सुख-साता छे. आपनी सुख-साताना पत्र घडी-घडीना पल-पलना लीखावसी और आपने वांदण री मनमें अभीलाषा घणी रहे छे सो आप क्रीपा करी एक वार श्रीजोधपुर पधारसी, सो आपने वांदसु नै आपारी वांणी सुणसु सो दीन लेखै हुसी । सो आप क्रीपा करी जरूर पधारसी । और आपारा शीष मुनि **कुवरविजे**जी श्रीजोधपुर चोमासो कर्यो छे तिणसु धरमारो मेहमा घणो वध्यो छे. घणा लोक मारगे आव्या छे. धरम-चरचा वखांण वांणी दीन प्रत्ते विशेष विशेष हुवै छै. तीणनी कीसी वातनी चींता रखावसी नही. और वखांणे **समकीत्तसीत्तरी** तथा **गोतमकुलक** माहाराज श्री**पद्मविजे**जी क्रत वंचाए छे सो जाणसी. और आपने शरीरे दमनो उठाव रहेवो करे छे. तिणसु आपने बेशवाने काजे म्यांनो १ सा० **कुसलचंदजी वीरजी वछराज पाटणवाला** तीणनी लारे मेल्यो छै ते पोतो लीखावसी । ओर हरकोइ कोम-काज मा[रा]लायक हुवे सो क्रीपा कर लीखावसी । ओर श्रीदेवजात्राए, रूडे अवंशरे संभारसी और समसत श्रावक श्रावकावांने मारा प्रणांम वंचावसी ।

दसक्त मु ॥ **केशरीचंद सोझतवाला**नी १०८ वार वनणा अवधारसी । ओर हु अठे कुवरवीजेजीसानें वांदवा आयो सु. सवारे पाछो पाली जावसु सो क्रीपा सुदीसष्ट रखावे तिण सुविसेष कर रखावसी । ओर आखर उच-नीच-ओछो-अधको कोंना मात्रनी तथा दुजी ओपमा लीखणमे भुल पडी हुवे तेनो गुनो तकशीर माफ करावसी । ओर प्रस्ननो पोनो १ जुदो उत्तारिने इण कागदमें बीडीयो छे तेना उत्तर पाछो विचारिने ताकीदसु लीखावसी । संवत् १८८२ना आसोज वद १३ शिष्य कुयरविजैनी वंदना दिन प्रते १०८ वार करि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवधारजोजी अने गोतमकुलकनी परत लखांणि होय तो ताकीदसु मेलि देजो
श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्री

- लीखतग छइ मुतो चंद ...... वली २ वनणदन पर८ १०८ वर कर अवधारसी । अप करप करन जधपुर वेग पधारसी ।
- **सिंग० मांणकचंद** री वनणा १०८ वार दीन प्रतें अवधारसी नै आप कीरपा करनै जोधउर वैगा पधारसी । [आ पछी आवी ज रीते अन्यान्य श्रावको द्वारा वन्दना ने विनन्ति करवामां आवी छे.]

—*—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२४)

मकसूदाबाद (बंगाल) स्थित आचार्यश्रीजिनसौभाग्यसूरिजीने श्रीबीकानेर जैन (बृहत्खरतरगणीय) संघनी चातुर्मासार्थे विज्ञप्ति

– सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय

पत्रना आरम्भे मंगलरूपे पांच भगवाननी २-२ श्लोकोथी स्तुति, गौतमस्वामिस्तुति, वाग्देवीस्तुति, अने जिनदत्तसूरि तथा जिनकुशलसूरिनी स्तुति छे.

ते पछी **बंगालदेश**नुं वर्णन तथा **मकसूदाबाद** नगरनुं वर्णन संस्कृतभाषामां करवापूर्वक गुरुभगवन्तनुं अनेक विशेषणोथी संस्कृत भाषामां वर्णन कर्युं छे. वच्चे गुरुना छत्रीस गुणो कया होय ते निर्देशता प्राकृत भाषामां चार श्लोको पण मूक्या छे. ते पछी गुरुभगवन्तनुं वर्णन प्राकृत भाषामां कर्युं छे. आगळ, एकथी मांडी छत्रीस प्रकारे गुरुभगवन्तनी स्तवना, अने ते पछी पण जुदां जुदां अनेक विशेषणो द्वारा गुजराती भाषामां तेमनुं वर्णन करवापूर्वक आचार्यभगवन्त **श्रीजिनसौभाग्यसूरि** महाराजने **बीकानेर**ना **श्रीबृहत्खरतरगणीय** संघे वन्दना अने विज्ञप्ति करी छे. गुरुभगवन्त तरफथी पत्र मळ्यो छे ते बदल आनन्द व्यक्त कर्यो छे अने तेमनी निश्रामां थयेल धर्मकार्योनी अनुमोदना करी छे. ते पछी गुरुभगवन्त ज्यां विचरे छे ते पूर्व देशनी धन्यता वर्णवी छे.

ते पछी गुरुभगवन्तने बीकानेर पधारवा अने चातुर्मास करवा माटे आग्रहभरी विनंति करवामां आवी छे, अने प्रत्युत्तर आपवा माटे पण विनंति करी छे. त्यारबाद, साथे रहेल पदस्थ भगवन्तो तथा अन्य साधु भगवन्तोने वन्दना करी ४ श्लोकथी पत्रनी समाप्ति करी छे. पत्रनी भाषा संस्कृत छे. पत्रलेखन संवत् १८९८ना मागशर वद १३ना थयुं छे. भाषा शुद्धि तथा लेखन शुद्धि सारी छे.

ते पछी राजस्थानी भाषामां, गुरुभगवन्तने **बीकानेर** पधारवा माटेनां बे विनंति-गीतो लखवामां आव्या छे.

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीसिद्धचक्राय नमः ॥

अर्हन्तो भगवन्त० ॥१॥ शार्दूलविक्रीडितच्छन्दः ॥

सद्भक्त्या नतमौलि० ॥२॥ शार्दूलविक्रीडितच्छन्दः ॥

विपुलनिर्मलकीर्ति० ॥३॥ द्रुतविलम्बित० ॥

शिवसुखपरिदायि० ॥४॥ पुष्पिताग्रा ॥

कराररिनतो० ॥५॥ तोटकच्छन्दः ॥

दूरीकृत्वा० ॥६॥ जलधरमाला ॥

स्वस्तिश्रीजयकारकं० ॥७॥ शार्दूलविक्रीडितच्छन्दः ॥

श्रीशान्तिः कुशलं ददातु भविनां शान्ति श्रिताः सर्वके,
ध्मातः शान्तिजिनेन कर्मनिचयो नित्यं नमः शान्तये ।
शान्तेः शान्तिसुखं गता चमरिका शान्तेस्तथा शान्तता,
शान्तौ सर्वगुणाः सदा सुरतरुः **श्रीशान्तिनाथो** जिनः ॥८॥

विहितसंवरभावजगज्जनं, नर-सुरेश्वरसेवितपत्कजम् ।
प्रवरराजिमतीहितकारकं, नमत **नेमिजिनं** भवतारकम् ॥९॥ द्रुत० ॥

प्रवरनिर्मलधर्मविबोधकं, भुवनदुष्कृततापविशोधकम् ।
ज्वलदहेः परमेष्टसुखप्रदं, श्रयत **पार्श्व**जिनं शिवकारकम् ॥१०॥ द्रुत० ॥

सदेवेन्द्रैः पूज्यो अ(ह्य)तिशयविभूत्या पुनरपि,
तपस्तीव्रं तप्तं क्षपितभवदाहः शमतया ।
बहूनां भव्यानां जनितजिनधर्मो भवहरः,
महावीरो देवो जयतु जितरागो जिनपतिः ॥११॥ शिखरिणी ॥

सर्वाभीष्टवरप्रदान० ॥१२॥ शार्दूल० ॥

वन्दिता सर्वदेवैः सा० ॥१३॥

अम्बोद्धासियुगप्रधानपदवीविभ्राजमानः पुनः,
ज्योतिर्व्यन्तरदेवनागसुसुरैः संसेवितो यः सदा ।
आप्तोक्तिं स्मरता सजैनसुकुलाः लक्षीकृताः श्रावकाः,
भूयात् **श्रीजिनदत्तसूरि**गणभृत् सर्वार्थकल्पद्रुमः ॥८॥ शार्दूल० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूरिः **श्रीजिनकुशलः**, क्षितितललब्धोदग्रयशःप्रसरो(रः) ।
सेव्यः सैव गुरुभक्त्या, कुशलकृत् किमन्यदेवेन? ॥९॥ आर्या ॥
एते सर्वेऽपि देवेशाः, मङ्गल-क्षेमकारकाः ।
भवन्तु श्रीजिना नित्यं, विघ्नव्यूहप्रणाशकाः ॥१०॥
प्रणम्यैतान् पदान् सर्वान्, हृदि ध्यात्वा निजं गुरुम् ।
सश्रीकान् परया भक्त्या, लेखपत्रे(त्रं?) हि लिख्यते ॥११॥

प्रतिपदवनग्रामराजिते ऋद्धिवृद्धिकृतनिवासे अनेकग्राम-अकब्बराबाद-प्रयाग-वाराणसी-पाटलीपुत्र-चम्पादिनगर-खेट-कर्बट-मडम्बपत्तनादिवभूषिते पूर्वमण्डले सर्वसम्पन्निवासे निश्शेषविलासनिलये विश्वसद्व्यवहारगृहे धर्मकर्मधाम्नि समग्रा-श्चर्यनिकेतने अतिविस्तीर्णे **बङ्गालाभिधानदेशे**, वसुधाकामिनीशिरस्तिलकभूते चातुर्वर्ण्यविभूषिते निजनिजधर्मकर्मरते विविधशास्त्रविचक्षणविबुधाश्रिते सौराज्य-सुखितसमग्रलोके विविधदेशीयवणिग्जनविहितव्यापारे श्रीमति **मकसूदाबादनगरे**, तत्र संस्थितान् सत्त्ववत्प्रथमान् समग्रसम्पत्पात्रान् बुद्धिसरिताजलधीन् विश्वविहित-बहुविस्मयान् श्रीपूज्याराध्यध्येयसुगृहीतनामधेयपरमामेयभागधेयान् अनन्यजन्य-सौजन्यवर्य-धैर्यौदार्य-सत्य-शील-सन्तोषाद्यनेकप्रगुणगुणमणिरोहणभूधरान् श्रीसर्वज्ञो-पदिष्टविशिष्टश्रीसिद्धान्तसूक्ष्मविचारसारप्ररूपणाप्रवीणमतिधरान् प्रवर्त्तमानसमयानुसारिशुद्धक्रियाकलापकरणसावधानान् सरसेक्षुरस-द्राक्षाखण्ड-पीयूषयूषसदृशमधुर-जिनवचनविलाससम्प्रीणितश्रोतृजनस्तूयमानान् साहित्य-च्छन्दोऽलङ्कार-कर्कशतर्क-वितर्ककठिनकुठारप्रहारभिन्नवावदूकवृन्ददारुप्रसरान् रचितचतुरचित्तहर्षप्रपञ्चित-वैराग्यसोत्कर्षसुधादेश्यदेशनादर्शितसदाचारान् गोक्षीर-हीर-मुक्ताफलहार-चन्द्रमण्डलसमुज्ज्वलयशोभरान् प्रोत्तुङ्गपञ्चमेरुमहीधरायमाण-पञ्चमहाव्रतभारसमुद्धरणधीरान् बृहत्श्रीवर्धमानविद्याख्यानध्यानविधानदूरीकृत-दुष्टकृतोपद्रवान् क्षमा-मार्दवार्जवादिसुसाधुगुणश्रेणिप्रतनूकृतभवान् प्रवर्धमानप्रतिष्ठान् निर्विरोधिजनशिष्टान् सप्तनयोद्दीपिताईन्मधुरवाक्यान् सप्तभङ्गस्याद्वादाष्टपक्षनिर्जित-कुमतिमतान् निजधिषणाविडम्बितत्रिदशेन्द्रगुर्वभिमानान् श्रीमज्जैनेन्द्रपट्टोदयाचलप्रभा-सनध्वान्तारातीन् षड्द्रव्यगुण-पर्यायस्वभावविचारामृतपयोधीन् ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तपो-वीर्यपञ्चाचारपालन-विदग्धान् दुष्कर्ममहीधरपक्षच्छेदनेन्द्रायुधोपमान् जीव-पुद्गलक्षीरनीरविवेचन-राजहंसान् सद्धर्मवाणीप्रोष्ठपदमेघगर्जितहर्षितभव्यशिखण्डिनः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गाम्भीर्यगुणतिरस्कृत-चरमजलधीन् प्रशान्तहृदयान् क्षमा-दया-शील-सन्तोषप्रमुख-गुणगणारामान् स्वरूप-श्रीअधरीकृतकामान् षट्त्रिंशदुत्तमनिजगुणभूषितगात्रान् तथाहि —

"देस-कुल-जाइ-रूवी, संघयण-धिइजुओ अणासंसी ।
अविकत्थणो अमाई, थिरपरिवाडी गहियवक्को ॥१॥
जियपरिसो जियनिद्दो, मज्झत्थो देस-काल-भावण्णू ।
आसन्नलद्धपइभो, णाणाविहदेसभासण्णू ॥२॥
पंचविहे आयारे, जुत्तो सुत्तत्थतदुभयविहिन्नू ।
आहरण-हेउ-उवणय-नयनिउणो गाहणाकुसलो ॥३॥
ससमय-परसमयविऊ, गंभीरो दित्त(त्ति)मं सिवो सोमो ।
गुणसयकलिओ एसो, पवयणउवएसओ य गुरू ॥४॥"

जातिसंपण्णा, कुलसंपण्णा, बलसंपण्णा, रूवसंपण्णा, विणयसंपण्णा, णाणसंपण्णा, दंसणसंपण्णा, चरित्तसंपण्णा, लज्जासंपण्णा, लाघवसंपण्णा, मिउ-मद्दवसंपण्णा, पगइभद्दया, पगइविणीया, ओयंसी, तेयंसी, वच्चंसी, जसंसी, जियकोहा, जियमाणा, जियमाया, जियलोहा, जियणिद्दा, जिंतिंदिया, जियपरीसहा, जीवियास-मरणभयविप्पमुक्का, उग्गतवा, दित्ततवा, घोरतवा, घोरबंभचेरवासिणो, बहुस्सुया, पंचसमिईहिं समिया, तीहिं गुत्तीहिं गुत्ता, अकिंचणा, निम्ममा, निरहंकारा, पुक्करं(पुक्खरपत्तं) व अलेवा, संखो इव निरंजणा, गयणं व निरासया, वाउ व्व अप्पडिबद्धा, कुम्मो इव गुत्तेंदिया, विहंगु व्व विप्पमुक्का, भारंडु व्व अप्पमत्ता, धरित्ति व्व सव्वंसहा, जिणवयणोवदेसणाकुसला, एगंतपरोव-यारनिरया, श्रीपूज्य परमपूज्य, एकविध श्रीजिनाज्ञाप्रतिपालक..... छत्तीस भेदें आचार्यना गुण धारक, परमपवित्रगात्र, सच्चारित्रपात्र, चन्द्रकुलदीपक, कुमतिवादिजीपक, परमकृपाल, वचनरसाल, सर्वजीवदयाप्रतिपालक, सेवकजनसुख-कारक, भव्यजीवप्रतिबोधक, भवदुःकृततापविशोधक, अमृतवांणि, तपतेजभांण, करुणाभण्डार, अभयदानदातार, श्रीसंघउपगारी, श्रीजिनशासनोन्नतिकारी, गुणगणज्येष्ठ, सकलमुनिश्रेष्ठ, संसारसमुद्रतारक, दुरगतिनिवारक, गच्छभारधुरन्धर, सकलसूरिपुरन्दर, भव्यलोकरञ्जक, भवदुःखभञ्जक, तरणतारणप्रवहणसमांन, श्रीश्रुतरत्ननिधान, परमचित्तउदार, **श्रीखरतरगच्छ**सिणगार, सकलगुणसागर,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मबुद्धिआगर, सागरनी परि गम्भीर, मेरुनी परि धीर, पूज्यप्रधांन, बुद्धिनिधांन, नवकल्पीविहारअङ्गीकृत, पुण्यपीयूषसरसंयमभृत, सकलकलाजांण, नरनारी कीधा वखांण, चरणसेवकसुखदातार, सुमतिविस्तार, महाकवीश्वर, वाणीसुधाकर, चन्द्रमानी परि सोमवन्त, सूर्यनी परि तेजवन्त, खेसव्या कुमतीक्षुद्र, समतासुधा-समुद्र, मिथ्यात्वकन्दनिकन्दन, प्रकृतिस्वभावचन्दन, परमतपस्वी, परमपवित्र, परमपण्डित, परमहितकारक, महामुनीश्वर, महासौभाग्यवन्त, दिन दिन अधिकप्रताप, परमउपगारी, परमगुरु, परमधुरन्धर, वाचाअविचल, जंगमयुगप्रधान, भट्टारकप्रभु-भट्टारक श्रीश्रीश्री १००८ श्रीश्रीश्रीश्री **जिनसौभाग्यसूरिजित्**सूरीश्वरान् सकलपाठक-वाचक-गणि-मुनिराजहंससंसेव्यमानचरणकमलान् **श्रीबीकानेर**तः श्रीमद्**बृहदत्खरतरगणीयः** समस्तश्रीसङ्घः शिरो नामं नामं वन्दते सहर्षं सविनयं त्रिसन्ध्यं, पत्रद्वारा विज्ञप्तिकां विज्ञपयति च; भावुकभरमत्र श्रीमज्जिनधर्मप्रसक्तेः, तत्राऽपि श्रीपूज्यानां सदा सुखं समीहामहे ।

अपरं च, श्रीजितां सुवर्णवर्णाकीर्णं कृपापर्णं पुराऽऽगतं, तन्मध्ये लिखितं - वयं **मकसूदाबाद**नगरं सम्प्राप्ताः, अत्रस्थैः श्रावकैरपि महताऽऽडम्बरेण प्रवेशोत्सवो विहितः । तदनु श्रीसङ्घेन सार्धं चाऽस्माभिः **श्रीसम्मेतशिखर**तीर्थस्य वारद्वयं यात्रा विहिता - इति लेखं वाचं वाचमानन्दनिर्भरोऽस्मन्मनसि न माति स्म । तथा पुनः भवद्भिः श्रीमद्भिः **श्रीमकसूदाबाद**मलङ्कृत्य **श्रीकलकत्ता-बिन्दर**-गतानां श्रीपूज्यानां चरणाम्बुजस्पर्शेन व्याख्यानादिधर्मोपदेश-दान-शील-तपो-भावनादिक्रियाकलापकरण-कारापणेन बहुभव्यजीवानां भूरिबोधिलाभोऽभूत्-इत्यादीदृगुदन्तश्रवणात् सकलश्रीसङ्घस्याऽतिशयित आनन्दः समजनि । पुनरिति स्वान्ते वितर्कः सञ्जज्ञे - धन्यः पूर्वो देशो यत्र श्रीजितो विहरन्ति, पुनर्धन्यतराः पूर्वधरानराः ये श्रीजितां मुखेन श्रीजिनराजप्रणीतसिद्धान्तार्थामृतरसं कर्णपर्णपुटेन पिबन्तीति ।

अथ चेद् ग्रामानुग्रामं विहरन्तः संसारसागरतो भव्यजीवान् सन्तारयन्तः श्रीमत्पूज्यपादा अत्र समागच्छेयुः तदा तद्दर्शनेन तद्वन्दनेन तदभिगमनेन तद्वचनश्रवणेन च जन्म सफलीक्रियते - इति मनसि मननं विधाय एकत्रीभूय हस्तौ समानीय **श्रीबीकानेरनगरस्य** सर्वः सङ्घः इति विज्ञपयति — प्रभो! **मकसूदाबाद**नगरे चतुर्मासीं स्थित्वाऽत्राऽऽगमनानुग्रहः क्रियतां, दर्शनं दीयतामिति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीमतां पूज्यानां समागमनेनाऽत्र श्रीजिनधर्मोदयो भविष्यत्यतः श्रीसङ्घोपरि महतीं कृपां विधायाऽवश्यं समागन्तव्यं न हि विस्मर्तव्यमित्यलं सद्गुरूणां पुरतः प्रजल्पनेन । तथा च यूयं वरिष्ठाः श्रेष्ठाः सद्गुणगणमणिभूषणालङ्कृताः, [इति युष्माभिः] यादृशो धर्मरागो धर्मस्नेहो विहितः तादृश एव विधेयः किन्तु कदाऽपि न हेय इति भावः ।

अत्रत्य श्रमणोपासकवर्गस्य भवदीयमेवाऽन्वहं स्मरणं वरीवर्त्ति । पुनश्च श्रावकवर्गः श्रीपूज्यजितां घनाघनवद् वाटं पश्यति । ततोऽवश्यं सङ्घः सनाथः कर्तव्य एव किमनेन वारंवारं लिखनेनेति । श्रीमन्तोऽवसरज्ञाः स्वयमेव जानीथ । श्रीसङ्घोचितं कृत्यं लेख्यम् । करुणां कृत्वा प्रतिपत्रं प्रदेयम् (वलमानं दलं द्राग् देयम्) । तथा चैतेषु मासेषु श्रीजितां पत्रमात्रमत्र नाऽऽगतं तत् संस्मर्य प्रेषणीयम् ।

उ. **श्रीआनन्दवल्लभजिद्**गणये, पं. प्र. **श्रीगेयरङ्ग**जिन्मुनये, पं.प्र. **श्रीज्ञानानन्दजित्**प्रमुखसाधुवर्गायाऽस्माकं नतिर्वाच्या ।

सदा सदा कृपा कार्या, कृपा कार्या सदा सदा ।
आगमने कृपां कृत्वा, विज्ञप्तिरवधार्यताम् ॥१॥
समुल्लसतु कल्याणं, कल्याणमनिशं पुनः ।
शासनाधारभूतानां, श्रीजितां मङ्गलावली ॥२॥
संवन्नाग-ग्रहाष्टेन्दु-सङ्ख्ये (१८९८)तु मार्गशीर्षके ।
त्रयोदशीतिथौ कृष्णे, लिखिता हर्षदायिनी ॥३॥
छद्मस्थेषु मतेर्भ्रंशात्, प्रमादः प्रायशो भवेत् ।
अशुद्धमिह वर्णादि, शोध्यं तत् करुणाकरैः ॥४॥

(सहीयो सदगुरु वेगे वधावो - देशी एहनी)

श्रीजिनसौभाग्यसूरी गछपति सोहे वडनूरी हो
सदगुरु बीकानेर पधारो ।
साधु-श्रावक मनचंगै, वीनती लिखी छै मनरंगै हो स० बी० १॥
बीकानेर पधारो सहु संधना कारज सारो हो स० ।
पांच वरस मन हुंसे गछपति रह्या पूरव देसे हो स० बी० २॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बीकांणैजी पधारो अपणौ गुरु क्षेत्र संभारो हो स० ।
मरुधरदेस छे सूधो इहां आवी संघ प्रतिबोधो हो स० ३॥
भवीयण जोवै छै वाट पूज आयां हुवै सहु थाट हो स० ।
गछपतिनौ वडै भावै सहु संघ सदा गुण गावै हो स० ४॥
मिल मिल बाली भोली सहीयरनी आवै टोली हो स० ।
गुरुवन्दनकुं आवै गुंहली करी नित ही वधावै हो स० ५॥
सहु हरखै नरनारी सद्गुरु उपदेस संभारी हो स० ।
हिवै तौ वैगा पधारो गुरु भवीयणनै निसतारो हो स० ६॥
सहु संघ पूरोजी आस्या गुरु गछपतिना गुण गास्यां हो स० ।
गुरु छो गछना राजा वाजै छै जसना वाजा हो स० ७॥
तिण देसै मति राचो गुरुनौ छै उपदेस साचो हो स० ।
पधारो मरुधरदेसै संघ जोवै छै वाट विसेसै हो स० ८॥
गछपति छो महाराजा सारो गुरु सहुना काजा हो स० ।
विनति एह सहु संघनी कवीयणना मुखथी वरणी हो स० ९॥

इति वीनती ॥

श्रीजिनाय नमः ॥

॥ वीरजी दीयै छै देसना रे – ए चालमै ॥

श्रीजिनसौभाग्यसुरिंद जी रे, खरतरगछराजिंद;
सकलकलागुणआगरू जी, प्रतपै तेज दिणंद.... १....
श्रीसौभाग्यसूरीसरू जी... आंकणी ॥
सुमति-गुपतिधर सोभता जी, सूरिसकलसिरदार;
गुण छत्तीस विराजता जी, चरण-करण व्रतधार.... श्रीसौ.... २
पंचाचार पालै भला जी, चौशिष्या अणगार;
च्यार कषाय निवारवा जी, वरजै पाप अढार... श्रीसौ.... ३
ग्यानादिक गुणमणि निधी रे, उपसम रस भण्डार;
जिनमारग उजवालता जी, संयम सतर प्रकार.... श्रीसौ.... ४
रत्नत्रई साधक भला जी, साथे मुनिपरिवार;
त्रिकरण दोष निवारता जी, करता उग्र विहार.... श्रीसौ.... ५

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वदनकमल दीपै भलौ जी, सुन्दर ससि सम भाल;
गजगति चाल सोहामणी रे, वांणी अमिय रसाल.... श्रीसौ०.... ६
धन जननी जिण जनमीया रे, धन्य पिता कुल वंश;
धन्य सुगुरु जिण दीखीया रे, प्रगट्यौ कुल अवतंस... श्रीसौ०.... ७
विचरै सदगुरु जिण दिसै रे, सो दिस गिणीयै धन्न;
प्रह ऊठीनैं नित नमैं रे, सो श्रावक धन धन्न..... श्रीसौ०.... ८
सांभल सदगुरु देशना रे, श्रवणाञ्जलिपुटपांन;
प्रगटै ग्यांन अमन्दता रे, आनन्द अधिक अमांन.... श्रीसौ०.... ९
निज पद प्रभुता सांभली रे, प्रगट्यौ चित्त उमाह;
नयणे सदगुरु निरखीयै रे, करीयै अधिक उच्छाह.... श्रीसौ०.... १०
संघसकल सुभ भावसूं जी, लेख लिख्यौ चित्त लाय;
वहिला पूज पधारज्यो जी, करज्यो संघ सवाय... *श्रीसौ०*... ११
सुगुरु चरणरज फरसतां रे, करस्यां निरमल तन्न;
धरस्यां समकित वासना रे, गिणस्यां आतम धन्न.... श्रीसौ०.... १२
सूहव नार सुहामणी रे, हिलमिल झाकझमाल;
गासी गीत वधामणा रे, भर मुक्ताफल थाल.... श्रीसौ०.... १३
मुनिवर साथे मल्हपता रे, श्रावक सहू समुदाय;
पग पग उच्छव कीजतां रे, पूजजीनै लेस्यां वधाय.... श्रीसौ०.... १४
श्रीजिनहर्ष पटोधरू रे, प्रतपौ जिम जग भांण;
चिर जीवौ गुरु गछपती रे, वरतौ संघ कल्याण... श्रीसौ०.... १५

॥ इति ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(२५)

रतलामथी श्रावक मगनीराम वरमेचाए लखेल नागपुरमां विराजमान श्रीसुखलालजी (सौख्यविजयजी) महाराज उपर विनयपत्रिका (विज्ञप्ति)

— सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय

आ विज्ञप्तिपत्रनी शरुआतमां मंगलरूपे पांच भगवाननी स्तुति, गौतमस्वामीनी स्तुति तथा वाग्देवीनी स्तुति करवामां आवी छे. त्यारबाद **नागपुर (नागौर)** नगरमां बिराजमान गुरुभगवन्त **श्रीसुखलालजी** महाराजने विविध अनेक विशेषणो-पूर्वक वन्दना करवामां आवी छे.

ते पछी गुरुभगवन्तने 'वहेला दर्शन आपो' एवी विनंति करवामां आवी छे, अने छ महिनामां जे अविनय-आशातना थयां होय तेनी क्षमा मागी छे.

त्यारबाद २९ दूहामां गुरुभगवन्तनी स्तुति, वन्दना, पोतानो उद्धार करवानी विनन्ति, पत्रनो जवाब आपवा विनन्ति तथा क्षमापना करी छे, अने साथे ज पत्रनुं समापन कर्युं छे. लेखनी भाषा हिन्दी छे.

आ विज्ञप्तिपत्र **रतलाम** नगरथी श्रावक **श्रीमगनीराम वरमेचाए** लखेल छे. लेखन, संवत् १९४२ना श्रावणमासना कृष्णपक्षनी ... तिथिए रविवारना दिवसे धनिष्ठ नक्षत्रमां प्रातःकाले, थयुं छे. पत्रलेखक **नागपुर**वाला ब्राह्मण **नेनसुख** छे. लेखनस्थल, **रतलाम**मां **जानकीदासना मंदिर** पासे - एम निर्देश्युं छे.

पत्र पूर्ण थया बाद विविध श्रावकोनी हस्ताक्षरपूर्वक वन्दना जणाववामां आवी छे.

—x—

॥ ८०॥ श्रीसिद्धचक्राय नमः ॥ गौतमाय नमः ॥

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः० ॥१॥ शार्दूलविक्रीडितच्छन्दः ॥

सद्भक्त्या नतमौलि० ॥२॥

विपुलनिर्मलकीर्ति० ॥३॥ द्रुतविलम्बितच्छन्दः ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शिवसुखपरिदायि तीव्रकृच्छ्र-शमनपटूदयदक्षमेव येन ।
गिरिवरविशदे च रैवताख्ये, कृतममलं हि तपः स नेमिरव्यात् ॥४॥पुष्पिताग्रा॥
कररारिनतो जिनपप्रथितो, मधुदीपमदोन्मथनप्रवणः ।
शितिदीधितिमोहितनिर्जरपः, स ददातु सुखं प्रभुपार्श्वजिनः ॥५॥ तोटकवृत्तम् ॥
दूरीकृत्वाऽनिमिषपचित्तारेकं, बाल्ये योऽयं जगदधिपो नैतान्तम् ।
छित्त्वा मोहं तत इह लोकव्याप्तं, प्राप्तः सिद्धिं स दिशतु शस्तं वीरः ॥६॥
जलधरमाला ॥

स्वस्तिश्रीजयकारकं जिनवरं कैवल्यलीलाश्रितं,
शुद्धज्ञानसुदानयानप्रकरैर्निस्तीर्णभव्यव्रजम् ।
प्रोल्लासाद्भुतप्रातिहार्यसहितं रागादिविच्छेदकं,
तीर्थेशं प्रथमं नमामि सुतरां श्रीआदिनाथाभिधम् ॥७॥ शार्दूलविक्रीडितम् ॥
सर्वाभीष्टवरप्रदानप्रथमो सल्लब्धसिद्धिस्तत,
आख्येयस्य च सन्ति कामसुदुघा कल्पद्रु-चिन्तामणी ।
ध्यायेद् गौतमनाममन्त्रमनिशं यस्मान्महासिद्धिभाक्,
सर्वारिष्टनिवारको ददतु स श्रीगौतमो वाञ्छितम् ॥८॥
वन्दिता सर्वदेवैः सा, वाग्देवी वरदायिनी ।
यस्याः प्राप्ता जनाः सर्वे, ज्ञाततां पूज्यतां च ये ॥९॥

स्वस्ति पार्श्वजिनं प्रणम्य तत्र श्रीनागपुर नगर सुभ सुथाने पूज्य परमपूज्य सर्वोपमाविराजमांन कलिकालपण्डितज्ञानी, विशेष तत्त्वनां जांण, पञ्चकाव्यपाठी, जिनसासनना थम्भ, स्याद्वादमतिनां प्ररूपक, एकान्त-अनेकान्त उत्सर्ग-अपवादना जांण, सप्तभङ्गीशुद्धविवहारनां प्ररूपक, उग्रक्रियानां करनहार, उग्र तपनां करणहार, धर्मध्यांन-शुक्लध्यांननां ध्यांवनहार, पिण्डस्थ-पदस्थ-रूपस्थ-रूपातीतध्यांननां जांण, शान्त, दान्त, वैरागी, त्यागी, सौभागी, चारित्रपात्रचूडामनी, महावैद्य, महागोप, अरागी, अद्वेषी, अक्रोधी, अमांनी, अमाई, अलोभी, एकविध असंजमना टालक _ _ _ _ _ सत्ताईस साधुगुण सोभित, एवं अनेक उपमा सोभित, परमपूज्य श्रीमहाराजसाहिबजी श्रीश्रीश्री १०८ **श्रीसुखलालजी** महाराजजी कृपासिन्धु, गुणसमुद्र चरणकमलायने **श्रीरतलाम** सेती दासानुदास पायरंजरेणुसमांन सदां आज्ञाकारी **मगनीराम वरमेचा** की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वादशावर्त्त वन्दना १००८ समें समें अवधारजो ।

अठे श्रीहजूरसाहिब के प्रताप सेती कुसल-आनन्द वर्त्ते है । महाराजसाहिबरा तप-तेज-सीयल-संजमरा सदा सर्वदा आरोग्य आवें तो भला सेवकनें परम आनन्द होय । और हजूर साहिबजी दूरि देस विराजनो छें, तिणे करी दरसनरी अन्तराय भरपूर छें । धन्य है वे देस-नगर-पुर-पाटण-पोषदसाला जहां श्रीपूज्यजी साहिबरो आहार-विहार-सकलाचार हुवें छें । और धन्य हैं वे नर-नार श्रीमहाराजजी साहिबरो मुखकमल निरख हीयें हरख, चरनकमलरी सेवा-नमन सुनिरन्तर करे हें । तथा पूज्यजीरी देसनां अमृतधारा समांन उपयोगसहित सुणें हें । अगारपणों छांडीने अणगारपणों आदरें हें, तथा देसे पापपरिहार करे हें तिकारा अवतार संसारमांही धन्य हें ।

मेरे श्रीमहाराजसाहिबरे दरसनरी हाल अन्तराय उदै छें । जे दिवस महाराज साहिबरो दरसन होसी, श्रीमुखनी वांनी सुंणसु तीको दिवस धन्य मांनसुं । पिण मो सरीखा पापीनें हजुरसाहिबरो दरसन मिलनो कठिन हैं । सो महाराज क्रपा करि दरसन वहिलो दिरावसो तो घना जीवारो उद्धार होसी ।

दोहा

नाथ-विहुना सैन्य जुं, मात-विहुनां बाल ।
संघ अठारो होय रहो, कीजे तुरत संभाल ॥१॥

और छेमासी संमंधी मांहें कोई लिखनें पढनें मुको असातना अविनय हुवा होई सो हाथ जोड सीस नमाय कर खमावुं छुं, श्रीहजूर साहिब क्रपानाथ क्रपा करि कें खमज्यो । छोरु के अवगुण पर निघामन राखजो ।

और हजूर साहिब तो परम उपगारी हो । हजूर की सेवा-चाकरी कुछ बनें नहीं । हजूर साहिबरे गुण हजार, मुख करि लीखुं सो लिखनें में नहीं आवें ।

दोहा

श्रीगुरु नाथ! क्रपा करी, अवधारो मुझ वात ।
डूबत हूं भवकूंप में, वेगे पकडो हात ॥१॥
गति चारुं ही भटकतें, वीते काल अनंत ।
महामोह में फसि रह्यों, कबहूं न पायो अंत ॥२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जन्म-मरण करते थके, पायो नर अवतार ।
ताहैं सफ्ल कीनों नहीं, हार गयो निरधार ॥३॥
भक्ति करी नही देव की, कीयो न परउपगार ।
आतम हित कीनों नहीं, लग्यौ लोभ के लार ॥४॥
उलज्यौं बहु जंजाल में, राग-द्वेष मन लाय ।
कहौ स्वांमी कैसें कीयें, चेतन निरमल थाय ॥५॥
मो मन चिंता अति घनी, सोचत हूं दिनरात ।
ताहै उपाय विचार कें, लिख भेजो गुरु नाथ! ॥६॥
जन्म-मरन सबही टलें, वसुं मुक्ती में जाय ।
इतनी क्रपा कीजियो, **सौख्यविजय** मुनिराय! ॥७॥
मुनिवर परम दयाल हो, दीसौ बहु गुणवांन ।
तुम गुंन कों नहीं लिख सकें, लिखु लेस अनुमांन ॥८॥
पांचौ इंद्री वस करौ, सुमति पंच प्रकार ।
नमुं ऐसें मुंनिराज कूं, पंचमहाव्रतधार ॥९॥
षट आवश्यक करनी करौ, जीवदया प्रतिपाल ।
नमुं ऐसें मुंनिराज कूं, प्रगटे जगतदयाल ॥१०॥
दोषन सबही टालिकें, धरौ सुआतमध्यांन ।
नमुं ऐसें मुंनिराज कूं, साचें संयमवांन ॥११॥
सोधत हो निज ब्रह्म कूं, महालब्धभण्डार ।
नमुं ऐसें मुंनिराज कूं, मुक्तिपंथदातार ॥१२॥
निरमल करी निज आतमा, ध्यावत हो सुभ ध्यांन ।
भव्य जीव के कारनें, प्रगटे गुंण की खांन ॥१३॥
मुनिवर श्रीमहाराजजी, तुम गुंन अगम अपार ।
तजी कनक अरु कांमनी, धन धन तसु अवतार ॥१४॥
महाअतिसयवंत हो, बहु अवसर के जांण ।
प्रभुमुखसो वांनी खिरें, प्रत्यक्ष अमृत समांन ॥१५॥
भव्यजीव अतिवरुकें(डें?), करतें बहु धर्मध्यांन ।
तज कुमति सुमति लहें, पावें पद निर्वांन ॥१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनधरम में दीपता, मोटा हों मुनिराज ।
चिरंजीवो चिरकाल लग, सब की करो सहाय ॥१७॥
धन धन प्रभू तुम नांम हे, धन धन हें तुम ताय ।
धन माता तुम जनमीया, प्रेमें प्रणमुं पाय ॥१८॥
कार्य(या?) जांनो कारमी, नहीं माया लवलेस ।
आहार तनी नहीं लालसी, सांचौ साधू वेस ॥१९॥
तुम दरसन करते थके, जाये भव के पाप ।
तिन कारण वीनती करूं, वेग पधारो आप ॥२०॥
वार वार विनती लिखूं, लिखत न आवें पार ।
पांख होय तो उड मिलूं, न करूं ढील लगार ॥२१॥
इह्या रह्यौ परवसपणें, नहीं सुइच्छाचारुं ।
अन्तराय दूरे टलें, तव देखुं दीदार(रुं) ॥२२॥
नित वंदु ईहां ही रही, प्रह उगमते सूर ।
धरमलाभ प्रभु दीजियो, पामुं सुख भरपूर ॥२३॥
मुझ कूं निरगुंन जांनिकें, मति विसारो मुनि संत ।
प्रभु तुम सेवक हैं बहु, बडे बडे गुनवंत ॥२४॥
क्रपा धरम सनेह की, रखीयो जगगुरु भांण ।
प्रेम नीजर करी देखीयौ, सेवक हम कू जांण ॥२५॥
सुखसाता संजम तणी, वरतें सदा समाध ।
सेवक अपनो जांन के, लिखज्यौ करकें याद ॥२६॥
पाछा कागद लिखत री, नही आपरे रीत ।
श्रावक जो कोई चतुर होय, जेहि लिखें सुभ रीत ॥२७॥
मगनीरांम वीनती लिखी, निज आतम के काज ।
ये में जो कछू न्यून होय, सो खमज्यौ महाराज ॥२८॥
साधर्मी सवसूं करे, **मगनीरांम** प्रणांम ।
क्रपा धरम सनेह की, रखीये बहु गुण जांण ॥२९॥

॥ इतिश्रीविनयपत्रका समाप्ता ॥ शुभं भवतु ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रीसंवत् १९४२ मिती श्रावणकृष्णा _ वार दीतवार, धनेष्ठा नक्षत्र, प्रात:काल लिखतं ब्राह्मण नंनसुख नागपुरवाला, श्रीरतलाममध्ये **जांनकीदास** के मंदर पा० ॥

लीखतु **शाह कमीचंद हीराचंद** की वंदणा स्मे स्मे अवधारसीजी। **मार. बीषा माधासा** की वंदणा समे समे अवधारसीजी । लीखंतु मालवी **नंदाजी रखवा, उदेचंद बावचंद** की वंदणा समे समे अवधारसीजी ।

लीखीता **सुराणा झवेरचंद माणकचंद, घासीराम रतीचंद** की वंदणा १००८ वार समे समे अवधारसी ॥

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विहङ्गावलोकन : अङ्क ६०-६१-६२नुं

– उपा. भुवनचन्द्र

'अनुसन्धान'नो ६०मो अङ्क 'विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्क' रूपे प्रगट करायो छे. प्रकाश्य सामग्री एटली एकत्र थई के ६१मो अङ्क पण विशेषाङ्क रूपे प्रगट थयो. हजी पण सामग्री अवशिष्ट रहेतां ६३मो अङ्क पण विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्कनो खण्ड हशे. 'अनुसन्धान' जेवा सामयिक द्वारा आ एक मोटुं काम थयुं छे. विज्ञप्तिपत्रोनुं ऐतिहासिक-सांस्कृतिक महत्त्व सुविदित छे. विज्ञप्तिपत्रो भिन्न भिन्न स्थळेथी प्रकाशित पण थया छे. विशेषाङ्कमां अत्यार सुधी अप्रगट रह्या होय एवां वि. पत्रो प्रकाशित करवानुं लक्ष्य हतुं. प्रगट थई चुकेला विशेषाङ्क (१-२ खण्ड) जोतां ए लक्ष्य सारी पेठे सिद्ध थयुं छे एम लागे.

विज्ञप्तिपत्रोनी वाचनाओ महदंशे शुद्ध रूपे छपाई छे. वि.पत्रोनुं सम्पादन भिन्न भिन्न सम्पादको द्वारा थयुं छे. आ काम सरळ नथी होतुं. रचना समजाय नहि तो शुद्ध रूपे लखी शकाय नहि अने वि. पत्रो पत्र होवा छतां साहित्यनी दृष्टिए उच्च काव्यतत्त्व अने विद्वत्ताथी समृद्ध होय छे. शब्दकोश, काव्यचमत्कृति, वर्णनविस्तार, कूटकाव्य, चित्रकाव्य - आवुं घणुं बधुं वि.प.मां गूंथायुं होय छे. छन्दवैविध्य तो खरुं ज. आ सङ्ग्रहमां एक विज्ञप्तिपत्र महासमुद्रदण्डक जेवा छन्दमां ग्रथित छे. आखुं विज्ञप्तिपत्र एक श्लोक जेटलुं, पण श्लोकनुं एक-एक चरण ९९९ अक्षरनुं! संस्कृत काव्यरसिकोनो मनमयूर नाची ऊठे एवो काव्यवैभव आ विज्ञप्तिपत्रोमां समायो छे. आ वैभव आपणने संपडावनार सम्पादक मुनिवरोने शतशः धन्यवाद!

प्रकाशित विज्ञप्तिपत्रोनी संक्षिप्त समीक्षा तथा ऐतिहासिक सन्दर्भोनी साथे ध्यानार्ह बिन्दुओने तारवी आपती भूमिका ते ते विज्ञप्तिपत्रो साथे जोडवामां आवी छे. 'अनु०'ना सम्पादकश्रीनो आ परिश्रम विशेषाङ्कने सार्थक करे छे.

विज्ञप्तिपत्रोनुं परिशीलन करतां सतत परिवर्तन पामती सङ्घव्यवस्था, साधुसामाचारी, रीत-रिवाज वगेरे अंगे महत्त्वपूर्ण दस्तावेजी साक्षीओ हाथ लागे छे. रूढि, परम्परा अंगेना विवादोमां आ तथ्यो दिग्दर्शक बनी शके.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम दृष्टिए तरी आवतां थोड़ां बिन्दुओ :

१. साधुओ साध्वीओने धर्मलाभ पाठवे छे.

२. व्याख्यान सूर्योदय वेळाए थतुं.

३. चातुर्मासमां, पर्युषण पहेलां उपधानवहन करवामां आवतुं.

४. विज्ञप्तिपत्रोमां पर्युषणपर्वनो वृत्तान्त एक अनिवार्य अंश तरीके आवे छे. कल्पसूत्र वांचन, तपस्या, पूजा, प्रभावना, साधर्मिकवात्सल्य, ल्हाणी जेवी वातोनो अचूकपणे उल्लेख थाय छे. स्वप्नदर्शन, उछामणी, तेना आंकडानो एक पण पत्रमां जरासरखो उल्लेख नथी.

५. श्रीविजयप्रभसूरि उपर लखायेला विज्ञप्तिपत्रोनी संख्या अधिक छे. तेमना समये गच्छमां पठन-पाठन-विद्वत्ता उच्च स्तरना हता- व्यापक हता एवुं अनुमान थई शके.

६. साहित्यिक स्तरे बृहत् विद्वानजगतमां प्रवर्तमान परिपाटी जैन विद्वद्वर्गे स्वीकारी हती. अर्थात् अजैन साहित्यनो के कल्पनाओ, उपमाओ, रूपकोनो जैन मुनिओने छोछ न हतो. शृङ्गारिक कल्पनाओ सहजताथी व्यवहृत थती.

विज्ञप्तिपत्रोमांथी पसार थतां जे थोडां संशोध्य स्थान नजरे चड्यां ते नोंधवानुं मन थाय –

<u>खण्ड -१</u>

पृ.	पं.	छपायेल पाठ	सम्भवित पाठ
५	११	नयंश्च	न यश्च
११	अन्तिम	लग्नोद्य(?)द्भृङ्गावबद्धरजं	लग्नोद्यद्भृङ्गबद्धा वरज०
३९	१९	गङ्गारङ्गा०	गङ्गा रङ्ग०
३९	२२	०ध्वनिम्	०ध्वनि
४७	५	०द्भावेन	०द्भवेन
४८	९	न	नो
४९	९	०रागेग	०रागेण
५२	१३	दुष्पापता पौषध०	दुष्पापतापौषध०
६०	२४	चयः	च यः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०९	२७	समरध्वजे	सुरध्वजे
११७	२४	रुणद्धि	रुणद्धि
१५२	२२	०द्वितयानिमग्नः	०द्वितये निमग्नः
१५२	२३	पाप-मदांस(?) दम्भो०	पापमदां सदम्भो०
१५४	२३	क्षुणैनसां	क्षुण्णैनसां
१६४	१०	०गदानमग्नं	०गदा न मग्नं
१७०	६	पादै०	पदै०

<u>खण्ड - २</u>

५५	२४	०दा-नकि०	०दा-वर्कि०
५६	६	व्रतिचा०	व्रतिवा०
१४०	३	प्रसिक्ता बध०	प्रसिक्ताऽबुध०
१७१	१६	लिप्यातः(?)	लिप्याऽतः

अनुसन्धान - ६२

अनु० ६२मांनुं विषयवैविध्य ध्यान खेंचे छे. प्राचीन सम्पादित कृतिओ उपरांत, स्वाध्यायलेखो, पत्रचर्चा, टूंक नोंधो, साहित्यसमाचार जेवा स्तम्भो हवे अनु०मां नियमित जोवा मळे छे.

'देवसुन्दरसूरिविज्ञप्ति'मां गुरुगुणोनुं भावसभर कीर्तन छे. भक्तगण-शिष्यगण स्तुति करे त्यारे तेमां व्यक्तिपूजा ज होय एवुं दरेक वखते मानी लेवुं योग्य नहि गणाय – खास करीने जो ए स्तुतिमां भूमिका ज्ञानादि गुणोनी होय. प्रस्तुत कृतिमां गुरुना आवा गुणोनी मुक्तकण्ठे वर्णना थयेली छे. देवसुन्दरसूरिना व्यक्तित्वनी छाया आ रचनामांथी उपसी आवे छे.

'मण्डपीयसङ्घप्रशस्ति' एक नवी भातनी प्रशस्ति छे. आमां कोई एक व्यक्तिनी नहि, माण्डवगढना श्रावकोनी प्रशस्ति छे. अनेक श्रावक-श्रेष्ठिओना सुकृतोनी संयुक्त प्रशस्ति छे. प्रशस्तिगत उल्लेखो तारवीने मूकवानी जरूर हती.

विनयप्रभ उपाध्यायनी बे रचनाओथी अपभ्रंशभाषानी सामग्रीमां उमेरो थाय छे. थोडां शुद्धिस्थान :

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कृति १मां – गाथा २ : मणइ – मिणइ. गा. ९ राखिहिव – राखि हिव. गा १० : पायहउ – पाय हउं. णस्स – [दी]णस्स. गा. १५ : चोथा चरणमां : मूहो सपदि – मू होस(सि) पदि. कृति २मां – गा. १५ : समूहसिय – समुल्लसिय. गा. २१ : करिहि बहूउ – करि हिव हूउ. आ ज कड़ीमां 'निश्चित' छपायुं छे त्यां अपभ्रंश भाषाना हिसाबे 'निच्चित' के 'निच्चंत' होवुं जोइए. गा. २३ : सिव गण – सिवगमण. गा. २६ : तुहि हजि – तुहजि. गा. ३० : हित्था लंबणु दहि – हत्थालंबणु देहि. बन्ने कृतिओ पुनर्लेखन मागे छे.

'अव्ययार्थसङ्ग्रह' संस्कृतना पाठ्यक्रममां स्थान पामी शके एवी कृति छे. अव्ययो विना सम्भाषण लूण वगरना भोजन जेवुं बनी रहे. संस्कृतमां अव्ययोनी विपुलता छे ते सिद्ध करे छे के संस्कृत बोलचालनी भाषा हती, अने लांबा गाळा सुधी बोलाती रही हती.

उपाध्याय शिवचन्द्र प्रणीत चार लघु कृतिओ रसप्रद छे. आ पाठक शिवचन्द्र नागोरी वड़ तपागच्छना हता. अहीं प्रकाशित चोथी कृति 'ज्ञानस्तव' पार्श्वचन्द्रगच्छमां आजे पण गवाय छे. 'चिदानन्दलहरी'मां संशोधनपात्र स्थानो घणां छे.

ग्रन्थस्वाध्याय करतां जे नवो पदार्थ स्पष्ट थयो होय ते अभ्यासी वर्गना लाभार्थे प्रकट करवो ए एक अत्युपयोगी/आवकार्य प्रवृत्ति छे. 'जीवसमास' प्रकरण अंगे त्रैलोक्यमण्डन वि. नो स्वाध्यायलेख छपायो छे. आ प्रकरण उपर चारेक विवरण रचाया छे. केटलीक शास्त्रीय बाबतोमां आगमिक अने कार्मग्रन्थिक परम्परामां भिन्न मत जोवा मळे छे. सामान्य रीते बन्ने परम्पराओनो आदर उल्लेख करी जे-ते विषय पूरो करवामां आवे छे, परन्तु जीवसमासनी एक टीकामां ग्रन्थगत भिन्न मतोनुं खण्डन करवामां आव्युं छे. टीकाकार मलधारीजी क्यांक वळी पोताना आगमिक पक्षथी विरुद्ध जइने भिन्न मतनुं समर्थन पण करे छे. त्रै.वि.ना लेखमां आ बधुं विगतवार चर्चायुं छे अने यथासम्भव समाधान पण क्यांक अपायुं छे.

शिवदास कृत 'कामावती'मां अपायेली समस्याओना थोडा ऊकेल आ होई शके : १. रोटली वणवानो चकलो (पाटलो), वेलण अने रोटली.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२. (?). ३. वलोणुं ४. बंदूक अने गोळी. ५. (?) ६. हाथ अने हथेली. ७. माळा, तेनुं फूमतुं, अंगूठो. ८. मुख, नयन, कीकी तथा कण्ठ. ९. स्तन, हार. १०. वणकर वणाटकाम करती वखते उपयोगमां ले छे ते नानुं लाकडुं. ११. घंटी, घंटीनो खीलो. १२. सगडी, अंगारा. १३. गिल्ली (आ दूहामां 'चोथी' छे त्यां 'चोटि' (चोट) होय एवी कल्पना आवे.). ३४. सोळ कळा, चन्द्र, पूनम. १५. करवत.

श्री सागरमल जैनना बे अभ्यासलेख माहितीप्रद छे. पुद्गलना 'ग्रहणगुण'नी व्याख्या 'ग्रहण थवानी योग्यता' (ग्राह्यता) छे - आ मुद्दानी त्रै.वि. करेली चर्चा रसप्रद छे. कान्तिलालभाईनो हस्तप्रतसम्पादननी शिस्त विशेनो लेख आम तो कोई पण भाषानी हस्तप्रतोना सम्पादनमां उपयोगी/ आवश्यक तकेदारीनी वात करे छे, पण मध्यकालीन गुजराती भाषानी कृति होय तो त्यां विशेषे लागू पडे छे. म.गू. कृतिओमां अनेक भाषाना शब्दो प्रवेशे छे. एटले पाठनिर्णय वखते अनेक दिशामां नजर दोडाववी पडे छे. पाठनिर्णय माटे ग्रन्थगत विषयनी ज नहि, अन्य आनुषङ्गिक विषयोनी पण पर्याप्त जाणकारी जरूरी थई पडे छे. अन्यथा भळता-सळता पाठ/अर्थनिर्णय थतां उत्तम कृतिमां पण नवी क्षति दाखल थवानो भय रहे छे. केटलाक सारा (खरेखर सारा ज) सम्पादकोना सम्पादनोमां पण हास्यास्पद पाठ प्रवेशी जता होय छे.

आ अङ्कनुं सम्पादकीय निवेदन पण संशोधन/सम्पादनमां पण पाठनिर्णय के अर्थनिर्णय समये सम्पादकना चित्तमां जागता मन्थननी सुन्दर चर्चा करे छे.

—x—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विहङ्गावलोकन : अङ्क ६३नुं

– उपा. भुवनचन्द्र

'अनु०'-६३नुं विषयवैविध्य ध्यान खेंचे छे. प्रगल्भ-प्रौढ प्राचीन कृतिओ, लघु कृतिओ, म.गु. रचनाओ, आधुनिक गु. रचनाओ, ऐतिहासिक कृतिओ, अभ्यासलेखो, सैद्धान्तिक चर्चालेखो – आवी विविधरंगी सामग्री आ अङ्कने शोभावे छे.

आ अङ्कना सौथी मोटो हिस्सो संस्कृत कृतिओनो छे, ने तेमां पण स्तोत्र-काव्योनो छे. परिमाण अने काव्यरस – बन्ने दृष्टिए जैन स्तोत्रसाहित्य विशिष्ट छे, विराट छे. एमां जैन श्रमण-श्रावक कविओना विद्याव्यासङ्गनां दर्शन थाय छे, तो बीजी बाजु ए कविहृदय श्रमण-श्रावकोनी वीतराग जिनेश्वर प्रत्येनी श्रद्धा-भक्ति-प्रीतिनां पण मनोरम दर्शन थाय छे.

अपूर्ण स्वरूपे प्राप्त थयेली 'स्तवचतुर्विंशतिका' अनु.ना सम्पादक सूचवे छे तेम, क.का.सर्वज्ञना प्रतिभाशाली शिष्य रामचन्द्रसूरिनी ज रचना होवानो पूरेपूरो सम्भव छे. दरेक स्तवना अन्तिम श्लोकमां 'रामचन्द्र' एवो शब्दसंकेत तो छे ज; ते उपरांत रामचन्द्रसूरिना व्यक्तित्वनी आगवी ओळख जेवा स्वातन्त्र्यप्रेमनो उल्लेख वारंवार थयो छे. 'वीतरागस्तोत्र'नो प्रभाव पण आ स्तवोमां जोई शकाय छे. अजितस्तवना ५मा श्लोकमां 'विचिन्तते' छपायुं छे त्यां 'विचिन्वते' होवुं घटे.

स्तवनचतुष्क तो कविना वैदुष्यनो बोलतो पुरावो छे. दरेक स्तोत्र अलग-अलग अंदाजमां रचायुं छे. प्रथम स्तोत्र संस्कृत-प्राकृत-शौरसेनी – ए त्रणेय भाषामां चाले एवुं छे. बीजा स्तोत्रना प्रत्येक श्लोकमां 'नवखण्ड' शब्द समाव्यो छे. आना पांचमा श्लोकमां 'आम्ना(?)तिनो' शब्द शुद्ध ज छे. आम्नातं अस्ति अस्य इति आम्नाती – एवो इन्नन्त शब्द छे. श्लोक ६मां '०मेतावतः' ने बदले '०मेतावता' होवानी शक्यता छे.

नवग्रहनां नामोनो उपयोग करी पार्श्वनाथ भ.नी स्तुतिमां शब्दरमत अने कल्पनाशीलतानां दर्शन कविए कराव्या छे. ज्यारे चोथी कृतिमां बे तीर्थमां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बिराजमान त्रण मूलनायकोनी खूबीथी स्तुति करी छे. व्याकरणना नियमो, समास, सन्धि, अनेकार्थ शब्दो इत्यादिनो युक्तिपूर्वक उपयोग करी आवां बौद्धिक चमत्कृतिभर्यां काव्यो रची शकाय छे; एमां प्रखर विद्वत्ता अने कल्पनाशक्ति तो जोईए, परन्तु आवी कृतिओने समजवा माटे पण एवी ज विद्वत्ता/कल्पनाशक्ति जोईए. एवा अन्य विद्वान मुनिओए आवां कठिन काव्यो पर टिप्पण/अवचूरि/टीकाओ रचेली होय छे ते थकी आवां काव्योनो रसास्वाद माणी शकाय छे.

श्रीविजयसेनसूरिनी प्रशस्ति रूपे रचायेल 'कीर्तिकल्लोलिनी' खण्डकाव्य भक्तिरस-काव्यरसथी छलोछल रचना छे. हेमविजय गणीनुं कवित्व अभिभूत करी दे छे. वि.सेनसूरिजीना प्रताप, कीर्ति अने सौभाग्यनुं आमां अति उत्कटताथी रंगदर्शी वर्णन थयुं छे.

आ कृति त्रण त्रण विद्वानोना हाथे सम्पादन पामी अहीं प्रकाशन पामी छे. आ जोगानुजोग आनन्ददायक छे अने 'सम्पत्स्यते हि मम कोऽपि समानधर्मा' – ए प्रसिद्ध पंक्तिनुं स्मरण करावे छे.

'नालिकेरसमाकाराः' ना ४४ अर्थवाळी कृति उपाध्यायजीनी ज होवानो पूरो संभव छे. लेख अस्तव्यस्त जणाय छे ते आ पत्र काचो खरडो होवानुं सूचवे छे. खरडामां सुधारा-उमेरा थाय, पछी प्रथमादर्शमां लखाय. आ खरडो खरडारूपे ज रही गयो छे अथवा क्यांक आनी सारी नकल पडी पण होय.

पं. श्रीगम्भीरविजयजीए जर्मन विद्वान हर्मन जेकोबीने जैन आगमोमां आवता मांस-मत्स्य जेवा शब्दोना अर्थ अंगे पत्र लख्यो हतो. संस्कृत भाषामां लिखित आ पत्र आ अङ्कमां प्रकाशित छे. आमां पं. गम्भीरविजयजीनी गम्भीरता अने विद्वत्तानां दर्शन थाय छे. जैनधर्ममां मांसाहार जेवा संवेदनपूर्ण प्रश्ननी चर्चा तेओ केवी स्वस्थता अने शालीनता साथे करे छे तेनी नोंध लेवा जेवी छे.

श्रेयांसनाथ स्तवन खम्भातमां रचायुं छे. खम्भात परगणानी ए समयनी बोलीमां 'य' श्रुतिवाळा शब्दो प्रचारमां हता. आमां एवा शब्दो छे. द्यइ, लख्यमी, इग्यारमउ, दिख्या वगेरेमां 'य' श्रुति छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्तम्भन-सेरीसा-शङ्खेश्वर पार्श्वनाथ स्तवनमां पण खम्भाती बोलीनी छांट छे. अयसी (१/३), खास्ये (१/६), अयलें (८/२), खंभायत (१३/१), किस्यो (१६/५) – आवा यश्रुतिवाळा शब्दो खम्भाती बोलीमां हता. कवि ऋषभदासनी कृतिओमां पण 'य'कार वाळा प्रयोगो जोवाय छे. कृतिने स्तवन तरीके ओळखावाइ छे, वास्तवमां आ रास छे. आमां वपराएली देशीओ ध्यान खेंचे छे. कविए त्रण तीर्थोनी कथा आमां रसिक रूपे गूंथी छे. रासनी वाचना तैयार करवामां केटलीक वाचनभूलो रही छे :

ढाल/कडी	छपायेल पाठ	सम्भवित पाठ
१/१०	देव घणव	देव-दाणव
३/२	वालाइं	वालीइं
४/६	अेच्छायो	ए छापो
१५/१२	चकचाल रे	चकचाले रे
१८/६	राछपीन	राछपीन(छ)
२१/७	वीर	चीर
२२/७	दीवो	दीधो
२३/२	दसको	द्रसको
२७/५	आणल्ये	आणीये
२७/५	मति सारुं	मतिसारु
३०/४	भूमिवत्तामांहि	भूमिकामांहि

केटलाक शब्दो –

सुंब (१२/७)	सूम, कृपण
गेडी (२/४, ४/३)	वांका छेडावाळी लाकडी जेनाथी वस्तुने खेंची शकाय.
कारिमो (१५/६)	जोरदार, आकरुं
कारिमा (१५/८)	बनावटी
राछपीछ (१८/६)	राचरचीलुं
कृपी (२३/७)	कंजूस, कृपण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मतिसारु (२७/५)	मति प्रमाणे
अलि (८/२)	अहीं वाचनभूल छे. आल के आळ शब्द होवो घटे.
धमस (३/७)	धमधम जेवो अवाज
सगतसारु (१२/४)	शक्ति प्रमाणे
चकचाले (१५/१२)	दोड़ादोड़ करे, विचारमां पडे

चार काव्योमांनी नन्दिषेण सज्झायमां क. १मां 'वेसम' छे तेनो अर्थ वेश्म = घर छे. वेसम वेस तणइं = वेश्याना घरे. स्तम्भनपार्श्व स्तवनना कर्ता मेघराज मुनि पार्श्वचन्द्रगच्छना छे. क. ११मां 'पाखइ' नो अर्थ 'दूर करीने' एवो नथी, पण 'विना', 'वगर', 'छोडीने' एवो थाय छे.

'रामकुंवरबाईनी पच्चक्खाणवही' एक अभ्यासपात्र कृति छे. बार व्रत ग्रहण करनार पोतानी स्थिति प्रमाणे जीवनभर माटे नियम धारण करता अने ते बधुं विगतवार लखी राखता. राजा-प्रधान-सेठ वगेरे पण व्रत लेता अने तेनी सूचि (वही) लखावता, तेने कलात्मक रीते शणगारता. आवी घणी वहीओ जैन ज्ञानभण्डारोमां सचवाई छे. आवी सूचिओमां ते ते समयना जनजीवननुं - रीतरिवाजो - खाणीपीणी, धंधारोजगार वगेरेनुं - चित्र सचवायुं होय छे. प्रस्तुत वहीमां दोढसो-बसो वर्ष पहेलानुं चित्र छे.

आमां जैन प्राकृत शब्दो, जूनी गुजराती अने कच्छी भाषाना शब्दोनुं मिश्रण थयुं छे. वाचनभूलो पण छे.

पृ. १३४, पं. ४ (नीचेथी)मां नुप (?) छे त्यां लहियानी भूल छे. 'उपरांत'नो 'उप' बे वार लखाई गयो छे अने वाचन वखते 'उप'ने बदले 'नुप' वंचायुं छे. आवा स्पष्ट भूलवाळा पाठोने वाचनामांथी दूर करीने ज वाचना तैयार करवी जोईए. आठमतं, छाशमांतां जेवा स्थळोए तं-तां शब्दथी छूटा वांचवा जोटता हता. तं अने तां ए 'तथा'नुं संक्षिप्त रूप छे. पृ. १३५ - चरियंते वगेरेमां पण 'ते' छूटुं वांचवुं जोईए. पृ. १३६ पं. ३ (नीचेथी) पाढियारू शब्द छे, ते प्राकृत 'पाडिहेर'मांथी आव्यो छे. साधुओ-गृहस्थो पासेथी पाट-पाटला मागी लावता अने काम प्रत्ये पाछा आपी आवता. आवी वस्तुओ 'पाढियारू' छे. पृ. १३७ पं. १३ पर 'बालका' छे ते वाचनभूल छे. 'फलका'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शब्द होवो जोईए. माटी वगेरे भरवा माटे गधेडानी पीठ पर बे बाजू लटके एवो कोथळो मूकाय छे ते फालकुं छे.

पेटवडीओ : पगार नहि, खावुं-पीवुं-कपडा आपवानी शरते राखेलो नोकर.

राजकदैवक : राजकीय के दैवी आफत, आसमानी-सुलतानी.

बएड : (कच्छी) नदीना तळियानी माटी

रीगा : (कच्छी) वाचनभूल छे. रागो शब्द छे. रागो = लींपण.

अटार : (कच्छी) रेती (आटार)

भवी : वाचनभूल छे. अहीं 'मळी' शब्द मूळ प्रतमां हशे जे 'भवी' रूपे वंचायो छे. तेलनो कचरावाळो घट्ट भाग मळी कहेवातो अने ते गाडाना पैडामां अंजण तरीके वपरातो.

हवारो : (कच्छी) 'हरवारो'नुं हवारो थयुं छे. हरवारो = पतरामां काणां करी बनावेल चाळणी

फालो : घउंना फाडा

हारा : अनाजनुं एक माप

पराजा (पृ. १३०) जमीननुं एक माप (२० वीघा)

आ उपरांत त्रण-चार अभ्यास लेखो आ अङ्कनी समृद्धिमां वधारो करे छे. द्रव्यपुद्गलपरावर्त शक्य छे के नहि तेनी चर्चा शास्त्रीय विषयनी गणाय. आवी चर्चाओमां 'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः' ए न्याये नवा नवा मुद्दा नीकळे. आनी चर्चा व्यक्तिपरक नहीं पण तथ्यपरक होवी जोईए. मुक्त मानसथी आ चर्चा आगळ चालशे तो आनन्द थशे.

—x—

जैन देरासर
नानी खाखर-३७०४३३
जि. कच्छ, गुजरात

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्ति

अनुसन्धान – अङ्क ६१, विज्ञप्तिपत्रविशेषाङ्क – खण्ड २ मां पृ. ८७-९२ पर महासमुद्रदण्डकमय पत्र प्रकाशित छे. तेमां मङ्गलना ५ श्लोको त्रुटितरूपमां छे. ताजेतरमां आ ज पत्रनी अन्य हस्तप्रत मळतां ते श्लोको पूर्ण थई शकेल छे –

स्वस्ति श्रीमदमन्दनन्दथुनमन्नाकीन्द्रचूडामणि-
श्रेणीस्रग्मकरन्दमेदुरपदद्वन्द्वारविन्दः प्रभुः ।
चेतश्चिन्तितपूर्त्तये भवतु वः श्रीपार्श्वचिन्तामणि-
र्भव्याम्भोजनभोमणिर्गृहमणिः स्फारस्फुटान्तर्मणिः ॥१॥
स्वस्ति श्रीस्फुरदिन्द्रनीलधवलं वर्ष्म व्यभात् श्यामलं
श्रीपार्श्वस्य विशेषितं फणिफणारत्नप्रभारेखया ।
उन्मीलन्नवरत्नकाङ्कुरशिरः किं नीलवद्भूभृतो
वार्यन्तर्गतरत्नरुक्कपिशितं कालोदधीयं किमु ? ॥२॥
स्वस्ति श्रीअमृतद्रवार्द्रितवपुर्वल्लीप्रफुल्लोल्लसत्-
कल्हारादतिशायिसौरभभरा यस्योज्जजृम्भे विभोः ।
शङ्के शान्तिरसोऽन्तरालवसतिर्निर्यात्यमान्तं(न्तो?) बहि-
स्तस्मै कश्मलघस्मरैकमहसे पार्श्वाय पुंसे नमः ॥३॥
स्वस्तिश्रीफलकन्दली सकुसुमा मूर्त्तित्रयी नेत्रयोः
पीयूषाञ्जनवर्तिकाञ्जनरुचेर्यस्येव वर्गत्रयी ।
मूर्त्ता गारवशल्यदण्डदलिनी रत्नत्रयीवाऽद्भुता
विघ्नव्यूहविहीनमाह्निकविधिं देवो विधेयादयम् ॥४॥
स्वस्तिश्रीवृषभः श्रियं सृजतु सः श्रीराजसिंहावनी-
प्राणेशः किल राणपट्टधवलप्रासादशृङ्गध्वजः ।
वर्णं टङ्कमितं च सेरकचतुर्थांशेन तैलं च यत्-
पूजायै निजपूर्वजैरुपहृतं दत्ते कृती प्रत्यहम् ॥५॥

आ सिवाय पृ. ८८ पङ्क्ति २ मां 'परंकुर्त(?)'नी जग्याए 'परं कुर्न' अने पृ. ८९ पङ्क्ति ४मां '०वातूलयो_यिता'नी जग्याए '०वातूलयोड्डायिता' अेटलो सुधारो छे.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

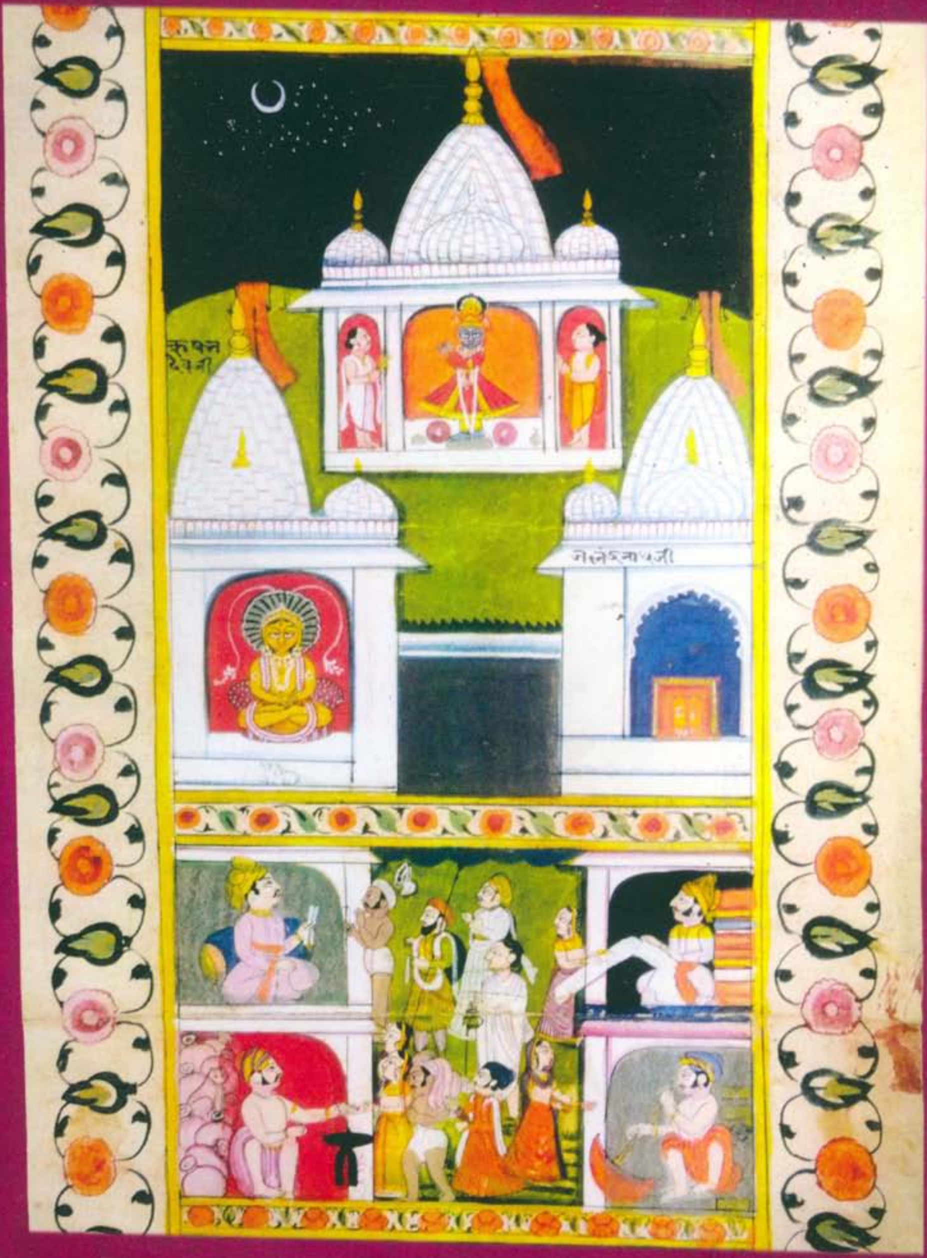

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org